अनुक्रमणिका/Index

01. अनुक्रमणिका /Index 01

02. क्षेत्रीय सम्पादक मण्डल/सम्पादकीय सलाहकार मण्डल 06/07

03. निर्णायक मण्डल 08

04. प्रवक्ता साथी 10/11

(Science / विज्ञान)

05. Analysis Of Water Quality Using Some Physico-Chemical And Biological Parameters 12
Of The Kinds Of Water Used For Drinking As Well As Domestic In Gandhinagar And
Bairagarh Area Of Bhopal (Santosh Ambhore)

06. Size Dependant Synthesis of Advance Material of Mn Doped ZnS Nanoparticles 15
(Dr. U. S. Patle)

07. Aquatic Flora and Ecology of Moti talab of district Balaghat 18
(Praveen Koushley, Arvind Wasnik, Bhoopendra Bramhe, Rampati Sagar)

08. Synthesis of some 2 -Styrylquinolines from Quinoldines and cyanoethyl amino 21
benzaldehyde as possible antimalarial (Malti Dubey (Rawat))

09. Atmospheric Physics (Dr. Neeraj Dubey) 23

10. Study Of Fluoride In Ground Water Of District Rajgarh M.P. 25
(Dr. G.D. Agrawal, Dr. O. N. Choubey)

(Home Science / गृह विज्ञान)

11. राष्ट्रीय आयरन प्लस इनिशिएटिव कार्यक्रम (डॉ. मीनल फड़नीस, नेहा श्रीवास्तव) 27

12. कामकाजी एवं गैर कामकाजी महिलाओं के प्रतिबल का अध्ययन (डॉ. आभा तिवारी, सपना श्रीवास्तव) 31

(Commerce & Management / वाणिज्य एवं प्रबंध)

13. Infoemation Needs And Information Seeking Behaviour Of Mahatma Gandhi National 34
Rural Employment Gurantee Act (Mgnrega) Beneficiers In Jodhpur District
(Gitika Kachhawa, Dr. Lalita Vatta)

14. Impact Of Announcement Of Merger And Acquisition On The Valuation Of The Banks 38
(With Special Reference To SBI) (Dr. P. K. Jain, Brajeshwari Mishra)

15. Globalization & Its Impact On Small Scale Industries In India (Samrat Wani) 42

16. Kisan Credit Card Scheme Has Become One Of The Most Tool For Financial Inclusion 46
(Keerti Saxena, Dr. N.K. Patidar)

17. A Financial Study Of State Bank Of India (Dr. P. K. Jain, Brajeshwari Mishra) 50

18. महिला सशक्तिकरण की दिशा में दीनदयाल रोजगार योजना का योगदान 53
(म.प्र. के रतलाम जिले के विशेष संदर्भ में) (डॉ. लक्ष्मण परवाल, गुंजन घोचा)

19. मैंगनीज कम्पनी लिमिटेड के द्वारा खनिज उत्पादनों के आय–व्यय का अध्ययन 58
(म.प्र. के बालाघाट जिले के संदर्भ में) (डॉ. पंचम सिंह कवड़े)

20. सिंचाई सुविधाओं के विकास से कृषि उत्पादन पर प्रभाव (धार जिले के विशेष सन्दर्भ में)(राजेश मईड़ा)..... 62

21. केवल कानून बना देना पर्याप्त नहीं–जागरूकता भी आवश्यक (शाजापुर जिले की उच्च शिक्षित महिलाओं में 66
महिला–कानून संबंधी जागरूकता का एक विश्लेषणात्मक अध्ययन) (डॉ. केशव मणि शर्मा)

22. भारत के आर्थिक उदारीकरण का राष्ट्रीयकृत बैंकों की कार्यप्रणाली पर प्रभाव का मूल्यांकन (अनिता उपाध्याय) 70

23. कृषि विकास एवं ग्रामीण विकास में सहकारिता की भूमिका (जिला सहकारी कृषि और ग्रामीण विकास 74
बैंक शाजापुर म.प्र. के संदर्भ में) (डॉ. संजय बाणकर)

24. ग्रामीण कृषि विकास के क्षेत्र में बैंक ऑफ इण्डिया की साख सुविधाओं के प्रभाव का मूल्यांकन (डॉ. सीमा दुबे) 77

25. उज्जैन जिले की कृषि उपज मण्डी में समितियों का गठन, निर्वाचन क्षेत्रों में आरक्षण एवं मण्डी समिति निधि 80
(डॉ. मोईन खान)

26. महिला उद्यमिता सशक्तिकरण (दीप्ति जोठे)..... 83

27. नर्मदा झाबुआ ग्रामीण बैंक का विश्लेषणात्मक अध्ययन (डॉ. हेमसिंह मण्डलोई) 86

28. धार जिले में वैकल्पिक शिक्षा कार्यक्रम का क्रियान्वयन (वर्ष 2002–03 से 2008–09) 89
(डॉ. बी. एस. सिसोदिया)

29. कृषि उपज मण्डी समिति देवास का आय–व्यय का विश्लेषण–एक अध्ययन 92
(रामकन्या देवड़ा, डॉ. जी. एल. खांगोडे)

30. सार्वजनिक वितरण प्रणाली के अन्तर्गत उचित मूल्य भण्ड़ारगृह संचालक के व्यवहार के प्रति उपभोक्ताओं 95
की संतुष्टि का अध्ययन (ग्वालियर जिले के विशेष सन्दर्भ में) (सीमा भार्गव)

31. ग्रामीण पलायन रोकने में मनरेगा की भूमिका का अध्ययन (शाजापुर जिले के विशेष संदर्भ में) (सुनील आडवानी) 97

32. भारत में ई–कॉमर्स की संभावनाएं एवं चुनौतियां (डॉ. वी. पी. मीणा)..... 99

33. भारत में एकीकृत ग्रामीण विकास कार्यक्रम एक अध्ययन (डॉ. स्मृति जैन) 101

34. नीमच विधानसभा क्षेत्र की राजनीतिक गतिविधियों का विश्लेषण(सन् 2003 से 2008 तक) (डॉ. कविता शर्मा).... 103

(Economics / अर्थशास्त्र)

35. Economic And Social Inequality In Madhya Pradesh (Namrata Ganguly, Priyanka Kurup) 105

36. महिला श्रमिकों की आर्थिक स्थिति का अध्ययन – उमरिया जिले के विशेष संदर्भ में (डॉ. शाहीन परवीन)..... 108

37. भारत में भूमि सुधार – एक मूल्यांकन (वन्दना सोनी) 110

(Political Seience / राजनीति विज्ञान)

38. नगरीय स्थानीय संस्थाओं में अनुसूचित जनजातीय प्रतिनिधियों के नेतृत्व की भूमिका (दीवानसिंह बारिया) 112
39. खादी वस्त्र उत्पादन – वर्तमान चुनौतियाँ (मेघश्याम गुर्जर, प्रो. हिमाद्री घोष) 115
40. भारत में दिव्यांगों के हित में प्रशासनिक दृष्टिकोण – एक आनुभाविक अध्ययन (डॉ. मनीष चौधरी) 118
41. ग्रामीण विकास में विज्ञान का योगदान (डॉ. समीना खॉन खटक) 120
42. पुलिस बीट–व्यवस्था की समस्याएँ एवं समाधान (शेषा राम मीणा) 122

(History / इतिहास)

43. सन् 1857 ई. के विद्रोह के अल्पज्ञात स्मारक और स्थल (मन्दसौर के विशेष संदर्भ में) (डॉ. आकाश ताहिर) 124
44. भिण्ड अंचल के इतिहास का राजनैतिक स्वरूप– एक अध्ययन (डॉ. शालिनी गुप्ता) 127
45. सिक्कों की इतिहास यात्रा (डॉ. चित्रा तंवर) 129
46. गुप्तकाल में पौराणिक मूर्ति निर्माण कला का विकास – एक अध्ययन (डॉ. पूर्णिमा शर्मा) 131
47. अकबर राजपूत सम्बन्ध (डॉ. भूप सिंह बल्हारा) 133

(Sociology / समाजशास्त्र)

48. कोरकू जनजाति की उपलब्धियां (डॉ. मथुरा प्रसाद) 135
49. श्रीमद्भगवतगीता में कर्म रहस्य का विवेचन (डॉ. अनामिका प्रजापति) 138
50. संचार माध्यम के बदलते परिदृश्य में मीडिया का महत्व (डॉ. रश्मि दुबे) 140
51. हिंसक घटनाओं का शिकार पुलिस प्रशासन – कारण तथा समाधान (डॉ. भंवरलाल चौधरी) 142
52. स्त्री वाद विमर्श और मानवाधिकार (डॉ. रंजना श्रीवास्तव) 144

(Geography / भूगोल)

53. नगरीय परिप्रदेश में ग्रामीण जनसंख्या संकेन्द्रण का स्थिति विश्लेषण (डॉ. प्रभाकर मिश्र) 146
54. म.प्र. की भौगोलिक स्थिति का विस्तार व सापेक्षिक अध्ययन (डॉ. एस. एस. बघेल) 148

(Psychology / मनोविज्ञान)

55. Effect Of Family Type And Gender Difference On Security - Insecurity Feeling 150
Of Adolescence (Dr. A. R. Lohia, Zainab Bohra)

56. शिक्षा और शिक्षक में मानसिक स्वास्थ्य विज्ञान की आवश्यकता एवं महत्व (ज्योत्सना झारिया) 155

(English Literature / अंग्रेजी साहित्य)

57. The Study Of Imperial Impact Of English On Indian Society (Mona Gupta, Dr. Asha Dubey) 157
58. Youth And Spiritual Education (Dr. Seema Sharma) 160

(Hindi Literature / हिन्दी साहित्य)

59. अज्ञेय के काव्य में प्रकृति के विविध रूप (डॉ. आईशा खान) 162
60. भीली लोकागीतों का वर्गीकरण (डॉ. मीरा जामोद) 166
61. डिंडौरी जिले के निवासियों की भाषाएं – एक अध्ययन (डॉ. अर्चना जायसवाल) 169
62. साहित्येतिहास की विकास–प्रक्रिया के सिद्धांत (डॉ. रेखा) 172
63. वर्तमान भारतीय समाज के संदर्भ में कबीर साहित्य की प्रासंगिकता (डॉ. रंजना मिश्रा) 174
64. भारत की प्रथम शिक्षिका श्रीमती सावित्री बाई फुले के व्यक्तित्व का विवेचनात्मक अध्ययन 176
(सुशीला देवी परमार, डॉ. पी. एस. परमार)
65. मालवी की उपबोलियों में संजा का स्वरूप एवं मान्यताएँ (डॉ. मेघा निशान्त शर्मा) 178
66. रामदरश मिश्र के कथा–साहित्य में सामाजिक अवचेतना (डॉ. प्रतिमा यादव, निशा सिंह रघुवंशी) 180

(Drawing & Design / चित्रकला)

67. राजस्थान की समसामयिक कला में इंस्टालेशन कला (अमिता देवी) 182
68. टैगोर की चित्रात्मक अभिरूचि (डॉ. शालिनी रानी) 185
69. टोंक के नमदा हस्तशिल्प और बौद्धिक सम्पदा अधिकार (शर्मिला गुर्जर, प्रो. हिमाद्री घोष) 188

(Music / संगीत)

70. भारतीय संगीत का इतिहास (डॉ. वर्षा करनदेकर, शाश्वती श्रीवास्तव) 191

(Law/ विधि)

71. Plea-Bargaining - An Analytical Study (Dr. Rajat Kumar Satapathy, Lok Narayan Mishra) 193
72. The Doctrine Of Frustration Challenges The Validity Of The Fundamental Principle 195
Of Pacta Sunt Servanda(Chirag Banthiya)
73. Women And Law (Deeksha Dubey) 197

74. बाल अपराध (निशा कंठालिया) 199

75. जनजातीय समुदाय के रिवाजी विधि विधान(गोंड़ जनजाति के विशेष संदर्भ में) (सुदामा प्रधान) 202

76. रैगिंग का स्वरूप एवं कारण (पूजा नागर) 205

(Physical Education / शारीरिक शिक्षा)

77. Sports Injury In Adolescent Players - Causes And Prevention 207
(Dr. B. K. Choudhary, Gaurav Sharma)

78. A Study Of Impact Of Height On Performance Of District Level Basketball 210
Players Of Rajasthan & Madhya Pradesh (Dr. Ashok Saha, Gaurang Nare, Dr. Jogendra Singh)

(Education / शिक्षा)

79. उच्च माध्यमिक स्तर के राजकीय एवं गैर राजकीय विद्यालयों के विद्यालयी वातावरण के 'सामूहिक प्रोत्साहन' 212
घटक का विद्यार्थियों पर प्रभाव का अध्ययन (डॉ. रितु बाला, प्रीति ग्रोवर)

80. सर्वशिक्षा अभियान के अन्तर्गत संचालित उ. प्रा. विद्यालय एवं निजी विद्यालयों के विद्यार्थियों की शैक्षिक 215
निष्पति एवं सृजनशीलता का अध्ययन (रमन सिडाना)

****

क्षेत्रीय सम्पादक मण्डल अन्तर्राष्ट्रीय एवं राष्ट्रीय (Regional Editor Board- International & National) मानद्

(01) डॉ. मनीषा ठाकुर ..... फुल्टन कॉलेज, एरिजोना स्टेट यूनिवर्सिटी, अमेरिका
(02) श्री अशोककुमार ..... एम्प्लॉयब्लिटी ऑपरेशन्स मैनेजर, एक्शन ट्रेनिंग सेन्टर लि. लन्दन, यूनाईटेड किंगडम
(03) प्रो. डॉ. सिलव्यू बिस्यू ..... वाईस डीन (वाणिज्य एवं प्रबन्ध) कृषि एवं ग्रामीण विकास महाविद्यालय, बूचारेस्ट, रोमानिया
(04) श्री खगेन्द्रप्रसाद सुबेदी ..... सीनियर सॉयकोलॉजिस्ट, पब्लिक सर्विस कमीशन, सेन्ट्रल ऑफिस, अनामनगर, काठमाँडू, नेपाल
(05) प्रो. डॉ. ज्ञानचंद खिमेसरा ..... पूर्व प्राचार्य, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मंदसौर (म.प्र.) भारत
(06) प्रो. डॉ. प्रमोद कुमार राघव ..... शोध निदेशक, ज्योति विद्यापीठ महिला विश्व विद्यालय, जयपुर (राज.) भारत
(07) प्रो. डॉ. एन.एस.राव. ..... संचालक, जनार्दनराय नागर राजस्थान विद्यापीठ विश्वविद्यालय, उदयपुर (राज.) भारत
(08) प्रो. डॉ. अनूप व्यास. ..... (पूर्व) संकायाध्यक्ष, वाणिज्य, देवी अहिल्या विश्व विद्यालय, इंदौर (म.प्र.) भारत
(09) प्रो. डॉ. पी.पी. पाण्डे ..... संकायाध्यक्ष, वाणिज्य (डीन), अवधेश प्रतापसिंह विश्वविद्यालय, रीवा (म.प्र.) भारत
(10) प्रो. डॉ. संजय भयानी. ..... अध्यक्ष, व्यवसाय प्रबंध विभाग, सौराष्ट्र विश्व विद्यालय, राजकोट (गुजरात) भारत
(11) प्रो. डॉ. प्रताप राव कदम ..... अध्यक्ष, वाणिज्य, शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, खण्डवा (म.प्र.) भारत
(12) प्रो. डॉ. बी.एस. झरे . ..... प्राध्यापक वाणिज्य विभाग, श्री शिवाजी महाविद्यालय, आकोला (महाराष्ट्र) भारत
(13) प्रो. डॉ. राकेश शर्मा ..... अध्यक्ष, अर्थशास्त्र विभाग, राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, गुड़गांव (हरियाणा) भारत
(14) प्रो. डॉ. संजय खरे ..... प्राध्यापक, समाजशास्त्र विभाग, शास. स्वशासी कन्या स्नात. उत्कृष्टता महा., सागर (म.प्र.) भारत
(15) प्रो. डॉ. आर.पी. उपाध्याय ..... परीक्षा नियंत्रक, शासकीय कमलाराजे कन्या स्वशासी स्नातकोत्तर महा., ग्वालियर (म.प्र.) भारत
(16) प्रो. डॉ. प्रदीप कुमार शर्मा ..... प्राध्यापक, वाणिज्य विभाग, शासकीय हमीदिया कला एवं वाणिज्य महा., भोपाल (म.प्र.) भारत
(17) प्रो. अखिलेश जाधव ..... प्राध्यापक, भौतिकी, शासकीय जे. योगानन्दम् छत्तीसगढ़ महाविद्यालय, रायपुर (छत्तीसगढ़) भारत
(18) प्रो. डॉ. कमल जैन ..... प्राध्यापक, वाणिज्य, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, खरगोन (म.प्र.) भारत
(19) प्रो. डॉ.डी.एन. खड़से ..... प्राध्यापक, वाणिज्य, धनवते नेशनल कॉलेज, नागपुर (महाराष्ट्र) भारत
(20) प्रो.डॉ. वन्दना जैन ..... प्राध्यापक, हिन्दी, शासकीय कालिदास कन्या महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत
(21) प्रो. डॉ. हरदयाल अहिरवार ..... प्राध्यापक, अर्थशास्त्र, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, शहडोल (म.प्र.) भारत
(22) प्रो. डॉ. शारदा त्रिवेदी ..... सेवानिवृत्त प्राध्यापक, गृहविज्ञान, इंदौर (म.प्र.) भारत
(23) प्रो. डॉ. उषा श्रीवास्तव ..... अध्यक्ष, हिन्दी विभाग, आचार्य इंस्टीट्यूट ऑफ ग्रेच्यूट स्टडी. सोलदेवानली, बैंगलुरू (कर्ना.) भारत
(24) प्रो. डॉ. गणेशप्रसाद दावरे ..... प्राध्यापक, वाणिज्य, शासकीय महाविद्यालय, बड़वाह (म.प्र.) भारत
(25) प्रो. डॉ. एच.के. चौरसिया ..... प्राध्यापक, वनस्पति, टी.एन.वी. महाविद्यालय, भागलपुर (बिहार) भारत
(26) प्रो. डॉ. विवेक पटेल ..... प्राध्यापक, वाणिज्य, शासकीय महाविद्यालय, कोतमा, जिला अनूपपुर (म.प्र.) भारत
(27) प्रो. डॉ. दिनेशकुमार चौधरी ..... प्राध्यापक, वाणिज्य, राजमाता सिन्धिया शासकीय कन्या महाविद्यालय, छिन्दवाड़ा (म.प्र.) भारत
(28) प्रो. डॉ. आर.के. गौतम ..... प्राध्यापक ,वाणिज्य, शासकीय मानकुंवर बाई कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, जबलपुर (म.प्र.) भारत
(29) प्रो. डॉ. जितेन्द्र के. शर्मा ..... प्राध्यापक, वाणिज्य एवं प्रबंध, महर्षि दयानन्द विश्वविद्यालय केन्द्र, पालवाल (हरियाणा) भारत
(30) प्रो. डॉ. गायत्री वाजपेयी ..... प्राध्यापक, हिन्दी, शासकीय महाराजा स्वशासी स्नातकोत्तर महाविद्यालय, छतरपुर (म.प्र.) भारत
(31) प्रो. डॉ. अविनाश शेन्द्रे ..... विभागाध्यक्ष, अर्थशास्त्र, प्रगति कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, डोम्बीवली, मुम्बई (महाराष्ट्र) भारत
(32) प्रो. डॉ. जी.सी. मेहता ..... पूर्व अध्यक्ष, अध्ययन मण्डल वाणिज्य, देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इंदौर (म.प्र.) भारत
(33) प्रो.डॉ. बी.एस. मक्कड़ ..... अध्यक्ष, अध्ययन मण्डल वाणिज्य, विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत
(34) प्रो.डॉ. पी.पी. मिश्रा ..... विभागाध्यक्ष, गणित, छत्रसाल शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, पन्ना, (म.प्र.) भारत
(35) प्रो.डॉ. सुनील कुमार सिकरवार.... प्राध्यापक, रसायन, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, झाबुआ (म.प्र.) भारत
(36) प्रो.डॉ. के.एल. साहू ..... प्राध्यापक, इतिहास, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, नरसिंहपुर (म.प्र.) भारत
(37) प्रो.डॉ. मालिनी जॉनसन ..... प्राध्यापक, वनस्पति, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, महू (म.प्र.) भारत
(38) प्रो.डॉ. विशाल पुरोहित ..... एम.एल.बी. शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, किला मैदान, इन्दौर (म.प्र.) भारत

सम्पादकीय सलाहकार मण्डल (Editorial Advisory Board, INDIA) मानद्

(01) प्रो. डॉ. नरेन्द्र श्रीवास्तव ..... प्रसिद्ध वैज्ञानिक 'इसरो' बैंगलुरू (कर्नाटक) भारत
(02) प्रो. डॉ. आदित्य लूनावत ..... निदेशक, स्वामी विवेकानंद कॅरियर मार्गदर्शन प्रकोष्ठ उच्च शिक्षा विभाग, म.प्र. शासन, भोपाल (म.प्र.) भारत
(03) प्रो. डॉ. संजय जैन ..... पूर्व सहायक नियंत्रक, म.प्र. व्यावसायिक परीक्षा मंडल, भोपाल (म.प्र.) भारत
(04) प्रो. डॉ.एस.के. जोशी ..... प्राचार्य, शासकीय कला एवं विज्ञान महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.) भारत
(05) प्रो. डॉ. जे.पी.एन. पाण्डेय ..... प्राचार्य, शासकीय स्वशासी कन्या स्नातकोत्तर उत्कृष्टता महाविद्यालय, सागर (म.प्र.) भारत
(06) प्रो. डॉ. सुमित्रा वास्केल ..... प्राचार्य, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, खरगोन (म.प्र.) भारत
(07) प्रो. डॉ. पी.आर. चन्देलकर ..... प्राचार्य, शासकीय कन्या महाविद्यालय, छिन्दवाड़ा (म.प्र.) भारत
(08) प्रो. डॉ. मंगल मिश्र ..... प्राचार्य, श्री क्लॉथ मार्केट, कन्या वाणिज्य महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.) भारत
(09) प्रो. डॉ.आर.के. भट्ट ..... प्राचार्य, शासकीय महिला महाविद्यालय, नरसिंहपुर (म.प्र.) भारत
(10) प्रो. डॉ. अशोक वर्मा ..... पूर्व संकायाध्यक्ष, वाणिज्य (डीन) देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इंदौर (म.प्र.) भारत
(11) प्रो. डॉ. टी.एम. खान ..... प्राचार्य, शासकीय महाविद्यालय, धामनोद, जिला–धार (म.प्र.) भारत
(12) प्रो. डॉ. राकेश ढण्ड ..... संकायाध्यक्ष, विद्यार्थी कल्याण विभाग विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत
(13) प्रो. डॉ. अनिल शिवानी ..... अध्यक्ष, वाणिज्य एवं प्रबंध विभाग श्री अटल बिहारी वाजपेयी हिंदी विश्वविद्यालय, भोपाल (म.प्र.) भारत
(14) प्रो. डॉ. पद्मसिंह पटेल ..... अध्यक्ष, वाणिज्य विभाग शासकीय महाविद्यालय, महिदपुर (म.प्र.) भारत
(15) प्रो. डॉ. मंजु दुबे ..... संकायाध्यक्ष (डीन), गृह विज्ञान संकाय, जीवाजी विश्वविद्यालय, ग्वालियर (म.प्र.) भारत
(16) प्रो. डॉ.ए.के. चौधरी ..... प्राध्यापक, मनोविज्ञान, राजकीय मीरा कन्या महाविद्यालय, उदयपुर (राज.) भारत
(17) प्रो. डॉ. प्रदीप सिंह राव ..... प्राचार्य, शासकीय महाविद्यालय, सैलाना, जिला–रतलाम (म.प्र.) भारत
(18) प्रो. डॉ. पी.के. मिश्रा ..... प्राध्यापक ,प्राणी शास्त्र, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, बैतूल (म.प्र.) भारत
(19) प्रो. डॉ. के. के. श्रीवास्तव ..... प्राध्यापक ,अर्थशास्त्र, विजया राजे शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, ग्वालियर (म.प्र.) भारत
(20) प्रो.डॉ. कान्ता अलावा ..... प्राध्यापक, राजनीति विज्ञान, शहीद भीमा नायक शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, बड़वानी (म.प्र.) भारत
(21) प्रो. डॉ. एस. के. जैन ..... प्राध्यापक ,वाणिज्य, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, झाबुआ (म.प्र.) भारत
(22) प्रो. डॉ. किशन यादव ..... एसोसिएट प्रोफेसर (राजनीति विज्ञान) शोध केन्द्र, बुन्देलखण्ड कॉलेज, झांसी (उ.प्र.) भारत
(23) प्रो. डॉ. बी.आर.नलवाया ..... प्राचार्य, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मंदसौर (म.प्र.) भारत
(24) प्रो. डॉ. नट्वरलाल गुप्ता ..... अध्यक्ष, अध्ययन मण्डल वाणिज्य, देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इंदौर (म.प्र.) भारत
(25) प्रो.डॉ. पुरुषोत्तम गौतम ..... संकायाध्यक्ष, वाणिज्य (डीन) देवी अहिल्या विश्वविद्यालय,इन्दौर (म.प्र.) भारत
(26) प्रो. डॉ. एस. सी. मेहता ..... प्राध्यापक एवं अध्यक्ष, शासकीय भगत सिंह स्नातकोत्तर महाविद्यालय, जावरा (म.प्र.) भारत

****

निर्णायक मण्डल (Referee Board) मानद्

**** विज्ञान संकाय ****

गणित:– ..... **(1) प्रो. डॉ.वी.के. गुप्ता,** संचालक वैदिक गणित एवं शोध संस्थान, उज्जैन (म.प्र.)

भौतिकी:– ..... **(1) प्रो. डॉ. आर.सी. दीक्षित**, शासकीय होल्कर विज्ञान महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.)

(2) प्रो.डॉ. नीरज दुबे, शासकीय कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, सागर (म.प्र.)

कम्प्यूटर विज्ञान:– ..... **(1) प्रो. डॉ. उमेश कुमार सिंह,** अध्यक्ष कम्प्यूटर अध्ययनशाला, विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)

रसायन:– ..... **(1) प्रो. डॉ. मनमीत कौर मक्कड़,** शासकीय कालिदास कन्या महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)

वनस्पति:– ..... **(1) प्रो. डॉ. सुचिता जैन,** राजकीय महिला स्नातकोत्तर महाविद्यालय, कोटा (राज.)

(2) प्रो.डॉ. अखिलेश आयाची, शासकीय आदर्श विज्ञान महाविद्यालय, जबलपुर (म.प्र.)

प्राणिकी:– ..... **(1) प्रो.डॉ. मंजुलता शर्मा,** एम.एस.जे., राजकीय महाविद्यालय, भरतपुर (राज.)

(2) प्रो. डॉ. अमृता खत्री, माता जीजाबाई शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मोती तबेला, इन्दौर (म.प्र.)

सांख्यिकी:– ..... **(1) प्रो. डॉ. रमेश पण्ड्या,** शासकीय कला एवं विज्ञान महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.)

सैन्य विज्ञान:– ..... **(1) प्रो. डॉ. कैलाश त्यागी,** शासकीय मोतीलाल विज्ञान महाविद्यालय, भोपाल (म.प्र.)

जीव रसायन:– ..... **(1) डॉ. कंचन डींगरा,** शासकीय एम.एच. गृह विज्ञान महाविद्यालय, जबलपुर (म.प्र.)

भूगर्भ शास्त्र:– ..... **(1) प्रो. डॉ. आर.एस. रघुवंशी,** शासकीय मोतीलाल विज्ञान महाविद्यालय, भोपाल (म.प्र.)

(2) प्रो. डॉ. सुयश कुमार, शासकीय आदर्श महाविद्यालय, ग्वालियर (म.प्र.)

चिकित्सा विज्ञान:– ..... **(1) डॉ. एच.जी. वरूधकर,** आर.डी. गारड़ी मेडिकल महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)

सूक्ष्म जीव विज्ञान:– ..... **(1) अनुराग झँवेरी,** बायो केयर रिसर्च (आई) प्रा.लि., अहमदाबाद (गुजरात)

**** वाणिज्य संकाय ****

वाणिज्य :– ..... **(1) प्रो. डॉ. पी.के. जैन,** शासकीय हमीदिया महाविद्यालय, भोपाल (म.प्र.)

(2) प्रो. डॉ. शैलेन्द्र भारल , शासकीय कालिदास कन्या महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)

(3) प्रो. डॉ. लक्ष्मण परवाल, शासकीय वाणिज्य महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.)

**** प्रबंध एवं व्यवसाय प्रशासन संकाय ****

प्रबंध :– ..... **(1) प्रो. डॉ. रामेश्वर सोनी** , अध्यक्ष अध्ययन शाला, विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)

(2) प्रो. डॉ. आनन्द तिवारी , शासकीय स्वशासी स्नातकोत्तर कन्या उत्कृष्टता महाविद्यालय, सागर (म.प्र.)

मानव संसाधन:– ..... **(1) प्रो. डॉ. हरविन्दर सोनी** , पैसेफिक बिजनेस स्कूल, उदयपुर (राज.)

व्यवसाय प्रशासन:– ..... **(1) प्रो. डॉ. कपिलदेव शर्मा ,** राजकीय महिला स्नातकोत्तर महाविद्यालय, कोटा (राज.)

**** विधि संकाय ****

विधि:– ..... **(1) प्रो. डॉ. एस.एन. शर्मा,** प्राचार्य, शासकीय माधव विधि महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)

(2) प्रो. डॉ. नरेन्द्र कुमार जैन, प्राचार्य श्री जवाहरलाल नेहरू स्नातकोत्तर विधि महाविद्यालय, मंदसौर (म.प्र.)

**** कला संकाय ****

अर्थशास्त्र:– ..... **(1) प्रो. डॉ. पी.सी. रांका,** श्री सीताराम जाजू शासकीय कन्या महाविद्यालय, नीमच (म.प्र.)

(2) प्रो. डॉ. जे.पी. मिश्रा, शासकीय महाराजा स्वशासी स्नातकोत्तर महाविद्यालय, छतरपुर (म.प्र.)

(3) प्रो. डॉ. अंजना जैन, एम.एल.बी. शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, किला मैदान, इन्दौर (म.प्र.)

राजनीति:– ..... **(1) प्रो. डॉ. रवींद्र सोहोनी,** शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मंदसौर (म.प्र.)

(2) प्रो. डॉ. अनिल जैन, शासकीय कन्या महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.)

(3) प्रो. डॉ. सुलेखा मिश्रा, मानकुंवर बाई शासकीय कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, जबलपुर (म.प्र.)

दर्शनशास्त्र:– ..... **(1) प्रो. डॉ. हेमन्त नामदेव,** शासकीय माधव कला-वाणिज्य-विधि महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)

समाजशास्त्र:– ..... **(1) प्रो. डॉ. एच.एल. फुलवरे,** शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, धार (म.प्र.)
(2) प्रो. डॉ. इन्दिरा बर्मन , शासकीय गृह विज्ञान महाविद्यालय, होशंगाबाद (म.प्र.)
(3) प्रो. डॉ. उमा लवानिया , शासकीय कन्या महाविद्यालय, बीना, जिला-सागर (म.प्र.)

हिन्दी:– ..... **(1) प्रो. डॉ. चन्दा तलेरा जैन,** अध्यक्ष अध्ययन मण्डल, देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इन्दौर (म.प्र)
(2) प्रो. डॉ. जया प्रियदर्शनी शुक्ला, वनस्थली विद्यापीठ (राज.)
(3) प्रो. डॉ. कला जोशी, श्री अटल बिहारी वाजपेयी शासकीय कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.)

अंग्रेजी:– ..... **(1) प्रो. डॉ. अजय भार्गव,** शासकीय महाविद्यालय, बड़नगर (म.प्र.)
(2) प्रो. डॉ. मंजरी अग्निहोत्री, शासकीय कन्या महाविद्यालय, सीहोर (म.प्र.)

संस्कृत:– ..... **(1) प्रो. डॉ. भावना श्रीवास्तव,** शासकीय स्वशासी महारानी लक्ष्मीबाई कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, भोपाल (म.प्र.)
(2) प्रो. डॉ. बालकृष्ण प्रजापति, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, गंजबासौदा जिला विदिशा (म.प्र.)

इतिहास:– ..... **(1) प्रो. डॉ. नवीन गिडियन,** शासकीय स्वशासी कन्या स्नातकोत्तर उत्कृष्टता महाविद्यालय, सागर (म.प्र.)

भूगोल:– ..... **(1) प्रो. डॉ. राजेन्द्र श्रीवास्तव** शासकीय महाविद्यालय, पिपलियामण्डी, जिला मंदसौर (म.प्र.)
(2) प्रो. डॉ. काजल मोइत्रा , डॉ. सी वी रामन् विश्वविद्यालय, बिलासपुर (छ.ग.)

मनोविज्ञान:– ..... **(1) प्रो. डॉ. कामना वर्मा,** प्राचार्य, शासकीय राजमाता सिंधिया कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, छिन्दवाड़ा (म.प्र.)
(2) प्रो. डॉ. सरोज कोठारी, शासकीय महारानी लक्ष्मीबाई कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, इंदौर (म.प्र.)

चित्रकला:– ..... **(1) प्रो. डॉ. अल्पना उपाध्याय,** शासकीय माधव कला-वाणिज्य-विधि महाविद्यालय उज्जैन (म.प्र.)
(2) प्रो. डॉ. रेखा श्रीवास्तव, महारानी लक्ष्मीबाई शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, भोपाल (म.प्र.)

संगीत:– ..... **(1) प्रो. डॉ. भावना ग्रोवर (कथक),** स्वामी विवेकानन्द सुभारती विश्वविद्यालय, मेरठ (उ.प्र.)
(2) प्रो. डॉ. श्रीपाद अरोणकर, राजमाता सिन्धिया शासकीय कन्या महाविद्यालय, छिन्दवाडा (म.प्र.)

****** गृह विज्ञान संकाय ******

आहार एवं पोषण विज्ञान:– .... **(1) प्रो.डॉ. प्रगति देसाई,** शासकीय महारानी लक्ष्मीबाई कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, इंदौर (म.प्र.)
(2) प्रो. डॉ. मधु गोयल, स्वामी केशवानन्द गृह विज्ञान महाविद्यालय, बीकानेर (राज.)
(3) प्रो. डॉ. संध्या वर्मा, शासकीय कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, रायपुर (छ.ग.)

मानव विकास:– ..... **(1) प्रो. डॉ. मीनाक्षी माथुर,** अध्यक्ष, जयनारायण व्यास विश्वविद्यालय, जोधपुर (राज.)
(2) प्रो. डॉ. आभा तिवारी, अध्यक्ष अध्ययन मण्डल रानी दुर्गावती विश्वविद्यालय, जबलपुर (म.प्र.)

पारिवारिक संसाधन प्रबंध:– ... **(1) प्रो. डॉ. मंजु शर्मा,** माता जीजाबाई शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मोती तबेला, इंदौर (म.प्र.)
(2) प्रो. डॉ. नम्रता अरोरा, वनस्थली विद्यापीठ (राज.)

****** शिक्षा संकाय ******

शिक्षा ..... **(1) प्रो. डॉ. मनोरमा माथुर,** महींद्रा कॉलेज ऑफ एजुकेशन, बैंगलुरू (कर्नाटक)
(2) प्रो. डॉ. एन.एम.जी. माथुर, प्राचार्य एवं डीन पेसेफिक शिक्षा महाविद्यालय, उदयपुर (राज.)
(3) प्रो. डॉ. नीना अनेजा, प्राचार्य, ए.एस. कॉलेज ऑफ एजुकेशन,खन्ना (पंजाब)
(4) प्रो. डॉ. सतीश गिल, शिव कॉलेज ऑफ एजुकेशन, तिगाँव, फरीदाबाद (हरियाणा)

****** आर्किटेक्चर संकाय ******

शारीरिक शिक्षा ..... **(1) प्रो. किरण पी. शिंदे ,** प्राचार्य, स्कूल ऑफ आर्किटेक्चर, आई.पी.एस. एकडेमी, इंदौर (म.प्र.)

****** शारीरिक शिक्षा संकाय ******

शारीरिक शिक्षा ..... **(1) प्रो. डॉ. अक्षयकुमार शुक्ला,** अध्यक्ष शारीरिक शिक्षा पेसेफिक विश्वविद्यालय, उदयपुर (राज.)

****** ग्रन्थालय विज्ञान संकाय ******

ग्रन्थालय विज्ञान ..... **(1) डॉ. अनिल सिरौठिया,** शासकीय महाराजा महाविद्यालय, छतरपुर (म.प्र.)

प्रवक्ता साथी (मानद्)

(01) प्रो. डॉ. देवेन्द्र सिंह राठौड़ ..... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, नीमच (म.प्र.)
(02) प्रो. श्रीमती विजया वधवा ..... शासकीय कन्या महाविद्यालय, नीमच (म.प्र.)
(03) डॉ. सुरेंद्र शक्तावत ..... ज्ञानोदय इंस्टीट्यूट ऑफ मेनेजमेंट एंड टेक्नोलॉजी, नीमच (म.प्र.)
(04) प्रो. डॉ. देवीलाल अहीर ..... शासकीय महाविद्यालय, जावद, जिला नीमच (म.प्र.)
(05) श्री आशीष द्विवेदी ..... शासकीय महाविद्यालय, मनासा, जिला नीमच (म.प्र.)
(06) प्रो. डॉ. मनोज महाजन ..... शासकीय महाविद्यालय, सोनकच्छ, जिला देवास (म.प्र.)
(07) श्री उमेश शर्मा ..... कृष्णा शिक्षा महाविद्यालय, जावी, जिला– नीमच (म.प्र.)
(08) प्रो. डॉ. एस.पी. पंवार ..... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मंदसौर (म.प्र.)
(09) प्रो. डॉ. पूरालाल पाटीदार ..... शासकीय कन्या महाविद्यालय, मंदसौर (म.प्र.)
(10) प्रो. डॉ. क्षितिज पुरोहित ..... जैन कला–वाणिज्य–विज्ञान महाविद्यालय, मंदसौर (म.प्र.)
(11) प्रो. डॉ.एन.के. पाटीदार ..... शासकीय महाविद्यालय, पिपलियामंडी, जिला मन्दसौर (म.प्र.)
(12) प्रो. डॉ. वाय.के. मिश्रा ..... शासकीय कला एवं विज्ञान महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.)
(13) प्रो. डॉ. सुरेश कटारिया ..... शासकीय कन्या महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.)
(14) प्रो. डॉ. अभय पाठक ..... शासकीय वाणिज्य महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.)
(15) प्रो. डॉ. मालसिंह चौहान ..... शासकीय महाविद्यालय, सैलाना, जिला रतलाम (म.प्र.)
(16) प्रो. डॉ. गेंदालाल चौहान ..... शासकीय विक्रम महाविद्यालय, खाचरौद, जिला उज्जैन (म.प्र.)
(17) प्रो. डॉ. प्रभाकर मिश्र ..... शासकीय महाविद्यालय, महिदपुर, जिला उज्जैन (म.प्र.)
(18) प्रो. डॉ. प्रकाश कुमार जैन ..... शासकीय माधव कला वाणिज्य विधि महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)
(19) प्रो. डॉ. कमला चौहान ..... शासकीय कालिदास कन्या महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)
(20) प्रो. डॉ.आभा दीक्षित ..... शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)
(21) प्रो. डॉ. पंकज माहेश्वरी ..... शासकीय महाविद्यालय, तराना, जिला उज्जैन (म.प्र.)
(22) प्रो. डॉ. डी.सी. राठी ..... स्वामी विवेकानंद कॅरियर मार्गदर्शन प्रकोष्ठ, उच्च शिक्षा विभाग, म.प्र. शासन, इंदौर
(23) प्रो. डॉ. अनिता गगराड़े ..... शासकीय होलकर विज्ञान महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.)
(24) प्रो. डॉ. संजय पंडित ..... शासकीय एम.जे.बी. कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मोती तबेला, इन्दौर (म.प्र.)
(25) प्रो. डॉ. रामबाबू गुप्ता ..... शासकीय कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.)
(26) प्रो. डॉ. अंजना सक्सैना ..... शासकीय महारानी लक्ष्मीबाई कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, इंदौर (म.प्र.)
(27) प्रो. डॉ. सोनाली नरगुन्दे ..... पत्रकारिता एवं जनसंचार अध्ययनशाला देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इंदौर (म.प्र.)
(28) प्रो. डॉ. भारती जोशी ..... आजीवन शिक्षण विभाग देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.)
(29) प्रो. डॉ. एम.डी. सोमानी ..... शासकीय एम.जे.बी. कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मोती तबेला, इन्दौर (म.प्र.)
(30) प्रो. डॉ. प्रीति भट्ट ..... शासकीय एन.एस.पी. विज्ञान महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.)
(31) प्रो. डॉ. संजय प्रसाद ..... शासकीय महाविद्यालय, सांवेर, जिला इन्दौर (म.प्र.)
(32) प्रो. डॉ. मीना मटकर ..... सुगनीदेवी कन्या महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.)
(33) प्रो. मोहन वास्केल ..... शासकीय महाविद्यालय, थांदला, जिला – झाबुआ (म.प्र.)
(34) प्रो. डॉ. नितिन सहारिया ..... शासकीय महाविद्यालय, कोतमा, जिला अनूपपुर (म.प्र.)
(35) प्रो. डॉ. मंजु राजोरिया ..... शासकीय कन्या महाविद्यालय, देवास (म.प्र.)
(36) प्रो. डॉ. शहजाद कुरैशी ..... शासकीय नवीन कला एवं विज्ञान महाविद्यालय, मूंदी, जिला खण्डवा (म.प्र.)
(37) प्रो. डॉ. शैल बाला सांधी ..... महारानी लक्ष्मीबाई शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, भोपाल (म.प्र.)
(38) प्रो. डॉ. प्रवीण ओझा ..... श्री भगवत सहाय शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, ग्वालियर (म.प्र.)
(39) प्रो. डॉ.ओमप्रकाश शर्मा ..... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, श्योपुर (म.प्र.)
(40) प्रो. डॉ. एस.के. श्रीवास्तव ..... शासकीय विजया राजे कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, ग्वालियर (म.प्र.)
(41) प्रो. डॉ. अनूप मोघे ..... शासकीय कमलाराजे कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, ग्वालियर (म.प्र.)
(42) प्रो. डॉ. हेमलता चौहान ..... शासकीय महाविद्यालय, बड़नगर (म.प्र.)
(43) प्रो. डॉ. महेशचन्द्र गुप्ता ..... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, खरगोन (म.प्र.)
(44) प्रो. डॉ. मंगला ठाकुर ..... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, बड़वाह, जिला खरगोन (म.प्र.)
(45) प्रो. डॉ. के.आर. कुम्हेकर ..... शासकीय महाविद्यालय, सनावद, जिला खरगोन (म.प्र.)
(46) प्रो. डॉ. आर.के. यादव ..... शासकीय कन्या महाविद्यालय, खरगोन (म.प्र.)
(47) प्रो. डॉ. आशा साखी गुप्ता ..... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, बड़वानी (म.प्र.)

(48) प्रो. डॉ. बी. एस. सिसोदिया ..... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, धार (म.प्र.)
(49) प्रो. डॉ. प्रभा पाण्डेय ..... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मैहर, जिला– सतना (म.प्र.)
(50) डॉ. राजेश कुमार ..... शासकीय महाविद्यालय अमरपाटन, जिला–सतना (म.प्र.)
(51) प्रो. डॉ. रावेन्द्रसिंह पटेल ..... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, सतना (म.प्र.)
(52) प्रो. डॉ. मनोहरलाल गुप्ता ..... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, राजगढ़ ब्यावरा (म.प्र.)
(53) प्रो. डॉ. मधुसुदन प्रकाश ..... शासकीय महाविद्यालय, गंजबासोदा, जिला–विदिशा (म.प्र.)
(54) प्रो. युवराज श्रीवास्तव ..... सी.वी. रमन विश्वविद्यालय, कोटा–बिलासपुर (छ.ग.)
(55) प्रो. डॉ. सुनील वाजपेयी ..... शासकीय तिलक स्नातकोत्तर महाविद्यालय, कटनी (म.प्र.)
(56) प्रो. डॉ. ए.के. पाण्डे ..... शासकीय कन्या महाविद्यालय, सतना (म.प्र.)
(57) प्रो. डॉ. यतीन्द्र महोबे ..... शासकीय महिला महाविद्यालय, नरसिंहपुर (म.प्र.)
(58) प्रो. डॉ. शशि प्रभा जैन ..... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, आगर–मालवा (म.प्र.)
(59) प्रो. डॉ. नियाज अंसारी ..... शासकीय महाविद्यालय,सिंहावल, जिला सीधी (म.प्र.)
(60) प्रो. डॉ. अर्जुनसिंह बघेल ..... शासकीय महाविद्यालय, हरदा (म.प्र.)
(61) डॉ. सुरेश कुमार विमल ..... शासकीय महाविद्यालय, भैंसादेही, जिला बैतूल (म.प्र.)
(62) प्रो. डॉ. अमरचन्द्र जैन ..... शासकीय कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, सागर (म.प्र.)
(63) प्रो. डॉ. रश्मि दुबे ..... शासकीय स्वशासी कन्या स्नातकोत्तर उत्कृष्टता महाविद्यालय, सागर (म.प्र.)
(64) प्रो. डॉ. ए.के. जैन ..... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, बीना, जिला– सागर (म.प्र.)
(65) प्रो. डॉ. संध्या टिकेकर ..... शासकीय कन्या महाविद्यालय, बीना, जिला– सागर (म.प्र.)
(66) प्रो. डॉ. राजीव शर्मा ..... शासकीय नर्मदा स्नातकोत्तर महाविद्यालय, होशंगाबाद (म.प्र.)
(67) प्रो. डॉ. रश्मि श्रीवास्तव ..... शासकीय गृह विज्ञान महाविद्यालय, होशंगाबाद (म.प्र.)
(68) प्रो. डॉ. लक्ष्मीकांत चंदेला ..... शासकीय स्वशासी स्नातकोत्तर महाविद्यालय, छिंदवाड़ा (म.प्र.)
(69) प्रो. डॉ. बलराम सिंगोतिया ..... शासकीय महाविद्यालय सौंसर, जिला–छिन्दवाड़ा (म.प्र.)
(70) प्रो.डॉ. विम्मी बहल ..... शासकीय महाविद्यालय, काला पीपल, जिला – शाजापुर (म.प्र.)
(71) प्रो. डॉ. अमित शुक्ल ..... शासकीय ठाकुर रणमतसिंह महाविद्यालय, रीवा (म.प्र.)
(72) प्रो. डॉ. मीनू गजाला खान ..... शासकीय महाविद्यालय, मक्सी, जिला–शाजापुर (म.प्र.)
(73) प्रो. डॉ. पल्लवी मिश्रा ..... शासकीय महाविद्यालय, नई गढ़ी, जिला– रीवा (म.प्र.)
(74) प्रो. डॉ. एम.पी. शर्मा ..... शासकीय महाविद्यालय, दतिया (म.प्र.)
(75) प्रो. डॉ. जया शर्मा ..... शासकीय कन्या महाविद्यालय, सीहोर (म.प्र.)
(76) प्रो. डॉ. सुशील सोमवंशी ..... शासकीय महाविद्यालय, नेपानगर, जिला बुरहानपुर (म.प्र.)
(77) प्रो. डॉ. इशरत खान ..... शासकीय महाविद्यालय, रायसेन (म.प्र.)
(78) प्रो. डॉ. कमलेशसिंह नेगी ..... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, सीहोर (म.प्र.)
(79) प्रो. डॉ. भावना ठाकुर ..... शासकीय महाविद्यालय रेहटी, जिला सीहोर (म.प्र.)
(80) प्रो. डॉ. केशवमणि शर्मा ..... पंडित बालकृष्ण शर्मा नवीन शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, शाजापुर (म.प्र.)
(81) प्रो. डॉ. रेणु राजेश ..... शासकीय नेहरु अग्रणी महाविद्यालय, अशोक नगर (म.प्र.)
(82) प्रो. डॉ. अविनाश दुबे ..... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, खण्डवा (म.प्र.)
(83) प्रो. डॉ. वी.के. दीक्षित ..... छत्रसाल शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, पन्ना (म.प्र.)
(84) प्रो. डॉ. राम अवेधश शर्मा ..... एम.जे.एस. शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, भिण्ड (म.प्र.)
(85) प्रो. डॉ. मनोज कुमार अग्निहोत्री ..... सरोजिनी नायडू शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, भोपाल (म.प्र.)
(86) प्रो. डॉ. समीर कुमार शुक्ला ..... शासकीय चन्द्र विजय महाविद्यालय, डिण्डोरी (म.प्र.)
(87) प्रो. अपराजीता भार्गव ..... अध्यापक ,आर. डी. पब्लिक स्कूल, बैतूल (म.प्र.) भारत
(88) प्रो. डॉ. अनूप परसाई ..... शासकीय जे. योगानन्दन छत्तीसगढ़ स्नातकोत्तर महाविद्यालय, रायपुर (छत्तीसगढ़)
(89) प्रो. डॉ. अनिलकुमार जैन ..... वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा (राज.)
(90) प्रो. डॉ. अर्चना वशिष्ठ ..... राजकीय राजऋषि महाविद्यालय अलवर (राज.)
(91) प्रो. डॉ. कल्पना पारीख ..... एस.एस.जी. पारीख स्नातकोत्तर कॉलेज, जयपुर (राज.)
(92) प्रो. डॉ. गजेन्द्र सिरोहा ..... पेसिफिक विश्वविद्यालय, उदयपुर (राज.)
(93) प्रो. डॉ. कृष्णा पैन्सिया ..... हरिश आंजना महाविद्यालय, छोटीसादड़ी, जिला– प्रतापगढ़ (राज.)
(94) प्रो. डॉ. प्रदीप सिंह ..... केंद्रीय विश्व विद्यालय हरियाणा, महेंद्रगढ़ (हरियाणा)
(95) प्रो. डॉ. स्मृति अग्रवाल ..... शोध सलाहकार, नई दिल्ली
(96) प्रो. डॉ. कविता भदौरिया ..... शासकीय कन्या महाविद्यालय, बड़वानी (म.प्र.) भारत

Analysis Of Water Quality Using Some Physico-Chemical And Biological Parameters Of The Kinds Of Water Used For Drinking As Well As Domestic In Gandhinagar And Bairagarh Area Of Bhopal

Santosh Ambhore *

Abstract - The current study was carried out to analyze and evaluate the drink water samples collected from residential areas of Bairagarh and Gandhinagar area. This Paper deals with the Physico - chemical and Biological Parameters selected study area particularly Monthly Changes Such as Water Temperature, Turbidity, Total Dissolved Solids, pH, Dissolved Oxygen, Free Carbon dioxide and Total Hardness, Chlorides, Alkalinity, Phosphate and Nitrates were analyzed for a decided study period .The level of TDS, alkalinity, Ca, Mg, Hardness, Electrical Conductivity, pH, and selected heavy metals (Fe, Cr, Cd & Zn) were determined. The results showed that all water samples have vary pH. All these water samples have very low concentration of Fe and Zn. The concentration of Cr and Cd was observed higher than the prescribed limit of WHO and ISI. In the light of this analysis we can conclude that all these water samples require some treatment before their use for drinking as well as domestic purposes.
Keywords - Analyze, concentration, samples, parameter, accuracy, suitability

Introduction - Water is the most vital element among the natural resources, and is critical for the survival of all living organisms including human, food production, and economic development. Good quality of water resources depends on a large number of physico-chemical parameters and biological characteristics. Many researches are being carried out till present Anilakurmary et al., 2007; Prabu et al., 2008; Raja et al., 2008; Prasanna and Ranjan, 2010. In order to assess water quality index we have carried out the physicochemical analysis of water in study area. The aim of the study is too revelled out the pollution status of sampling stations in terms of physico-chemical characteristics of water.

Study Area - Present district of Bhopal study area Gandhinagar and Bairagarh area; was carved out of Seehore district in 1972 .Bhopal is the picturesque capital of Madhya Pradesh and known as “city of lakes”. Bhopal territory the largest state of India is situated on 23°16’N Latitude and 77°25' Longitude and is located on Hard pink sand stone of Vindhya region.

SS_1 Jhirniya/ **SS_2** Gondipura/ **SS_3** One Tree Hill Area / **SS_4** Jatkhedi / **SS_5** Pardi Mohalla

Material and Method - The Water Samples from Gandhinagar and Bairagarh area and surroundings were collected from different stations in the morning hours between 10 to 12 am in Polythene jerry cane regularly for every month. The Water samples were immediately brought in to Laboratory for the Estimation of various physico - chemical parameters, like water temperature and pH were recorded at the time of sample collection by using Thermometer and Pocket Digital pH Meter. While other Parameters Such as DO, TDS, Free CO_2, Hardness, Alkalinity, Chlorides, Phosphate and Nitrate were estimated in the Laboratory by using Indian Standard Procedures (Titration method, Atomic Absorption Spectrophotometer (AAS) Thermo M5Model)

Results and discussion - Mean values of physico-chemical and biological parameters are presented in Table-1 and correlation coefficients are shown in Table2

Water temperature - The ambient water temperature measure by good grade mercury Thermometer having the accuracy of 0.2°C and a range of 0 to 50°C.In this study temperature ranges from 17-20^{0}c at various stations.

pH - During present study water pH values were found 4.52 to 6.1 throughout the study period The high values may be due to attributed sewage discharged by surrounding city and agricultural fields. The pH value note at the sampling station by the Lovibond pH comparator using universal pH indicator and later confirmed by PC-DPL-Kota made digital pH meter in the laboratory .

Total Hardness - In the present study total hardness ranged from 210 to 440 ppm in different sampling stations .These high values may be due to the addition of calcium and magnesium salts. The increase in hardness can be attributed to the decrease in water volume and increase in the rate of evaporation at high temperature. Hujare (2008) reported total hardness was high during summer than rainy season and winter season.

Dissolved Oxygen - In the present study the DO values found from 5.60 to 8.395 mg/l .Dissolved oxygen concentrate was 5mg/l throughout the year the reservoir is productive for fish culture Benerjee (1967) Torzwall (1957);

* Deptt. of Chemistry, Government Motilal Vigyan Mahavidyalaya, Bhopal (M.P.) INDIA

Rani et al., (2004) also reported lower values of Dissolved oxygen in summer season due to higher rate of decomposition of organic matter and limited flow of water in low holding environment due to high temperature.

Biochemical Oxygen Demand (BOD) - Biological oxygen Demand (BOD) is an important parameter to the oxygen required to degradation of organic matter. During the study period BOD recorded from 1.62 to 4.82 ppm which is within the permissible range . Devaraju et al (2005) and Maddur Lake and Garg et al., 2010 has also made similar observations .

COD (Chemical Oxygen Demand) - Take 20ml water sample in a 200 ml flask. Then 10 ml of 0.25N $K_2Cr_2O_7$ solution, 30 ml of concentrated H_2SO_4, a pinch of Ag_2SO_4 and mercuric sulphate added and refluxed for 2 hours in a water bath. After two hours, it is cooled down and distilled water add to make its volume 140 ml. 2 to 3 drops ferroin indicator added to refluxed sample. Mixed thoroughly and titrated with 0.1 N ferrous ammonium sulphate to brick red colour end point. A blank done with distilled water; chemical oxygen demand varies with the ranges of 12.10-52.00 ppm in selected study period.

OBSERVATION TABLE – 1 (See in the next page)

CORELATION TABLE - 2 (See in the next page)

Conclusion - After getting all statistical analysis physico-chemical analysis reveals the present status of drinking water quality of gandhinagar locality of bhopal is suitable for drinking purposes except in unprocessed water, sewage mixed drinking water and turbid drinking water due to industrial pollutants as well as waste. The quality of physico-chemical falls within the standard limits of WHO standards. (WHO, Guidelines for drinking water quality Vol.**1** 1984, NEERI(1986),APHA (1992),BIS (1991); Periodic monitoring and continuous disinfection of drinking water at the site of each storage tank during supply is necessary. This indicates that the water of selected study area is suitable for drinking purposes if processed water sources are protected hygienically and after proper required treatment Kataria, H.C. and Ambhore Santosh (2009).Vol. 4(2), 433-434 , , Theotia, SPS and Teotia, Enderic Current World Environment, 3,209-210 (2008), Iqbal, S.A.

References :-

1. Anilakumary KS, Abdul Aziz PK, Natrajan P., (2007), Water quality of the Adimalathma estuary southwest coast of India, Journal of Marine biological association of India, 49, pp 1-6.
2. APHA 1998. Standard methods for the examination ofwater and waste water,. *2nd ed. AmericanPublic Health Association, Washington, D.C..* .
3. Banerjea S. M., (1967), Water quality and soil condition of fishponds in states of India in relation to fish production, Indian journal of Fisheries, 14(1&2), pp 115-144.
4. BIS(1991) Bureau of Indian Standards Drinking Water Specification Ist revision ISS 10500. Edition, American Public Health Association, Washington D. C.
5. Devaraju TM, Venkatesha MG. Singh S., (2005), Studies on physic-chemical parameters of Muddur lake with reference to suitability for aquaculture. Nat. Environment and pollution technology, 4, pp 287-290.
6. Garg RK, Saksena DN, Rao RJ., (2006b). Assessment of physic-chemical water quality of Harsi Reservoir, district Gwalior, Madhya Pradesh, Journal of Ecophysiology and Occupational Health, 6, pp 33-40.
7. Hujare, M.S., (2008), Seasonal variation of physico-chemical parameters in the perennial tank of Talsande, Maharashtra, Ecotoxicology and Environmental Monitoring, 18(3), pp 233-242
8. ICMR:(1975) Manual of standard of quality for drinking water supplies special report series series no.44 2nd edition .
9. Kadam, M. S. Pampatwar D. V. and Mali R.P., (2007), Seasonal variations in different physico-chemical characteristics in Mosoli reservoir of Parbhani district, Maharashtra, Journal of aquatic biology, 22(1), pp 110-112.
10. Kataria, H.C. and Ambhore Santosh : Assessment of water quality of Gandhinagar area of Bhopal city, M.P. (India), current world Environment, Vol. 4(2), 433-434 (2009).
11. NEERI(1986) manual on water and waste water analysis National Environmental Engineering Research Institute, Nagpur.
12. Prabu VA, Rajkumar M, Perumal P., (2008), Seasonal variations in physicochemical characteristics of Pichavaram mangroves, southeast coast of India, Journal of Environmental Biology, 29(6), pp 945-950.
13. Prasanna M, Ranjan P C., (2010). Physico-chemical properties of water collected from Dhamra estuary, International Journal of Environmental Science, 1(3), pp 334-342.
14. Rani, R., Gupta, B.K and Srivastava, K.B.L., (2004), Studies on water quality assessment in Satna city (M.P): Seasonal parametric variations, Nature environment and pollution technology, 3(4), pp 563-56
15. Salve, V. B. and Hiware C. J. (2008): Study on water quality of Wanparakalpa reservoir Nagpur, Near Parli Vaijnath, District Beed. Marathwada region, J. Aqua. Biol., 21(2): 113-117.
16. Theotia, SPS and Teotia, Enderic : Fluoride Bones and Teeth update, J. Thombal, D.U. et al. : Fluorides in some groundwater samples of Sailu Tehsil, Current World Environment, 3,209-210 (2008).
17. WHO Hardness in drinking water ,Background documents for developments of WHO guideline for drinking water quality series No:WHO/HSE/WSH/ 10.01/10/Rev/1.World Health Organization Geneva(2011 b)

OBSERVATION TABLE – 1

**= maximum value * = minimum value

Mean seasonal value

parameter	Unit	SS_1	SS_2	SS_3	SS_4	SS_5
Temperature	0^0C	18	17*	20**	19	17
pH	-	4.52*	5.4	6.1**	5.7	6.0
Elect.Cond.	µ mhos/cm^{-1}	218*	270	382	402**	374
Free CO_2	ppm	6.10*	7.24	8.72	11.47**	10.44
T-H	ppm	320	440**	400	210*	280
Ca-H	ppm	215	290**	240	104*	134
Mg-H	ppm	105*	150	160**	106	146
D.O.	ppm	1.12	1.10*	1.82	2.12	2.42**
B.O.D.	ppm	1.62*	1.84	2.84	3.92	4.82**
C.O.D.	ppm	12.42	12.10*	30.24	52.00**	40.84

CORELATION TABLE-2

	1	2	3	4	5	6	7	8	9	10	11
1	1										
2	0.64478	1									
3	0.24127	-0.8725	1								
4	0.09269	0.52447	0.78305	1							
5	0.70850	0.51898	-0.2535	-0.0876	1						
6	0.70700	0.49924	-0.2481	-0.0798	0.9164	1					
7	0.59697	0.82794	-0.7109	0.5737	0.4383	0.4029	1				
8	0.63442	0.22154	0.0470	-0.2824	0.3971	0.5558	0.2074	1			
9	0.18218	-0.4985	0.5401	-0.5096	-0.064	-0.1642	-0.4079	-0.4418	1		
10	0.32729	0.02882	-0.2892	0.1271	-0.2018	-0.415	0.11947	-0.2992	-0.006	1	
11	0.56319	0.599107	-0.5057	0.489062	0.297495	0.444357	0.705021	0.196479	-0.10	-0.3	1

****

Size Dependant Synthesis of Advance Material of Mn Doped ZnS Nanoparticles

Dr. U. S. Patle *

Abstract - Manganese doped zinc sulphide nanoparticles have been prepared by chemical route technique by mixing aqueous solutions of zinc chloride and sodium sulphide in presence of mercaptoethenol at room temperature. The absorption spectra of ZnS:Mn Commercially available ZnS crystal are compared. It is observed that in case of nanoparticles absorption starts at lower energy, which may be due to surface states, where as the absorption spectra of commercial ZnS particles shows slow increase in absorption indication that there are band tails. Maximum absorption is found at 5.4 eV in case of nanoparticles and at 4.3 eV in bulk ZnS showing that energy levels are pushed up to higher values by quantum confinement. The sample ware characterized by scanning electron microscope. The crystallites range between 300 to 500 nm. The variation of particles size dependent on concentration of mercaptoethanol used for synthesis of ZnS : Mn nanoparticles is reported.

Introduction - Nanoparticle is an ultrafine particle whose physical dimension lie in an approximate range of few nm to few hundred nm. The study of optical properties of nanocrystals has become the topic of both theoretical and experimental interest. The nanocrystalline semiconductor exhibit the "quantum size effect" [1-3] and possesses physical properties that are intermediate between those corresponding to the bulk solids and molecules. Another important factor associated with nanocrystallites is the large surface to volume ratio which results in electronics states within the band gap of semiconductor. These sates are called surface states and influences photoluminescence and Raman spectra [4]. Absorption is a process in which a photon of known energy excites an electron from lower to higher energy state. The absorption spectra of materials give a clear picture of energy levels density of state and allowed transitions in a material. In case of nanocrystallites, the electrons, holes and excitons have limited space to move and have limited allowed values of energy. Thus their energy spectrum is quantized [5].ZnS is known to be a direct band gap II-VI semiconductor having band gap of 3.8 eV. The small Bohr exciton radius of ZnS has prompted several workers to synthesize doped or undoped ZnS quantum dots in the past [6-8], and such synthesis with narrow size distribution is relevant even today. These quantum particles have demonstrated high luminescence efficiencies and remarkably short luminescence decay times. In addition, the nature of the chemical treatment can dramatically effect the emission and its kinetics without affecting the absorption spectrum.

Experimental - The most important step in the studies of nanoparticles is their synthesis. It is a great challenge to synthesis particles of nanometer dimensions with narrow size distribution without any impurity. Various methods have been attempted for the synthesis. Until 1980, nanoparticles could be obtained by molecular beam epitaxy technique combined with lithography. Such techniques are not only difficult but also expensive and are inaccessible to most of the scientists.

L.E. Brus and co-workers in USA [9] showed that semiconductor nanoparticles could be obtained by chemical route and also in colloidal solutions of could be grown in polymer matrix. There was sudden increase in the activity of nanoparticles research after 1982. Presently, nanoparticles of manganese doped zinc sulphide have been prepared by chemical route [5] for luminescence studies. For preparing ZnS nanoparticles aqueous solution of zinc chloride ($ZnCl_2$), mercaptoethanol (C_2H_5OSH) and sodium sulphide (Na_2S) each with $1x10^{-2}$ mole are prepared and equal volume of each solution is used for the reaction. First mercaptoethanol solution was added drop by drop to $ZnCl_2$ (+ $MnCl_2$ for case of doping) solution at the rate of 1 mm per minute, while stirring it continuously so that solutions are properly mixed. The Na_2S solution was also added in a similar manner. Presence of mercaptoethanol limits the size of ZnS crystals to nanometer range.

$$ZnCl_2 + Na_2S \longrightarrow ZnS + 2\,NaCl$$

ZnS precipitated being insoluble in water, the presence of mercaptoethanol does not allow the particle size to ground. Mercaptoethanol concentration may be changed to obtain nanoparticles of different sizes. The end product is washed thoroughly in double distilled water to remove any excess sodium sulphide which may be present. Finally,

* (Physics) Govt. Narmada Post Graduate College, Hoshangabad (M.P.) INDIA

the solution is centrifuged and the precipitate obtained is air-dried. For the sample prepared by the chemical route. In the present case Mn concentration of 0.2 mole was kept constant in ZnS synthesis and that of mercaptoethanol varied – 1, 2, 4, 6, drops for different ZnS: Mn^{2+} phosphors.

Results And Discussion - Figure 1 shows the optical micrograph of Mn doped ZnS nanocrystals by scanning electron microscope of Stereoscan 430 made by Leica Company. By the microscope fractal are observable in sample whose thickness range in between 300 nm to 500 nm. Under optical microscope the fractals appear but when sample are zoomed to higher magnifications they are found to consist of several crystallites. Quantum size effects may be observed for these nanocrystallites whose thickness is in the range of 300 nm to 500 nm and exhibit branched fractals [10]. Figure 2 shows the optical absorption spectra of ZnS:Mn nanoparticles. We see that there is uniform absorption in range 440 - 380 nm, then some increase in absorption is seen in the range of 380 - 340 nm. After this there is a sudden rise in the absorption coefficient at 333 nm. Absorption again starts increasing at 275 nm giving a maximum peak at 226 nm. The photon energy corresponding to wavelength is calculated by the following formula $E_g = hc / \lambda$. Where h is Planck's constant, c is speed of light in vacuum and λ is wavelength. We observe that absorption is more in case if bulk ZnS, this may be due to the greater quality of the bulk ZnS powder as compared to the nanocrystals. In case of nanoparticles absorption starts at lower energy 3.4 eV and shoot up is also at lower energy 3.7 eV, where as the band gap of ZnS is 3.8 eV. This indicates that there are some energy states in the forbidden band gap also. These may be the states due to Mn^{2+} or due to surface states, since surface to volume ratio is high in case of nanoparticles. Again increase in absorption at 275 nm gives the band gap for the nanocrystals as 4.5 eV with maximum absorption at 5.4 eV. The absorption spectra of commercially available ZnS particles shows slow increase in absorption with the photon energy from 3.6 eV onwards indicating that there are band tails. Maximum absorption is obtained at 4.3 eV i.e. at lower energy as compared to nanoparticles. This indicates that energy levels are pushed up to higher values in case of nanocrystals due to quantum confinement.

Figure 3 shows the X-ray diffraction (XRD) patterns of the manganese doped zinc sulphide phosphors prepared with different concentration of capping agent. The XRD measurements demonstrate that the particles have the Zinc-blende structure. Figure 3 (a) shows three peaks are observed for concentration of mercaptoethanol is zero. With increasing the concentration of mercaptoethanol, third peak merges in second peak due to more capping agent. The broad XRD lines are indicative of small size ZnS nanoparticles. Form Debye-Scherer equation [11] the average sizes of the nanoparticle widths of these lines. The size of particles observed are 2.8 nm, 2.1 nm, 1.95nm, and 1.84 nm for concentration of mercaptoethanol are 1,2,4,6 drops, respectively. These patterns confirm the ZnS: Mn^{2+} prepared in nanocrystalline form and the size of particle is dependent on the concentration of mercaptoethanol use in synthesis of ZnS: Mn^{2+}. The change of the crystal field strength in ZnS nanoparticles has been investigated by Chen et al [12] by observing the change of the excitation spectra of weaker than that of bulk ZnS:Mn, and the strength decreases with decreasing size . The mercaptoethanol used as capping agent, in synthesis is of the nanoparticle of ZnS phosphor. Hence capping agent decreases the field strength of ZnS nanoparticle and characteristics of ZnS nanoparticles is change as compared to bulk.

Conclusions - The studies reveal that nanocrystals of Mn doped ZnS can be prepared by chemical route with narrow size distribution. Scanning electron micrographs clearly indicate that nanoparticles of size 300 nm – 500nm have been obtained. The size of the particles of ZnS: Mn^{2+} decreased with increasing the mercaptoethanol concentration use in synthesis of manganese doped zinc sulphide phosphors is observed. The crystal field strength of synthesis materials is dependent on the synthesis of nanoparticles.

References :-

1. A. L. Efrons and A.L. Efros Sov. Phys. Semicon. 16 (1982) 722.
2. A.K. Akimov and A.A. Bnuschenkoi JETP Lett., 40 (1984) 1136.
3. L.E. Brus J. Phys. Chem. 90 (1986) 2555.
4. B.P. Chandra Proc. National seminar on Luminescence and its application (2001) 11.
5. A. A. khosravi, M. Kundu, G.S. Shekhawat, R.P. Gupta, A.K. Sharma, P.D. Vyas, S.K. Kulkarni Appl. Physics.Lett. 67 (1995) 2506.
6. W. G. Becher and A.J. Bard, J. Phyo.Chem. 87 (1983) 4888.
7. R.Rossetti, R. Hull, J.M. Gibson and L.E. Brus, J. Chem. Phys. 82 (1985) 552.
8. W. Chen, Z. Wang, Z. Lin, and L.Lin, J Appl. Phys. 82 (1997) 3111.
9. L.E. Brus , Chem.Phys. 80 (1984) 4403.
10. A. awadhwal and M Ramrakhiani, Proc.of NSLA-(2003) 249.
11. Handbook of X-rays edited by E.F. Kaelbhe (Mc Graw-Hill, New York, 1967)
12. W. Chen, R. Sammyneiken, Y., Huang, J.O. Malm, J.O. Wattnberg N.A. Bovin Kotov, J. Appl. Phys. 89, 1120 (2000)

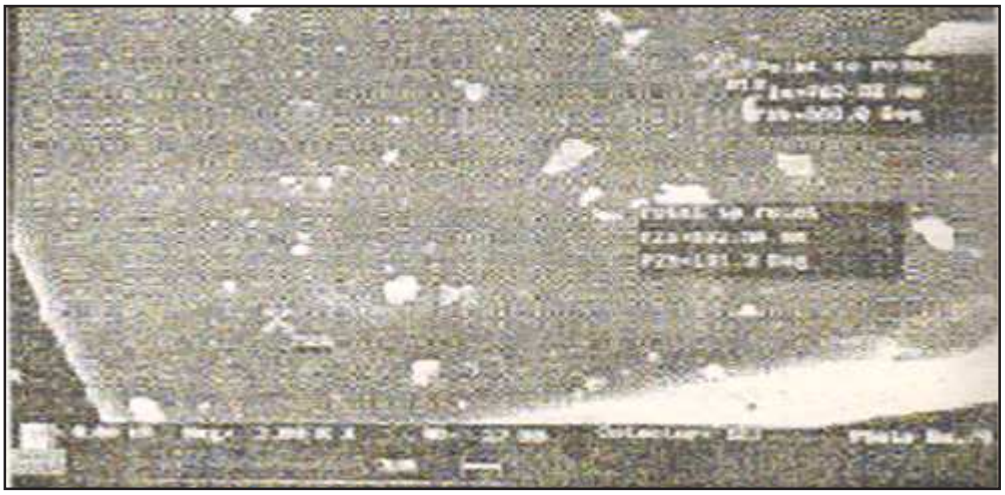

Figure 1 - The scanning electron micrograph of ZnS:Mn nanocrystals.

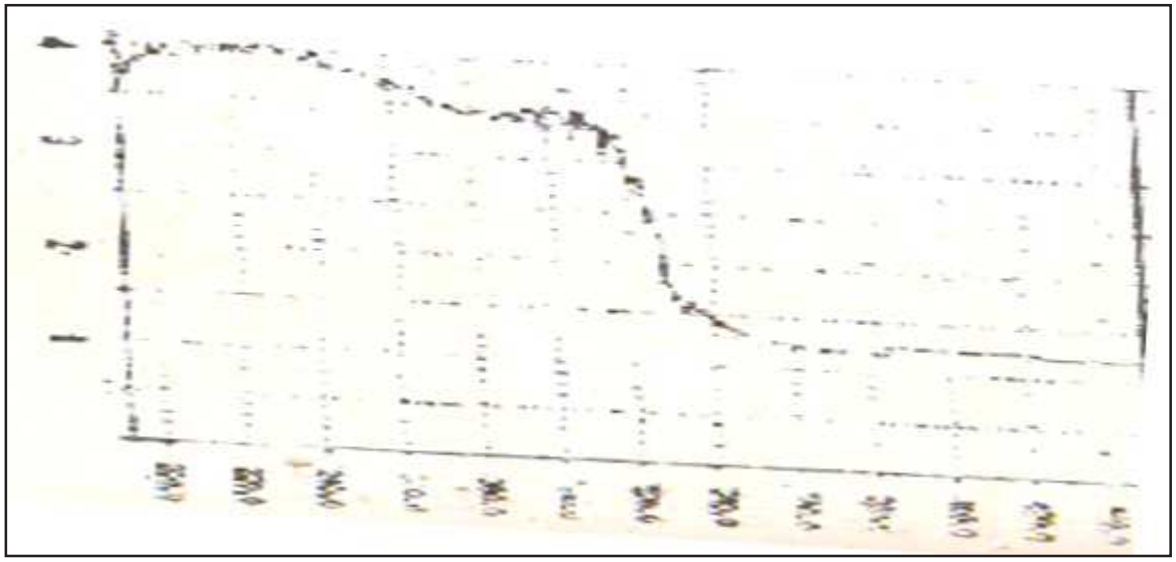

Figure 2 - Optical absorption spectra of ZnS :Mn nanomaterials

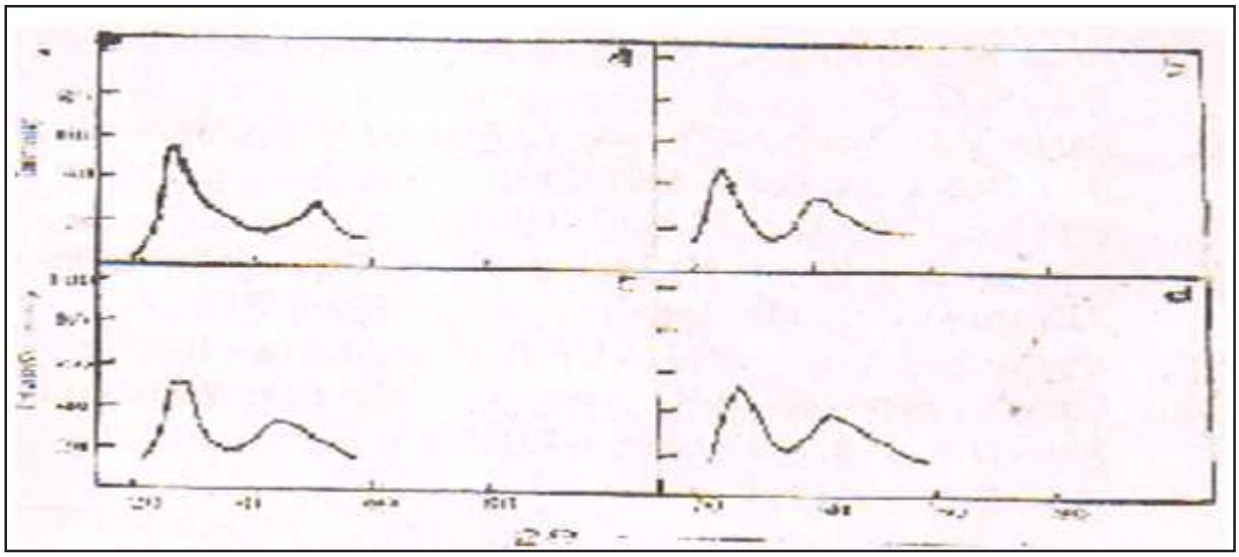

Figure 3 - XRD pattern of ZnS with different concentration

****

Aquatic Flora and Ecology of Moti talab of district Balaghat

Praveen Koushley * Arvind Wasnik ** Bhoopendra Bramhe * Rampati Sagar ******

Abstract - Ponds are not merely the water storage areas, they contain numerous plants also. Some are used as food and some are economically important. The number of ponds and its uses are decreasing rapidly due to anthropological activities like uncontrolled construction works, filling of ponds by soil for constructing houses and converting the ponds into agricultural areas etc., thus by destroying the aquatic ecosystems. If the present situation continues it will lead to the end of the pond ecosystem. Most of the people are more conscious about the conservation of forests. Pond plants are more or less neglected. The present work is to give importance to pond plants and to their conservation. Selected ponds are rich in plants, and are having economic importance also. Since the wetland ecosystem is playing a major role in the ecosystem it is the time to take steps in conserving ponds and pond plants.
Key words - Aquatic plants, Pond, Ecology.

Introduction - A pond ecosystem is a complex and independent system of plants, animals and microorganisms along with physical environment in which they live. A pond is a body of standing water, either natural or artificial, that is usually smaller than a lake [1]. Pond ecology depends on the freshwater environment for nutrients and survival. Usually they contain shallow water with marsh and aquatic plants and animals [2]. All elements of a pond ecosystem work in conjunction with others to maintain balance. Most of the people are more conscious about the conservation of forests but Pond plants are more or less neglected. The present work is to give importance to pond plants and to their conservation. Area selected for the present study is Moti pond of Balaghat city. The complex ecology of a pond ecosystem is actually constantly in motion and teeming with life. In and around a pond, a delicate ecological balance exists that is all too easy to destroy.

It is biggest pond in the city. It is a big and beautiful pond, situated in Moti Nagar, Balaghat with the evergreen beauty of Moti Garden. The pond is 0.7 km away from new Collector Office. The area of the pond is approximately 4 square kilometres. The pond is used for cultivation of water caltrop (*Trapa natans*) fruit and fishery activities. Moti pond is situated on the periphery of the town so that no dangerous levels of pollutants are reached into it directly but a colony is made by filling a portion of the pond and some of the effluents are getting mixed with the water of pond. Now-a-days colonies are developed and the ecology of the pond is somewhat disturbed. The flora and fauna of the pond are well maintained throughout the year due to water availability even during hot summer. The pond is deep enough for ecological activities.

Methodology - The several field visits of Moti Pond are conducted to collect plants in last three years. After collection of plants taxonomic studies are done immediately in the department of Botany, Govt. P. G. College, Balaghat (MP). The microscopic study was also done for the phytoplankton to identify. **(Map See in the last page)**

Result and Discussion - Selection of the ponds for the collection of plants has been done as per the richness of ponds. The ponds are having water throughout the year. The pond is not only full of plant diversity but also animal and microbial diversity. There are more than 50 plants found in the pond having plenty of abundance of some plants according to stratification of the pond. All varieties of plants are found viz. free floating, fixed floating and submerged plants. The Plants listed in this paper are collected throughout for years. All plants are not available throughout the years. The hot summer seasons dries shoreline of the pond and only deep area is covered with the water.

The plants are also disappearing gradually due to various problems like anthropological activities, pollutions, etc. and will never be seen in the pond after years. The high amount of decaying plants and its parts deposition is accumulated in the bottom of the pond due to not cleaning of the pond.

The pond and nearby plantation also gives shelter to many aquatic fauna, birds and animals. The total area of

***Asst. Professor (Botany) Govt. P. G. College, Balaghat (M.P.) INDIA**
****Asst. Professor (Botany) Govt. P. G. College, Balaghat (M.P.) INDIA**
*****Asst. Professor (Botany) Govt. P. G. College, Balaghat (M.P.) INDIA**
******Asst. Professor (Guest) Govt. Girls College, Balaghat (M.P.) INDIA**

the pond was 270139 square metres (27 hectare) two decades ago reduced to 189787 square metres (19 hectare) at present (approximately 30 percent of size reduction).

The following aquatic plants are found in the pond and its shoreline area and sorted in the list below -

Type of aquatic vegetations (flora) -

A. Emergent Plants - Plants that are rooted in the silt and pond shoreline such as cattails. The numbers of emergent plants found in the ponds are 14.

1. Water Lily (*Nymphaea Odorata*)
2. Water Willow (*Justicia Americana*)
3. Smartweed (*Polygonum Species*)
4. Water Primrose (*Ludwigia Peploides*)
5. Cattail (Typha Latifolia)
6. Soft Rush (Juncus Effusus)
7. Spike Rush (Eleocharis Species)
8. Waterpod (Hydrolea Quadrivalvis)
9. Nymphaea
10. Indian lotus (Nelumbo nucifera)
11. Potamogeton
12. Echhornia
13. Pistia stratiotes
14. Ipomea aquatic

B. Rooted-floating Plants - plants that are rooted under water in shallow areas and have floating surface vegetation such as waterlily. Rooted-floating plants are rooted in the sediment and have leaves that float on the water surface. They may also have underwater leaves. Often the stems of these plants are not firm enough to keep them upright when removed from the water and at low water they may be found collapsed on the lake bottom. They often form a band along a lake margin in water one to three meters deep. There are 4 plant recorded which can be considered in this category are-

1. Potamogeton alpinus - Alpine Pondweed
2. Potamogeton amplifolius - Big-leaf Pondweed
3. Potamogeton epihydrus - Ribbon-leaf Pondweed
4. Trapa natans - Water Chestnut

C. Submerged Plants - Plants that have fully submerged in the water with their roots in bottom sediments. Sixteen plants are recorded in this category.

1. Vallisneria,
2. Hydrilla
3. Ceratophyllum submersum
4. Chara spp.
5. Azolla spp.
6. Callitriche hermaphroditica - Autumnal Water-starwort
7. Hydrilla verticillata - Hydrilla
8. Isoetes spp. - Quillworts
9. Lilaea scilloides - Flowering Quillwort
10. Najas guadalupensis - Common Water-nymph
11. Potamogeton crispus - Curly Leaf Pondweed
12. Potamogeton friesii - Flat-stalked Pondweed
13. Ranunculus aquatilis - White Water-buttercup
14. Ruppia maritima - Wigeongrass
15. Scirpus subterminalis - Water Bulrush
16. Utricularia inflata - Swollen Bladderwort

D. Free-floating Plants - The plants float in the water column, on the surface of the water, or lie on the bottom. This category includes some of the smallest members of the plant kingdom such as watermeal plants, which look like green specks on the water surface. These plants do not root in the sediment, although some species have roots that dangle in the water. They sometimes form extensive green mats on the water surface. They are therefore a common component of wetlands [3].

1. Azolla mexicana - Mexican Water-fern
2. Eichhornia crassipes - Water Hyacinth
3. Lemna minor - Lesser duckweed
4. Ricciocarpus natans - Purple-fringed Riccia
5. Spirodela polyrrhiza - Giant Duckweed
6. Wolffia spp. - Watermeal
7. Wolffiella gladiata - Mud Midget

E. Shoreline plants - Shoreline plants grow along edges of lakes, rivers, streams, and ponds or on wet ground away from open water. They have at least part of their stems, leaves, and flowers emerging above the water surface and are rooted in the sediments. Some plants that typically grow in deep water may be found along the shoreline in late summer when water levels are low.

1. Alisma gramineum - Narrowleaf Water-plantain
2. Carex spp. - Sedge
3. Dulichium arundinaceaum - Three-way Sedge
4. Eleocharis acicularis - Needle Spike-rush
5. Juncus spp. - Rush
6. Ipomea fistula
7. Astercanthaq longifolia
8. Marsilea vestita - Pepperwort
9. Phalaris arundinacea - Reed Canarygrass
10. Polygonum amphibium - Water Smartweed
11. Sagittaria latifolia - Duck Potato
12. Scirpus acutus - Hardstem Bulrush
13. Scirpus tabernaemontani - Softstem Bulrush
14. Sparganium angustifolium - Narrow Leaf Bur-reed
15. Riccia spp.

F. Plant-like algae - lack stems and leaves, although sometimes they have structures that can be mistaken for stems and leaves. Plant-like algae are green with cylindrical, whorled branches. They lack roots, but some species attach to the sediment. Plant-like algae tend to lie on or just above the sediments. They are found from shallow water to very deep areas (20-30 meters) in clear water.

1. Chara spp. - Muskgrasses
2. Nitella sp. – Nitella

G. Aquatic mosses - Aquatic mosses are small plants with delicate stems and small closely overlapping leaves. These plants can have branched, stem-like, and root-like structures. Unlike most other plants described in the manual, the aquatic mosses never produce flowers. Aquatic mosses are often seen growing attached to rocks in mountain streams, but they also grow in the shallow to moderately deep water of lakes.

1. Funaria

Conclusion - The aquatic plant can only be grown in pond and shoreline area. It must be observed to maintain the ecology of the pond and nearby area. The anthropogenic activities must be checked for the betterment of the pond. The area of the pond is reducing day by day due to various activities like decoration, fencing and construction of houses after filling soil in the pond. Pond must clean time to time for better environment. The pond must be deepening for alternating years for accumulation of clean and fresh water of raining.

The increasing anthropogenic activities are continuously disturbing the aquatic flora and fauna and nearby animals and birds dwellers on the trees. A single tree nearby pond is full of Bagula (*Mesophoyx intermedia*) both in the evening and morning, got disturbed by passing vehicles and crackers.

Acknowledgement - We are very thankful to the Principal of the College, Dr. Praveen Shrivastava for their cooperation in this work. Thanks to Google Map also for the aerial view of Balaghat city.

References :-

1. http://www.merriam-webster.com/dictionary/pond.
2. John Clegg (1986). The New Observer's Book of Pond Life. Frederick Warne. p. 460. ISBN 0723233381.
3. Keddy, P.A. 2010. Wetland Ecology: Principles and Conservation (2nd edition). Cambridge University Press, Cambridge, UK. 497 p.

Fig - Showing Moti Talab (Pond) in Balaghat city. (Google Map)

****

Synthesis of some 2 -Styrylquinolines from Quinoldines and cyanoethyl amino benzaldehyde as possible antimalarial

Malti Dubey (Rawat) *

Introduction - The antimalarial activity[1-2] of quinoline derivatives has been extensively studied. Styryl quinolines have been found to possess antiseptic[3], antimicrobiol[4] and trypanocidal activity[5]. Many styryl derivatives are used as the starting materials for the synthesis of cyanindyes[6]. Antimalarial drugs have been synthesized from 8-amiquinoline and 4-amino quinoline .

Different types of quinoldines were condensed with some- aldehydes in the presence of condensing agents, yielded styryl quinolines.

Although the chemotherapeutic properties of large number of substituted 2-styryl-quinolium salts have been rather intensively studied styryl quinolines bearing cyanoethyl amino groups have not come to notice there fore it seemed of interest to prepare new styrylquinoline bearing these groups for therapeutic evaluation. N-methyl-N-cyano-ethyl amino benzaldehyde and 4-NN-bis-2'-cyanoethyl-amino-2-methyl benzaldehyde were condensed with 6-chloro, 6 bromo, 6 nitro 6 benzamide quinoldines in the presence of condensing agents styryl-quinolines of the type I and II have been obtained in yield ranging 42 to 87%

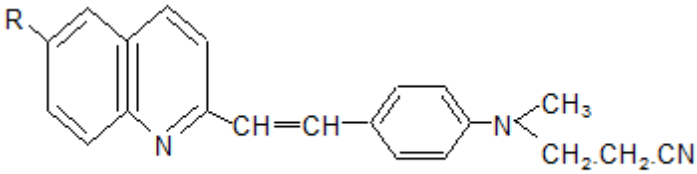

(I)

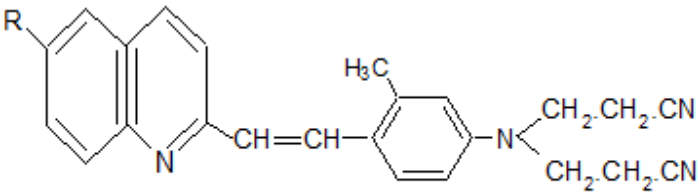

(II)

R=Cl, Br, NO_2, NHC_6H_5

Infra red absorption frequencies of 4-N-methyl-N-cyanoetnyl amino-4-Nitro-quinoline

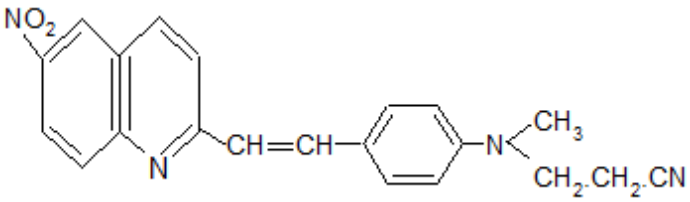

Table 1

S.	Bond or group	Absorption	Bond intensity bond (cm^{-1})
1	-C=N (in ring)	1610	Short
2	phenyl (1:4) substituted	15901638	Medium & sharp Weak and sharp
3	N-CH_3	14251465	Short & Medium
4	NO_2 (in aromatic ring)	1566	Sharp & Strong
4	CH_2.CH_2.CN	2250	Strong & Sharp
5	-N<	1326-1330	Short & Medium
6	-CH_2 -	1480	Short & Sharp
7	Alkone (conjugated with ring)	13801678	Medium & sharp

Table - 2 & 3 (See in next page)

Experimental - This starting materials 6-chloro quinoldine 6-bromo quinaldine, 6-nitro quinoldine, 6-benzamido quinoldine[8] were synthesised by the reported procedure.

Equimolicular amounts of quinoldine and aldehyde were heated in presence of condensing agents such as zinc chloride or acetic anhydride. The hot solution was poured into 20% sodium- hydroxide solution. The mass was pulverised removed by filtration washed well with water and dissolved in concentrated hydrochloric acid on dilution with water the product separated which was suspended in water and made alkaline with ammonium hydroxide.

Difficulties were encountered in the isolation and purification of styryl quinolines. Several solvents such as ethanol, acetone or acetic-acid and mixture of these solvents in appropriate proportions had to be tried for obtaining pure samples.

Acknowledgement – Support of this work by Prof. A.P

* **Department of Chemistry, Govt. Girls P.G Auto. College of Excellence, Sagar (M.P.) INDIA**

Dubey, Prof. HOD Dr. H.S Gour University (A central University) Sagar (M.P) for greatfuly acknowledged and thanks due to the Director CDRI Lucknow for providing I.R Spectra.

References :-

1. ELDERFIELD etal., J. Amer.Chem. Soc., 70,40 (1948)
2. KENYCN, WIESMER and KWARTLER, Ind. Eng. Chem. 41, 654 (1949)
3. PROC, ROY, Soc., B., 100, 193 (1926)
4. OPANASENKO.E.P., PALU, P.U., KHIM, Farm, Z., 11.8(9) 18, 21(1974)
5. PROC ROY, Soc., B., 195, 99 (1929).
6. L.G.S. BROOKER and R.H. SPRAGUE, J.Amer. Chem.Soc., 831,7 (1930)
7. JHONSON and ADAMS, J. Amer. Chem. Soc., 831,7 (1930)
8. F.M.HAMER, J. Chem. Soc., 119, 1432 (1921)

Table - 2 : Styryl Quinolines Derived Form N-Methyl-N-cyanoethyl amino benzaldehyde

S.	Quinoldine	Styryl-Quinaline R	M.P.O^{0}C	Styrayl Quinaline yield % condensing agent		Colour	Formula
				Acetic-Anhydride	Zinc Chloride		
1	6-chloro-Quinoldine	Cl	130	68(c)	48.47	yellow	$C_{19}H_{18}N_2Cl$
2	6-Bromo-Quinoldine	Br	173	39(c)	45.38	Red	$C_{19}H_{18}N_2Br$
3	6-Nitro-Quinoldine	NO_2	245	65.5(b)	43.7	Brown	$C_{19}H_{18}N_3O_2$
4	6-Benzamido Quinoldine	$NHCOC_6H_5$	168	30.3(c)	86.26	Pale yellow	$C_{26}H_{24}N_3O$

Solvent of crystallisation - b = Acetone c = Alcohol

Table-3 : Styryl Quinalines derived from 4-NN-bis-2'-Cyamoethyl amino benzaldehyde

S.	Quinoldine	Styryl-Quinaline R	M.P.O^{0}C	Styrayl Quinaline yield % condensing agent		Colour	Formula
				Acetic-Anhydride	Zinc Chloride		
1	6-chloro-Quinoldine	Cl	201	20.51(b)	23.5	yellow	$C_{21}H_{21}N_3Cl$
2	6-Bromo-Quinoldine	Br	110	66.81 (c)	23.8	Red	$C_{21}H_{21}N_3Br$
3	6-Nitro-Quinoldine	NO_2	116	31.34 (b)	56.6	Brown	$C_{21}H_{21}N_4O_2$
4	6-Benzamido Quinoldine	$NHCOC_6H_5$	229	32.09 (b)	45.3	Brown	$C_{27}H_{27}N_4$

Solvent of Cryjtallisation- b = Acetone C = Alcohol

✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻

Atmospheric Physics

Dr. Neeraj Dubey *

Introduction - Atmospheric physics is the application of physics to the study of the atmosphere. Atmospheric physicists attempt to model Earth's atmosphere and the atmospheres of the other planets using fluid flow equations, chemical models, radiation budget, and energy transfer processes in the atmosphere. In order to model weather systems, atmospheric physicists employ elements of scattering theory, wave propagation models, cloud physics, statistical mechanics and spatial statistics which are highly mathematical and related to physics. It has close links to meteorology and climatology and also covers the design and construction of instruments for studying the atmosphere and the interpretation of the data they provide, including remote sensing instruments. At the dawn of the space age and the introduction of sounding rockets, aeronomy became a sub discipline concerning the upper layers of the atmosphere, where dissociation and ionization are important.

Remote sensing - Remote sensing is the small or large-scale acquisition of information of an object or phenomenon, by the use of either recording or real-time sensing device(s) that is not in physical or intimate contact with the object. In practice, remote sensing is the stand-off collection through the use of a variety of devices for gathering information on a given object or area which gives more information than sensors at individual sites might convey. Thus, Earth observation or weather satellite collection platforms, ocean and atmospheric observing weather buoy platforms, monitoring of a pregnancy via ultrasound, Magnetic Resonance Imaging, Positron Emission Tomography , and space probes are all examples of remote sensing. In modern usage, the term generally refers to the use of imaging sensor technologies including but not limited to the use of instruments aboard aircraft and spacecraft, and is distinct from other imaging-related fields such as medical imaging.

There are two kinds of remote sensing. Passive sensors detect natural radiation that is emitted or reflected by the object or surrounding area being observed. Reflected sunlight is the most common source of radiation measured by passive sensors. Examples of passive remote sensors include film photography, infra-red, charge-coupled devices, and radiometers. Active collection, on the other hand, emits energy in order to scan objects and areas whereupon a sensor then detects and measures the radiation that is reflected or backscattered from the target. radar, lidar, and SODAR are examples of active remote sensing techniques used in atmospheric physics where the time delay between emission and return is measured, establishing the location, height, speed and direction of an object.

Remote sensing makes it possible to collect data on dangerous or inaccessible areas. Remote sensing applications include monitoring deforestation in areas such as the Amazon Basin, the effects of climate change on glaciers and Arctic and Antarctic regions, and depth sounding of coastal and ocean depths. Military collection during the cold war made use of stand-off collection of data about dangerous border areas. Remote sensing also replaces costly and slow data collection on the ground, ensuring in the process that areas or objects are not disturbed.

Orbital platforms collect and transmit data from different parts of the electromagnetic spectrum, which in conjunction with larger scale aerial or ground-based sensing and analysis, provides researchers with enough information to monitor trends such as El Niño and other natural long and short term phenomena. Other uses include different areas of the earth sciences such as natural resource management, agricultural fields such as land usage and conservation, and national security and overhead, ground-based and stand-off collection on border areas.

Radiation - Atmospheric physicists typically divide radiation into solar radiation and terrestrial radiation.Solar radiation contains variety of wavelengths. Visible light has wavelengths between 0.4 and 0.7 micrometers. Shorter wavelengths are known as the ultraviolet (UV) part of the spectrum, while longer wavelengths are grouped into the infrared portion of the spectrum. Ozone is most effective in absorbing radiation around 0.25 micrometers, where UV-c rays lie in the spectrum. This increases the temperature of the nearby stratosphere. Snow reflects 88% of UV rays, while sand reflects 12%, and water reflects only 4% of incoming UV radiation. The more glancing the angle is between the atmosphere and the sun's rays, the more likely that energy will be reflected or absorbed by the atmosphere. Terrestrial radiation is emitted at much longer wavelengths

* Professor & Head (Physics) Govt. Arts & Commerce P.G. College, Sagar (M.P.) INDIA

than solar radiation. This is because Earth is much colder than the sun. Radiation is emitted by Earth across a range of wavelengths, as formalized in Planck's law. The wavelength of maximum energy is around 10 micrometers.

Cloud physics - Cloud physics is the study of the physical processes that lead to the formation, growth and precipitation of clouds. Clouds are composed of microscopic droplets of water, tiny crystals of ice, or both. Under suitable conditions, the droplets combine to form precipitation, where they may fall to the earth. The precise mechanics of how a cloud forms and grows is not completely understood, but scientists have developed theories explaining the structure of clouds by studying the microphysics of individual droplets. Advances in radar and satellite technology have also allowed the precise study of clouds on a large scale.

Atmospheric electricity - Atmospheric electricity is the regular diurnal variations of the Earth's atmospheric electromagnetic network. The Earth's surface, the ionosphere, and the atmosphere is known as the global atmospheric electrical circuit. Lightning discharges 30,000 amperes, at up to 100 million volts, and emits light, radio waves, x-rays and even gamma rays. Plasma temperatures in lightning can approach 28,000 kelvins and electron densities may exceed $10^{24}/m^3$.

Atmospheric tide - The largest-amplitude atmospheric tides are mostly generated in the troposphere and stratosphere when the atmosphere is periodically heated as water vapour and ozone absorb solar radiation during the day. The tides generated are then able to propagate away from these source regions and ascend into the mesosphere and thermosphere. Atmospheric tides can be measured as regular fluctuations in wind, temperature, density and pressure. Although atmospheric tides share much in common with ocean tides they have two key distinguishing features:

i) Atmospheric tides are primarily excited by the Sun's heating of the atmosphere whereas ocean tides are primarily excited by the Moon's gravitational field. This means that most atmospheric tides have periods of oscillation related to the 24-hour length of the solar day whereas ocean tides have longer periods of oscillation related to the lunar day.

ii) Atmospheric tides propagate in an atmosphere where density varies significantly with height. A consequence of this is that their amplitudes naturally increase exponentially as the tide ascends into progressively more rarefied regions of the atmosphere. In contrast, the density of the oceans varies only slightly with depth and so there the tides do not necessarily vary in amplitude with depth.

Note that although solar heating is responsible for the largest-amplitude atmospheric tides, the gravitational fields of the Sun and Moon also raise tides in the atmosphere, with the lunar gravitational atmospheric tidal effect being significantly greater than its solar counterpart.

At ground level, atmospheric tides can be detected as regular but small oscillations in surface pressure with periods of 24 and 12 hours. Daily pressure maxima occur at 10 a.m. and 10 p.m. local time, while minima occur at 4 a.m. and 4 p.m. local time. The absolute maximum occurs at 10 a.m. while the absolute minimum occurs at 4 p.m. However, at greater heights the amplitudes of the tides can become very large. In the mesosphere atmospheric tides can reach amplitudes of more than 50 m/s and are often the most significant part of the motion of the atmosphere.

Aeronomy - Aeronomy is the science of the upper region of the atmosphere, where dissociation and ionization are important. The term aeronomy was introduced by Sydney Chapman in 1960. Today, the term also includes the science of the corresponding regions of the atmospheres of other planets. Research in aeronomy requires access to balloons, satellites, and sounding rockets which provide valuable data about this region of the atmosphere. Atmospheric tides play an important role in interacting with both the lower and upper atmosphere. Amongst the phenomena studied are upper-atmospheric lightning discharges, such as luminous events called red sprites, sprite halos, blue jets, and elves.

References :-

1. Atmospheric Science Data Center. What Wavelength Goes With a Color? Retrieved on 2008-04-15.
2. University of Delaware. Geog 474: Energy Interactions with the Atmosphere and at the Surface. Retrieved on 2008-04-15.
3. Wheeling Jesuit University. Exploring the Environment: UV Menace. Archived August 30, 2007, at the Wayback Machine. Retrieved on 2007-06-01.
4. Oklahoma Weather Modification Demonstration Program. CLOUD PHYSICS. Retrieved on 2008-04-15.
5. Scientific American. Does the Moon have a tidal effect on the atmosphere as well as the oceans?. Retrieved on 2008-07-08.
6. Andrew F. Nagy, p. 1-2 in *Comparative Aeronomy*, ed. by Andrew F. Nagy *et al.* (Springer 2008, ISBN 978-0-387-87824-9)

****

Study Of Fluoride In Ground Water Of District Rajgarh M.P.

Dr. G.D. Agrawal * Dr. O. N. Choubey **

Abstract - The present investigation deals with the study of fluoride inGround water Rajgarh district M.P 08 villages were selected for the investigation. The study indicates that the fluoride content is very high than permissible limit.
Key word :- Fluoride ground water Rajgarh.

Introduction - Many villages of Rajgarh District in M.P are dependent ground water drinking purpose but ground water are contaminated with dissolved inorganic substances specially fluoride. Many people of study area suffered from fluorosis and dental disorder. Fluoride is health related water quality parameter because it forms the principal part in the human dieting intake as result of ingestion of fluoride from drinking water. Every man needs about .8-1.0 ppm of fluoride content from the drinking water.

Materials And Methods - The eight water samples were collected from different areas of ground water (hand pumps) in sterilized plastic bottles. Samples were collected during the year of 2016 on monthly basis. The determination of fluoride was carried out by SPANDS spectrophotometric method. The details of sampling information as under.

Table-1

S.	Collection area of the Sample	Sample no.
1	Baskhedi-(Nearbabool tree)	R- 01
2	Kalalpura-(Near school)	R-02
3	Dalal pura (Harijan Mohalla)	R-03
4	Banpura (Near school)	R- 04
5	Banpura (Near Neem tree)	R- 05
6	Banpura ka Pura	R- 06
7	Kheemakhedi	R- 07
8	Khandia pura	R- 08

Table - 2 (See in next page)

Result And Discussion - The maximum permissible limit of fluoride in drinking water has fixed on 1.5 ppm by BIS STANDARD (1991).Experimental values shown in table -2 indicates that the concentration of fluoride in above villages between 1.5 to 4.2 ppm.High fluoride content are observed mostly in calcium deficient water (Agrawal.V vaish 1977) Higher concentration of fluoride more than 2.0 ppm in all samples were observed in summer season and 1.5 to 1.9 ppm was observed in monsoon season. The highest values of fluoride 4.2 ppm was observed in Banpura in the month of June 2016.Higher concentration of fluoride in drinking water is very harmful for the human health.People of study area suffering from mottling and staining of teeth, skeletal and non-skeletal fluorosis.

References :-

1. Das.S., Mehta B.C., Sharma S.K., Shrivastava S., Fluoride hazards in ground water of Orissa; Jr.Environ. Hlth, 42(1), 40-46 (2000).
2. Agarkar S.V., Khadsen R.E., and Kadu M.V; "Fluoride content in drinking water of samples of Buldana district Maharashtra, Oriental Journal of Chemistry 21.(3) 607-608 (2005)
3. Singh Navneet Kumar, fluoride in ground water of Kaura (Block. Shivpuri) M.P., Current World Environment 2(1) 97-98. 2007.
4. Lingeswara Rao, S.V "Fluoride toxicity in ground water of Chittor Rajasthan,". Indian J. Environ. Prot. 21(9) 794-796 (2001).
5. Nemade P.N, Shrivastava V.S, "Fluoride in tribal belt of Satpura valley". Indian J. Environ. Prot.16 (2) 99-101 (1996).
6. Singanan M, Rao K.S "Ground water Analysis of Rameshwaram Island". Chem.Environ.Res 4(182) 97-104 (1995).
7. Singh Renu, Maheshwari R.C,"Defluoridation of drinking water". Indian J.Environ.Prot 21(11) 983-991 (2001).
8. Shri Murli M, Pragati .A & Kartikeyan J, "A study on removal of fluoride from drinking water by adsorption on a low caste materials". Environmental pollution volume 99(2) 285-289 (1998).

* Asst. Professor (Chemistry) Govt .P.G. College, Rajgarh (M.P.) INDIA
** Professor & Head (Chemistry) Govt. N.M.V., Hoshangabad (M.P.) INDIA

Table - 2 : Concentration of fluoride in ground water of Rajgarh Block

Values in (ppm)

S.No.	Months	R-1	R-2	R-3	R-4	R-5	R-6	R-7	R-8
1	January	2.7	2.6	2.5	3.6	3.0	3.3	3.6	2.2
2	February	2.7	2.6	2.6	3.7	3.3	3.2	3.6	2.3
3	March	2.9	2.8	3.0	3.8	3.6	3.5	3.5	2.4
4	April	3.0	3.0	3.3	3.8	3.7	3.6	3.6	3.0
5	May	3.2	3.1	4.0	3.9	3.8	3.6	3.7	3.5
6	June	3.3	3.4	4.1	4.2	3.9	2.0	3.8	3.6
7	July	1.7	1.9	1.5	1.9	1.8	1.7	1.6	3.6
8	August	1.7	1.8	1.5	1.8	1.8	1.6	1.5	1.5
9	September	1.6	1.7	1.6	1.7	1.7	1.5	1.5	1.5
10	October	1.7	2.0	2.0	1.9	1.9	1.8	1.6	1.6
11	November	2.9	2.0	2.1	2.5	2.3	2.0	1.9	1.7
12	December	2.1	2.3	2.4	3.0	2.9	3.0	3.2	1.8

****

राष्ट्रीय आयरन प्लस इनिशिएटिव कार्यक्रम

डॉ. मीनल फड़नीस * नेहा श्रीवास्तव **

शोध सारांश – एक अध्ययन (राष्ट्रीय आयरन प्लस इनिशिएटिव कार्यक्रम), भारत सरकार का एक कार्यक्रम है, जो कि राष्ट्रीय स्वास्थ्य मिशन के अंतर्गत दिनांक 2 अक्टूबर 2015 से संचालित किया जा रहा है इस कार्यक्रम के सफल क्रियान्वयन हेतु **'स्वास्थ विभाग, महिला एवं बाल विकास विभाग, शिक्षा विभाग एवं आदिम जाति कल्याण विभाग'** सम्मिलित है। यह एक ऐसा प्रयास है, जो आयरन की कमी वाले एनीमिया पर जीवन चक्र आधारित प्रगति में बच्चों, किशोर एवं किशोरियों, गर्भवती महिलाओं, धात्री माताओं तथा प्रजनन शील आयु वर्ग की महिलाओं में एनीमिया रोकथाम हेतु संचालित किया जा रहा है।

मध्यप्रदेश में एनिमिया की स्थिति काफी गंभीर है, मध्य प्रदेश में 6 से 35 माह आयु वर्ग के बच्चों में एनीमिया के स्तर में 11.3% की वृद्धि हुई है। राष्ट्रीय परिवार स्वास्थ्य सर्वेक्षण 2 के समय 71.3% बच्चे एनिमिया से ग्रस्त थे, जो बढ़कर राष्ट्रीय परिवार स्वास्थ्य सर्वेक्षण 3 के अनुसार 82.6% हो गए हैं इसी प्रकार प्रदेश में विभिन्न आयु वर्गों में एनिमियाकी स्थिति निम्न तालिका 1 में दर्शाई गई है।

आयु समुह	एनिमिया का प्रतिशत (म.प्र.)
6 माह से 59 माह के बच्चे	74.1%
प्रजननशील आयु वर्ग की महिलाए	56%
गर्भवती महिलाए	58.7%
धात्री माताए	65.7%
किशोरियां	52.1%

तालिका – 1 नोट: रास्ट्रीय परिवार स्वास्थ सर्वेक्षण–3, वर्ष 2005–06

शब्द कुंजी – महिला, किशोर, किशोरी, बच्चे, NIPI, पोषण, एनिमिया

प्रस्तावना – एनिमिया एक बहुत गंभीर समस्या है, जो स्वास्थ के साथ साथ काम करने की शारीरिक क्षमता व मानसिक क्षमता को भी विपरीत रूप से प्रभावित करती है। यह विश्व में सबसे अधिक पाई जाने वाली पोषण संबंधी कमियों में से एक है, भारत की आधे से अधिक जनसंख्या एनिमिया से पीड़ित है परंतु यह प्रजनन आयु समूह की अधिकांश महिलाओं, किशोर, किशोरियों एवं बच्चों को सबसे अधिक प्रभावित करती है।

क्या है एनिमिया ? – एनिमिया एक गंभीर स्वास्थ समस्या है, जो शारीरिक एवं मानसिक क्षमता को विकृत रूप से प्रभावित करती है। एनिमिया पोषक तत्व मुख्यता आयरन की कमी से होने वाली सबसे गंभीर समस्या है, आयरन एक सूक्ष्म पोषक तत्व जो की हीमोग्लोबिन के निर्माण में योगदान देता है। आहार में आयरन की कमी के कारण रक्त में हीमोग्लोबिन की मात्रा घट जाती है जिससे शरीर के विभिन्न अंगों को ऑक्सीजन की आपूर्ति कम हो जाती है ऐसी स्थिति को रक्त अल्पता या एनीमिया कहते हैं।

एनिमिया का प्रभाव – छोटी आयु में 6 से 18 माह के बच्चों में शारीरिक एवं मानसिक विकास के लिए आयरन आवश्यक होता है एवं उचित पोषण न मिलने के परिणाम स्वरुप शारीरिक एवं मानसिक विकास में कमी, वृद्धि का अवरुद्ध होना जो कि एनिमिया तथा कुपोषण की संभावना को बढ़ाताहै। शारीरिक विकास का दूसरा चरण किशोर अवस्था है इस अवस्था में आयरन की अतिरिक्त खुराक एवं उचित पोषण ना मिलने पर दैनिक कार्य करने की क्षमता में एकाग्रता में कमी तथा पढ़ाई में पिछड़ जाते हैं। किशोरी बालिकाओं में एनिमिया के कारण पूरा जीवन चक्र प्रभावित होता है। इसके परिणाम स्वरुप गर्भवती महिलाओं में समय से पूर्व प्रसव, जन्म के समय बच्चे का कम वजन होने का जोखिम होता है। इन कारणों से शिशु एवं मातृ मृत्यु हो सकती है। 20 से 40% मातृ मृत्यु का अंतर्निहित कारण एनिमिया होता है।

(सारिणी देखे अन्तिम पृष्ठ पर)

एनिमिया के संकेत – खून की कमी से नाखून, जीभ, आंखों और हथेली की लालिमा कम हो जाती है। एनिमिया की पहचान स्वास्थ्य केंद्रों पर रक्त परीक्षण के द्वारा रक्त में उपस्थित हीमोग्लोबिन के स्तर को नाप कर भी किया जा सकता है फिर भी कुछ ऐसे लक्षण है। जिनके द्वारा हम एनीमिया की पहचान कर सकते हैं जैसे कि

- हाथों की हथेलियों में, नीचे की पलकों में, अंदर की ओर जीभ, त्वचा, नाखून की लालीमा में कमी अथवा फीकापन

* प्राध्यापक (गृह विज्ञान) शासकीय महारानी लक्ष्मीबाई गर्ल्स स्नातकोत्तर (स्वशासी) महाविद्यालय, भोपाल (म.प्र.) भारत
** शोधार्थी (गृह विज्ञान)बरकतउल्ला विश्वविद्यालय, भोपाल (म.प्र.) भारत

- मुंह के कोने फटे हुए होना, मुंह में घाव होना
- चक्कर आना थकावट तथा ऊर्जा की कमी
- खेलकूद तथा पढ़ाई में अरुचि
- ध्यान केंद्रित करने में परेशानी
- पैरों में ऐठन
- संक्रमण से प्रतिरोधक क्षमता में कमी

एनिमिया के लक्षण –

सांस फूलना – एनीमिया से ग्रसित व्यक्ति सरल क्रियाओं जैसे खेलना–कूदना, सीढ़ी चढ़ना आदि क्रियाओं में जल्दी थक जाते हैं और उनकी सांस फूल जाती है।

थकावट – एनीमिया से ग्रसित व्यक्ति का खून पर्याप्त मात्रा में पूरे शरीर को ऑक्सीजन नहीं दे पाता है, जिस कारण वह जल्दी थक जाता है।

चक्कर आना – एनिमिया से ग्रसित व्यक्ति का खून पर्याप्त मात्रा में ऑक्सीजन को दिमाग तक नहीं ले जाता जिस कारण से चक्कर आने जैसा महसूस होता है।

एकाग्रता में कमी – खून की कमी से ध्यान देने, सीखने एवं स्मरण करने की शक्ति कम हो जाती है, इसके फलस्वरुप छात्राओं की पढ़ाई एवं अन्य कामकाज में रुचि कम होती जाती है।

बार बार बीमार पड़ना – खून की कमी से पीड़ित व्यक्ति अक्सर बीमार पड़ते हैं, क्योंकि उनकी रोग प्रतिरोधक क्षमता कम हो जाती है।

महावारी – खून की कमी होने से महावारी में खून ज्यादा आता है, जिससे खून की कमी हो जाती है।

एनिमिया की पहचान के लिए हीमोग्लोबिन का स्तर (ग्राम/डेसी लीटर)

खून की जांच से आसानी से एनीमिया का पता लगाया जा सकता है। एनीमिया को परिभाषित करने के लिए विश्व स्वास्थ संगठन की हीमोग्लोबिन सीमा रेखा निम्न तालिका 2 अनुसार निर्धारित की गई है।

हितग्राही समूह	एनिमिया नहीं	अल्प	मध्यम	गंभीर
बच्चे 6 माह से 59 माह	≥11	10-10.9	7-9.9	<7
बच्चे 5 वर्ष 11 वर्ष	≥11.5	11-11.4	8-10.9	<8
बच्चे 12 से 14 वर्ष 20 से 45 वर्षीय प्रजनन कालिक	≥12	11-11.9	8-10.9	<8
महिलाएं	≥12	11-11.9	8-10.9	<8
गर्भवती महिलाएं	≥11	10-10.9	7-9.9	<7
पुरुष	≥13	11-12.9	8-10.9	<8

तालिका 2 – नोट: स्त्रोत विश्व स्वास्थ संगठन एनिमिया की पहचान और गंभीरता के निर्धारण हेतु हिमोग्लोबिन की सांद्रता

एनिमिया की रोकथाम तथा नियंत्रण –

आहार की मात्रा में गुणवत्ता एवं पौष्टिकता बढ़ाकर – विभिन्न प्रकार के पदार्थों जैसे अरहर दालें अथवा रोटी, चावल, हरी सब्जियां, स्थानीय तौर पर उपलब्ध फल तथा दूध आदि का दैनिक उपभोग करके तथा भोजन में आयरन से भरपूर शाकाहारी पदार्थ जैसे हरी सब्जी, मेथी, मूली के पत्तो, सरसों का साग, लालभाजी, अंकुरित दालें, खजूर, बाजरा तथा मांसाहारी पदार्थ अंडा, मछली, मांस के सेवन द्वारा।

आहार की जैविक उपलब्धता में सुधारक – भोजन में विटामिन सी युक्त भोज्य पदार्थों को समृद्ध करें जो कि लोह तत्वों के अवशोषण में सहायक होते है। इसी प्रकार फाइटेट टेनिन युक्त भोज्य पदार्थ लोह तत्वों के अवशोषण को कम करते हैं। इसलिए चाय, कॉफी अथवा सोडा युक्त पेय पदार्थ खाने के तुरंत बाद नहीं लेने चाहिए तथा इनमें कम से कम 2 घंटे का अंतराल होना चाहिए।

निष्कर्ष–

NIPI (राष्ट्रीय आयरन प्लस इनिशिएटिव कार्यक्रम) के अंतर्गत हितग्राही समूहों को निर्धारित डोज (खुराक) अनुसार आई.एफ.ए. की प्रदायगी की जा रही है। इसके परिणामों का विश्लेषण कर देखा गया है की मध्य प्रदेश में हितग्राही समूहों अनुसार एनीमिया रोग में कमी आई है।

1. हितग्राहीसमूह 6 से 60 माह के बच्चों के आकड़ों छत्तीसगढ खखखमें 74% और NFHS IV में 69% को देखें तो हम पाएंगे की 5% कमी आई है। ग्राफ 1 **(देखे अन्तिम पृष्ठ पर)**
2. हितग्राही समूह गर्भवती महिला के आकड़ों छत्तीसगढ खखखमें 58% और NFHS IV में 55% को देखें तो हम पाएंगे की 3% की कमी आई है । ग्राफ 2 **(देखे अन्तिम पृष्ठ पर)**
3. हितग्राही समूह धात्री माता के आकड़ों NFHS III में 7% और NFHS IVमें 24% को देखें तो हम पाएंगे की 17% धात्री माताओं की संख्या में वृद्धि हुई है। ग्राफ 3 **(देखे अन्तिम पृष्ठ पर)**

हितग्राही समूहों को आई.एफ.ए. निर्धारित डोज (खुराक) (सारिणी देखे अन्तिम पृष्ठ पर)

उपसंहार – एनीमिया महिलाओं व बच्चों में होने वाला एक सामान्य रोग है जो भोजन संबंधी कमी के कारण महिलाओं को विशेष तौर पर इसका शिकार बनना पड़ता है। भारत सरकार द्वारा चलाए जा रहे **NIPI (राष्ट्रीय आयरन प्लस इनिशिएटिव कार्यक्रम)** कार्यक्रम से महिलाओं व बच्चों के लिए एनीमिया रोकथाम एक सघन प्रयास है और इस सघन प्रयास का व्यापक प्रभाव समुदाय में देखा जा रहा है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1 आहार एवं पोषण, डॉ. अरूणा पल्टा।
2 निपी कार्यक्रम राष्ट्रीय स्वास्थ्य मिषन पत्रिका, मध्यप्रदेश।
3 स्वास्थ्य संवाद पत्रिका, मध्यप्रदेश।
4 स्वास्थ्य सबके लिये, डॉ. जीवनलाल गांधी।

एनिमिया के कारण

एनीमिया के कारण	एनिमिया कैसे प्रभावित करता है
छोटी उम्र में शादी, गर्भावस्था और कम अंतराल पर बच्चे होना	गर्भावस्था शिशु में वृद्धि का अवरोध मां और नवजात शिशु की मृत्यु की संभावना प्रसव पूर्व दर्द होना, समय पूर्व प्रसव अथवा प्रसव के बाद अधिक रक्त स्त्राव होना जिससे मातृ मृत्यु का खतरा
गर्भावस्था और धात्री काल के दौरान अपर्याप्त पोषण	जन्म के समय शिशु का कम वजन, नवजात शिशु में आयरन का भंडार कम होना रोगों से लड़ने की क्षमता कम होने से बार–बार बीमार पड़ना मां में एनीमिया होने के कारण शिशु बच्चे की अपर्याप्त देखभाल
जन्म के समय आयरन की कमी छोटे बच्चे को अपर्याप्त पोषण	खेलते समय आसानी से थक जाना, शारीरिक गतिविधि ढंग से ना कर पाना, सुस्ती, भूख कम लगना, थकान, सीखने की क्षमता कम होना, रोगों से लड़ने की क्षमता कम होना, शिशु में चिड़चिड़ापन तथा शारीरिक वृद्धि में कमी
बाल्यकाल में उपयुक्त पोषण ना मिलना और कुपोषण से शरीर में आयरन की मात्रा कम हो जाना	बच्चों का जल्दी थक जाना, काम ना कर पाना, पढ़ाई में ध्यान न लगना, बच्चों की देखभाल ढंग से ना कर पाना, धात्री माता द्वारा बच्चे को उपयुक्त पोषण प्रदान ना कर पाना
बार–बार कृमि संक्रमण	काम करने की क्षमता घटना, बार बार बीमार पड़ना, वजन में वृद्धि ना होना, भूख अच्छी तरह ना लगना
किशोरी या प्रजननशील महिलाओं में महावारी के दौरान अधिक रक्तस्त्राव से खून की कमी और अपर्याप्त आयरन युक्त आहार से उसकी भरपाई ना हो पाना	जल्दी थक जाना, उपयुक्त शरीर कार्यकलाप ना कर पाना, खेलना पाना, पढ़ाई में ध्यान ना लगना, घर का काम ना कर पाना
बार बार मलेरिया होना जिससे लाल रक्त कोशिकाओं का नष्ट होना	काम करने की क्षमता का घटना, बार बार बीमार पड़ना, वजन में वृद्धि ना होना, भूख अच्छी तरह ना लगना

ग्राफ 1

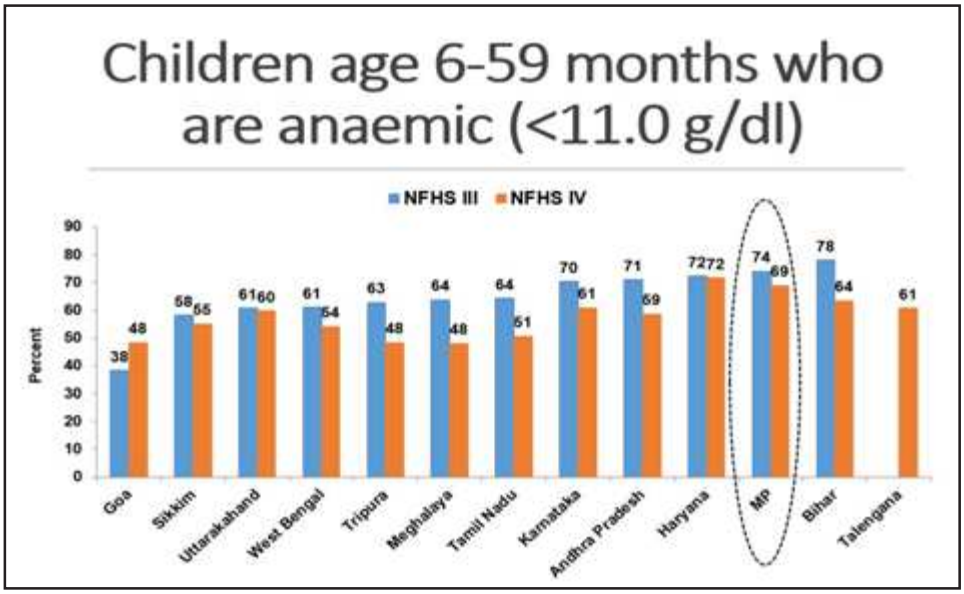

ग्राफ 2

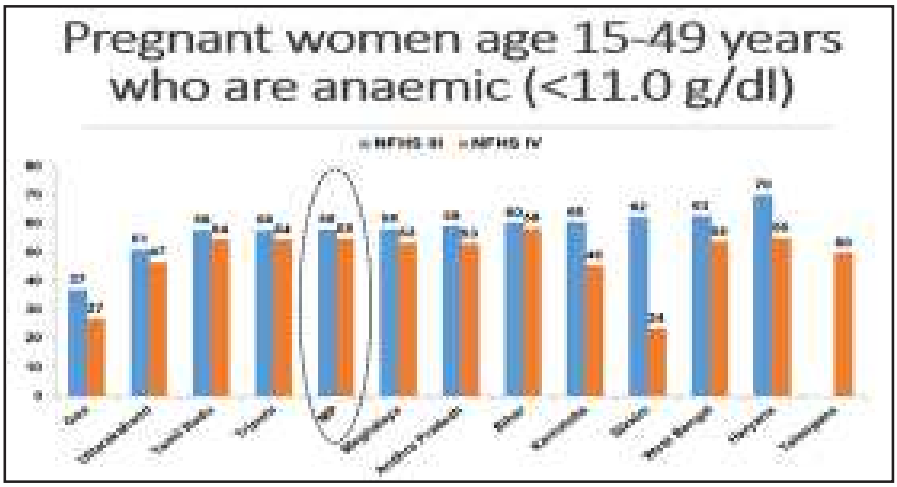

ग्राफ 3

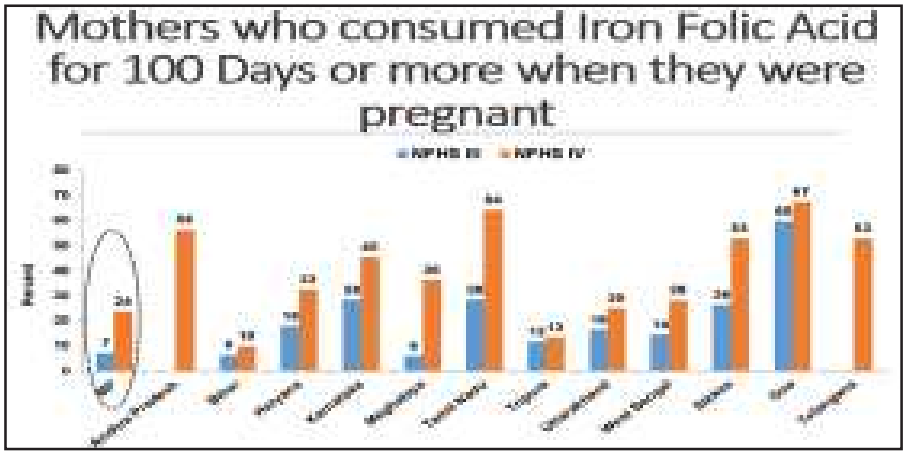

हितग्राही समूहों को आई.एफ.ए. निर्धारित डोज (खुराक)

हितग्राही समूह	**आई.एफ.ए. डोज**
6 से 60 माह के बच्चे	1 एम.एल. आई.एफ.ए. पीडियाट्रिक सीरप (20 मि.ग्रा. एलिमेंटल आयरन और 100 माइक्रोग्राम फोलिक एसिड) सप्ताह में दो बार (मंगलवार एवं शुक्रवार)
5 से10 माह के बच्चे	प्रति सप्ताह 1 आई.एफ.ए की नारंगी गोली (45 मिलीग्राम एलिमेटंल आयरन एवं 400 माइक्रोग्राम फोलिक एसिड) प्रत्येक मंगलवार
10 से19 वर्ष केकिशोरवय बालक एवं बालिकाएं	प्रति सप्ताह 1 आई.एफ.ए कीनीली गोली (100 मिलीग्राम एलिमेटल आयरन एवं500 माइक्रोग्राम फोलिक एसिड) प्रत्येक मंगलवार
गर्भवती महिला	प्रथम तिमाही में 400 माइक्रोग्राम फोलिक एसिड की एक गोली प्रतिदिन। प्रथम तिमाही के बाद में प्रति दिन 1 आई.एफ.ए. की लाल गोली (100 मिलीग्राम एलिमेटल आयरन एवं 500 माइक्रोग्राम फोलिक एसिड) 100 दिवस तक
धात्री माता	प्रति दिन 1 आई.एफ.ए. की लाल गोली (100 मिलीग्राम एलिमेटल आयरन एवं 500 माइक्रोग्राम फोलिक एसिड) 100 दिवस तक
20 से 49 वर्ष की प्रजननकाल की महिलाएं	प्रति सप्ताह 1 आई.एफ.ए. की लाल गोली (100 मिलीग्राम एलिमेटल आयरन एवं 500 माइक्रोग्राम फोलिक एसिड) प्रत्येक मंगलवार

****

कामकाजी एवं गैर कामकाजी महिलाओं के प्रतिबल का अध्ययन

डॉ. आभा तिवारी * सपना श्रीवास्तव **

शोध सारांश – वर्तमान समय में मनुष्य का जीवन अत्यधिक जटिल हो गया है। इसका सामाजिक परिवेश दिन-प्रतिदिन बदलते जा रहा है, उसे जीवन में नित्य नवीन चुनौतियाँ आ रही हैं। इन चुनौतियों का सामना करने में महिलाओं का व्यवहार प्रभावित होता है। प्रस्तुत शोध अध्ययन में कामकाजी एवं गैर कामकाजी महिलाओं के प्रतिबल का अध्ययन किया गया है। 40-40 कामकाजी एवं गैर कामकाजी महिलाओं का चयन कर डॉ. एम.सिंह की प्रतिबल मापनी का प्रयोग कर निष्कर्ष प्राप्त किए गए। परिणामों द्वारा ज्ञात हुआ कि कामकाजी महिलाओं में प्रतिबल की मात्रा गैर कामकाजी महिलाओं से अधिक है।

प्रस्तावना – महिलाओं में तनाव एक ऐसी बहुआयामी प्रक्रिया है, जिसमें महिलाओं को चुनौतियों का सामना करना पड़ता है। चुनौतियाँ किसी भी प्रकार की हो सकती हैं। यह महिलाओं के वातावरण के साथ अन्त:क्रिया करने के तरीके पर निर्भर करती हैं। प्रतिबल की शुरूआत एक सामान्य तनाव से उत्पन्न होती है और यदि व्यक्ति इस तनाव को सहन करने में असमर्थ होता है, तो प्रतिबल उत्पन्न हो जाता है। यह व्यक्ति की मनोवैज्ञानिक दशा पर निर्भर करता है और इनमें वैयक्तिक भिन्नताएँ होती हैं। कुछ व्यक्ति सामान्य परिस्थितियों में भी उचित प्रतिक्रिया व्यक्त न कर पाने के फलस्वरूप प्रतिबल का शिकार हो जाते हैं, जबकि कुछ अन्य जटिल परिस्थितियों में भी अपने व्यवहार को सामान्य बनाए रखते हैं।

कामकाजी व गैर कामकाजी महिलाओं के संदर्भ में प्रतिबल उत्पन्न करने के प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष परिस्थितियों में अंतर हो जाता है। कामकाजी होना समस्याओं के समाधान के परिप्रेक्ष्य को बदल देता है। अप्रत्यक्ष रूप से या इन परिस्थितियों या दोहरी भूमिका का दायित्व प्रतिबल उत्पन्न कर देता है। आधुनिक मनोवैज्ञानिक अनुसंधानों में यह निष्कर्ष उभर कर आए हैं कि अधिकांश रोगों के लिए प्रतिबल उत्तरदायी होता है। कई घातक बीमारियों के होने में भी प्रतिबल की अहम् भूमिका पाई गई है। प्रतिबल उद्दीपक कारक या अनुक्रिया कारक के रूप में भी हो सकता है। यदि कोई घटना या परिस्थिति असाधारण अनुक्रिया करने के लिए बाध्य करती है, तो इससे प्रतिबल उत्पन्न होता है। दूसरी ओर चिन्ता, तनाव, भावनात्मक कुण्ठा, आक्रामकता, शीघ्र गुस्सा आ जाना, आदि की अभिव्यक्ति प्रतिबल को जन्म देती है। सामाजिक एवं वैयक्तिक वातावरणीय घटक इसमें महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वाह करते हैं। **रेबर (1995)** के अनुसार प्रतिबल व्यवहार दो अर्थों में होता है, एक अर्थ में 'प्रतिबल उस शक्ति को कहते हैं, जिसके सक्रिय होने पर विशेष प्रकार का सार्थक परिमार्जन घटित होता है, जिसमें सामान्यत: विरूपेण या विकृति का लक्षण पाया जाता है।' प्रतिबल का तात्पर्य प्रतिबलक (Stresser) से है अर्थात् उस घटना या कारक से है, जो मानसिक परेशानी उत्पन्न करता है। दूसरे अर्थ में 'प्रतिबल मनोवैज्ञानिक तनाव की वह अवस्था है, जिसकी उत्पत्ति भौतिक मनोवैज्ञानिक तथा सामाजिक बलों तथा दबाव द्वारा होती है' **हंस सेली (1979)** के अनुसार 'प्रतिबल से तात्पर्य शरीर द्वारा आवश्यकतानुसार किए गए विशिष्ट अनुक्रिया से होता है।' **जेम्स ड्रेवर** के अनुसार 'प्रतिबल खिंचाव की अनुभूति है, जिसमें संतुलन में बाधा होने का अवबोध होता है और वह स्थिति में अनिष्टकारी कारक को सामान्य करने हेतु व्यवहार परिवर्तन के लिए तत्परता है।' इससे स्पष्ट होता है कि प्रतिबल प्राणी की वह अवस्था होती है, जो उस पर इस प्रकार से प्रभाव डालती है कि उसे वैकल्पिक समायोजन की आवश्यकता पड़ती है क्योंकि परिस्थिति व्यक्ति पर दबाब डालती है। जिसके फलस्वरूप व्यक्ति को बाध्य होकर उस परिस्थिति के साथ समायोजन करना पड़ता है। **सन् लीयर नेवीन एवं आर पारवी फातिमा (2007)** एवं अन्य के शोधों से जो प्रमुख निष्कर्ष निकले उनसे ज्ञात होता है कि गैर कामकाजी महिलाओं की तुलना में कामकाजी महिलाओं में प्रतिबल की मात्रा अधिक थी। **कौर एवं पनवर डॉ. नीरज (2011)** के शोधों से जो प्रमुख निष्कर्ष निकले उनसे ज्ञात होता है कि कामकाजी महिलाओं की तुलना में गैर कामकाजी महिलाओं में प्रतिबल अधिक देखा गया। **शशिकला (2014)** अन्य के शोधों से जो प्रमुख निष्कर्ष निकले उनसे ज्ञात होता है कि कामकाजी महिलाओं की तुलना में गैर कामकाजी महिलाओं में प्रतिबल अधिक देखा गया। इस प्रकार उपरोक्त शोध परिणाम मिश्रित प्रकार हैं और ऐसी संभावना है कि परिवार की परिस्थितियां यह निर्धारण करतीं हैं कि किनमें प्रतिबल अपेक्षाकृत अधिक होगा।

प्रस्तुत शोधकार्य में यह देखने का प्रयास किया जा रहा है कि क्या कामकाजी एवं गैर कामकाजी महिलाओं के प्रतिबल में अंतर होता है। यदि ऐसा पाया गया तो उचित परामर्श दिया जा सकेगा जिससे वे अपने प्रतिबल की मात्रा को न्यूनतम रखते हुए अपने दायित्वों का उचित प्रकार से निर्वाह कर सके।

उद्देश्य –

- कामकाजी तथा गैर कामकाजी महिलाओं के प्रतिबल में अंतर का तुलनात्मक अध्ययन।

परिकल्पना–

- कामकाजी तथा गैर कामकाजी महिलाओं के प्रतिबल में कोई सार्थक

* प्राध्यापक एवं विभागाध्यक्ष (मानव विकास) शासकीय मो. ह. गृहविज्ञान एवं विज्ञान महिला महाविद्यालय (स्वशासी), जबलपुर (म.प्र.) भारत
** शोधार्थी, शासकीय मो. ह. गृहविज्ञान एवं विज्ञान महिला महाविद्यालय (स्वशासी), जबलपुर (म.प्र.) भारत

अंतर नहीं होता है।

चर–

स्वतंत्र चर – कामकाजी महिलाएँ एवं गैर कामकाजी महिलाएँ।

परतंत्र चर – प्रतिबल।

न्यादर्श – कामकाजी तथा गैर कामकाजी 40–40 महिलाओं का चयन (जिनकी शिक्षा का स्तर कम से कम स्नातक तक हो) यादृच्छिक न्यादर्श विधि से किया गया।

न्यादर्श तालिका–1

महिलाओं की प्रकृति	समूह	संख्या
कामकाजी महिलाएं	शिक्षिका	40
गैर कामकाजी महिलाएं	गृहिणी	40
योग		**80**

उपकरण – प्रतिबल मापनी – (2002) डॉ. एम. सिंह। मनोविज्ञान संकाय, वरिष्ठ मनोवैज्ञानिक, शोध एवं परीक्षण विकास संस्थान, अन्धेरी (पूर्व), मुम्बई

विधि – न्यादर्श तालिका के अनुसार न्यादर्श में चयनित 80 कामकाजी एवं गैर कामकाजी महिलाओं पर प्रतिबल मापनी का प्रशासन किया गया एवं फलांकन कुंजी (मेनुअल) के आधार पर फलांकन कर आंकड़े प्राप्त किए गए।

परिणामों का विश्लेषण एवं व्याख्या– इन्हें निम्नांकित सारणी में प्रस्तुत किया गया हैं–

तालिका क्रमांक –2 (देखे आगे पृष्ठ पर)

ग्राफ क्रमांक 01 (देखे आगे पृष्ठ पर)

तालिका में प्रदर्शित परिणामों से स्पष्ट होता है कि कामकाजी एवं गैर कामकाजी महिलाओं के प्रतिबल में सार्थक अंतर है। दोनों समूहों के मध्य प्राप्त क्रांतिक अनुपात का मान 3.14 है जो 0.01 सतर पर सार्थकता हेतु तालिका मान की अपेक्षा अधिक है। प्रतिबल मापनी में अधिक प्राप्तांक प्रतिबल की अधिक मात्रा को सूचित करते हैं, अत: कामकाजी महिलाओं का प्रतिबल गैर कामकाजी महिलाओं की अपेक्षा अधिक है। यह एक सामान्य बात है कि गैर कामकाजी महिलाओं को परिवार की देखभाल संबंधी घरेलू कार्य करते हुए एक गृहणी के उत्तरदायित्वों का निर्वाह भी करना होता है। अधिकांश कामकाजी महिलाएँ अपने कार्यालय/संस्थान में तो कार्य करती ही हैं, पर उन्हें अपने घरेलू कामों को पूर्ण करने का दायित्व भी निष्ठा पूर्वक करना होता है। यह उनकी दोहरी भूमिका को प्रदर्शित करता है, जिसमें एक ओर वे अपने कार्यस्थल पर कामकाजी होने के दायित्वों का निर्वाह करती हैं। वहीं दूसरी ओर कार्य स्थल का काम पूरा करके गृहस्थी के कामों को पूर्ण करने का प्रयास करती हैं। ऐसी स्थिति में उन्हें आशंका रहती है कि दोनों जगह कार्य करने में उनसे उनके दायित्वों के निर्वहन में कोई कमी न रह जाये इसलिए उन्हें चिंता होती है, जो लगातार चिंतित रहने से प्रतिबल का रूप ले लेती है।

प्रतिबल के वर्गीकरण के दृष्टिकोण से यदि परिणामों को देखें तो कामकाजी महिलाओं के प्रतिबल का स्तर न्यून प्रतिबल श्रेणी में जबकि गैर कामकाजी महिलाओं का अत्यंत न्यून प्रतिबल की श्रेणी में है। ये दोनों प्रतिबल निम्न स्तर के हैं। अत: कामकाजी महिलाएं भी यथासंभव अपनी दोहरी भूमिकाओं के निर्वहन में परिवार को किसी भी तरह यह प्रदर्शित नहीं होने देती कि उन्हें कार्य स्थल का भी तनाव है। महिलाओं का कामकाजी होना परिवार की आर्थिक आवश्यकताओं की पूर्ति करता है। जिसका प्रभाव न केवल उनके जीवन के स्तर पर पड़ता है, वरन् वे भविष्य की आर्थिक आवश्यकताओं हेतु बचत करने में भी सक्षम हो जाती हैं। उपरोक्त विवेचना से यह स्पष्ट हो जाता है कि कामकाजी महिलाओं के प्रतिबल का स्तर गैर कामकाजी महिलाओं के प्रतिबल की अपेक्षा अधिक है, पर वे दोहरी भूमिकाओं के निर्वहन में सफल होती हुई प्रतीत होती हैं क्योंकि वे अपने प्रतिबल की श्रेणी को अधिक होने से बचाये हुए हैं।

इस संबंध में नेवीन एवं फातिमा (2007) के परिणामों से स्पष्ट होता है कि कामकाजी महिलाओं में गैर कामकाजी महिलाओं की अपेक्षा प्रतिबल की मात्रा अधिक थी। यही परिणाम प्रस्तुत शोध कार्य से प्राप्त हुए। इसके विपरीत कौर एवं डॉ. नीरज (2011) तथा शशिकला (2014) एवं अन्य ने गैर कामकाजी महिलाओं में प्रतिबल को अधिक कहा हैं। अत: यह कहा जा सकता है कि परिवार की विभिन्न परिस्थितियाँ एक महत्वपूर्ण कारक हो सकती हैं जो यह निर्धारित करने में अपनी भूमिका का निर्वाह कर सकती हैं कि कामकाजी एवं गैर कामकाजी महिलाओं में प्रतिबल की स्थिति क्या होगी, उपरोक्त परिणामों के परिप्रेक्ष्य में पूर्व में ली गई परिकल्पना स्वीकृत नहीं होती हैं।

अत: उपरोक्त परिणामों और विवेचना से यह बात कही जा सकती है कि कामकाजी एवं गैर कामकाजी महिलाओं में प्रतिबल में अंतर समय एवं परिस्थितियों के अनुसार बदलता रहता है क्योंकि कभी शोध परिणाम कामकाजी महिलाओं में अधिक प्रतिबल को प्रदर्शित कर रहे है, तो कुछ में गैर कामकाजी महिलाओं में प्रतिबल को अर्थात् यह समय एवं परिस्थितियों के अनुसार परिवर्तित होता है।

निष्कर्ष – कामकाजी महिलाओं में प्रतिबल की मात्रा गैर कामकाजी महिलाओं से अधिक है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. गैरेट, हेनरी ई. (1989) 'शिक्षा एवं मनोविज्ञान में सांख्यिकीय में प्रयोग', कल्याणी प्रकाशन, नई दिल्ली, पृ. सं. 284–285।
2. कपिल, डॉ. एच. के. (2011), 'अनुसंधान विधियाँ', राखी प्रकाशन, 12ए, चतुर्थ लाल यरमन टावर संजय पैलेस व्यावसायिक काम्पलेक्स, आगरा, पृ. सं. 441–442।
3. श्रीवास्तव, डॉ. डी. एन. (1996) 'आधुनिक प्रयोगात्मक मनोविज्ञान', विनोद पुस्तक मंदिर, आगरा, पृ.सं. 737–758।
4. सिंह, बघेला हेत (2005) 'शिक्षा मनोविज्ञान', राजस्थान प्रकाशन, त्रिपोलिया बाजार, जयपुर, पृ.96–97।
5. सिंह, अरूण कुमार (2004) 'आधुनिक सामान्य मनोविज्ञान', मोतीलाल बनारसी दास, पृ. 247–248।
6. सुलेमान, मुहम्मद, तौवाब, मुहम्मद य असामान्य मनोविज्ञान', नवीनतम संस्करण, मोतीलाल बनारसीदास, पृ. 116–117।

तालिका क्रमांक – 2

कामकाजी एवं गैर कामकाजी महिलाओं के प्रतिबल में अंतर संबंधी तुलनात्मक परिणाम

समूह	संख्या	मध्यमान	मानक विचलन	क्रांतिक अनुपात	'पी'मान
कामकाजी महिलाएं	40	30.70	14.00	3.14	<0.01
गैर कामकाजी महिलाएं	40	21.38	12.50		

स्वतंत्रता के अंश – 78

0.05 स्तर पर सार्थकता हेतु मान – 1.99

0.01 स्तर पर सार्थकता हेतु मान– 2.64

ग्राफ क्रमांक – 01

कामकाजी एवं गैर कामकाजी महिलाओं के प्रतिबल में अंतर संबंधी तुलनात्मक परिणामों का ग्राफीय निरूपण

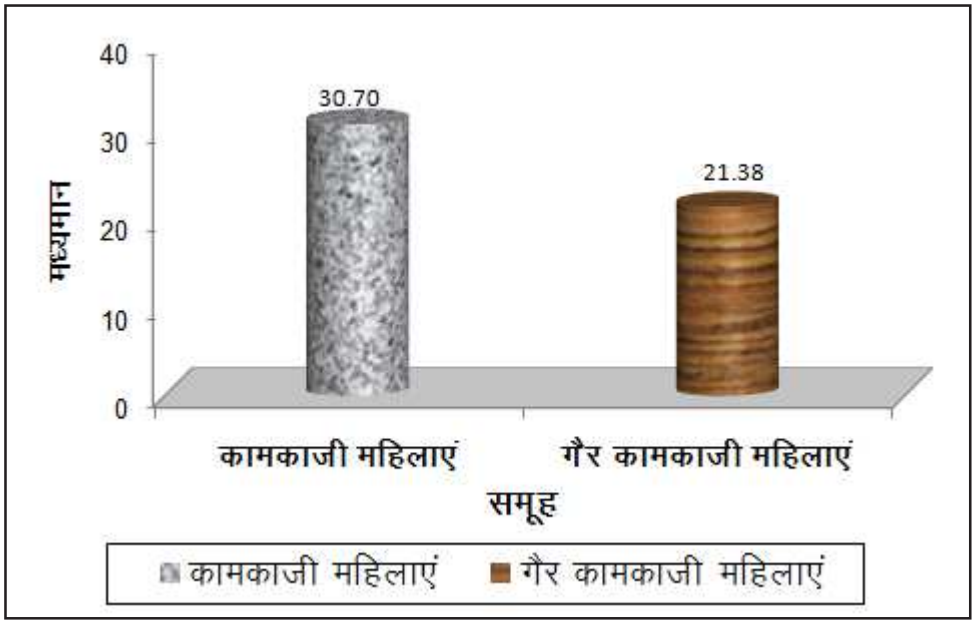

****

Infoemation Needs And Information Seeking Behaviour Of Mahatma Gandhi National Rural Employment Gurantee Act (Mgnrega) Beneficiers In Jodhpur District

Gitika Kachhawa * Dr. Lalita Vatta **

Abstract - Government has launched various schemes and programmes for poverty eradication and reducing gender discrimination, which are providing ways and means towards women development and empowerment. Mahatma Gandhi National Rural Employment Guarantee Act (MGNREGA) is one among them. Our country is moving very fast and working on various important areas simultaneously. But these all streams are interrelated. For example women empowerment and digitalization. Government launches programmes for economic empowerment of women with this moving to digital India. All the benefits related to Government programmes are to be transferred digitally. Now the crisis of information gap arises. People seek information for their day to day work, recreate, sort out their queries and most important to get satisfaction. The need for exploration arises when an individual stuck into some specific situation which requires being deal with knowledge. The present study is an attempt to know the sources of information and Information Seeking Behavior of women beneficiary of MGNREGA. Major source of information for women is family and friends and the type of information they explore is information related to wages.

Key words - MGNREGA, Information need, Information source, women beneficieries, Jodhpur, Development programme.

Introduction - Information is an important resource for individual growth and survival. The progress of modern societies as well as individuals depends a great deal upon the provision of the right kind of information, in the right form and at the right time. Information is needed to be able to take a right decision and also reduce uncertainty. Government has launched various schemes and programmes for poverty eradication and reducing gender discrimination, which are providing ways and means towards women development and empowerment. Mahatma Gandhi National Rural Employment Guarantee Act (MGNREGA) is one among them. MGNREGA can also serve other objectives: Generating productive assets, protecting the environment, empowering women, reducing rural urban migration & fostering social equity among others. MGNREGA is not just an employment scheme; it is a tool of economic & social change in rural areas. It plays an important role in participation of women in income consumption effects, intra household effects and community level effects. It empowers women by providing scope of their own earning and also spends according to their own needs. There is also increase in decision making role of women in household related matters. MGNREGA also increase the number of women in attending the gram sabha meeting related to programme.

Our country is moving towards digitalization. Most of the schemes are government initiatives are running on technology mode. MGNREGA also is not an exception. Continues innovations in the Information Technology bring out changes in the information exploration and its utilization. People seek information for their day to day work, recreate, sort out their queries and most important to get satisfaction. The need for exploration arises when an individual stuck into some specific situation which requires being deal with knowledge. When information needs are related with food and shelter, it become more crucial to have accurate and latest knowledge. In this situation the researcher herself feel more responsible to know the accurate scenario of present information seeking behavior of MGNREGA beneficiaries, so that the whole scenario of digitations can be seen clearly at grass root level.

Objective-

1. To find out the extent of gender viability of the MGNREGA beneficiaries in the Jodhpur District.
2. To explore the information seeking behavior of female MGNREGA beneficiaries.

Operational Definition -

Information - Information in the present study will be considered as any data which is timely and accurate, which gives a meaning that leads to increase understanding and avoid the uncertainty related to MGNREGA.

Information need - The recognition by an individual that their knowledge is inadequate to satisfy the information they require.

*Research Scholar, Jai Narain Vyas University, Jodhpur (Raj.) INDIA
**Research Supervisor, Rajasthan University, Jaipur (Raj.) INDIA

Information seeking behavior - Information seeking behavior will be the practices through which MGNREGA beneficiaries interact with the information or the ways opted by them to seek and utilize the information.

Review of Literature - Fiankor and Adams (2004) explore information need as the amount of positive information an individual or group of people need to have for their work, recreation and many other like satisfaction. This however implies that lack of information needed into accomplish tasks results in information need. Their concept of information need also means the need for information whenever individuals are faced with situation that requires knowledge to handle such situation. Therefore, information need is a gap in person's knowledge, when experienced at the conscious level as a question, gives rise to a search for an answer.

A study conducted by Yusuf (2012) on Information Needs, Sources and Information Seeking Behaviour of Women Artisans in Offa Metropolis "To identify the information needs of women artisans in Offa". He concluded that The findings of this research work gives detail information on the types of information needs of women artisans in Offa metropolis which is majorly on the new products, latest/current designs and procedure for production and the cost, quality, location, source and dealers of raw materials in other to meet the needs of their target users. It also revealed the kinds of behavior exhibit while seeking for information by the women artisan in Offa metropolis which shows that they seek information mostly from their friends and relatives, however rate of the patronage in libraries, information centres and internet cyber café are not much due to their level of literacy.

Methodology - Locale of the study was Jodhpur district of Rajasthan. As per reports available on official website of Government of Rajasthan it was observed that during the financial year 2012-2013 the women participation rate was very high i.e. around 70 percent (nrega.raj.nic). There are ten Panchayat Samities in Jodhpur namely- Luni, Mandore, Balesar, Shergarh, Osian, Bhopal garh, Bilara, Phalodi, Bap and Bawari (Jodhpur city). Two gram panchayats from each panchayat samitee were selected –keeping in view the maximum coverage of demographic area. Thus total twenty Gram Panchayats were included in final sample. For selecting the gram panchayats convenience sampling is used .Two gram panchayats from each panchayat samitee were selected for data collection. While selecting sample convenience sampling is used, 25 beneficiaries from each gram Sabha were selected (from the list of beneficiaries, as made available by Gram Panchayats). Thus total final sample for data collection was 500 women beneficiaries. Interview schedule was developed for collecting data which was having two section ie background information of respondents, source of information and types of information. To know gender viability the secondary data were used from Government of Rajasthan Website.

Results and Discussion - This section is devided in three sub sections-

1. Background information of MGNREGA beneficiaries
2. Gender Viability of MGNREGA beneficiaries in terms of women's participation
3. Information Seeking Behavior of MGNREGA beneficiaries

1. Background information of MGNREGA beneficiaries – This section includes data about their cast, marital status, education, income etc. Most of the beneficiaries were married (98%) and belongs to 31-45 year of age (68%). As the study was conducted in rural area so the maximum (66%) beneficiaries belongs to the families who have 5-8 family members. Education status is still not very respective in India , this also reflects in the study. Sixty onepercent of the respondent either ill literate or primary level educated. Only 9% could reach at senior secondary level. Major source of earning was own cultivation (49%) and non farm labor (21%) .

2. Gender Viability in terms of women's participation- Women plays a very important role in the development of the country .One of the important objective of MGNREGA has to encourage women participation by fulfill the guidelines that atleast 1/3 of the beneficiaries shall be women. This scheme also provide potential to boost up the women participation by providing employment within 5Kms radius of the village and equal pay for men and women *Dutta et.al.(2012) reported that under MGNREGA the share of female work is higher than their share in casual wage labour.*

Table- 1 (See in the last page)

Data in Table 1 reveals that in year 2012-2015 among all the blocks around half of the respondents (49.11%) were women worker registered in MGNREGA respectively. Farooqi and Saleem (2015) reported that in year 2011-2013 in Uttar Pradesh the rate of women participation in MGNREGA is poor remains near about 20 percent only. Data further depicts that the rate of participation in Jodhpur district is around same in all the three years (49%).In all the ten blocks of Jodhpur district the participation rate are almost same except Bilara block where participation rate is high(52.33%) among all the blocks. Kumar & Bhattacharya (2013)reported that Women participation in decision making and physical activity are less in Morigaon (Assam) though education, occupation and age have increase impact on participation in physical activities. Joshi (2014) stated that in Rajasthan active youth groups and social movements have been encouraged women participation in the programme. From above data it can be concluded that MGNREGA reduced the tradition wage discrimination in public work. Improved paid work also give positive impact on socio economic status of women as the financial support empowered the women economically. Dheerja & Rao (2010) indicate that women's are more independent in spending of MGNREGA wages which indicate greater decision making power in households. There are certain factors such as low work site facilities

like long working hours, crèche, gender relations are act as a barrier in women's full participation.

3. Information Seeking Behavior of MGNREGA beneficiaries - There are various type of work undergone through MGNREGA in villages. Sometimes it was seen that people have lack of knowledge and awareness regarding the programme viz type of work , registration , work site , wage payment and facilities provided under the scheme. Generally the reason behind this low level of knowledge due to poor source of information This section deals with the information regarding different aspects of MGNREGA and source of information.

Table-2 Distribution of respondents according to information seeking behavior

n=500

Source of Information	No of Respondents (%)
Panchyat	268 (53.6%)
Husband and family	490 (98%)
Friends	21(4.2%)
MGNREGA Workers	168(33.6%)
Anganwadi	200(40%)
Hospital	15 (3%)
Choupal	18 (3.6%)
Relatives	56(11%)
Neighbour	95(19%)
Newspaper	15(3%)
Media	10 (2%)

Data in table 2 depicts that husband and family are the major sources of information for almost all the women (98%). More than half of the respondents reported that they avail the information regarding the scheme undergone in the village from Gram panchyat office they generally used to visit Gram panchyat office once or twice in a month and 40 percent of the beneficiaries were knew about the programme from anganwadi mostly they are those who having a children who goes to anganadi for midday meal. 33 percent of the respondents get information from MGNREGA workers as they work together on the site of the scheme from those they generally get information regarding wage payment. IRM(2010) reported that around half of the respondents visits GP office for the knowledge regarding MGNREGA

Very few percent of the beneficiaries 11%, 19% & 4 percent were getting information from their relatives, neighbours and friends. 15-18 Percent of the respondents were aware about the notifications from hospital and choupal whereas only 15- 10% of the respondents were used newspaper and media as a source of information as most of the respondents were unable to read newspaper or it is not available in their houses. Mohanty (2012) stated that large section of the respondents reported that they hardly see the notifications in advance regarding MGNREGA meeting. This is so because notifications are generally in GP offices and people were not desperate to do so or most of the jobseekers were illiterate so they were unable to read.

Figure - 1 Source of information (See in the last page)

Figure-2 also depicts the type of information selected by beneficiaries around one third of the respondents (71%) were seeking information regarding payment of wages under the scheme. Less than half of the respondents 30 & 20 percent were trying to know about working hours and crèche facility, as one fourth of the beneficiaries were having a small child so that they were curious about this information. Whereas 28 percent of the beneficiaries wants to get information about the worksite viz where it is located and distance from their houses. A very few respondents (12.4%) wants to gather information regarding type of work undergoes with the scheme.

Figure - 2 Type of information. (See in the last page)

Conclusion- It can be concluded that for MGNREGA beneficiaries the major information sources were still their husband and co workers and the type of information sleeked by majority of them were wage payment and work sites. Which is a clear indicator that even achieving more than 50 percent women beneficiary status in the district, still to get knowledge beneficiaries are depending on male members.

References :-

1. Dheerja,C.,& Rao,H. (2010)."Changing Gender Relations: a Study of MGNREGA across Different States". Hyderabad, National Institute of Rural Develoment (NIRD).
2. Dutta ,P., Mungai,R., Ravallion,M., & Van de Walle,D.(2012). Does India's Employment Guarantee Scheme Guarantee Employemnt? World Bank Policy, Research Working Paper 6003.
3. Farooqi,S., & Saleem,I.(2015). "Mahatma Gandhi National Rural Employment Guarantee Act (MGNREGA) and Empowerment of Women from BPL families in rural areas" A case study of district Aligarh (India). IOSR Journal of Humanities and Social Science (IOSR-JHSS) 20(3) VII, 07-16.
4. Fatima, N. and Ahamed, N. (2008). c.f. Nwobasi, R. N. (2013). Information needs and seeking behaviour of students in two universities in Imo state, Nigeria, cited from http://digitalcommons.unl.edu/cgi/viewcontent.cgi?article=2348&context=libphilprac, cited on 26-9-2014.
5. Institute of Rural Management (IRM), Anand. (2010). "Impact Assessment Study of the usefulness and Sustainability of the assessts created under Mahatama Gandhi National Rural Employment Guarantee act in Sikkim".
6. Joshi,Ekta.(2014)."MGNREGA: Women' Participation and its impact." Accountability Initiative,India, Retrieved from http://www.accountability.in
7. Kumar ,U., & Bhattacharya,P.(2013)." Participation of Women in MGNREGA: How far is it successful in Morrigaon , Assam". Indian Journal of Economics and Development.1(2),38-48.
8. Yusuf, T.I (2012), Information Needs, Sources and

Information Seeking Behaviour of Women Artisans in Offa Metropolis, cited from http://digitalcommons.unl. edu/ cgi/viewcontent. cgi?article= 3134&context= libphilprac, cited on December 16, 2016
9. http://www.nrega.raj.in

Table - 1 Gender viability of Jodhpur district in terms of male and female participation in MGNREGA (2012-2015)

Blocks	2015		2014		2013		2012	
	Women (%)	Male (%)	Women (%)	Male (%)	Women (%)	Male (%)	Women (%)	Male (%)
Bavari	48.58	51.42%	48.27%	51.83	48.20	51.80	48.17	51.73
Osian	47.96	52.04	47.85	52.17	47.84	52.16	47.83	52.15
Phalodi	48.87	51.13	49.70	50.29	49.71	50.29	49.71	50.03
Baap	47.75	52.25	47.79	52.22	47.78	52.22	47.78	52.21
Balesar	48.84	51.10	48.05	52.04	47.97	52.04	47.96	51.95
Bilara	52.51	47.49	52.33	47.76	52.33	47.67	52.24	47.67
Bhopalgarh	49.60	50.40	49.66	50.36	49.65	50.36	49.64	50.34
Mandore	49.85	50.15	49.83	50.21	49.81	50.19	49.79	50.17
Luni	50.83	49.17	50.80	49.22	50.79	49.22	50.78	49.02
Shergarh	46.59	53.41	46.53	53.51	46.51	53.49	46.49	53.47

Source - nrega.raj.in

Figure 1 Source of information

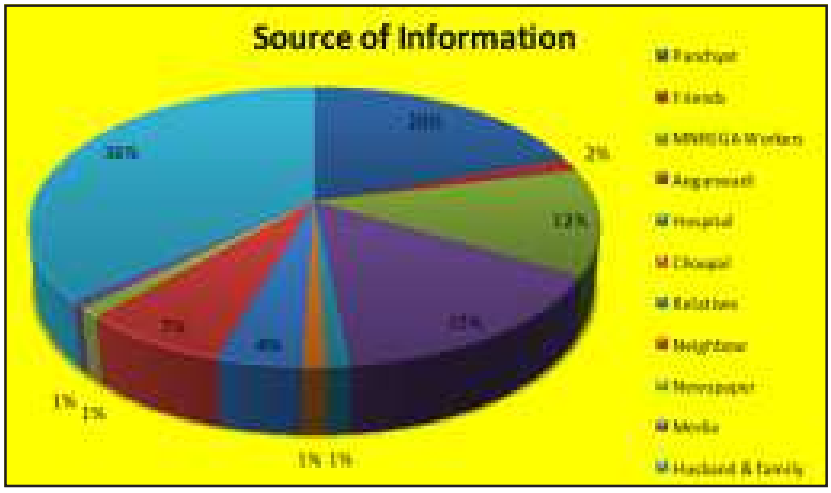

Figure 2 Type of information

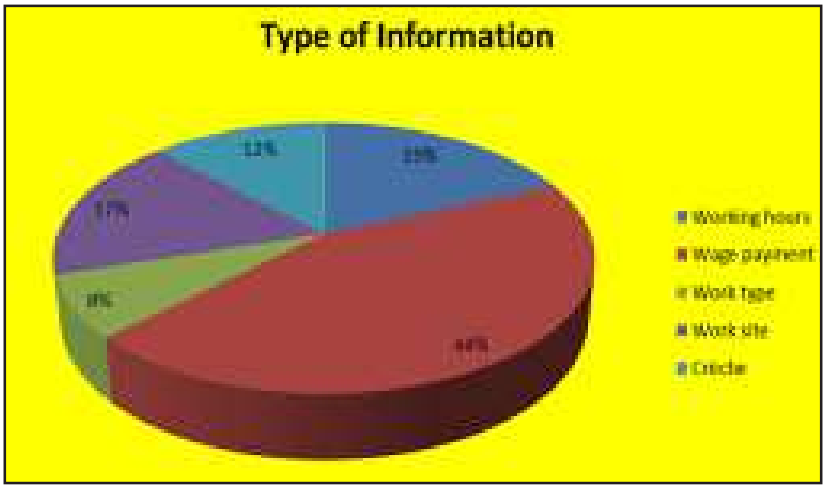

****

Impact Of Announcement Of Merger And Acquisition On The Valuation Of The Banks (With Special Reference To SBI)

Dr. P. K. Jain * Brajeshwari Mishra **

Introduction - Indian banks are the prevailing financial peacekeeping troops in India and have made good growth during the global financial emergency; it is evident from its annual credit development, profitability and trends in NPAs. Companies growth is probable in two ways, organic or inorganic. Organic growth is also says as internal growth, occurs when the company grows from its own commerce activity using funds from one year to expand the company the following year. Such growth is a measured process spread over a few years but firm want to grow faster. Inorganic growth is says as external growth and measured as a faster technique to grow which is most preferred. Inorganic growth occurs when the business grows by merger or acquisition of another business. The main motive behind the Merger is to generate synergy, that is one bonus one is more than two and this foundation entice the companies for merger at tough times. Merger and Acquisitions help the companies in getting the reimbursement of greater market share and rate effectiveness. For growing the operations and cutting costs, Banks are using Merger and Acquisitions as a strategy for achieving superior size, enlarged market share, earlier growth, and synergy for fetching more competitive from first to last economies of level.

Concept of Merger or amalgamation - Mergers or Amalgamations result in the grouping of two or more companies into one where the merging entity lose their own identities. No new investment is made during this process. However an replace of shares takes place between the entities involved in such a method. Generally the company that survives is the buyer which retains its characteristics and the seller company is extinguished.

Merger - Merger as being a corporate grouping of two or more autonomous business corporations into a single venture, usually the absorption of one or more firms by a central one. The reasons for a merger are lots of. The acquiring company may seek to eliminate struggle, increase its own effectiveness, or expand its products, services, and markets or to decrease its tax liability. Merger activity varies with the commerce cycle, being higher when the business is going good.

Amalgamation - Amalgamation is the combination of two or more accessible enterprise into one enterprise with the shareholder of each joining together company becoming significantly the shareholders in the company which is to hold on the blended happenings.

Acquisition - Acquisition in general sense is acquiring the possession in the assets. Acquisition is the acquire by one company of scheming interest in the share wealth of another existing corporation or company. This means that even after the conquest although there is modify in the management of both in cooperation the firms retain their separate legal individuality. This may be defined as an act of acquiring effective manage by one company over the assets or management of the other company without any grouping of both of them.

Take Over - In practices Under the monopolies and restrictive trade practices act, take over earnings acquisition of not less than 25 persent(%) of ballot vote powers in a company business. HDFC bank merge Centurion bank of Punjab (CBoP) for the mean of their growth projection. The swap ratios led to 25 shares of Rs 1 of CBoP, changed into one share of Rs 10 of HDFC Bank. After declaration of the news share price of CBoP stimulated from Rs 49.85 to Rs 56.40 within two days in times. The ICICI Bank amalgamation or Merger with Bank of Rajasthan was the seventh professional merger and the most modern in India after the merger of HDFC Bank - Centurion Bank of Punjab in the year 2008, compared with other charitable mergers. Bank of Rajasthan decided to merger with ICICI bank on 18th May 2010. Swap ratio for the agreement was decided at 25 shares in ICICI for each 118 shares in Bank of Rajasthan. State bank of India had merger with one of the correlateor associate bank State bank of Indore on 28th July 2010. The agreement became effective from 26th August 2010 and the trade ration was 34 shares of SBI designed for 100 shares in state bank of Indore. United western bank was amalgamatedor merge with IDBI on 12th September 2006. Company decided to pay 28 per share to all the share holders of united western bank. Bharat oversea bank was merged with Indian Overseas Bank. The deal

*Professor (Commerce) Govt. Hamidia P. G. College, Bhopal (M.P.) INDIA
**Research Scholar (Commerce) Govt. Hamidia P. G. College, Bhopal (M.P.) INDIA

became effective from April 01, 2007.

Review of Literature -

Joydeep Biswas (2004)-"Recent trend of merger in the Indian private corporate sector". They study about Corporate reorganization in the form M&A has turn out to be a natural and perhaps a desirable phenomenon in the current economic atmosphere.

In the melody with the worldwide trend, M&A have develop into an important conduit for FDI inflows in India in fresh years. In this manuscript it is argued that the Greenfiled FDI and cross-border M&As are not alternatives in increasing countries like India.

Vanitha. S (2007) - "Mergers and Acquisition in Manufacturing Industry" she analyze the financial presentation of the merged or amalgated companies, share price reaction to the announcement of merger and acquisition and the impact of financial variables on the share price of merged companies. The author found that the merged company reacted positively to the merger announcement and also, few financial variables only influenced the contribute to price of the merged companies.

Vanitha. S and Selvam. M (2007) - "Financial Performance of Indian Manufacturing Companies during Pre and Post Merger" they analyzed the pre and post merger presentation of Indian mechanized sector during 2000-2002 by using a taster of 17 companies out of 58 (30 thirty percent(%) of the total population). For Economic or financial performance investigation, they used ratio analysis, mean, standard deviation and "t" test. They found that the on the whole financial performance of merged companies in admiration of 13 variables were not significantly different from the expectations.

Kumar (2009) - "Post-Merger Corporate Performance: an Indian Perspective "examined the post-merger in commission performance of a sample of 30 acquiring company occupied in merger activities throughout the period 1999-2002 in India. The study attempts to spot synergies, if any, ensuing from mergers. The study uses accounting statistics to examine merger connected gains to the acquiring firms. It was found that the post-merger prosperity, assets turnover, and solvency of the acquiring companies, on average, show no perfection when compared with pre-merger ideals.

Sinha Pankaj & Gupta Sushant (2011) - Studied a pre and post analysis of firms and completed that it had positive end product as their profitability, in most of the cases deteriorated liquidity. After the period of a small number of years of Merger and Acquisitions (M & As) it came to the tip that companies may have been talented to leverage the synergies arising out of the merger and Acquisition that have not been able to supervise their liquidity. Study showed the comparison of pre and post examination of the firms. It also indicated the positive special effects on the origin of some financial parameter like income before Interest and Tax (EBIT), Return on share holder money, Profit margin, Interest Coverage, Current Ratio and Cost Efficiency etc.

Objective of the study-

1. To study the impact of Merger and acquisition on the original value of Acquirer bank
2. To analyze the position of target bank prior to the event of M&A.
3. To study the impact of the occurrence announcement on the stock price of the acquirer firm or company.
4. To analyze whether the stock market gives an prospect to make abnormal returns through the announcement period.

Research Hypotheses - A research hypothesis is a faltering statement formed by researchers upon the conclusion of a research or experiment. A hypothesis is provisionally traditional as a basis for further research in the expect that a tenable theory will be fashioned, even if the hypothesis eventually fails. **Hypotheses** 1: Null hypothesis; Merger and acquisition effects positively the financial assessment of the acquirer company. **Hypotheses** 2: Event announcement positively influence the stock prices of all the acquirer banks uniformly. **Hypotheses** 3: Stock market give an opportunity to create abnormal takings during the announcement period.

Research Methodology Data Collection - The study has been carried away on the micro-level, as it is not probable for the researcher to carry out it on the macro-level. The population of the study consists of banking firms or companies. So, selection is based on the newest examples of amalgamation. Secondary data has been use from the yearly reports, news papers and various websites of chosen banks.

Period of the Study - The present study is mainly planned to observe the financial performance of merged companies five years previous to merger and five years after merger

Tools and Techniques Mathematical tool - Percentage change in return of security's stock price has been designed for calculated. Window of (T-30 to T+30), where in T is the Announcement Date. So Price of Security and Sensex Index value is taken for the window and come back is calculated:

1. Percentage changeover in return is calculate using formula- P_1-Po/ Po * 100 where in P_1 is for current day price and Po is for Previous day price
2. Abnormal Return is the surplus of security return over market return for the period.
3. CAR- (Cumulative abnormal return) is calculated by adding up next day value in previous value.
4. CAAR- (Cumulative average abnormal return) is calculating by dividing the summation of CAR of all the securities by the number of mergers.

Statistical tool - Mean and Standard deviation has been calculated. Mean and standard deviation of abnormal return of all the securities by using SPSS.

Ratio analysis - Ratios are between the well known and a good number widely used tools of financial analysis. Ratio can be defined as- "The indicated quotient of two mathematical expressions." It is the association between one item to another expressed in easy mathematical form.

a. **Earnings per share -** Total earnings of equity share holders / No of outstanding equity shares.

b. **Return to capital employed -** A financial ratio that measures a company's profitability and the efficiency by means of which its capital is working. Return on Capital Employed (ROCE) is calculated as: ROCE = Earnings before Interest and Tax (EBIT) diveded (**/**) Capital Employe.

c. Debt to Equity ratio - The Debt to equity ratio is a financial, liquidity ratio that compare a company's total debt to total equity. The debt to equity ratio shows the percentage of corporation financing that comes from creditors and investors. A higher debt to equity ratio indicates that more creditor financing (bank loans) is used than depositor financing (shareholders). A lesser debt to equity ratio usually implies a extra financially stable trade. Debt to equity ratio: Total outside liabilities **/** Total equities

d. **Adjusted return on Net worth** - Profit after Tax/ Total net worth of the company

Table reveals that net worth had increased three times in case of four banks out of five in the pre acquisition years but after acquisition, there was again tremendous growth in net worth. **(See)**

Limitations of the Study - Every live and non-live factor has its own limitations which limit the usability of that factor. this same rule applies to this investigate work. The major limitations of this learning or study are as under:

1. This study is mainly based on secondary data derived from a mixture of financial websites of bseindia.com, moneycontrol.com etc. The consistency and the finding are contingent upon the data available or publish in therein
2. This study is restricted to some banks only.
3. The study is limited to five years before after merger only.
4. Financial analyses do not represent those facts which cannot be spoken in terms of money, for example – efficiency of workers, status and standing of the management.

Conclusion - the news like Merger and acquisition is seeming as positive Generally. Moreover these measures also affect the fundamental worth of Acquirer Company but taking into consideration their stock market movement, no doubt market make available an opportunity to shareholder to gain some profits but not for all the stockpile equally.

Table reveals that net worth had increased three times in case of four banks out of five in the pre acquisition years but after acquisition, there was again tremendous growth in net worth.

(Source: Moneycontrol.com)

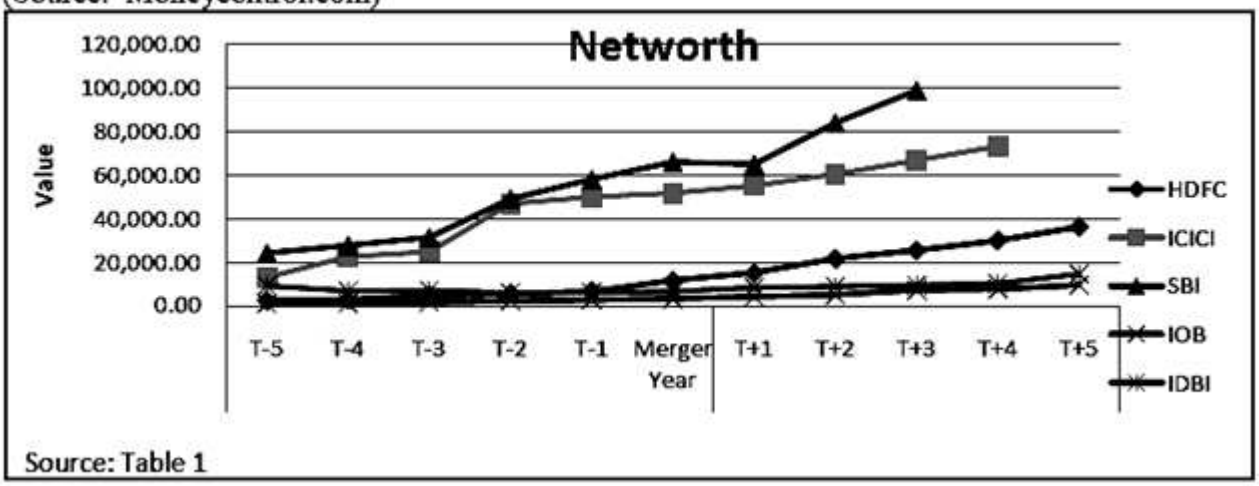

Source: Table 1

Table:1	Net worth										
	Pre Merger Values						Post Merger Values				
	T-5	T-4	T-3	T-2	T-1	Merger Year	T+1	T+2	T+3	T+4	T+5
HDFC	2,251.74	2,693.33	4,520.28	5,299.60	6,433.15	11,497.23	15,052.73	21,522.49	25,379.27	29,924.68	36,214.14
ICICI	12,899.97	22,555.99	24,663.26	46,820.21	49,883.02	51,618.37	55,090.93	60,405.25	66,705.96	73,213.32	
SBI	24,072.14	27,644.09	31,298.56	49,032.66	57,947.70	65,949.20	64,986.04	83,951.20	98,883.68		
IOB	932.76	1,132.63	1,459.59	2,081.09	2,575.19	3,177.44	3,990.36	4,856.67	7,150.96	7,524.58	9,324.93
IDBI	9,161.85	6,695.14	6,978.09	5,834.90	5,928.40	6,372.05	8,299.86	8,821.96	9,423.86	10,164.84	14,567.58

****

Globalization & Its Impact On Small Scale Industries In India

Samrat Wani *

Abstract - **Globalization is the free movement of goods, services and people across the world in a seamless and integrated manner**. Globalization can be thought of to be the result of the opening up of the global economy and the concomitant increase in trade between nations. In other words, when countries that were hitherto closed to trade and foreign investment open up their economies and go global, the result is an increasing interconnectedness and integration of the economies of the world. Further, globalization can also mean that countries liberalize their import protocols and welcome foreign investment into sectors that are the mainstays of its economy. What this means is that countries become magnets for attracting global capital by opening up their economies to multinational corporations. Further, globalization also means that countries liberalize their visa rules and procedures so as to permit the free flow of people from country to country. Moreover, globalization results in freeing up the unproductive sectors to investment and the productive sectors to export related activities resulting in a win-win situation for the economies of the world..
Key words - Globalisation, Small Scale Industries, Exponential Growth.

Introduction - Globalisation means gradual integration of economies through free movement of goods, services and capital which has significant impact on the economies of both developed and developing countries. Therefore, globalisation refers to a process of growing economic interdependence among different countries of the world. Thus, in the globalised era, the whole world is changing into a global village in the sense that economic activities in one part of the globe are affecting significantly the rest of the world. For this purpose, it becomes necessary for India to participate in the process of globalisation (Ashutosh, 2002). The New Economic Policy of 1991 aimed at making Indian economy competitive and much better integrated with the rest of the world. The liberalisation and economic reform process which included both short term and long term measures have direct and indirect bearing on the manufacturing sector of India in general and small scale sector in particular. The dynamics of change will bring about inflow of technology, resources and both human and physical capital that are scarce or costly to be procured locally in the developing economies like India. This will lead to rise in the productive capacity of the nation to supply increasingly diverse economic goods and services to its growing population.

Small Scale Industries & Its importance - Economic development of a country is directly related to the level of industrial growth. India has also been striving to develop the country's industrial base over since independence. The small-scale industries sector has been appropriately give a strategic position in our planned economy towards the fulfillment of the socio economic objectives particularly in achieving equitable growth. The definition of small scale sector is broadened from small-scale industries to small scale enterprises that include all business enterprises in the services sector which provide service to industrial sector in addition to small scale industries taking into account all these factors, at present, Reserve Bank of India uses an expanded definition of small scale industries which include:(i) Small scale industrial undertaking which are engaged in the manufacturing, processing and preservation of goods in which the investment in plant and machinery not to exceed Rs. 5crore. These would include units engaged in mining or quarrying servicing and repairing of machinery. (ii) Tiny enterprises whose investment in plant and machinery do not exceed Rs.25 lacs. (iii) Power looms. (iv) Traditional industries which require high workforce.

Data Base And Methodology - In the present study an attempt has been made to analyze the impact of globalization on the growth of small scale industries. The reference period for the analysis of the data has been taken from 1973-74 to 2006-07. The study period has been divided into two parts: pre liberalisation (1973-74 to 1989-90) and post liberalisation (1990-91 to 2006-07) to know the impact of globalization after liberalisation. For this, a comparative analysis of Average Annual Growth Rates for pre and post globalization periods has been carried out for key growth and performance parameters

Pre-liberalization Performance of Small-Scale Industries: (See in the last page)

1. **Number of Units -** It is evident from the table that

*Asst. Professor, Thakur Shivkumar Singh Memorial Mgt. College, Jhiri, Distt. Burhanpur (M.P.) INDIA

number of small-scale units stood at 13.17 lakhs in 1977-78 and these rose 19.48 lakhs in 1990-91. The average number of small-scale units during pre-liberalisation period is 12.41 lakhs. The compound growth rate for number of small-scale industrial units has been 7.92 % from 1977-1978 to 1990-91.

2. Investment in SSI - The pre-liberalisation period of 1977-1978 to 1990-91 shows that the investment in small-scale industries increased from Rs. 3959 crores to 19302 crores during 1977-1978 to 1990-91. The compound growth rate in investment of small-scale industrial units has been 11.97 percent from 1977-1978 to 1990-91.

3. Production of SSI - The production of small-scale industries in 1977-78 was Rs. 14300 crores and this increased considerably to Rs. 155340 crores in 1990-91. The compound growth rate for the production of small-scale industries during 1977-78 to 1990-91 is 19.78 %. The average production during pre-liberalisation is Rs. 61053.43 crores.

4. Employment in SSI - The small-scale industries employed only 54 lakhs people in 1977-78, which increased 125.3 lakhs in 1990-91. The average employment in small-scale industries during the pre-liberalisation period is 88.81 lakhs. The compound growth rate for employment of small-scale industries has been 6.19 % from 1977-78 to 1990-91.

5. Exports from SSI - Export from Small-Scale Industries in 1977-78 was Rs. 845 crores which increased Rs. 9664 crores in 1990-91. The average exports during the pre-liberalisation period are Rs. 3369 crores. The pre-liberalisation period registered a compound growth rate of 18.99 per cent.

Post-liberalisation Performance of Small-Scale Industries (See in the last page)

1. Number of Units - The table shows that the number of small-scale units increased from 20.82 lakhs to 39.08 during 1991-92 to 2004-05. The average number of units during the post-liberalisation period is 30.17 lakhs. The compound growth rate for number of small-scale industrial units has been 4.6% from 1991-92 to 2004-05**.**

2. Investment in SSI - The period of 1991-92 to 2004-05 shows a phenomenal growth in investments in SSI sector in India. The compound growth rate in investment of small-scale industrial units has been 13.2 percent during this period. The table also clearly depicts that the investment in small-scale units was Rs. 20438 crores in 1991-92 as against Rs. 115904 crores in 2004-05. The average investment during the post-liberalisation period is 60163.93.

3. Production of SSI - Considering value of production in terms of current prices, the compound growth rate during the post-liberalisation period is 12.5%. The Production of small-scale industries during this period has increased from Rs. 178699 crores in 1991-92 to Rs. 939120 in 2004-05.

4. Employment in SSI - The small-scale industries employed 129.80 lakhs people in 1991-92, which increased 214.28 lakhs in 2004-05. During post-liberalisation period small-scale sector recorded 3.6 % compound growth rate in employment. The average employment during the post-liberalisation period is 169.88 lakhs persons.

5. Exports from SSI - Export from small-scale industries in 1990-91 was Rs. 13883.4 crores, which increased 116557.3 crores in 2004-05. The average export from the small-scale industries during the post liberalisation period is Rs. 53794.30 crores. The small-scale sector registered a compound growth rate of 16.4% during 1991-92 to 2004-05.

Conclusions - Since the inception of policy reforms small-scale industries constitutes a dynamic sector of Indian economy. Over the years, small-scale sector has grown substantially in terms of number of units, investment, output, turnover, employment, and exports. After liberalisation the rate of growth has significantly increased, although there have been some variations in growth from year to year. However liberalisation has had a significant direct impact on the performance of small-scale industries.On the basis of analysis of secondary data the number of small-scale units increased from 6.70 lakhs to 19.48 during the pre-liberalisation period i.e., from 1977-78 to 1990-91. While the number of small-scale units increased from 19.48 lakhs to 39.08 during the post-liberalisation period i.e., from 1991-92 to 2004-05. During the pre-liberalisation period, the average numbers of small-scale industrial units were 12.41 lakhs while during the post-liberalisation period, theaverage number of small-scale units existing were 30.17 lakhs. Though the number ofsmall-scale units has increased during the pre-liberalisation and post liberalisation but the compound growth rate has been higher in the pre-liberalisation period. The compound growth rate of number of small-scale units during the post-liberalisation period was only 4.6 percent as compared to pre-liberalisation period (7.92 percent).?The post-liberalisation period shows a phenomenal growth for the amount of investments in SSI sector in India. The compound growth rate of investment in post-liberalisation period (13.2%) was higher then the growth rate in pre-liberalisation period in monetary terms (11.97%). The investment in small-scale industrial units has increased from Rs. 3,989 crores to Rs. 19,302 crores during the pre-liberalisation period. On the other hand during the post-liberalisation period, investment in small-scale industries increased from Rs. 20,438 crores to Rs. 115904 crores. This is due to the technological developments taking place in the economy and units located in SSI sector also tend to modernize the technology to face the new challenges of globalization.

Bibliography -

1. D. Nagaiya, (1996) "Impact of Liberalisation on Small-Scale Sector and the Unfinished2.
3. Agenda", **Industrial Development, National Institute of Small Industry Extension (NISIET),** Yourufguda, Haderabad.
4. Homi Katrak, (1997) "Economic Liberalisation and Growth of Small-Scale Enterprises:

6. Indian Experience", **Economic Liberalisation and Growth in India,** Delhi, pp. 99-113.
8. Desai, Vasant, (2002) **"Management of Small-Scale Industries**", Himalaya Publishing House. Desai, Vasant, (2002) "**Small-Scale Industries and Enterpreneurship"**, Himalaya Publishing House, Bombay.

Pre-liberalization Performance of Small-Scale Industries

YEAR	No. of Units lakhs)	Fixed Investment Rs. Crores)	Production (Rs. crores) Current Prices	Employment (lakhs persons)	Exports (Rs. Crores)
1976-77	5.92	3553	12400	49.8	766
1977-78	6.70 (13.17)	3959 (11.42)	14300 (15.32)	54.0 (8.43)	845 (10.31)
1978-79	7.34 (9.55)	4431 (11.92)	15700 (9.79)	63.8 (18.15)	1069 (26.51)
1979-80	8.05 (9.67)	5540 (25.03)	21635 (37.80)	67.0 (5.01)	1226 (14.68)
1980-81	8.74 (8.57)	5850 (5.59)	28060 (29.69)	71.0 (5.97)	1643 (34.01)
1981-82	9.62 (10.06)	6280 (7.35)	32600 (16.18)	75.0 (5.63)	2071 (26.04)
1982-83	10.59 (10.83)	6800 (8.28)	35000 (7.36)	79.0 (5.33)	2045 (-1.26)
1983-84	11.55 (9.06)	7360 (8.23)	41620 (18.91)	84.2 (6.58)	2164 (5.82)
1984-85	12.40 (7.36)	8380 (13.86)	50520 (21.38)	90.0 (6.89)	2541 (17.42)
1985-86	13.53 (9.11)	9585 (14.37)	61228 (21.19)	96.0 (6.67)	2769 (8.79)
1986-87	14.62 (8.05)	10881 (13.52)	72250 (18.00)	101.4 (5.63)	3643 (31.56)
1987-88	15.83 (8.27)	12610 (15.89)	87300 (20.83)	107.0 (5.52)	4372 (20.01)
1988-89	17.12 (8.15)	15279 (21.16)	106875 (22.42)	110.0 (2.80)	5489 (25.54)
1989-90	18.23 (6.48)	18196 (19.09)	132320 (23.81)	119.6 (8.72)	7625 (38.91)
1990-91	19.48 (6.85)	19302 (6.07)	155340 (17.39)	125.3 (4.76)	9664 (26.74)

Source: Compiled from Official Reports of Development Commissioner (SSI)

Post-liberalisation Performance of Small-Scale Industries

YEAR	No. of Units lakhs)	Fixed Investment Rs. Crores)	Production (Rs. crores) Current Prices	Employment (lakhs persons)	Exports (Rs. Crores)
1990-91	19.38	19302	155340	125.30	9664.0
1991-92	20.82 (6.87)	20438 (5.88)	178699 (15.03)	129.80 (3.59)	13883.4 (43.66)
1992-93	22.46 (7.88)	21816 (6.74)	209300 (17.12)	134.06 (3.28)	17784.8 (28.1)
1993-94	23.81 (6.01)	24847 (13.9)	241648 (15.45)	139.38 (3.97)	25307.1 (42.3)
1994-95	25.71 (7.98)	26726 (7.6)	293990 (21.16)	146.56 (5.15)	29068.2 (14.9)
1995-96	27.29 (5.95)	30250 (13.2)	356213 (15.83)	152.61 (4.13)	36470.2 (25.5)
1996-97	28.57 (4.69)	35376 (16.9)	412636 (12.73)	160.00 (4.84)	39248.5 (7.6)
1997-98	30.14 (5.56)	54698 (54.6)	465171 (15.73)	167.20 (4.50)	44442.2 (13.2)
1998-99	31.21 (3.55)	72633 (32.8)	538357 (12.53)	171.58 (2.62)	48979.2 (10.2)
1999-00	32.10 (2.91)	79703 (9.7)	572887 (10.03)	178.50 (4.03)	54200.0 (10.6)
2000-01	33.70 (3.11)	82745 (3.81)	645496 (11.55)	185.60 (4.0)	69797.0 (28.77)
2001-02	34.42 (3.93)	84329 (1.9)	690316 (6.94)	192.23 (3.55)	71244.0 (2.1)
2002-03	35.72 (3.78)	90450 (7.25)	742021 (7.49)	199.65 (3.99)	86012.0 (20.7)
2003-04	37.36 (4.6)	102389 (13.2)	834774 (12.5)	206.83 (3.6)	100126.5 (16.41)
2004-05	39.08[P] (4.6)	115904 [P] (13.2)	939120 [P] (12.5)	214.28 [P] (3.6)	116557.3 [P] (16.41)

Source - Compiled from Official Reports of Development Commissioner (SSI),

****

Kisan Credit Card Scheme Has Become One Of The Most Tool For Financial Inclusion

Keerti Saxena * Dr. N.K. Patidar **

Introduction - The Kisan credit card scheme is a landmark in the history of rural credit in India. The mechanism of credit cards has been one of the key products developed to expand the outreach of banks and simplify the credit delivery system. The announcement relating to the introduction of Kisan credit card scheme was made by the union finance minister Yashwant Singh Sinha during the budget speech for the year 1998-99. NABARD formulated a Kisan credit card scheme for uniform adoption by the banks so that the farmers may use the cards to readily purchase agriculture inputs such as seeds, fertilizers, pesticides etc. and draw cash for their production needs. The model scheme was circulated to commercial banks, co-operative banks and regional rural banks in August 1998. Agriculture occupies a major portion of Indian economy. India's government's aim is to double the credit flow to agriculture sector. Some of the important initiatives taken for improving agriculture credit flow are Agriculture credit at lower rate of Interest, simplification in lending policies and revamping of co-operative credit structure. These policies has been on progressive institutionalization for providing timely and adequate credit support to farmers with particular focus on small and marginal farmers and weaker section of society to enable them to adopt modern technology and improved agriculture practices for increasing agricultural production and productivity.

Methodology - we had used secondary data in this paper. The secondary data were collected through pamphlets, broachers, annual report and of the published papers of banks.

Collection of secondary data - The secondary data were collected from RBI, NABARD and also from different commercial banks, co-operative banks and RRBs. The nature of data and sources of their collection have been indicated in the following table.

(See table 1 in last page)

Agricultural credit

1. Kisan Credit Card scheme
2. Agricultural gold loans
3. Kisan Gold Card scheme (KGC)
4. Land Purchase Scheme
5. Produce Marketing Loan

Review of literature - NABARD introduced Kisan Credit Card Scheme (KCCs). Danish faruqui (2001) in his study 'Kisan Credit Card' opened that the scheme seems well has availability of credit been made easier but has also been made simple to get and operate. Farmers have been given sufficient freedom to decide how to use their credit, while at the same time a set repayment schedule has been provided. However for this scheme to be successful, education of both the farmers and also the bank officials about the scheme is required.

Advance estimates for GDP, GCF, national income, international income, horticulture based on the new estimation. The data further showed at current prices.

B.B. Barik (2010) in his study 'Kisan Credit Card Scheme' – a dynamic intervention for reduction in rural poverty opened that releasing the importance of enhancement of flow of credit to the rural sector and reduction of the dependence of farmers on non-institutional sources of credit.

Object of KCC - Kisan credit card aims at providing adequate and timely credit for the comprehensive credit requirement of farmers under single window with flexible and simplified procedure adopting wholesome approach. Farmers who are owner of the land are eligible to avail KCC for their production credit requirement. The mode of finance covers activities for purchase of agricultural inputs required for production of crop consumption need such as maintenance of agriculture, machinery, electricity bills etc.

Salient features of the Kisan credit card scheme:

1. Provision of a pass book or card-cum-pass book to eligible farmers.
2. Revolving cash credit facility involving any number of drawls and repayments within the limit.
3. Limit to be fixed on the basis of operational land holding, cropping pattern and scale of finance.
4. Card valid for 3 to 5 years subject to annual review. As incentive for good performance, credit limits could be enhanced to take care of increase in costs, change in

* Research Scholar, Pacific University,Udaipur (Raj.) INDIA
** Professor (Commerce) Govt. College, Pipliyamandi, Distt. Mandsaur (M.P.) INDIA

cropping pattern etc.

5. Repayment within a maximum period of 12 months.
6. Security, margin, rate of interest etc. as per RBI norms
7. Operations may be through issuing branch or through other designated branches at the discretion of bank.
8. Crop loans disbursed under KCC scheme for notified crops are covered under National crop.
9. Sub-limits to cover short term, medium term as well as term credit are fixed at the discretion of banks.
10. Conversion / re- schedulement of loans also permissible in case of damage of crops due to natural calamities.
11. Withdrawals through slips/cheques accompanied by card and passbook.

Eligibility - Most of the CBs had issued KCCs only to those farmers who had good track records for the last 2-3 years. Some of the banks stipulated the minimum eligibility for issue KCC at 1 acre of irrigated land. Some banks had advised their branches that all tractor borrowers may be issued Kisan Credit Cards. Different banks have different criteria for issuing Kisan Credit Card.

1. All farmers-individuals/joint borrowers who are owner cultivators.
2. Tenant farmers, Oral lessees and share croppers etc.
3. SHGs or Joint Liability Groups of farmers including tenant farmers, share croppers etc.

Minimum credit limit - Reserve Bank of India and NABARD had recommended Kisan Credit Cards to those farmers whose requirement of crop loan was Rs 5000/- and above. However this ceiling was subsequently amended and all the banks were advised that they could work out their own loan limits/ceiling.

Fixation of credit limit - Reserve Bank of India and NABARD had recommended that credit limit under Kisan Cards may be fixed on the basis of operational land holding, cropping pattern and scales of finance as recommended by District Level Technical Committee (DLTC) / State Level Technical Committee (SLTC). Wherever the DLTC/SLTC have not recommended scale of finance for crops or in the opinion of the bank, recommended lower scales than the required amount, banks were allowed to fix appropriate scales of finance for the crop.

Issue of cards - The beneficiaries under the scheme will be issued with a credit card and a pass book or a credit card cum pass book incorporating the name, address, particulars of land holding, borrowing limit, validity period etc. which will serve both as an identity card as well as facilitate recording of the transactions on an on going basis. The card among others would provide for a passport size photograph of the holder. The borrower would be required to produce the card cum passbook whenever he operates the account.

Personal Accident Insurance Scheme - Personal Accident Insurance Scheme (PAIS) is attached with KCC, which covers risk of KCC holders against accidental death or permanent disability up to a maximum amount of Rs.50,000 and Rs.25,000, respectively, resulting from accidents caused by external, violent and visible means. The insurance premium payable on personal accident insurance coverage to KCC holders will be Rs.15 for a one year policy and Rs.45 for three years. The premium payable to the insurance company is shared between the KCC issuing bank and the KCC holder in the ratio of 2:1.

Benefits of KCC :

1. There is no need to apply for loan every year as KCC provides the farmers with a credit facility on an on going basis or revolving Credits.
2. Repayment is allowed after harvest period and thus farmers find it easier to settle the loan by selling their produce.
3. It follows a simplified procedure for credit to farmers, a large number of whom are illiterate or uneducated.
4. This allows the farmers to buy seeds, fertilizers and other inputs as per their needs.
5. There is a flexibility of withdrawal of funds from any branch even when he has gone to town for purchase of agricultural inputs.

Validity/Renewal: the credit card will be valid for 3 years subject to yearly review.

Interest : Interest shall be charged at the rate of 7% on loan at KCC. If the loan and interest amount is paid before due date then a relaxation of 2% is given by bank, i.e. only 5% interest is charged on loan amount. But if the farmers fail to pay the loan amount before due date then interest shall be charged at the rate of 11.5% by the bank as penalty.

Rate of Interest for Availing Loans (in % age)

No.	Particulars	Rs. 25000	Rs. 25001 -50000	Rs. 50000
1.	Commercial Bank	7.25(7.0)	7.50(7.0)	8.00(7.00)
2.	RRB(Regional Rural Bank)	7.50(7.0)	8.25(7.0)	8.75(7.0)
3.	PACS (Primary Agriculture Credit Society)	8.25(7.0)	8.75(7.0)	9.50(7.0)

Revision in Kisan Credit Card scheme - Smart card-cum-Debit card were accepted and a revised KCC scheme has been introduced in April 2012.

1. Assessment of crop loan component based on the scale of finance for the crop plus insurance premium extent of area cultivated + 10% of the limit towards post-harvest / household/consumption requirements + 20% of limit towards maintenance expenses of farm assets.
2. Validity period of KCC and its periodic review may be decided by the bank.
3. Margin may be decided by the bank.
4. The repayment period may be fixed by the banks as per the anticipated harvesting and maturity period for the crops for which a loan has been granted.
5. Interest subvention / incentive for prompt repayment to be available as per the Government of India or state Government norms.

6. One time documentation at the time of first availment and thereafter simple declaration (about crops raised/ proposed) by farmer.
7. KCC cum SB account instead of farmers having 2 separate accounts. The credit balance in KCC cum SB accounts to be allowed to fetch interest at saving bank rate.
8. Disbursement through various delivery channels, including ICT driven channels like ATM/POS/Mobile handsets.

Details of Kisan Credit Card

1. Particulars description of Kisan Credit Card scheme sponsored by state government funding pattern Rs. 50000/- for Rabi crops, Rs. 50000/- for Kharif crops. Ministry or department of state government PSU description.
2. Eligibility: individual or society
3. Repayment period of Kharif crops is 31st January and Rabi crop is 31st July.
4. Agriculture for purposes
5. Collateral security charge on land in case loan is above Rs 10000/- and two sureties if loan is below Rs 10000/ -
6. Margin stipulation as per nature of the loan beneficiaries' individual, community, benefit type loan, eligibility criteria: individual or society.

Security and documents :

1. For SF/MF Loan Limit Security Documents up to Rs. 50000/- hypothecation of standing crops and movable assets.
2. Application RF-45
3. Receipt F-260

Agency wise review of progress - Kisan Credit Card is implemented by the agencies like commercial banks, Regional Rural Banks (RRBs) and co-operative banks. All 27 public sectors commercial banks had implemented the schemes that had been reported. All RRBs had also issued circulars to implement the scheme. Due to certain apprehensions there had been a certain delay in implementing the schemes by co-operative banks in states like Haryana and Punjab. After issue of necessary clarifications and meeting with officials of state co-operative banks and department of co-operation of these states, both the states have commenced implementation of the Kisan Credit Card scheme.

According to above table commercial banks had major share of cards issued which was 72.48% in year 2013-14. Co-operative banks had 16.21% share of total cards issued in the same period. Though the RRBs issued 11.31% of cards in the same time period.

The Kisan Credit Card (KCC) has been an important initiative for universal access of farmers to institutional credit.

concluson - Kisan credit card has emerged as a new and vital credit delivery mechanism to need the credit requirements of farmers in a suitable and hassle free manner. Kisan credit card is one of the most innovative, widely accepted schemes of Indian government as it is highly appreciated and non discriminatory banking products. So far RRBs had issued 4.05 lakhs cards and achieving 81.2% of the annual target. Commercial banks and co-operatives target was very stiff as compared to RRBs but these bank achieved 56.0 % and 46.1 % respectively. Commercial banks had issued 35.7 lakhs cards involving sanction of rupees 9148.4 crores to different categories of farmers. Kisan credit card has established itself as a quite popular credit among the farmers.

References :–

NABARD (National Bank for Agriculture and Rural Development) annual report Mumbai

1. RBI (Reserve Bank of India) Report on Trend and Progress of Banking in India, New Delhi
2. Samantra, S. (2010) Kisan Credit Card – A Study, Department of Economic Analysis and Research, Mumbai.
3. Agricultural Economics
4. Indian Journal of Agricultural Economics
5. B.B. Barik: Kisan Credit Card – A dynamic intervention for Reduction in Rural Poverty.

Collection of secondary data on KCC

S.	Data	Sources	Method of collection
1.	Model Scheme on KCC	NABARD	NABARD circulars
2.	Basic information on KCC Scheme – Genesis and Objective	R.V.Gupta Committee Report – NABARD and RBI	Through library references.
3.	Progress in issue of KCC (purpose-wise, area-wise, farmers category-	NABARD, All Banks	By writing to all the banks through a structured questionnaire
4.	Operational guidelines issued by banks to their branches / implementing units.	Commercial banks, RRBs, SCBs/CCBs	By writing to all the banks through a structured questionnaire

Agency wise number of KCC

(Number in lakhs)

	Co-Operative Banks		Regional Rural Banks		Commercial Banks		Total Banks	
Years	No	%age	No	%age	No	%age	No	%age
1998-99	1.55	19.88	0.06	0.78	6.22	79.74	7.8	100%
1999-00	35.95	70.02	1.73	3.37	13.66	26.61	51.34	100%
2000-01	56.14	64.89	6.48	7.49	23.90	27.62	86.52	100%
2001-02	54.36	58.20	8.34	8.92	30.71	32.88	93.41	100%
2002-03	45.79	55.55	9.64	11.69	27	32.75	82.43	100%
2003-04	48.78	52.75	12.74	13.78	30.94	33.46	92.47	100%
2004-05	35.56	36.74	17.29	17.86	43.96	45.40	96.8	100%
2005-06	25.98	32.43	12.49	15.59	41.65	51.98	80.12	100%
2006-07	22.98	27.00	14.06	16.52	48.08	56.49	85.11	100%
2007-08	20.91	24.69	17.72	20.92	46.06	54.38	84.7	100%
2008-09	13.44	15.64	14.14	16.46	58.34	67.90	85.92	100%
2009-10	17.43	19.35	19.49	21.64	53.13	58.99	90.06	100%
2010-11	28.12	27.65	17.74	17.45	55.82	54.89	101.69	100%
2011-12	26.61	22.63	19.95	16.96	68.04	57.86	117.6	100%
2012-13	26.91	20.73	20.48	15.78	82.43	63.49	129.82	100%
Total	460.51	35.82	192.35	14.96	629.94	48.99	1285.79	100%
	1.57%		26.37%		14.27%		9.39%	

Source : Trend and progress banking in India from 2003-04 to 2012-13

Agency-Wise present KCCs Amount

***(Figures in parenthesis refers to number of cards* issued)** **(Rs in crore)**

Agency	2012-13	2013-14	2014-15
Co-operative Banks	11,174 (26,90,547)	10,825.24 (26,88,762)	7,321.87 (17,32,489)
RRBs	12,836 (20,48,168)	20,688.55 (21,34,585)	24,248.18 (24,96,346)
Cumulative as on 31 March since inception(co-operatives & RRBs)	1,19,090 (4,53,08,418)	1,55,451.22 (4,89,16,395)	1,73,080.65 (5,10,75,499)

Source: data reported by Banks and Indian Banks Association (for commercial Banks) (NABARD)

Agency-wise Distribution of Kisan Credit Card (KCCs) (In %)

Agency	2012-13	2013-14
Co-operative Bank	18.31	16.21
RRBs	10.48	11.31
Commercial Bank	71.21	72.48
Total	100.00	100.00

Source: RBI & NABARD

✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻

A Financial Study Of State Bank Of India

Dr. P. K. Jain * Brajeshwari Mishra **

Introduction - Generally, commercial banks have been crowned as **"nerve centre of all economic activity".** The banks, on legal basis, are of two types specifically; Scheduled and Non-scheduled banks and on ownership basis, they are Divided in two type- public sector and private sector commercial banks. In India, there is a diverse banking system. Prior to July 1969, all the commercial banks – there are 73 scheduled and 26 non-scheduled banks in India , except the State Bank of India and its subsidiaries were under the supervise of private sector. However, the Public sector banks have comparatively been playing a creditable role in taken as a whole growth of the economy, particularly by helping the rural areas with banking and financial services. These banks are the backbones of the economy. When our country was under economic reduce speed, the financial sector has reserved the economy afloat. The banks have been extending inexpensive credit to economically weaker sections of the society and thereby they are at front position of financial inclusion. In 1960s, the nationalization of banks was undertaken with the purpose of breaking the strong hold of powerful business interests over banks and making the financial services easy to get to large sections of the population. Following the nationalization, these public sector banks have been ruthless hard to fulfill the image of social inclusion. The national financial assets constitute about 63 percent of the resources of public sector banks. There are private group of actors promising elsewhere in scene challenging with these public sector banks in providing cheap credit to farmers, the unorganized sector and women. They additional expand their valuable services in providing employment to a wide cross section of the society. Among some other commercial banks, the State Bank of India, considered to be most excellent in banking, has been growing its jurisdiction throughout the earth by leaps and limits.

The bank came into being on July 1, 1955, subsequent the performance of the State Bank of India Act. All assets and liabilities of the Imperial Bank of India were transferred to it. Since then, State Bank of India has evolved as a "Universal Bank", spanning almost every type of financial activity such as merchant banking, insurance, factoring, custodial services, credit cards, and mutual funds, apart from the regular handling of loans and advances. The bank boasts of an ever-expanding network of over 15000 home branch offices and 180 foreign offices in 36 countries, all networked through the core banking system.

Review of Literature -

Panda J. and Lal G.S.(1991)- found in their research studies that the productivity, deployment of funds, quality of advances, in order system, organizational setup and branch expansion programs are the major factors influencing the profitability of banks to the large extent.

Uppal R.K.(2009)-examined and establish that the profitability is an important measure to evaluate the overall efficiency of a bank.

Objectives of the Study-

The prime objectives of the study are -

- **to examine the decadal growth of State Bank of India.**
- **to analyze the financial performance of the bank, and**
- **to put forth suggestions for improvement of its performance.**

Research Methodology -

- The published secondary data has been put at use for the present study.
- Annual Reports of the Bank, Government publications, magazines etc., have been utilized to magnify the comprehension of the problem under study.
- Statistical tools such as percentages, comparative analysis etc., have been used for analysis and interpretation of data for drawing meaningful inferences.

Long Term Trend Analysis - The financial position of a firm in the long run will be pointer of its financial performance as it cannot stay alive and grow without possessing enough assets or without earning plenty profits. The balance sheet (position statement) is normally known as a sudden shot of a company as it depict its assets and liabilities at a glance leading any interested parties to know its financial position on a particular date. This will thus provide important information on the growth of a firm or company. Not only the proprietors but also the investors as well, in addition to all other users such as employees, creditors etc., will look

***Professor (Commerce) Govt. Hamidia P. G. College, Bhopal (M.P.) INDIA**
****Research Scholar (Commerce) Govt. Hamidia P. G. College, Bhopal (M.P.) INDIA**

for the sound economic health of a concern, by grasping the general idea of the position statement, before making any significant decisions.

As the backdrop of this theoretical background on the balance sheet stimulates, the Annual Report, 2012-2013 of the State Bank of India has been analyzed which reveals that, as depicted in the location statement, the assets and liabilities of the bank through decade commencing from 2003-2004 at the rate of Rs.4, 07,815 crore in the opening which stands as Rs.13, 35,519, as revealed in Fig. 1.6.1 during 2011-2012, followed by Rs.15,66,261 crore at the end of the decade, 2012-2013. Thus, the financial increase of the bank in the decade reflects a positive trend as its rate of growth has enlarged more than thrice in 2012-2013 as compared to what it was in 2003-2004.

Short Term Trend Analysis - The earning capacity of a firm can be ascertained from first to last an analysis of the Income Statements for a few years on short term basis. This is because the productivity of a firm may not necessarily be stable always in the long run. Income of the bank during 2010-2013 Income is the best indicator of the financial presentation of a business apprehension. Normally, the income statement (Profit and Loss Account) of a business concern shows the net profit earned or net loss suffered through a period. This will, thus, indicate the operational results of the firm. This will, in turn, enable any attracted parties ascertain the efficiency of the firm in terms of operations in earning profit. Here, the revenue/profits earned is matched with the expenses incurred during the period to arrive at net profit or loss of the firm. The Annual Report, 2012-2013 of the State Bank of India additional reveals that the income of the bank, as shown in Fig., during the period, 2010-2013 constitute Interest & discount on Advances/Bills and Miscellaneous Income 68%) ,Interest on Investments (20%), Other sundry interests (1%), Commission, Exchange and Brokerage (8%), Sale of Investments (1%), Exchange Transactions (1%), Dividend from Subsidiaries/Associates (1%) and Miscellaneous Income (1%). The Earnings of the bank during the period, 2010-2013 has been presented in Fig. Expenditure of the bank during 2010-2013 No income can be earned without incur expenses. The expenditure incurred for earning profits has to be normally matched with the revenue earned periodically to ascertain the profit or loss on the operations of a business. Profit and Loss account is equipped by a concern for knowing its net profit or loss during a period. The Annual Report, 2012-2013 of the State Bank of India indicates that the expenses of the bank, as shown in Fig. during the period, 2010-2013 comprise Interest Paid on Deposits (50%), Interest paid on Borrowings/Bonds & Others (6%), Operating Expenses (22%), Provisions & Contingencies (8%), Tax (4%), and Transfer to Reserve (8%) and Dividend & Tax on Dividend (2%). The Expenditure of the bank throughout the period, 2010-2013 has been presented in Fig.1.7.2. 1.8 Income Statement examination The net profit or loss through can be ascertained by matching the earnings with the expenditure incurred during a given period. The income and expenditure of the bank are coordinated to ascertain its profitability during 2010-2013 as shown in Table.

Findings of the Study-

The key findings emerged out of this study are -

- The assets and liabilities of the bank throughout decade commencing from 2003-2004 at the rate of Rs.4, 07,815 crore in the commencement which stands as Rs.15, 66,261 crore at the end of the decade, 2012-2013. Thus, the financial growth of the bank in the decade reflects a positive tendency as its rate of growth has increased more than thrice in 2012-2013 as compared to what it was in 2003-2004. The financial health of the bank does, therefore, become visible to be sound and stylish in the long run.
- The net interest profits has grown from Rs.11, 186 crore to 44, 331 crore during the decade, 2003-2013. Provision for Non-Performing Assets (NPAs) was Rs.11, 368 crore in 2013 whereas it was just Rs.3,703 crore in 2003. These are the constructive signs of the decadal expansion of the bank.
- The assets and liabilities of the bank throughout decade commencing from 2003-2004 at the rate of Rs.4, 07,815 crore in the beginning which stood as Rs.15,66,261 crore at the finish of the decade, 2012-2013.
- The earnings of the bank during the period, 2010-2013 constitute Interest & discount on Advances/Bills and Miscellaneous Income 68%) ,Interest on Investments (20%), Other sundry interests (1%), Commission, Exchange and Brokerage (8%), Sale of Investments (1%), Exchange Transactions (1%), Dividend from Subsidiaries/Associates (1%) and Miscellaneous Income (1%). However, the decadal operating result throughout the period 2003-2013 shows an encouraging figure of Rs.31,082 crore in 2013 against its standing of only Rs.9,553 crore in 2003. The Net Profit before Tax figure has also rise from Rs.4, 971 crore to 19,951 crore.

Limitations of the Study - Being a micro level study, it has at present focused on analysis of the financial concert of the State Bank of India based on the statistics published in the Annual Report, 2012-2013. Therefore, it does not concentrate on how this income was earned and the expenditure was incurred. Similarly, the analysis was completed on the worth of the assets and liabilities in possession of the bank, leaving apart their modes of acquiring the assets and creation/arising of liabilities, during the decade, 2003-2013. Deeper research studies into other significant aspects, not being covered under this study, comprising the services being offered, customer satisfaction, marketing problems and prospects for the banking products etc., may be undertaken in future. This may certainly lead to better understanding on the multiple dimensions of the bank pertaining to its financial

performance in the days to come.

Suggestions and Recommendations - Based on this present study, the following recommendations are made; The performance of Non-Performing Assets (NPA) may be ensured to curtail the annual provisions under NPAs. The savings under the head can be productively used or invested to promote the earnings of the bank. Interest rates on accepting deposits from and lending to the public may be proposed for RBI directives and guidelines in such a manner that will attract the customers (Corporate or individual) towards the bank for more deposits or investments. The procedures and formalities in acceptance and lending money transactions may be simplified without compromising the standard norms of the Reserve Bank of India. Upgrading in the existing e- banking services and original products or services may be contemplated to attract new clientele towards the bank.

Summary and Conclusion - In Banking sector, commercial banks play a very vital role in transacting the banking trade by accepting deposits from and lending money to the public. Meanwhile they do even lend their financial hands in the form of advances to corporate as well. These banks, thus, give substantially to the economic growth of a country by mobilizing the savings from the public at large and facilitating those savings to flow out as savings for productive purposes. Among the varied commercial banks, the State Bank of India, since its beginning on 1st July, 1955, has been representation wonderful banking service to the public in the interest of the country in consonance with the strategy of Reserve Bank of India. The services of SBI includes consumer friendly initiatives, pricing concessions, innovational processes, product changes, ATM services, Internet Banking etc., In terms of growth, the bank's advances is mainly attributable to loans to Corporate, which seemingly grew by over 40% during 2012-2013. Its fund based commerce of Mid Corporate Group has also recorded an inspiring expansion of 18%. Further, its achievements in provisions of financial inclusion activities comprise the setting up of 38,480 BC Customer Service Points at National and Regional level, submission various technological-enabled products, opening up of 2.03 crore small accounts with simplified KYC, launching Direct Benefit Transfer (DBT) scheme, linking around 9.85 lac accounts with Aadhaar in 43 pilot districts of a mixture of States, Kiosk Banking, SBI Tiny Card, Mobile Rural Banking, Cell Phone messaging Channel etc.,. When we seem at all these business behavior of State Bank of India, undoubtedly, it excels in providing its services from end to end its domestic and foreign branches. The bank, domestically and globally, has been departure no stones unturned to compete with other banks in terms of as long as services for its provisions and growth in the long run. Thus, it becomes evident that the financial performance of the State Bank of India appears to be distinct, excellent and outstanding. Indeed, it can be considered as a explosion in the financial market since the bank lends its serving hands to the needy citizens when they are in need. Supplementing this concept, this diagnostic study proves that the financial fitness of State Bank of India is sound and healthy. However, the State Bank of India may further endeavor harder to drive its financial vehicle from the target of flourishing to zooming for grooming itself to features the outlook dynamic financial requirements. This will certainly place a smooth way for the bank to move happily from the current "good" position to forth approaching "better" situation in the financial market.

References :-

1. Annual Report of State Bank of India, in year 2012 to 2013.
2. Panda, J. and Lal, G.S. (1991):- A Critical Appraisal on the Profitability-of Commercial Banks, Indian Journal of Banking-and Finance, Vol.5, No.2, pp. 40-44.
3. Sampath, S.J. (1990):- Monitoring the Variables-Determining the Profitability of Banks," Banking for better Profitability, Vol. 3, No. 2, pp. 691to 699.
4. Satyamurthy, B.:- (1994). A Study on Interest-Spread in Commercial Banks in India, Working Paper, Vol. 21, No.2, pp. 81to 92.
5. Uppal, R.K. (2009).:- Indian Banking – Prime-Determinants of Profitability, Emerging Issues and Future Outlook, GITAM Journal of Management, Vol.7, No.2, pp. 78 to 106.

****

महिला सशक्तिकरण की दिशा में दीनदयाल रोजगार योजना का योगदान (म.प्र. के रतलाम जिले के विशेष संदर्भ में)

डॉ. लक्ष्मण परवाल * गुंजन घोचा **

प्रस्तावना – वित्त व्यवसाय के विकास का आधार है। आधुनिक युग में किसी भी व्यवसाय एवं उद्योग की स्थापना से लेकर उसके संचालन तथा विकास हेतु वित्त की आवश्यकता होती है। वित्त उद्यमियों को जोखिमपूर्ण क्रियाएँ करने में सहायक होता है। जिस प्रकार एक इंजिन को चलाने के लिए कोयले, बिजली की आवश्यकता होती है, उसी प्रकार व्यापार एवं उद्योग को स्थापित करने, संचालन करने तथा विकास करने के लिए वित्त की आवश्यकता होती है।

स्वरोजगार हेतु सरकार द्वारा कई प्रकार की योजनाएँ संचालित की जा रही है, जिसके अंतर्गत वित्तीय सहायता प्रदान की जाती है। इन योजनाओं से जहाँ एक ओर शिक्षित बेरोजगारी की समस्या का निवारण होता है, वही दूसरी ओर देश के औद्योगिक व आर्थिक विकास में भी वृद्धि होती है।

भारत में महिला सशक्तिकरण का प्राथमिक उद्देश्य महिलाओं की सामाजिक-आर्थिक स्थिति को सुधारना है। महिलाएँ आर्थिक विकास में महत्वपूर्ण भूमिका तो निभाती है, लेकिन उनके काम का सही मूल्यांकन नहीं किया जाता है। राष्ट्रीय ऑकड़ा संग्रहण एजेंसियाँ भी इस तथ्य को स्वीकार करती है कि श्रमिकों के रूप में महिलाओं की भागीदारी को लेकर एक गंभीर न्यूनानुमान है। एन.एस.एस.ओ. की एक रिपोर्ट के अनुसार भारत में शिक्षा के प्रसार के बावजूद शिक्षित युवाओं को उनकी योग्यता के अनुरूप रोजगार नहीं मिल पाता है और इन हालातों में काबिल होने के बावजूद घर बैठ जाने वालों में महिलाओं का प्रतिशत सबसे ज्यादा है। देश के आर्थिक विकास में महिलाओं की उचित भागीदारी के बिना सामाजिक प्रगति की अपेक्षा रखना बेमानी होगी।

'दीनदयाल रोजगार योजना' मध्यप्रदेश शासन द्वारा संचालित एक ऐसी योजना है, जो मध्यप्रदेश के शिक्षित बेरोजगारों को स्वरोजगार स्थापित करने हेतु सहायता प्रदान करती है। इस योजना के अंतर्गत शिक्षित बेरोजगारों को अपना स्वयं का रोजगार स्थापित करने के लिए ऋण सहायता तथा मार्जिन-मनी सहायता दी जाती है। यह योजना 01 अगस्त 2004 से प्रारंभ की गई है। इसमें उद्योग क्षेत्र, सेवा क्षेत्र एवं व्यवसाय क्षेत्र में अलग-अलग ऋण सहायता तथा मार्जिन-मनी (अनुदान सहायता) दी जाती है। इस योजना में शिक्षित महिलाओं को स्वरोजगार के लिए प्राथमिकता तथा विशेष रियायतें दी जाती है तथा उन्हें आर्थिक रूप से सशक्त बनाने का प्रयास किया जाता है।

पात्रता – योजनान्तर्गत ऋण सहायता एवं मार्जिन-मनी सहायता प्राप्त करने के लिए आवेदक में निम्न पात्रता का होना आवश्यक है –

- आवेदक जिले का मूल निवासी होना चाहिए।
- आवेदन दिनांक को आवेदक की आयु 18 से 40 वर्ष के मध्य होना चाहिए। (महिला/विकलांग/एक्स-सर्विस मेन हेतु 5 वर्ष की अधिकतम रियायत दी जाती है)
- आवेदक की न्यूनतम योग्यता 10वीं कक्षा उत्तीर्ण अथवा आई.टी.आई. उत्तीर्ण होना चाहिए।
- आवेदक के परिवार में समस्त स्त्रोतों से वार्षिक आय 2.00 लाख रू. से अधिक नहीं होना चाहिए।
- आवेदक का रोजगार कार्यालय में पंजीयन होना चाहिए।

सहायता मार्जिन-मनी – योजनान्तर्गत चयनित उद्योग/सेवा/व्यवसाय क्षेत्र के लिए मार्जिन-मनी के रूप में निम्न आर्थिक सहायता प्रदान की जाती है –

1. **उद्योग क्षेत्र –** स्वीकृत परियोजना लागत का 10 प्रतिशत अथवा अधिकतम रू. 40,000/-, स्नातक अथवा अधिक शैक्षणिक योग्यता होने पर रू. 50,000/-
2. **सेवा क्षेत्र –** स्वीकृत परियोजना लागत का 7.5 प्रतिशत अथवा अधिकतम रू. 15,000/-, स्नातक अथवा अधिक शैक्षणिक योग्यता होने पर रू. 25,000/-
3. **व्यवसाय क्षेत्र –** स्वीकृत परियोजना लागत का 5 प्रतिशत अथवा अधिकतम रू. 7,500/-

वित्तीय संस्थाएँ – इस योजनान्तर्गत आवेदको को विभिन्न राष्ट्रीयकृत बैंकों, सहकारी बैंकों, ग्रामीण बैंकों तथा कृषि एवं ग्रामीण बैंकों के माध्यम से ऋण उपलब्ध कराया जाता है।

प्राथमिकता – योजनान्तर्गत ऋण सहायता प्रदान करने हेतु आवेदको में से निम्न प्रकार की गतिविधियों एवं योग्यता रखने वाले आवेदकों को प्राथमिकता प्रदान की जाती है –

- औद्योगिक गतिविधियों को सर्वोच्च प्राथमिकता।
- आई.टी.आई./डिप्लोमा/इंजीनियरिंग एवं तकनीकी संस्थाओं से प्रशिक्षित प्राप्त व्यक्तियों को प्राथमिकता।
- महिलाओं को प्राथमिकता।
- उद्यमिता विकास कार्यक्रम के अंतर्गत प्रशिक्षित व्यक्तियों को प्राथमिकता।

प्रशिक्षण – योजनान्तर्गत वित्तीय संस्थाओं द्वारा परियोजना स्वीकृति के पश्चात् आवेदकों को 10-15 दिन का प्रशिक्षण प्राप्त करना अनिवार्य है।

प्रक्रिया – इस योजना का लाभ प्राप्त करने के लिए आवेदको को जिला व्यापार एवं उद्योग केन्द्र द्वारा नि:शुल्क आवेदन पत्र प्रदान किए जाते है।

* प्राध्यापक (वाणिज्य) स्वामी विवेकानन्द शासकीय वाणिज्य महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.) भारत
** शोधार्थी (वाणिज्य) स्वामी विवेकानन्द शासकीय वाणिज्य महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.) भारत

आवेदको को निर्धारित प्रारूप में जानकारियों को भरकर उसकी दो प्रतियॉ जिला व्यापार एवं उद्योग केन्द्र में आवश्यक सहपत्रों सहित जमा करनी होती है। विभाग द्वारा जमा कराए गए आवेदनों की पावती, संबंधित आवेदको को प्रदान की जाती है। इसके पश्चात् वरीयता क्रम में टॉस्कफोर्स समिति के समक्ष प्रकरण प्रस्तुत कर, अनुशंसा उपरांत, राष्ट्रीयकृत बैंकों को भेजे जाते है। ऋण स्वीकृत होने पर कार्यालय द्वारा प्रशिक्षण प्रदान किया जाता है एवं मार्जिन-मनी (अनुदान सहायता) प्रदान की जाती है।

अध्ययन का उद्देश्य – प्रस्तुत शोध-पत्र में रतलाम जिले में संचालित दीनदयाल रोजगार योजना के अन्तर्गत महिला वर्ग को स्वरोजगारस्थापित करने हेतु प्रदत्त ऋण एवं अनुदान राशि का विश्लेषण किया गया है।प्रस्तुत अध्ययन निम्न उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए किया गया है –

- दीनदयाल रोजगार योजनान्तर्गत उद्योग क्षेत्र में रोजगार स्थापित करने के लिए कितनी महिलाओं को ऋण राशि स्वीकृत एवं वितरित की गई?
- योजनान्तर्गत उद्योग क्षेत्र में कितनी महिलाओं को मार्जिन-मनी (अनुदानसहायता) स्वीकृत एवं वितरित की गई ?
- दीनदयाल रोजगार योजनान्तर्गत सेवा क्षेत्र में रोजगार स्थापित करने के लिए कितनी महिलाओं को ऋण राशि स्वीकृत एवं वितरित की गई?
- योजनान्तर्गत सेवा क्षेत्र में कितनी महिलाओं को मार्जिन-मनी (अनुदानसहायता) स्वीकृत एवं वितरित की गई ?
- दीनदयाल रोजगार योजनान्तर्गत व्यवसाय क्षेत्र में रोजगार स्थापित करने हेतु कितनी महिलाओं को ऋण राशि स्वीकृत एवं वितरित की गई ?
- योजनान्तर्गत व्यवसाय क्षेत्र में कितनी महिलाओं को मार्जिन-मनी (अनुदानसहायता) स्वीकृत एवं वितरित की गई ?

अध्ययन की कार्यप्रणाली – प्रस्तुत अध्ययन म.प्र. के रतलाम जिले में किया गया है, जो कि द्वितीयक समंकों पर आधारित है। अध्ययन हेतु आंकड़ों का संकलन जिला व्यापार एवं उद्योग केन्द्र रतलाम से किया गया है। इस अध्ययन में वर्ष 2009-10 से लेकर वर्ष 2013-14 तक कुल 05 वर्षो के आँकड़ों के आधार पर 'दीनदयाल रोजगार योजना' के अन्तर्गत महिलाओं को स्वरोजगार स्थापित करने हेतु प्रदत्त वित्तीय सहायता (ऋण राशि एवं अनुदान राशि) का विश्लेषण किया गया है। प्रस्तुत शोध में उपलब्ध द्वितीयक समंकों के आधार पर औसत, अनुपात एवं प्रतिशत जैसी सांख्यिकीय एवं गणितीय विधियों का उपयोग कर शोधकर्ताओं द्वारा सार्थक परिणाम प्राप्त किए गए है।

विश्लेषण एवं परिणाम – दीनदयाल रोजगार योजना के अन्तर्गत वर्ष 2009-10 से लेकर वर्ष 2013-14 तक रतलाम जिले में महिला हितग्राहियों को स्वयं का रोजगार स्थापित करने के लिए उद्योग क्षेत्र, सेवा क्षेत्र, एवं व्यवसाय क्षेत्र में स्वीकृत एवं वितरित ऋण राशि एवं मार्जिन-मनी (अनुदान राशि) का विश्लेषण शोधकर्ताओं द्वारा विभिन्न तालिकाओं के माध्यम से किया गया है। यह विश्लेषण महिला हितग्राहियों की संख्या एवं उनको प्राप्त ऋण राशि के आधार पर ईकाईवार किया गया है। साथ ही स्वीकृत ऋण प्रकरणों एवं ऋण राशियों का औसत एवं प्रतिशत भी ज्ञात किया गया है।

तालिका क्रमांक 01(देखे आगे पृष्ठ पर)

तालिका से स्पष्ट है कि रतलाम जिले में दीनदयाल रोजगार योजनान्तर्गत उद्योग क्षेत्र में गत 05 वर्षो (2009-10 से 2013-14) में जिला व्यापार एवं उद्योग केन्द्र, रतलाम द्वारा 19 महिला हितग्राहियों को 24 लाख, 25 हजार रू. का ऋण स्वीकृत किया जाकर वितरण मात्र 07 महिलाओं को 08 लाख रू. का किया गया। यह वितरण, स्वीकृत प्रकरणों की तुलना में लगभग 36.84 प्रतिशत के बराबर है, साथ ही मार्जिन-मनी के रूप में 14 महिलाओं को 1 लाख, 40 हजार 500 रू. की सहायता स्वीकृत एवं वितरित की गई है।

औसत के आधार पर उद्योग क्षेत्र में प्रतिवर्ष 04 महिला हितग्राहियों को 4 लाख 85 हजार रू. का ऋण स्वीकृत किया जाकर वितरण मात्र 01महिला को 1 लाख 60 हजार रू. का किया गया तथा मार्जिन-मनी प्रतिवर्ष 03 महिलाओं को लगभग 28 हजार रू. स्वीकृत एवं वितरित की गई।

तालिका क्रमांक 02 (देखे अन्तिम पृष्ठ पर)

तालिका से स्पष्ट है कि रतलाम जिले में दीनदयाल रोजगार योजनान्तर्गत सेवा क्षेत्र में गत 05 वर्षो (2009-10 से 2013-14) में जिला व्यापार एवं उद्योग केन्द्र, रतलाम द्वारा 15 महिला हितग्राहियों को 16 लाख, 80 हजार रू. का ऋण स्वीकृत किया जाकर वितरण मात्र 06 महिलाओं को 09 लाख, 10 हजार रू. का किया गया। यह वितरण, स्वीकृत प्रकरणों की तुलना में लगभग 40 प्रतिशत के बराबर है, साथ ही मार्जिन-मनी के रूप में 08 महिलाओं को 61 हजार 500 रू. की सहायता स्वीकृत एवं वितरित की गई है।

औसत के आधार पर सेवा क्षेत्र में प्रतिवर्ष 03 महिला हितग्राहियों को 03 लाख 36 हजार रू. का ऋण स्वीकृत किया जाकर वितरण मात्र 01 महिला को 1 लाख 82 हजार रू. का किया गया तथा मार्जिन-मनी प्रतिवर्ष 02 महिलाओं को लगभग 12 हजार, 300 रू. स्वीकृत एवं वितरित की गई है।

तालिका क्रमांक 03 (देखे अन्तिम पृष्ठ पर)

तालिका से स्पष्ट है कि रतलाम जिले में दीनदयाल रोजगार योजनान्तर्गत व्यवसाय क्षेत्र में गत 05 वर्षो (2009-10 से 2013-14) में जिला व्यापार एवं उद्योग केन्द्र, रतलाम द्वारा 33 महिला हितग्राहियों को 29 लाख, 16 हजार रू. का ऋण स्वीकृत किए जाकर वितरण मात्र 13 महिलाओं को 11 लाख, 80 हजार रू. का किया गया। यह वितरण स्वीकृत प्रकरणों की तुलना में स्वीकृत लगभग 39.39 प्रतिशत के बराबर है, साथ ही मार्जिन-मनी के रूप में 28 महिलाओं को 01 लाख, 23 हजार, 300 रू. की राशि स्वीकृत एवं वितरित की गई है।

औसत के आधार पर व्यवसाय क्षेत्र में प्रतिवर्ष 07 महिला हितग्राहियों को 05 लाख 83 हजार रू. का ऋण स्वीकृत किया जाकर वितरण मात्र 03 महिलाओं को 2 लाख 36 हजार रू. का किया गया तथा मार्जिन-मनी प्रतिवर्ष 06 महिलाओं को लगभग 24 हजार, 700 रू. स्वीकृत एवं वितरित की गई है।

निष्कर्ष– प्रस्तुत शोध पत्र **'महिला सशक्तीकरण की दिशा में दीनदयाल रोजगार योजना का योगदान' (म.प्र. के रतलाम जिले के विशेष संदर्भ में)** के प्रमुख निष्कर्ष इस प्रकार है –(सारिणी व चार्ट देखे अन्तिम पृष्ठ पर)

सारणी एवं चार्ट से स्पष्ट है कि दीनदयाल स्वरोजगार योजना में वर्ष 2009-10 से लेकर वर्ष 2013-14 तक पाँच वर्षो में कुल 67 महिला हितग्राहियों को ऋण प्रकरण स्वीकृत किए गए जिसमें सबसे अधिक 33 (अर्थात् 49.25 प्रतिशत) प्रकरण व्यवसाय क्षेत्र में उसके पश्चात् 19 (अर्थात् 28.36 प्रतिशत) प्रकरण उद्योग क्षेत्र में तथा सबसे कम 15 (अर्थात् 22.39 प्रतिशत) प्रकरण सेवा क्षेत्र में स्वीकृत किए गए। इसी प्रकार

दीनदयाल रोजगार योजना के अन्तर्गत स्वीकृत राशि प्रति 1 लाख रू. में से सबसे अधिक 41 हजार 530 रू. व्यवसाय क्षेत्र की महिला हितग्राहियों को उसके पश्चात् 34 हजार 540 रू. उद्योग क्षेत्र की महिला हितग्राहियों को तथा सबसे कम 23 हजार 930 रू. सेवा क्षेत्र की महिला हितग्राहियों को स्वीकृत की गई।

इसी प्रकार दीनदयाल स्वरोजगार योजना में वर्ष 2009-10 से लेकर वर्ष 2013-14 तक पाँच वर्षो में कुल 26 महिला हितग्राहियों को ऋण प्रकरण वितरित किए गए। जिसमें सबसे अधिक 13 (अर्थात् 50.00 प्रतिशत) प्रकरण व्यवसाय क्षेत्र में उसके पश्चात् 07 (अर्थात् 26.92 प्रतिशत) प्रकरण उद्योग क्षेत्र में तथा सबसे कम 06 (अर्थात् 23.08 प्रतिशत) प्रकरण सेवा क्षेत्र में वितरित किए गए। दीनदयाल रोजगार योजना के अन्तर्गत स्वीकृत राशि प्रति 1 लाख रू. में से सबसे अधिक 40 हजार 830 रू. व्यवसाय क्षेत्र की महिला हितग्राहियों को उसके पश्चात् 31 हजार 490 रू. सेवा क्षेत्र की महिला हितग्राहियों को तथा सबसे कम 27 हजार 680 रू. उद्योग क्षेत्र की महिला हितग्राहियों को स्वीकृत की गई।

योजनान्तर्गत मार्जिन-मनी के 50 प्रकरणों में से सबसे अधिक 28 प्रकरण (अर्थात् 56 प्रतिशत) व्यवसाय क्षेत्र की महिला हितग्राहियों को, इसके पश्चात् 14 प्रकरण (अर्थात् 28 प्रतिशत) उद्योग क्षेत्र की महिला हितग्राहियों को तथा सबसे कम 08 प्रकरण (अर्थात् 16 प्रतिशत) सेवा क्षेत्र की महिला हितग्राहियों को स्वीकृत एवं वितरित किए गए है। इसी प्रकार मार्जिन-मनी स्वीकृत एवं वितरित राशि प्रति 1 लाख रू. में से सबसे अधिक 43 हजार 190 रू. उद्योग क्षेत्र की महिला हितग्राहियों को, उसके पश्चात् 37 हजार 900 रू. व्यवसाय क्षेत्र की महिला हितग्राहियों को तथा सबसे कम 18 हजार 910 रू. सेवा क्षेत्र की महिला हितग्राहियों को प्रदान की गई।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. मासिक पत्रिका कुरूक्षेत्र नई दिल्ली - बालिका सशक्तिकरण जनवरी 2016 अंक 03
2. मासिक पत्रिका योजना नई दिल्ली - महिलाओं का आर्थिक सशक्तिकरण, अक्टूबर 2008
3. जिला व्यापार एवं उद्योग केन्द्र, रतलाम से प्राप्त प्राथमिक समंक।
4. शोध पत्र - झाबुआ जिले में प्रधानमंत्री रोजगार योजना के अन्तर्गत हितग्राहियों को प्रदत्त वित्तीय सहायता/ ऋण का विश्लेषण डॉ. लक्ष्मण परवाल, प्रो. गेन्दालाल चौहान।
5. शोध पत्र - झाबुआ जिले में प्रधानमंत्री रोजगार योजना के अन्तर्गत आदिवासी हितग्राहियों को इकाईवार प्रदत्त वित्तीय सहायता का विश्लेषणडॉ.लक्ष्मण परवाल, प्रो. गेन्दालाल चौहान।
6. दैनिक भास्कर, पत्रिका, नईदुनिया आदि समाचार पत्रो के विभिन्न अंक।

तालिका क्रमांक 01

दीनदयाल रोजगार योजनान्तर्गत उद्योग क्षेत्र में महिला हितग्राहियों को स्वीकृत एवं वितरित वित्तीय सहायता का विवरण

(राशि लाख रू. में)

क्र.	वर्ष	महिलाओं को स्वीकृत ऋण प्रकरण		महिलाओं को वितरित ऋण प्रकरण			महिलाओं को स्वीकृत मार्जिन-मनी		महिलाओं को वितरित मार्जिन-मनी		
		संख्या	राशि	संख्या	राशि	स्वीकृत प्रकरणों से प्रतिशत	संख्या	राशि	संख्या	राशि	स्वीकृत संख्या से प्रतिशत
1	2009-10	03	3.95	01	1.50	33.33	02	0.175	02	0.175	100.00
2	2010-11	03	3.00	00	0.00	00.00	00	0.000	00	0.000	00.00
3	2011-12	06	7.55	02	2.50	33.33	04	0.205	04	0.205	100.00
4	2012-13	06	7.75	03	2.00	50.00	06	0.775	06	0.775	100.00
5	2013-14	01	2.00	01	2.00	100.00	02	0.250	02	0.250	100.00
	योग	19	24.25	07	8.00	36.84	14	1.405	14	1.405	100.00
	औसत	04	4.85	01	1.6	25.00	03	0.281	03	0.281	100.00

स्त्रोत -जिला व्यापार एवं उद्योग केन्द्र, रतलाम।

तालिका क्रमांक 02

दीनदयाल रोजगार योजनान्तर्गत सेवा क्षेत्र में महिला हितग्राहियों को स्वीकृत एवं वितरित वित्तीय सहायता का विवरण

(राशि लाख रू. में)

क्र.	वर्ष	महिलाओं को स्वीकृत ऋण प्रकरण		महिलाओं को वितरित ऋण प्रकरण			महिलाओं को स्वीकृत मार्जिन-मनी		महिलाओं को वितरित मार्जिन-मनी		
		संख्या	राशि	संख्या	राशि	स्वीकृत प्रकरणों से प्रतिशत	संख्या	राशि	संख्या	राशि	स्वीकृत संख्या से प्रतिशत
1	2009-10	04	3.50	01	0.80	25.00	02	0.18	02	0.18	100.00
2	2010-11	00	0.00	00	0.00	00.00	00	0.00	00	0.00	00.00
3	2011-12	01	1.00	00	0.00	00.00	00	0.00	00	0.00	00.00
4	2012-13	05	6.60	00	2.60	00.00	03	0.198	03	0.198	100.00
5	2013-14	05	5.70	05	5.70	100.00	03	0.237	03	0.237	100.00
	योग	15	16.80	06	9.10	40.00	08	0.615	08	0.615	100.00
	औसत	03	3.36	01	1.82	33.33	02	0.123	02	0.123	100.00

स्त्रोत:-जिला व्यापार एवं उद्योग केन्द्र, रतलाम

तालिका क्रमांक 03

दीनदयाल रोजगार योजनान्तर्गत व्यवसाय क्षेत्र में महिला हितग्राहियों को स्वीकृत एवं वितरित वित्तीय सहायता का विवरण

(राशि लाख रू. में)

क्र.	वर्ष	महिलाओं को स्वीकृत ऋण प्रकरण		महिलाओं को वितरित ऋण प्रकरण			महिलाओं को स्वीकृत मार्जिन-मनी		महिलाओं को वितरित मार्जिन-मनी		
		संख्या	राशि	संख्या	राशि	स्वीकृत प्रकरणों से प्रतिशत	संख्या	राशि	संख्या	राशि	स्वीकृत संख्या से प्रतिशत
1	2009-10	04	3.52	00	0.00	00.00	06	0.20	06	0.20	100.00
2	2010-11	07	5.13	01	0.60	14.29	06	0.29	06	0.29	100.00
3	2011-12	06	6.65	02	2.00	33.33	03	0.125	03	0.125	100.00
4	2012-13	09	7.55	04	4.00	44.44	07	0.35	07	0.35	100.00
5	2013-14	07	6.31	06	5.20	85.71	06	0.268	06	0.268	100.00
	योग	33	29.16	13	11.80	39.39	28	1.233	28	1.233	100.00
	औसत	07	5.83	03	2.36	42.86	06	0.247	06	0.247	100.00

स्त्रोत:-जिला व्यापार एवं उद्योग केन्द्र, रतलाम

समग्र विश्लेषण

विवरण	उद्योग	सेवा	व्यवसाय	योग
कुलस्वीकृत प्रकरणप्रतिशत	1928.36	1522.39	3349.25	67100.00
कुल स्वीकृत राशि (लाख रू. में)प्रतिशत	24.2534.54	16.8023.93	29.1641.53	70.21100.00
कुल वितरित प्रकरणप्रतिशत	0726.92	0623.08	1350.00	26100.00
कुल वितरित राशि (लाख रू. में)प्रतिशत	8.0027.68	9.1031.49	11.8040.83	28.90100.00
मार्जिन-मनी (स्वीकृत प्रकरण)प्रतिशत	1428.00	0816.00	2856.00	50100.00
मार्जिन-मनी (स्वीकृत राशि लाख रू. में)प्रतिशत	1.40543.19	0.61518.91	1.23337.90	3.253100.00
मार्जिन-मनी (वितरित प्रकरण)प्रतिशत	1428.00	0816.00	2856.00	50100.00
मार्जिन-मनी (वितरित राशि लाख रू. में)प्रतिशत	1.40543.19	0.61518.91	1.23337.90	3.253100.00

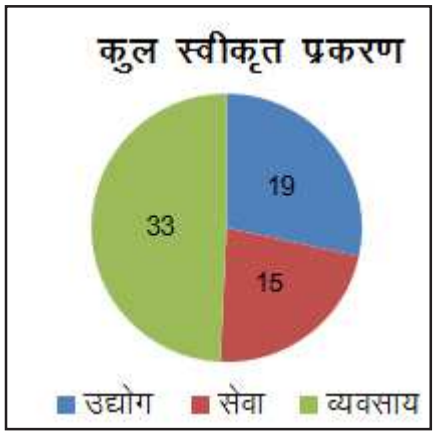

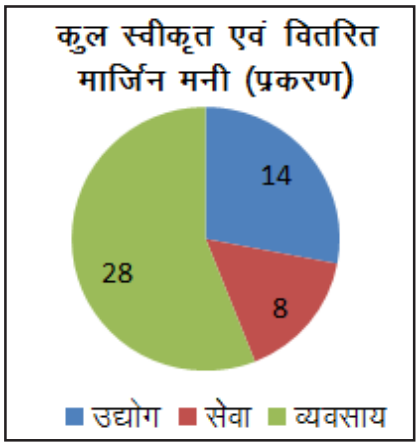

****

मैंगनीज कम्पनी लिमिटेड के द्वारा खनिज उत्पादनों के आय-व्यय का अध्ययन (म.प्र. के बालाघाट जिले के संदर्भ में)

डॉ. पंचम सिंह कवड़े *

प्रस्तावना – बालाघाट जिले के आर्थिक विकास में मैंगनीज कम्पनी लिमिटेड की कार्यप्रणाली का विश्लेषणात्मक अध्ययन करने के पहले यह आवश्यक हो जाता है कि बालाघाट जिले की आर्थिक, सामाजिक एवं भौगोलिक संरचना का अध्ययन किया जाए कि बालाघाट जिले की अर्थव्यवस्था का एक महत्वपूर्ण हिस्सा इन पर ही निर्भर होता है।

मध्यप्रदेश राज्य में स्थित बालाघाट जिले में मैंगनीज कम्पनी लिमिटेड का महत्वपूर्ण स्थान है। बालाघाट जिले में सन् 1896 में ब्रिटिश सरकार द्वारा मैंगनीज कम्पनी की स्थापना की गयी थी और उस समय कम्पनी का नाम मध्य प्रांत सिंडीकेट के नाम से जाना जाता था और सन् 1901 में कम्पनी का नाम परिवर्तन करके फैरो मैंगनीज रखा गया है। सन् 1930 में ब्रिटिश सरकार ने फैरो मैंगनीज का उत्पादन कार्य बंद कर दिया गया है। उसके बाद भारत सरकार द्वारा इस कम्पनी को चालू करने के लिए एक अनुबंध हुआ। यह अनुबंध कम्पनी अधिनियम 1956 के तहत एक समझौता हुआ और इस कम्पनी का राष्ट्रीयकरण किया। राष्ट्रीयकरण के पश्चात् कम्पनी ने सन् 8 जून 1962 को उत्पादन का कार्य चालू कर दिया गया है। उस दिन से कम्पनी ने अपना नाम भी परिवर्तन करके मैंगनीज कम्पनी लिमिटेड रखा है।

वर्तमान समय में मैंगनीज कम्पनी लिमिटेड को मैंगनीज उत्पादन का कार्य करते हुए लगभग 62 वर्ष हो गए हैं। मैंगनीज का उपयोग अनेक धातुओं के रूप में होने के कारण इसे जैक ऑफ ट्रेडर्स भी कहते हैं। मैंगनीज कम्पनी लिमिटेड मैंनीज उत्पाद में भारत का द्वितीय स्थान है। विश्व के कुल उत्पादन का 19 प्रतिशत मैंगनीज बालाघाट जिले से निकाला जाता है। अभी वर्तमान समय में जो बालाघाट से मैंगनीज निकाला जा रहा है, उसका उपयोग लोहा, इस्पात उद्योग में भारी मात्रा में प्रयोग किया जा रहा है। विनियोजित पूंजी भारत सरकार द्वारा 51 प्रतिशत तथा मध्यप्रदेश सरकार द्वारा 49 प्रतिशत पूंजी का विनियोग किया जा रहा है। वर्तमान में मैंगनीज कम्पनी लिमिटेड की 10 कम्पनियां हैं, इनमें से 4 कम्पनियां मध्यप्रदेश में हैं। मैंगनीज कम्पनी लिमिटेड के द्वारा वर्ष 2010 में कम्पनी ने 11 लाख टन मैंगनीज उत्पादन किया था, वर्ष 2016 तक कम्पनी ने 15 लाख टन उत्पादन का लक्ष्य रखा है और वित्त वर्ष 2016 तक 268 करोड़ रुपये खर्च करने की योजना बनाई है और उत्पादन में वृद्धि करने की योजना है।

शोध विषय के अध्ययन का औचित्य–किसी भी व्यावसायिक परिवेश में कार्यरत कोई उपक्रम चाहे वह सार्वजनिक क्षेत्र का हो या निजी क्षेत्र या किसी भी स्तर पर कार्यरत हो, प्रत्येक व्यवसाय को अपनी दैनिक क्रियाओं के रूप से संचालन के लिए एवं अपने दायित्वों के निर्वहन हेतु वे उत्पादन एवं आय-व्यय पर पूर्ण रूप से निर्भर करते हैं। यह आय-व्यय कार्यप्रणाली भी व्यवसाय में अपनी भूमिका का निर्वहन ठीक उसी तरह करती है, जिस तरह एक मानव शरीर में जीवन का प्रतिनिधित्व उसका हरदम करता है। अगर वही ऊर्जा छद्म दुर्बल हो जाए तो मानव शरीर रूग्ण हो अपनी नाशवान स्थिति की ओर गमन करने लगता है। उसी तरह यदि व्यवसाय में आय-व्यय की स्थिति में अव्यवस्था पनपने लगे तो व्यवसाय भी अपने अस्तित्व को खोने लगता है। व्यवसाय में आय-व्यय एवं उत्पादकता की सार्थकता को देखते हुए व्यवसाय में उत्पादन में आय एवं व्यय का उचित शोध प्रबंध द्वारा अध्ययन किया गया है।

शोध अध्ययन की समीक्षा – किसी भी विषय अध्ययन से पूर्व आवश्यक है कि उक्त विषय पर पूर्व में किए गए कार्यों का अध्ययन कर उनका पूर्वावलोकन कर, उनकी समीक्षा को भी अपने शोध विषय अध्ययन में स्थान दिया जाना चाहिए, जो हमारे द्वारा किए जाने वाले अभूतपूर्व विषय अध्ययन में दिशा निर्देशन के रूप में आवर्ती उपयोगिता बनाए रखता है, क्योंकि पूर्व में किए गए कार्य ही हमें नये तथ्यों को जानने के लिए जिज्ञासु एवं प्रेरित करते हैं। यह न केवल हमारे ज्ञान को बढ़ाता है, शोध विषय अध्ययन से संबंधित उन तथ्यों को भी हम तक पहुंचाता है, जिनका उपयोग कर हम अपने शोध विषय के अध्ययन में कर सकते हैं।

श्री दीपचन्द भावरकर द्वारा सन् 2009-10 में कोल इण्डिया लिमिटेड में मानव संसाधन प्रबन्ध की व्यूह संरचना विषय पर शोध अध्ययन किया गया है।

शोध विषय में अध्ययन के उद्देश्य – प्रस्तावित शोध अध्ययन के प्रमुख उद्देश्य मैंगनीज कम्पनी लिमिटेड की कार्यप्रणाली का विश्लेषणात्मक अध्ययन एवं उसका उचित प्रबंध करते हुए नियोजन एवं उनका विकास करना है, ताकि मैंगनीज कम्पनी लिमिटेड की कार्यप्रणाली में वृद्धि हो सके एवं उत्पादन में भी वृद्धि की जा सके तथा आय-व्यय का भी अध्ययन किया जा सके। शोध विषय के अध्ययन के उद्देश्य इस प्रकार हैं –

1. मैंगनीज कम्पनी लिमिटेड के बारे में अध्ययन करना।
2. मैंगनीज कम्पनी लिमिटेड की कार्यप्रणाली का अध्ययन करना।
3. खनिज सम्पदा के उत्पादन में मैंगनीज कम्पनी लिमिटेड का अध्ययन करना।
4. खनिज सम्पदा के उत्पादन में मैंगनीज कम्पनी लिमिटेड के सामने आने वाली समस्याओं का अध्ययन करना।
5. मैंगनीज कम्पनी लिमिटेड की भावी सम्भावनाएं एवं चुनौतियों का अध्ययन करना।

शोध अध्ययन की परिकल्पनाएं – मैंगनीज कम्पनी लिमिटेड की कार्यप्रणाली में कोई सार्थक अन्तर नहीं है। किसी भी शोध कार्य को अपने

* अतिथि विद्वान, शासकीय महाविद्यालय, बेतूल (म.प्र.) भारत

के लिए समंकों की आवश्यकता होती है। ये समंक दो प्रकार के होते हैं। प्राथमिक एवं द्वितीयक।

प्राथमिक समंक – प्राथमिक स्त्रोत अनुसंधानकर्ता द्वारा नये रूप में प्रथम बार एकत्र करता है। इसके सारे आंकड़ों का संकलन योजना आरंभ से अंत तक नवीन होती है। प्राथमिक समंक कहलाते हैं।

द्वितीयक समंक – ऐसे आंकड़ों का स्वयं संकलन नहीं करता, बल्कि उनका अपनी अनुसंधान समस्या के विश्लेषण तथा विवेचन में प्रयोग किया जाता है। वास्तव में ऐसे आंकड़े किसी अन्य व्यक्ति, एजेन्सी व संस्था द्वारा प्राप्त अपने निजी उपयोग के लिए संकलित किए जाते हैं।

मैंगनीज कम्पनी की कार्यप्रणाली बालाघाट जिले के विशेष संदर्भ में अध्ययन है। इस शोध अध्ययन में कम्पनी के संगठनात्मक ढांचे तथा मैंगनीज कम्पनी की कार्यप्रणाली का अध्ययन किया है। मैंगनीज कम्पनी लिमिटेड खनिज उत्पादन की सम्पदा में कहां तक सफल हो पाई तथा और किन उत्पादनों में एवं संलग्न है और इसमें प्रतिवर्ष कितनी आय एवं व्यय के संबंध में भी अध्ययन किया है।

शोध अध्ययन की संरचना– मैंगनीज कम्पनी लिमिटेड की संरचना कम्पनी अधिनियम 1956 की धारा 617 के अन्तर्गत एक सरकारी कम्पनी के रूप में हुई है तथा कार्यकारी निर्देशकों का पारिश्रमिक भारत सरकार द्वारा तय किया जाता है। सरकार द्वारा निर्देशकों को मंडल की बैठकों में भाग लेने के लिये निर्धारित किया जाता है।

'संगठन संरचना संस्था की वह सम्पूर्ण व्यवस्था है, जो व्यक्तियों के मध्य उन संबंधों को व्यक्त करता है, जिनके अंतर्गत वे संस्था के क्रियाकलापों को करते हैं। यह अधिकार एवं दायित्वों के केन्द्र एवं प्रवाह को भी प्रदर्शित करती है, जिसके अनुरूप संस्था में आदेश–निर्देश प्रसारित किये जाते हैं एवं विभिन्न कार्यों का निष्पादन किया जाता है।**(देखे अन्तिम पृष्ठ पर)**

शोध अध्ययन की सीमाएं – प्रस्तावित शोध कार्य में मैंगनीज कम्पनी लिमिटेड की कार्यप्रणाली का विश्लेषणात्मक अध्ययन (जिला बालाघाट (म.प्र.) के विशेष सन्दर्भ में) को सफलतापूर्वक पूरा करने में समय सीमा का पालन किया जायेगा। शोध कार्य को पूर्ण करने के लिए कम से कम निर्धारित समयावधि की आवश्यकता होगी।

शोधकर्ता द्वारा मैंगनीज कम्पनी लिमिटेड के बदलते हुए आर्थिक विकास का विश्लेषणात्मक अध्ययन किया जाता है।

1. मध्यप्रदेश के बालाघाट जिले में शोध कार्य किया जाना प्रस्तावित है, जो कि शोध कार्य की भौगोलिक सीमा को निर्धारित करता है।
2. प्राप्त समंकों एवं शोध साहित्य का अभाव है।
3. शोध कार्य एक निश्चित अवधि के लिए किया जा रहा है।
4. विगत दस वर्षों के समंकों के आधार पर शोध कार्य किया जा रहा है, जो अध्ययन की सीमा को निर्धारित करता है।

मैंगनीज कम्पनी लिमिटेड के खनीज उत्पादनों का आय–व्यय का विश्लेषणात्मक अध्ययन – मैंगनीज कम्पनी लिमिटेड के खनीज उत्पादनों का आय–व्यय का विश्लेषणात्मक अध्ययन करेंगे तथा मैंगनीज कम्पनी लिमिटेड के आय–व्यय का उल्लेख किया गया है, जिसमें वित्तीय विश्लेषण कर निष्कर्ष ज्ञात किए गए हैं।

तालिका 1.1(देखे आगे पृष्ठ पर)

मैंगनीज कम्पनी लिमिटेड की आय तथा उत्पादन (देखे आगे पृष्ठ पर)

उत्पादन के आधार पर विश्लेषण – मैंगनीज कम्पनी लिमिटेड सन् 2002–03 में उत्पादन 4.1 तथा 2003–04 में 3.9 की कमी पाई एवं वर्ष 2004–05 में 4.4 की कमी हुई। इसी प्रकार वर्ष 2007–08 में कमी हुई, लेकिन वर्ष 2009–10 में उत्पादन 4.8 लाख टन की वृद्धि हुई है। इस प्रकार से मैंगनीज कम्पनी लिमिटेड में उत्पादन में कमी एवं वृद्धि होते रहा है।

तालिका 1.2 (देखे आगे पृष्ठ पर)

मैंगनीज कम्पनी लिमिटेड के आय–व्यय (देखे आगे पृष्ठ पर)

मैंगनीज कम्पनी लिमिटेड के व्यय का विश्लेषण – वर्ष 2002–03 में 1.26 करोड़ रु. व्यय तथा वर्ष 2003–04 में 1.49 करोड़ रु. व्यय में वृद्धि हुई। वर्ष 2004–05 में 0.98 करोड़ रुपये की व्यय में कमी हुई। पिछले दो वर्षों की तुलना में 2004–05 में कमी हुई है। जबकि वर्ष 2011–12 में पिछले वर्षों की व्यय की तुलना में 2.03 करोड़ रुपये ज्यादा वृद्धि हुई।

मैंगनीज कम्पनी लिमिटेड में आय का विश्लेषण – वर्ष 2002–03 में 4.43 करोड़ रु. आय तथा वर्ष 2003–04 में 4.62 करोड़ रु. की आय एवं 2004–05 में 4.02 करोड़ रु. की आय हुई। पिछले दो वर्षों की तुलना में कम आय हुई है। वर्ष 2005–06 में 4.74 करोड़ की आय में वृद्धि पाई गई। वर्ष 2006–07 में 5.43 करोड़ रु. की वृद्धि हुई। वर्ष 2007–08 में 4.96 करोड़ रु. की आय हुई, जो कि वर्ष 2006–07 की तुलना में कम है। वर्ष 2008–09 में 5.82 करोड़ रु. की आय हुई। वर्ष 2008–09 से मैंगनीज कम्पनी लिमिटेड की आय निरन्तर वृद्धि रही है। वर्ष 2011–12 में कम्पनी की आय में 7.57 करोड़ रु. की आय हुई है।

इस प्रकार शोध अध्ययन अवधि में व्यय के भार में लगातार बदलाव देखा गया है, जिससे परिवहन बिजली, कर्मचारियों एवं श्रमिकों को दिया जाने वाला बोनस, स्वास्थ्य सुविधा, रायल्टी इत्यादि आय को प्रभावित करती है, जिसके कारण प्रतिवर्ष व्यय एवं आय में भी परिवर्तन होता रहा है।

निष्कर्ष – इस शोध प्रबंध से मैंगनीज कम्पनी लिमिटेड के वार्षिक प्रतिवेदन में दिए गए आंकड़ों को उचित मानकर पिछले दस वर्षों का उत्पादन तथा व्यय एवं आय का अध्ययन किया है। अध्ययन के दौरान जो निष्कर्ष सामने आए हैं, वह निम्न हैं –

1. मैंगनीज कम्पनी लिमिटेड के अध्ययन से ज्ञात होता है कि खनिज उत्पादन में कम्पनी की स्थिति सन्तोषजनक रही है। कुछ वर्षों में कम्पनी को उत्पादन में कमी पाई है। इस आधार पर कम्पनी उत्पादन क्षमता में वृद्धि करने की आवश्यकता है।
2. मैंगनीज कम्पनी लिमिटेड के व्यय में भी कुछ वर्षों में निरन्तर वृद्धि पाई गई है। शोध अध्ययन से पता चलता है कि कम्पनी को अपने व्यय पर नियंत्रण करना चाहिए और उत्पादन की मात्रा को बढ़ाना चाहिए। इससे कम्पनी की आय में वृद्धि होगी और बाहरी व्यय पर कम्पनी को नियंत्रण करना चाहिए।
3. शोध अध्ययन से यह भी ज्ञात होता है कि पिछले वर्षों से कम्पनी को लगातार आय में वृद्धि हो रही है। मैंगनीज कम्पनी लिमिटेड की आय में भी निरन्तर वृद्धि हो रही है। मैंगनीज कम्पनी को अपनी आय वृद्धि करते रहना चाहिए, इससे मैंगनीज उत्पादन पर ज्यादा भार नहीं पड़ेगा। मैंगनीज भी ज्यादा से ज्यादा मात्रा में ग्राहक की ओर आकर्षित करना चाहिए, इससे मैंगनीज कम्पनी लिमिटेड की आय में भी वृद्धि होगी।

सुझाव – इस शोध विषय के अध्ययन से प्राप्त निष्कर्षों के आधार पर सुधारात्मक एवं मैंगनीज कम्पनी के विकास हेतु सुझाव इस प्रकार हैं –

1. मैंगनीज कम्पनी को विकास के कार्यक्रमों के अनुसार नियमों विनियमों तथा प्रक्रियाओं में परिवर्तन किया जाना चाहिए तथा उसी अनुसार शक्ति तथा सत्ता को भी केन्द्रित किया जाए।

2. प्रशासन में विशेषीकरण पर पर्याप्त ध्यान दिया जाए। विभिन्न कार्यक्रमों के नियोजन तथा क्रियान्वयन में विशिष्ट योग्यता प्राप्त व्यक्तियों का सहयोग प्राप्त करना चाहिए।
3. मैंगनीज कम्पनी को अपने वित्तीय व्यय व अन्य व्यय पर नियंत्रण रखना चाहिए तथा कम्पनी की आय में भी वृद्धि करना चाहिए।
4. मैंगनीज कम्पनी को उत्पादन क्षमता पर ध्यान देना चाहिए।
5. कम्पनी को अपनी कार्यशील पूंजी का उपयोग कुशलता पूर्वक करना चाहिए, जिससे कम्पनी की आर्थिक स्थिति और सुदृढ़ हो सके।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. अग्रवाल ए.एन. - 'भारतीय अर्थव्यवस्था', विश्व प्रकाशन, नई दिल्ली-1997.
2. कुशवाह जी.सी. - 'आर्थिक विकास', लोक भारतीय प्रकाशन, इलाहाबाद - 1973.
3. जैन के.पी. - 'आर्थिक विश्लेषण' आगरा बुक डिपो, आगरा - 1987.
4. नागर के.एन. - 'सांख्यिकी के सिद्धान्त', मीनाक्षी प्रकाशन, मेरठ - 1978.
5. अग्रवाल एम.डी. - अग्रवाल एम.पी. वित्तीय प्रबंध (रमेश बुक डिपो).
6. कुलश्रेष्ठ आर.एस. - 'वित्तीय प्रबंध' (साहित्य भवन पब्लिकेशन).
7. शर्मा विरेन्द्र - 'प्रकाश रिसर्च मेथडोलॉजी' (पंचशील प्रकाशन) संस्करण - 2007.
8. अन्य प्रलेख - मैंगनीज और इंडिया लिमिटेड कम्पनी 2002-03 से 2011-12 के प्रतिवेदन।
9. इंटरनेट की वेबसाइड www.moil.cor.in.ltd.

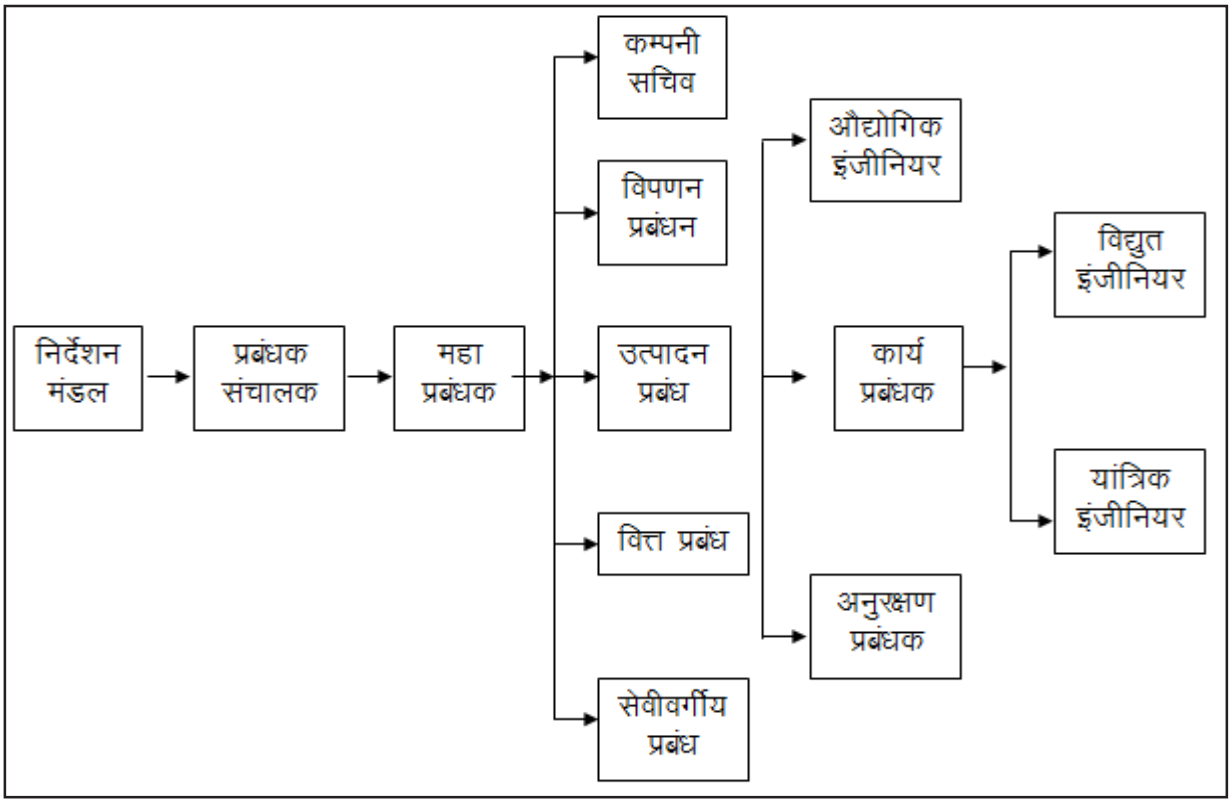

मैंगनीज कम्पनी लिमिटेड की आय तथा उत्पादन की

तालिका 1.1

क्र.	वर्ष	आय करोड़ रु. में	उत्पादन लाख रु. में	आनुपातिक दर
1	2002-03	4.43	4.1	108.05
2	2003-04	4.62	3.9	118.45
3	2004-05	4.02	4.4	91.36
4	2005-06	4.74	3.8	124.74
5	2006-07	5.43	4.5	120.67
6	2007-08	4.96	4.1	128.98
7	2008-09	5.82	4.8	121.25
8	2009-10	6.06	4.4	137.73
9	2010-11	6.82	4.6	148.26
10	2011-12	7.59	4.2	180.71

स्त्रोत - मैंगनीज कम्पनी लिमिटेड, जिला बालाघाट

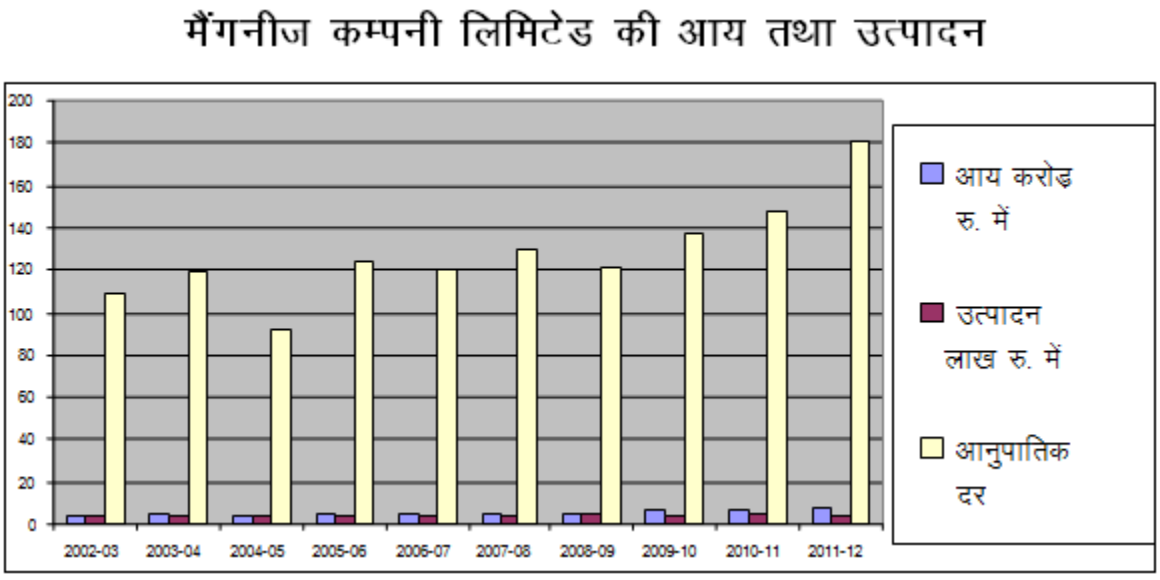

तालिका 1.2 : मैंगनीज कम्पनी लिमिटेड के आय-व्यय
(रुपये करोड़ में)

क्र.	वर्ष	व्यय	आय करोड़ रु. में	व्यय एवं आय का प्रतिशत
1	2002-03	1.26	4.43	28.44
2	2003-04	1.49	4.62	32.25
3	2004-05	0.98	4.02	24.38
4	2005-06	1.18	4.74	24.89
5	2006-07	1.79	5.43	32.96
6	2007-08	1.29	4.96	26.02
7	2008-09	1.47	5.82	25.26
8	2009-10	1.66	6.06	27.39
9	2010-11	1.78	6.82	26.10
10	2011-12	2.03	7.57	26.75

स्त्रोत – मैंगनीज कम्पनी लिमिटेड, जिला बालाघाट

मैंगनीज कम्पनी लिमिटेड के आय-व्यय

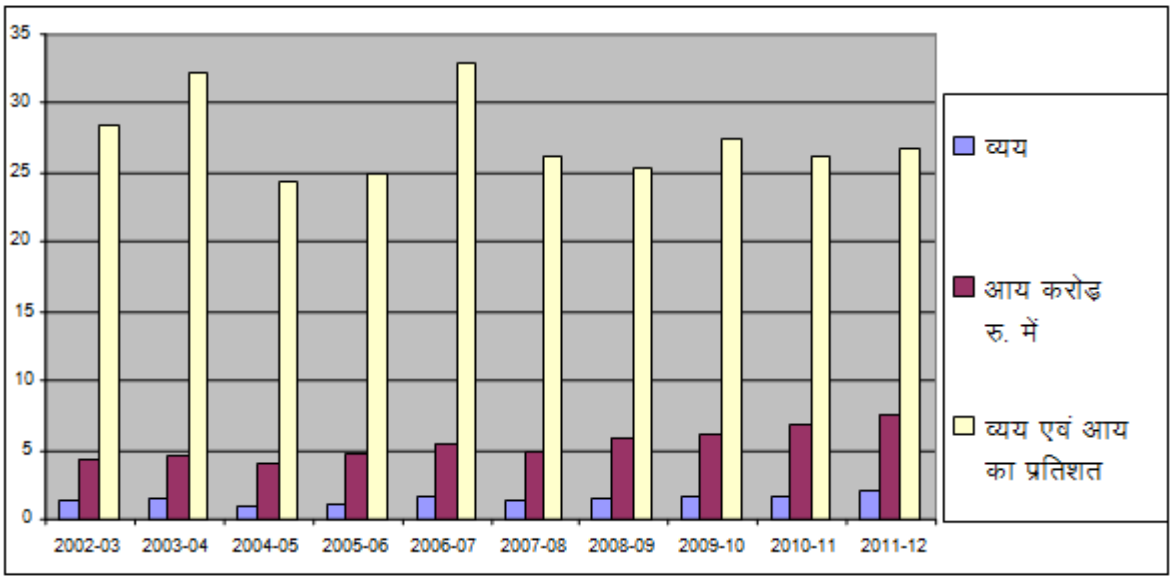

सिंचाई सुविधाओं के विकास से कृषि उत्पादन पर प्रभाव (धार जिले के विशेष सन्दर्भ में)

राजेश मईड़ा *

प्रस्तावना – कृषि क्षेत्र में वृद्धि हेतु आवश्यक है कि असिंचित, अल्प सिंचित तथा पड़ती भूमि को खेती के लिए प्रयोग किया जाए। मानसून पर निर्भर क्षेत्रों में सिंचाई सुविधा के विकास का महत्व अधिक है। भारत में 36.7 प्रतिशत क्षेत्र पर ही सिंचाई की सविधाएँ उपलब्ध है, अर्थात् 63.3 प्रतिशत क्षेत्र अभी भी वर्षा पर निर्भर है। कृषि उत्पादकता में सिंचाई साधनों का विशेष महत्व है। देश की बढ़ती जनसंख्या के लिए खाद्यान्न पूर्ति हेतु कृषि उत्पादन में वृद्धि आवश्यक है। विकासशील देश में कृषि पूर्णत: वर्षा पर निर्भर करती है। वर्षा अनियमित व अनिश्चित होने के कारण कृषि उत्पादन में सिंचाई सुविधाओं की प्रमुख भूमिका है। कृषि उत्पादन या उत्पादकता को प्रभावित करने वाले प्रमुख तत्वों में सिंचाई के साधनों का विशेष महत्व है। सिंचाई साधनों की उपलब्धता कृषि उत्पादकता को बढ़ाने में महत्वपूर्ण भूमिका होती है।[1]

भारत में सिंचाई परियोजनाओं की तीन श्रेणीयों वृहद, मध्यम और लघु में विभाजित किया गया है। जिन परियोजनाओं का कृषि योग्य कमान क्षेत्र (सीसीए) 10,000 हैक्टेयर से अधिक होता है, उन्हें वृहद् परियोजनाएं कहां जाता है और जिन परियोजनाओं का कृषि योग्य कमान क्षेत्र 10,000 हैक्टेयर से कम किन्तु 2000 हैक्टेयर से अधिक होता है, वे मध्यम परियोजनाएं कहलाती है। तथा जिन परियोजनाओं का कृषि योग्य कमान क्षेत्र 2000 हैक्टेयर या इससे कम होता है, वे लघु परियोजनाएं कहलाती हैं। जो क्षेत्र अन्तत: सतही तथा भूजल दोनों द्वारा सिंचाई के अधीन लाया जा सकता है, उसके बारे में विभिन्न राज्यों द्वारा 1960 के दशक में एक स्थूल मूल्यांकन से पता चला है कि देश की सिंचाई की अन्तिम क्षमता 113 मिलियन हैक्टेयर भूमि की होगी। लेकिन वास्तव में यह क्षमता 139 मिलियन हैक्टेयर है इस वृद्धि का मूल कारण लघु भूजल योजनाओं और लघु सतही जल योजनाओं की आंकलित क्षमता में क्रमश: 64 मिलियन हैक्टेयर तथा 17 मिलियन हैक्टेयर की वृद्धि होना है। लघु सिंचाई परियोजनाओं के स्त्रोत के रूप में सतही तथा भूजल दोनों होते हैं जबकि बृहद तथा मध्यम परियोजनाएं अधिकतर सतही जल संसाधनों का दोहन करती हैं।

भारत का सिंचाई सुविधाओं की दृष्टि से विश्व में पहला स्थान है।[2] कृषि विकास के लिए सिंचाई के साधन, बीज व खाद से अधिक महत्वपूर्ण है। सिंचाई साधन पर्याप्त मात्रा में होते है, तो दोहरी या तीसरी फसलें प्राप्त की जा सकती है तथा पड़ती तथा अकृष्य भूमि को भी कृषि कार्यों में लिया जा सकता है। कुछ फसलें ऐसी होती है, जिसमें नियमित एवं अधिक जल की आवश्यकता होती है। जैसे – कपास, गेहूँ, चावल, गन्ना आदि अत: इन फसलों से अधिकाधिक उत्पादन प्राप्त करने के लिए आवश्यक है कि सिंचाई में कृत्रिम साधनों का विस्तार किया जाए।[3] कृत्रिम साधनों से आशय वर्षा जल को संग्रहित करने के लिए तालाबों का निर्माण एवं उनकी क्षमता का विकास करना, नदियों के पानी को संग्रहित करने हेतु डेम का निर्माण, जलाशयों का निर्माण एवं प्रबंधन, भूमिगत जल के लिए ट्यूबवेल तथा कुओं का निर्माण करना।

सिंचाई के विभिन्न स्रोतों में कुओं द्वारा सिंचाई वर्ष 1950–51 में 3.6 हजार हेक्टेयर था, वहीं वर्ष 1976–77 की अवधि तक 21.0 हजार हेक्टेयर तक पहुँच गया था। सिंचाई के लिए कुओं की संख्या में पर्याप्त वृद्धि हुई कुएँ एवं टयूबवेल से वर्ष 2005–06 में लगभग 59 प्रतिशत तथा वर्ष 2008–09 में 3 करोड़ 86 लाख हेक्टेयर भूमि की सिंचाई की कुओं तथा ट्यूबवेल के द्वारा शुद्ध सिंचित क्षेत्र का लगभग 61.0 प्रतिशत है।

नहरों द्वारा सिचाई वर्ष 1950–51 में 0.5 हजार हेक्टेयर था वर्ष 1976–77 तक 2.8 हजार हेक्टेयर हो गया। वर्ष 2008–09 तक नहरों द्वारा 1 करोड़ 66 लाख हेक्टेयर भूमि सिंचित हुई जो कुल सिंचाई क्षेत्र का 26.3 प्रतिशत है। भारत में नहरों की वर्तमान लम्बाई 1 लाख 20 हजार किलो मीटर है। नहरों द्वारा सिवाई की ऐसी व्यवस्था करने वाला भारत एकमात्र देश है।[4] कुल बुवाई क्षेत्र में वृद्धि हुई और सूखे के बावजूद भी कृषि विकास में स्थिर व सकारात्मक सम्बन्ध है। यह विभिन्न सिंचाई स्त्रोतों से सुविधाओं में वृद्धि से संभव हुआ है।[5]

मध्यप्रदेश की अर्थव्यवस्था का प्रमुख आधार भी कृषि हैं, जहाँ वर्षा का वार्षिक औसत 50 से 176 से.मी. के मध्य रहता है, लेकिन यहाँ वर्षा नियमित न होने के कारण सिंचाई पर ध्यान देना आवश्यक हो गया है देश में सिंचित क्षेत्र की दृष्टि से मध्यप्रदेश का सातवाँ स्थान है। सिंचाई के चार प्रमुख साधन है, जिनमें कुओं से सर्वाधिक 50.8 प्रतिशत सिंचाई होती है। दूसरा स्थान नहरों का आता है, जिससे 31.3 प्रतिशत भाग पर सिंचाई की जाती है, इसके अतिरिक्त तालाब और नलकूप सिंचाई के सीमित साधन है इससे मात्र 15 प्रतिशत भाग सिंचित होता है, जिसमें तालाब से मात्र 3 प्रतिशत सिंचाई होती है।[6]

प्रदेश में वर्ष 2011–12 में सकल सिंचित क्षेत्र 7880 हजार हेक्टेयर रहा कुल सिंचित क्षेत्र में सर्वाधिक सिंचाई का प्रतिशत 69.49 कुएँ एवं नलकूप से इसके पश्चात् नहरों, तालाबों से सिंचाई का प्रतिशत 20.24 है तथा अन्य स्त्रोतों से सिंचित क्षेत्र का प्रतिशत 14.58 रहा वर्ष 2011–12 में राज्य का शुद्ध सिंचित क्षेत्र 44.94 लाख हेक्टेयर था, जो कि वर्ष 2012–13 में बढ़कर 85.50 लाख हेक्टेयर हो गया। इसी अवधि में सकल सिंचित क्षेत्र में भी 44.94 लाख हेक्टेयर से बढ़कर 89.66 हेक्टेयर हो गया। कृषि और सहकारिता विभाग, कृषि मंत्रालय के अनुसार हरियाणा, पंजाब और उत्तरप्रदेश में सकल सिंचित क्षेत्र का सकल बुवाई क्षेत्र के लिए प्रतिशत बहुत

* सहायक प्राध्यापक (वाणिज्य) शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, धार (म.प्र.) भारत

ज्यादा है। इस प्रकार मध्यप्रदेश में उपलब्ध सिंचाई सुविधाएँ भी मानसून पर पूरी तरह से निर्भर है।[7]

मध्यप्रदेश में नहर से सिंचाई में पिछले सात वर्षों में लगभग तीन गुना वृद्धि हुई है। वर्ष 2013-14 में नहर सिंचाई के अन्तर्गत 7.5 लाख हेक्टेयर क्षेत्र था, जो अब 25 लाख हेक्टर हो गया है। सिंचाई के पानी का बेहतर उपयोग हेतु नहरों को ठीक करने का काम किया गया पिछले तीन सालों में 11 लाख हेक्टेयर क्षेत्र नहरों से सिंचाई के अन्तर्गत लाया गया।[8]

1. उपलब्ध शोध साहित्यों का पुनरावलोकन - ऐलेक्जेण्डर एम. एस. (1996)[9] ने अध्ययन में बताया हैं कि नाइजीरिया में सिंचित करना वहाँ के जल संसाधनों के विकास द्वारा संभव हुआ है। इस कार्य के लिए वहाँ के जल संसाधनों के विकास द्वारा संभव हुआ है, इस कार्य के लिए वहाँ के जल संसाधनों (RBRDA) का बड़ा सहयोग है, इस संस्था में पूरे देश को लाभान्वित किया है। उन्होंने सिंचाई की आधारभूत संरचना के विकास हेतु कई कार्यक्रम निर्धारित किए। देश में छोटे किसानों के साथ बड़े पैमाने पर व्यापारिक किसानों को सिंचाई योजना व्यवस्था से लाभान्वित कर कई हजारों टन फसलों का उत्पादन करने में सफलता प्राप्त की है।

रावत प्रेम (1997)[10] ने अपने अध्ययन में बताया हैं कि सिंचाई परियोजनाएँ में नदी के जल के उपयोग की व्यापक संभावनाएँ है। देश की अनेक नदियों में हर मौसम में पर्याप्त पानी रहता है। हिमाचल से निकलने वाली नदियाँ उ. प्र., पंजाब, हरियाणा से गुजरती है। स्वतन्त्रता के पहले गंगानहर का निर्माण किया गया था। इन्दिरा गांधी नहर एक विशाल योजना के रुप में आजादी के बाद आरम्भ की गयी। चंबल नदी के पानी के उपयोग की योजना तैयार की गयी है। सिंचाई योजनाओं के क्रियान्वयन के दौरान पानी की सुविधा देना ही पर्याप्त नहीं है। इससे संबंधित अनेक ऐसे तकनीकी सामाजिक व प्रशासकीय आयाम हैं, जिनको ध्यान में रखकर व्यवस्था को सुचारु रुप से चलाना आवश्यक है। भूमि की मेडबेदी, भूमि की सतह को तैयार करना, जल मार्ग व्यक्तिगत खेतों में पानी पहुँचाने वाली नालियों का निर्माण, अनावश्यक जल की निकासी के लिए डेमो का निर्माण, उपज विपणन हेतु सड़कों का निर्माण, लोगों को स्थापित करने की योजना पर्यावरण की रक्षा आदि आयमों को ध्यान में रखना आवश्यक है।

सिंग एस.पी. एवं जोसे बेलोका (1999)[11] ने अपने अध्ययन में स्पष्ट किया हैं कि सिंचाई सुविधा का स्थान विशेष रुप से नदी बेजिन व भू-जल की क्षमता उत्पादकता पर निर्भर करता है। उर्वरक की खपत, जल संरक्षण तकनीकी जैसे ड्रिप तथा स्प्रिंकलर सिंचाई आदि के द्वारा बढ़ाया जा सकता है। सरकार की आर्थिक सहायता के द्वारा उर्वरक की खपत को बढ़ाया जा सकता है। वित्त की व्यवस्था अर्थात् ऋण अग्रिम उर्वरक की खपत में वृद्धि करता है। इस प्रकार यह कहा जा सकता है कि सिंचाई, उन्नत किस्म के बीज ऋण अग्रिम एवं जल संरक्षण तकनीकी आदि का समन्वय कर कृषि उत्पादन में व्यापक वृद्धि सम्भव है।

उद्देश्य -

- **सिंचाई परियोजनाओं का कृषि उत्पादन पर प्रभाव का अध्ययन करना।**

परिकल्पना -

H_a : सिंचाई साधनों की उपलब्धता तथा कृषि उत्पादन वृद्धि में महत्वपूर्ण सम्बन्ध है।

शोध प्रविधि - सिंचाई सुविधाओं के विकास से उत्पादन में वृद्धि अध्ययन के लिए प्राथमिक एवं द्वितीयक संमकों का प्रयोग किया गया है। द्वितीयक समंकों के लिए कृषि कार्यालय, शोध-पत्रिकाएँ, शोध आलेख, पत्र, पत्रिका, अध्यादेश अधिनियम तथा इंटरनेट आदि से प्राप्त जानकारी का प्रयोग किया गया है।

प्राथमिक समंकों का संकलन धार जिले को समग्र मानते हुए जिले की 8 तहसीलों में सविचार निदर्षन विधि से 4 तहसीलों जिनमें - मनावर, इही, गंधवानी तथा सरदारपुर का चयन किया गया। चयनित तहसिलों में प्रत्येक से 5-5 गाँव में प्रत्येक से दैव निर्देशन विधि द्वारा 10-10 कृषकों का साक्षात्कार के लिए चयन किया गया। इस प्रकार धार जिले से कुल 200 किसानों का साक्षात्कार अनुसूची के माध्यम से सिंचाई सुविधाओं की उपलब्धता तथा कृषि उत्पादन पर प्रभाव का अध्ययन किया गया।

परिणाम व विश्लेषण - धार जिले में कृषकों के सर्वेक्षण के से प्राप्त तथ्यों का विश्लेषण निम्न प्रकार से किया गया है -

तालिका क्रमांक

क्र.	विवरण	संकेतक	परिमाण
1	आयु	87.3 प्रतिशत	25-55 वर्ष
2	सदस्य	70.7 प्रतिशत प्रतिशत परिवार में	5-8 सदस्य
3	शिक्षा	75.3 प्रतिशत प्राथमिक	1-3 सदस्य
4	कार्यशील व्यक्ति	78 प्रतिशत परिवार में	1-4 सदस्य

स्रोत - प्राथमिक सर्वेक्षण पर आधारित विश्लेषण।

तालिका क्रमांक 1 के अनुसार अध्ययन में सम्मिलित उत्तरदाताओं में 87.3 प्रतिशत युवा है। परिवार में सदस्य संख्या न्यूनतम 5 तथा अधिकतम 8 सदस्य है। परिवार में कार्यशील व्यक्ति अधिकतम 4 सदस्य। प्रत्येक परिवार में अधिकतम सदस्य प्राथमिक स्तर तक शिक्षित है।

तालिका क्रमांक - 1 - कृषि भूमि

विवरण	न्यूनतम	अधिकतम	औसत
कृषि भूमि	2	30	7.98
सिंचित	1	15	5.35
असिंचित	1	15	2.63

स्रोत - प्राथमिक सर्वेक्षण पर आधारित विश्लेषण।

अध्ययन में सम्मिलित उत्तरदाताओं की कृषि भूमि का आकार न्यूनतम 2 बीघा तथा अधिकतम 30 बीघा है। उक्त भूमि पर सिंचित तथा असिंचित भूमि का आकार समान है, जिसमें न्यूनतम 1 बीघा तथा अधिकतम 15 बीघा है। किन्तु औसत में पर्याप्त अन्तर है। सिंचित भूमि का औसत 5.35 बीघा तथा असिंचित भूमि 2.63 प्रतिशत है। अर्थात स्पष्ट है कि अध्ययन में सम्मिलित उत्तरदाताओं के पास सिंचाई के साधन पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध हैं।

तालिका क्रमांक - 2 - सिंचाई साधन

विवरण	आवृत्ति	प्रतिशत
कुआं	24	12
कुआं, नदी/नाला	58	29
तालाब	17	8.5
नहर	13	6.5
ट्यूबवेल	7	3.5
कुआं, नदी, नहर	81	40.1
कुल	**200**	**100**

स्रोत - प्राथमिक सर्वेक्षण पर आधारित विश्लेषण।

सिचांई के साधनों के रूप में कुआं 12 प्रतिशत, कुआं, नदी/नाला

29 प्रतिशत, तालाब 8.5 प्रतिशत, शासकीय नहरों के निर्माण का लाभ 6.5 प्रतिशत, ट्यूबवेल 3.5 प्रतिशत को है। कुआं, नदी तथा नहर की उपलब्धता 40.1 प्रतिशत उत्तरदाताओं के पास है।

तालिका क्रमांक – 3

कृषकों द्वारा विभिन्न मौसमों में उत्पादित फसलें

मौसमी फसलें	आवृत्ति	प्रतिशत
खरीफ फसल	39	19.5
खरीफ व रबी फसल	148	74
रबी, खरीफ व जायद फसल	13	6.5
कुल	**200**	**100**

स्त्रोत – सर्वेक्षण पर आधारित समंकों के विश्लेषण के आधार पर।

तालिका क्रमाक 2 से स्पष्ट है कि अध्ययन क्षेत्र में 19.5 प्रतिशत कृषक सिंचाई सुविधाओं की कमी व परम्परागत कृषि उपकरणों की उपलब्धता के कारण खरीफ फसलों का ही उत्पादन कर पाते है। जिसके अन्तर्गत मुख्य रूप से कपास, मिर्ची, ज्वार, बाजरा, सोयाबीन, मक्का व मूंगफली की फसले है। इसी प्रकार से 74 प्रतिशत उत्तरदाता खरीफ व रबी दोनों फसलों का उत्पादन करते है। रबी फसल में सर्वाधिक रकबे में गेहूँ, मक्का तथा चने की फसल का उत्पादन होता है। अध्ययन क्षेत्र में तीनों रबी, खरीफ एवं जायद की फसलों का उत्पादन करने वाले किसान मात्र 6.5 प्रतिशत है, जायद की फसल में खीरा, ककड़ी व विभिन्न प्रकार की हरी सब्जियों का उत्पादन किया जाता है। विश्लेषण से स्पष्ट है कि सर्वाधिक उत्तरदाता खरीफ एवं रबी दोनों मौसमों में फसलों का उत्पादन करते है। महत्वपूर्ण तथ्य यह है कि इन फसलों का उत्पादन उर्वरकों की कमी, कीट प्रकोप, मौसम का प्रभाव, संसाधनों की कमी आदि कारणों से कृषि उत्पादन औसत से भी कम होता है। जो कृषकों की मुख्य आवश्यकताओं की पूर्ति करने के लिए भी पर्याप्त नही हैं।

कृषि उत्पादन को प्रभावित करने वाले कारक – कृषि उत्पादन को प्रभावित करने वाले कारक अत्यन्त जटिल तथा अन्तसम्बन्धित है क्योंकि इन्हें किसी तार्किक एवं क्रमबद्ध क्रम में व्यवस्थित करना कठिनहै। यह प्रमाणित करना कठिन है कि उत्पादन में वृद्धि अमुक कारक के परिणाम स्वरूप है अथवा अनेक कारकों के सम्मिलित प्रभाव के कारण है। उत्पादकता को प्रभावित करने वाले कारकों को सामान्य कारक, संगठनात्मक कारक, प्राविधिक कारक तथा मानवीय कारकों के रूप में वर्गीकृत किया जा सकता है। कृषि उत्पादन को प्रभावित करने वाले कारको को दो भागों में विभाजीत किया जा सकता है भौतिक तथा अभौतिक – भौतिक कारकों के अन्तर्गत जलवायु, वर्षा, मिट्टी, तापमान आदि कारक आते हैं। जलवायु, वर्षा, मिट्टी तथा तापमान मूलभूत भौतिक कारक है जो फसल प्रारूप को प्रभावित करते है। उक्त सभी कारक कृषि उत्पादन संरचना में व्यक्तिगत या सामूहिक भूमिका निभाते है तथा इनके स्थानिक बदलावों को कभी भी कम नहीं आका जा सकता है।

अन्य कारकों में सिंचाई, बीज, उर्वरक, कृषि भूमि का आकार, फसल का प्रकार, सरकार की नीतियां तथा आयात–निर्यात, उपभोग का स्तर तथा जनसंख्या का दबाव आदि कारक है।

तालिका क्रमांक – 4 – सिंचाई साधनों का उत्पादन पर प्रभाव

क्र.	विवरण	आवृत्ति	प्रतिशत
1.	हाँ	148	74
2.	नहीं	52	26
	कुल	**200**	**100**

स्त्रोत – सर्वेक्षण पर आधारित समंकों के विश्लेषण के आधार पर।

उपरोक्त तालिका से स्पष्ट है कि कृषि उत्पादन को प्रभावित करने वाले कारक में सिंचाई के प्रभाव के सम्बन्ध में 74 प्रतिशत उत्तरदाता सिंचाई की उपलब्धता को महत्वपूर्ण मानते हैं। जबकि 26 प्रतिशत उत्तरदाता सिंचाई साधनों के साथ कृषि तकनीक, वित्त (पूँजी तथा ऋण), यंत्र तकनीक, भूमि की उर्वरता, रासायनिक उर्वरक, कीटनाषक, बीज का प्रकार, विपणन प्रणाली, साधनों की उपलब्धता, शासकीय सहयोग, कृषि प्रषिक्षण आदि का उत्पादन पर प्रभाव पड़ता है।

परिकल्पना परीक्षण – उक्त अध्ययन में कृषि उत्पादन तथा सिंचाई साधनों के मध्य सह–सम्बन्ध की जांच के लिए काई वर्ग (X^2) द्वारा परीक्षण किया गया है –

H_0: सिंचाई साधनों की उपलब्धता तथा कृषि उत्पादन वृद्धि में महत्वपूर्ण सम्बन्ध नहीं हैं।

H_a: सिंचाई साधनों की उपलब्धता तथा कृषि उत्पादन वृद्धि में महत्वपूर्ण सम्बन्ध है।

Chi-Square tests

	Value	df	Asymp. Sig.
Pearson Chi-Square a	46.08	1	.000

काई वर्ग तालिका से स्पष्ट है कि 5 प्रतिशत सार्थकत्ता स्तर (1 Degree of Freedom) पर X^2 का तालिका मूल्य (3.841) है, जबकि द2 का आंकलित मूल्य (46.08) है। सारणी मूल्य एवं आंकलित मूल्य की तुलना के आधार पर कहा जा सकता है कि दोनों गुण स्वतंत्र न होकर आपस में सम्बन्धित है। विश्लेषण में; X^2_c =46.08 तथा $\chi^2_t = 3.841$ है, आंकलित तथा सारणी मूल्यों से स्पष्ट है कि अत: हमारी शून्य परिकल्पना अस्वीकृत होती है अर्थात् '**सिंचाई साधनों की उपलब्धता तथा कृषि उत्पादन वृद्धि में महत्वपूर्ण सम्बन्ध है।**' अर्थात् सिंचाई साधनों के विकास से कृषि उत्पादन में वृद्धि होती है।

सिंचाई साधनों के उपयोग में समस्या –

1. अध्ययन में अधिकांश कुएं कच्चे है जिससे उनमें मिट्टी के गिरने की वजह से पानी आवक का स्थान बंद हो जाते है।
2. नदियों तथा तालाबों के पानी को खेतों तक लाने के साधनों की कमी है। तालाबों तथा नदियों के पानी को खेतों में सिंचाई हेतु लाने पर शासकीय प्रतिबंध है।
3. नहरों के शीर्ष पर रहने वाले किसान पानी का अत्यधिक मात्रा में अवशोषण करते हैं। जबकि नहर के छोर पर रहने वाले किसानों को पर्याप्त पानी नहीं मिल पाता हैं।
4. नहरों के माध्यम से खेतों तक पहुंचने वाली नालियों का विकास अपर्याप्त हैं। इनका विकास किसान स्वयं करते हैं, जिन पर कृषक कभी ध्यान नहीं देते हैं।
5. नहर प्रणाली में सम्पर्क स्थानों के गायब होने या इसमें टूट–फूट होने से पानी का व्यर्थ बहाव होता है, इसके साथ ही अध्ययन क्षेत्र में अधिकांश नहरें कच्ची है जिससे पानी का नहर से लगातार रिसाव होने के कारण नहरों का पानी नालों में बह जाता है।

निष्कर्ष – निष्कर्ष रूप में कहा जा सकता है कि कृषि उत्पादन वृद्धि में सिंचाई सुविधा की उपलब्धता अत्यंत महत्वपूर्ण कारक है। मध्यप्रदेश में सिंचाई का रकबा कुल बोवाई के रकबे का लगभग एक तिहाई है। वर्तमान में अधिकाधिक फसल उत्पादन की आवश्यकताओं को देखते हुए सिंचाई के

क्षेत्र को बढ़ाया जाना आवश्यक है। शासन द्वारा सिंचाई प्रबंधन के क्षेत्र में महत्वपूर्ण प्रयासों के कारण सिंचित क्षेत्रफल में उल्लेखनीय वृद्धि हुई है। साथ ही सिंचाई जल की उपयोगिता में बलराम तालाब योजना, जल संरक्षण, भूजल संवर्धन आदि योजनाएँ सहायक सिद्ध हुई है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. 'कृषि अर्थशास्त्र' (2006), साहित्य भवन पब्लिकेशन, आगरा, पृ. 145
2. मिश्रपुरी, (2012), भारतीय अर्थव्यवस्था, हिमालया पब्लिशिंग हाउस, मुम्बई। पृ. 102
3. 'कृषि अर्थशास्त्र' (2006), साहित्य भवन पब्लिकेशन, आगरा, पृ. 145
4. 'भारतीय कृषि' किताब महल प्रकाशन, इलाहाबाद, पृ. 270
5. डॉ. सुदामा सिंह, 'भारतीय अर्थव्यवस्था' राधा पब्लिकेशन नई दिल्ली। पृ. 109
6. जल संसाधन विभाग (2013-14), प्रतिवेदन, पृ 58-59
7. डॉ. प्रमीला कुमार (2015), मध्यप्रदेश हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, भोपाल। पृ 68-69
8. 'योजना' (2014), आर्थिक एवं साख्यिकी विभाग, मध्यप्रदेश शासन भोपाल।
9. रुद्रदत्त, के.पी. एम. सुन्दरम (1966) : 'भारतीय अर्थव्यवस्था', रामनगर, नई दिल्ली पृ. 13
10. अग्रवाल, एन. एल. (1977) : 'भारतीय कृषि अर्थशास्त्र' हिन्दी ग्रंथ अकादमी, विद्यालय मार्ग, तिलक नगर, जयपुर पृ. क्र.196
11. शफी मोहम्मद (1989) "Agricultural Productivity and Regional Imbalances" Concept publishing company, New delhi (1884) p. no. 25
12. Y. C. Bhardawj (1987) : "Agriculture Growth rase Analysisin mp" Agriculture Situation India, March 1987 p. 39
13. आर. एम. माथुर (1990) :'परफौरमेन्स इवैल्युएशन ऑफ इन्दिरा गाँधी कैनाल प्रोजेक्ट, स्टेज' रुड़की : वाटर रिर्सोसेज डेवलपमेण्ट ट्रेनिंग सेंटर।
14. के. एम. शर्मा एवं लीला नारायण (1994) : तमिलनाडु में लघु सिंचाई क्षेत्र में सामुदायिक कार्यो, सामुदायिक संगठन एवं सहभागिता।
15. ऐलेक्जेण्डर एम.एस. (1996) रावत पब्लिकेशन जयपुर एवं नई दिल्ली पृ. 7-8
16. रावत प्रेम (1997) : 'समाजिक एवं आर्थिक विकास' रावत पब्लिकेशन जयपुर एवं नई दिल्ली पृ. 7-8
17. Singh S.P. & Jose Belo Baleka (1999) "Analysis of Multipal Regression and Area, production on Produclivity in West maharastra "Agriculture situation in India Dec. 1999 p. 530

****

केवल कानून बना देना पर्याप्त नहीं–जागरूकता भी आवश्यक (शाजापुर जिले की उच्च शिक्षित महिलाओं में महिला–कानून संबंधी जागरूकता का एक विश्लेषणात्मक अध्ययन)

डॉ. केशव मणि शर्मा *

शोध सारांश – यूनीसेफ द्वारा कराए गए सर्वेक्षण में 54 फीसदी भारतीय महिलाओं में कुछ परिस्थितियों में पति द्वारा की गई मारपीट का उचित माना। भारत में किए गए राष्ट्रीय परिवार स्वास्थ्य सर्वेक्षण में पता लगा है कि 40 प्रतिशत भारतीय महिलाएं घरेलू हिंसा तथा 62 प्रतिशत भारतीय महिलाएं विवाह के शुरूआती दो वर्षों में शारीरिक एवं यौन हिंसा का शिकार हो रही हैं। बहुत सारे मामलों में महिलाओं को पता ही नहीं होता कि उनके साथ उपरोक्त तथा इसके अलावा भी जो घटनाएं घटित होती हैं, उनसे बचाव के कोई कानून भी हैं। दिल्ली में दिसम्बर 2012 में हुई दुष्कृत्य की घटना के बाद मध्यप्रदेश में महिलाओं के विरूद्ध अपराधों पर त्वरित कार्यवाही के लिए 1 जनवरी 2013 से महिला हैल्पलाईन 1090 की शुरूआत की गई हैं। परन्तु आश्चर्य है कि उच्च शिक्षित – 80 महिलाएं पी.एच.डी., 150 महिलाएं स्नातकोत्तर, 170 महिलाएं स्नातक एवं विधि स्नातक, इस प्रकार कुल 400 महिलाओं से लिए गए साक्षात्कार के दौरान उनके द्वारा दिए गए उत्तरों में जागरूकता का बहुत ज्यादा अभाव पाया गया। आवश्यकता इस बात की है कि महिलाओं की सुरक्षा के लिये बनाए गए कानूनों के प्रति उन्हें जानकारी दी जाए। जागरूकता पैदा करने की केवल पुलिस विभाग की ही जवाबदारी नहीं हैं। वरन इसके लिए सामाजिक दृष्टिकोण को बदलना होगा तथा पुरूष प्रधान समाज की मानसिकता को भी बदलने के प्रयास किए जाना जरूरी हैं। इस हेतु अंतर्राष्ट्रीय और स्थानीय स्तरों पर एक गैर सरकारी महिला कानून जागरूकता आयोग बने, जो कि महिला संबंधित कानूनों की जागरूकता का काम करें। प्रशासन और पुलिस जहां न्याय दिलाने में अक्षम साबित हो वहां पर आयोग न्याय प्रक्रिया में सीधा हस्तक्षेप कर सकें।

प्रस्तावना – यद्यपि मध्यप्रदेश में महिलाओं के विरूद्ध अपराधों पर त्वरित कार्यवाही के लिए 1 जनवरी 2013 से महिला हैल्पलाईन नंबर 1090 की शुरूआत की गई हैं। परन्तु आश्चर्य है कि इस टोल फ्री नंबर के प्रति उच्च शिक्षित महिलाओं में जागरूकता का कितना अभाव है, इसकी जानकारी मेरे द्वारा शाजापुर जिले में उच्च शिक्षा प्राप्त महिलाओं से साक्षात्कार करके प्राप्त की गई। जिसमें साक्षात्कार के दौरान उनके द्वारा दिये गए उत्तरों से आश्चर्यजनक परिणाम मिले। अधिकांश महिलाओं में जागरूकता का अभाव पाया गया। यद्यपि महिलाओं को न्याय दिलाने के लिये कई कानून बनाये गए हैं जिनमें से कुछ प्रमुख कानून इस प्रकार हैं :–

1. सती प्रथा निषेध अधिनियम 1829 एवं 1987
2. हिन्दू विधवा पुनर्विवाह अधिनियम 1856
3. बाल विवाह प्रतिषेध अधिनियम 1926, संशोधित 1976
4. विशेष विवाह अधिनियम 1954
5. हिन्दू विवाह अधिनियम 1955
6. भरण–पोषण का अधिकार अधिनियम 1956
7. दहेज निरोधक अधिनियम 1956
8. मातृत्व लाभ अधिनियम 1961
9. न्यूनतम मजदूरी अधिनियम 1968
10. समान वेतन अधिनियम 1968
11. वैश्यावृत्ति निवारण अधिनियम, 1986
12. स्त्री अशिष्ट निरूपण निषेध अधिनियम, 1986
13. इम्मोरल ट्रेफिक प्रिवेन्शन एक्ट, 1986
14. अश्लील चित्रण अधिनियम, 1986
15. प्रसव पूर्व परीक्षण तकनीक अधिनियम, 1994
16. घरेलू हिंसा निवारण अधिनियम, 2005
17. महिलाओं के कार्यस्थल पर लैंगिक उत्पीड़न (निवारण, प्रतिषेध एवं प्रतितोषण) अधिनियम 2013

परन्तु फिर भी इसके संबधं में जागरूकता का अभाव होने के कारण आज भी महिलाओं के प्रति अपराधों की तादाद थम नहीं रही हैं।

भारत में राष्ट्रीय अपराध अन्वेषण ब्यूरो द्वारा 30 अगस्त 2016 को महिला अपराधों के प्रति जारी आंकड़ों में कुल 3,27,394 मामले दर्ज किए, जिनमें से सर्वाधिक उत्तरप्रदेश में 35,527 हैं, इसके बाद पश्चिम बंगाल में 33,218 तथा महाराष्ट्र में 31,126 अपराध दर्ज किए गए। अर्थात आज भी कहा जा सकता है कि भारत देश में महिलाएं न तो घर में सुरक्षित हैं और न ही बाहर। इसका मुख्य कारण महिलाओं की अशिक्षा, उनके लिए बनाये गए कानूनों का उन्हें ज्ञान नहीं होना तथा कानूनों के क्रियान्वयन की जटिल प्रक्रिया के साथ ही सामाजिक संरचनाएं एवं सांस्कृतिक परिवेश तथा परम्पराएं भी जिम्मेदार हैं।

यहां तक कि 65 प्रतिशत महिलाएं पहली बार शादी के दिन पति को देखती हैं। 80 प्रतिशत महिलाओं को अस्पताल तक जाने के लिए पति से पूछना पड़ता हैं। वर्कप्लेस पर 78 प्रतिशत महिलाओं का यौन शोषण होता है और इनमें से 65.2 प्रतिशत यौन शोषण के मामलों में कंपनियां कोई एक्शन नहीं लेती हैं। 12 वीं की पढ़ाई करते ही 15.3 प्रतिशत लड़कियों की शादी कर दी जाती हैं। देश की शीर्ष कंपनियों के प्रमुख के रूप में केवल 2.7 प्रतिशत महिलाएं है, जबकि आजादी के 68 वर्ष बाद भी महिला सासदों की हिस्सेदारी केवल 11.69 प्रतिशत तक पहुंची हैं।

महिलाओं के लिए अनेक कानूनों को लागू करने के बावजूद भी उनकी जानकारी उन्हें नहीं है, इस हेतु शोधकर्ता द्वारा शाजापुर जिले में उच्च शिक्षा

* प्राध्यापक एवं विभागाध्यक्ष (वाणिज्य) बी.एस.एन. शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, शाजापुर (म.प्र.) भारत

प्राप्त 80 महिलाएं पी.एच.डी., 150 महिलाएं स्नातकोत्तर, 170 महिलाएं स्नातक एवं विधि स्नातक का साक्षात्कार लिया गया। जिनका चयन निदर्शन हेतु प्राध्यापक, विधि स्नातक शोधार्थी तथा स्नातक के रूप में किया गया हैं। निदर्शन चयन हेतु महिलाओं की वैवाहिक स्थिति एवं उम्र को भी ध्यान में रखा गया हैं। सर्वेक्षण 35 प्रतिशत विवाहित तथा 65 प्रतिशत अविवाहित महिलाओं पर आधारित हैं। 25 प्रतिशत महिलाओं की उम्र 35 से 45 वर्ष है जबकि सर्वेक्षित में से 15 प्रतिशत महिलाएं 25 से 35 वर्ष की एवं शेष 60 प्रतिशत महिलाएं 18 से 25 वर्ष तक की हैं। व्यक्तिगत लिखित साक्षात्कार सर्वेक्षण के माध्यम से महिला सुरक्षा एवं अपराधों की रोकथाम में सहायक 20 प्रश्न साधारण से पूछे गए परन्तु इन उच्च शिक्षा प्राप्त महिलाओं में उनकी सुरक्षा के लिए बनाये गए कानून के प्रति उनकी कोई रूचि नहीं पाई गयी, यहां तक कि मध्यप्रदेश महिला हैल्पलाईन के नंबर के प्रति भी 97.5 प्रतिशत महिलाएं अनभिज्ञ पाई गई। केवल 2.5 प्रतिशत महिलाएं ही सही नंबर 1090 बता पाई। कानूनों की जानकारी संबंधी किए गए सर्वेक्षण के परिणाम निम्न तालिका के माध्यम से प्रस्तुत हैं –

तालिका (देखे अन्तिम पृष्ठ पर)

तालिका का विश्लेषण – तालिका से गलत जवाब देने संबंधी प्रतिशत संबंधित प्रश्न के सामने दर्शाया गया है, जिससे स्पष्ट है कि उच्च शिक्षित महिलाएं यथा विधि स्नातक, प्राध्यापक, शोध–छात्राएं तथा स्नातक छात्राओं में महिला कानून संबंधी सामान्य जानकारी का भी नितान्त अभाव हैं। वे स्वयं की रक्षा के लिए सरकार द्वारा जारी किए गए टोल फ्री हैल्पलाईन नंबर से भी अनभिज्ञ हैं। केवल 10 प्रतिशत प्राध्यापकों को ही इसकी जानकारी हैं। 90 प्रतिशत प्राध्यापक, 100 प्रतिशत शोध छात्राएं, 100 प्रतिशत विधि स्नातक छात्राएं, 100 प्रतिशत स्नातक छात्राओं में इस जानकारी का अभाव पाया गया ह। संक्षेप में कहा जाए तो कुल सर्वेक्षित उच्च शिक्षा प्राप्त 2.5 प्रतिशत महिलाओं ने इस प्रश्न का सही जवाब दिया। सही टोल फ्री नंबर 1090 हैं।

इसी प्रकार मध्यप्रदेश महिला राज्य आयोग का पता या फोन नंबर, बेटी को घर से बाहर जाने पर रोक लगाने पर उसकी स्वतन्त्रता संबंधी कानून, महिला पर तेजाब फेंकने वाले को मिलने वाली सजा संबंधी प्रावधान, 18 वर्ष से कम आयु में लड़की की शादी करवाने वाले पंडितजी को दी जाने वाली सजा (03 माह की सजा) संबंधी प्रावधान, किसी महिला को गलत नाम से पुकारने संबंधी अपराध, सहजीवन (लिव इन रिलेशनशिप – राधिकासिंह विरूद्ध लोली सतना) संबंधी मुख्य मामले की जानकारी जैसे प्रश्नों का सही उत्तर एक भी महिला नहीं दे पाई अर्थात् 100 प्रतिशत महिलाओं ने गलत उत्तर दिया है जिससे स्पष्ट है कि महिलाओं की रक्षा के लिए बनाए गए कानूनों के संबंध में वे स्वयं शिक्षित होने के बावजूद भी जागरूक नहीं हैं। भले ही, आधुनिक टेक्नोलॉजी के युग में उनके पास इन्टरनेट तथा जीओ–4जी की सुविधाएं नि:शुल्क प्राप्त हैं।

घरेलू हिंसा अधिनियम यद्यपि दिनांक 26.10.2006 से लागू किया जा चुका है, जो कि उन महिलाओं को सुरक्षा प्रदान करता है, जो कि परिवार या कुटुम्ब के व्यक्तियों द्वारा उनके साथ की जाने वाली शारीरिक, लैंगिक, मौखिक, भावनात्मक या आर्थिक हिंसा का शिकार होती हैं। घरेलू हिंसा अधिनियम लागू होने संबंधी जानकारी के संबंध में भी सभी 100 प्रतिशत प्राध्यापक, विधि स्नातक, स्नातक महिलाएं अनभिज्ञ पाई गई जबकि 90 प्रतिशत शोधार्थी भी इस संबंध में अनभिज्ञ पाए गए। ज्ञातव्य है कि दिल्ली स्थित एक सामाजिक संस्था द्वारा कराए गए अध्ययन के अनुसार भारत में लगभग 5 करोड़ महिलाओं को अपने घर में ही हिंसा का सामना करना पड़ता है, इनमें से केवल 0.1 प्रतिशत ही हिंसा के खिलाफ रिपोर्ट लिखाने आगे आती है क्योंकि शेष को नहीं मालूम है कि उनके लिए ऐसा कोई अधिनियम भी बना हैं।'(1)

सर्वेक्षण में 85 प्रतिशत महिलाएं इस बात से अनभिज्ञ पाई गई कि घरेलू हिंसा होने पर उन्हें शिकायती आवेदन किसे देना है ?, इनमें से 90 प्रतिशत प्राध्यापक, विधि स्नातक एवं स्नातक तथा 70 प्रतिशत शोधार्थी शामिल हैं। जबकि उक्त आवेदन महिला बाल विकास अधिकारी को अथवा पुलिस थाना को देना होता हैं।

पहली पत्नी जीवित होते हुए दूसरी शादी करने पर दण्ड संबंधी प्रावधानों की जानकारी के संबंध में भी 100 प्रतिशत विधि स्नातक एवं स्नातक महिलाएं अनभिज्ञ पाई गई जबकि 80 प्रतिशत प्राध्यापक तथा 70 प्रतिशत शोधार्थियों को भी इस संबंध में कोई जानकारी नहीं पाई गई। उक्त अपराध के लिए धारा 494 के अंतर्गत 7 वर्ष की सजा का प्रावधान हैं।

महिला अभियुक्त को बयान के लिए थाने बुलाने संबंधी प्रश्न का उत्तर भी 100 प्रतिशत शोधार्थी, 90 प्रतिशत प्राध्यापक एवं विधि स्नातक तथा 70 प्रतिशत स्नातक महिलाएं सही नहीं दे पाई। जबकि ऐसे मामलों में पुलिस अधिकारी महिला के घर जाकर बयान लेगा।

(1) www.allrights.co.in महिलाएं जाने अपने अधिकार : घरेलू हिंसा अधिनियम पेज–24 नवंबर 10, 2013

महिलाओं का चिकित्सकीय परीक्षण पुरूष डॉक्टर द्वारा किए जाने संबंधी जानकारी के संबंध में भी 80 प्रतिशत प्राध्यापक, 90 प्रतिशत शोधार्थी, 70 प्रतिशत विधि स्नातक तथा 50 प्रतिशत स्नातक महिलाओं ने अपनी अनभिज्ञता जाहिर की अर्थात् औसतन 27.5 प्रतिशत महिलाएं ही इस संबंध में जागरूक पाई गई। महिला का चिकित्सकीय परीक्षण पुरूष चिकित्सक द्वारा नहीं किया जा सकता ।

शोध का उद्देश्य – उपरोक्त शोध का उद्देश्य महिलाओं को उनकी सुरक्षा के लिए बनाए गए कानूनों की जानकारी के प्रति जागरूकता पैदा करने का प्रयास करना है साथ ही उपरोक्त जागरूकता के बिना कानूनों का अस्तित्व एवं कानूनों को लागू करवाने वाली एजेंसीज के लिए भी संक्षिप्त सुझाव प्रस्तुत करना है।

शोध परिकल्पना – शोध–पत्र इस परिकल्पना पर आधारित है कि यद्यपि महिला सुरक्षा संबंधी कानून तो बहुत बना दिए गए है, परन्तु उनकी जानकारी उच्च शिक्षित महिलाओं को भी नहीं है और यदि उच्च शिक्षित महिलाओं को ही उनकी जानकारी नहीं है, तो उनका उपयोग करना उनके लिए केवल मात्र कल्पना ही साबित होगा। साथ ही महिलाओं द्वारा अपने अधिकारों को प्राप्त करने में भारतीय सामाजिक परिस्थितियां भी बाधक हैं।

शोध का क्षेत्र – शोध का क्षेत्र उच्च शिक्षा प्राप्त महिलाओं पर आधारित हैं।, उच्च शिक्षा प्राप्त महिलाओं में भी विशिष्ट महिलाओं पर ज्यादा ध्यान दिया गया हैं। साथ ही शोध में अधिकांशत: प्राथमिक समंकों का उपयोग किया गया है जहाँ आवश्यक है वहाँ द्वितीयक समंकों का उपयोग भी किया गया है। शोध–पत्र में उच्च शिक्षित महिलाओं के साथ ही स्नातक, स्नातकोत्तर तथा पी.एचडी., विधि स्नातक तथा शोधार्थी महिलाओं के संबंध में महिला कानूनों संबंधी जानकारी प्राप्त कर यथास्थान जागरूकता पैदा करने का प्रयास किया गया हैं। शोध का क्षेत्र मुख्य रूप से शाजापुर जिला के विशेष संदर्भ में ही स्थित हैं।

निष्कर्ष – यह भी स्वयं सिद्ध है कि जब आधुनिक टेक्नोलॉजी एवं इंटरनेट

सुविधायुक्त उच्च शिक्षा प्राप्त महिलाएं ही अपनी रक्षा के लिए बनाए गए कानूनों के प्रति अनभिज्ञ है, तो अशिक्षित एवं ग्रामीणों को तो इनकी जानकारी होना केवल मात्र कल्पना ही होगी।

इसके अतिरिक्त वर्ष 2015 के आखिर में न्यायालयों में दर्ज मामलों में पूर्ण परीक्षण होने वाले मामलों का प्रतिशत मात्र 12 हैं। जबकि शेष 88 प्रतिशत मामलों का परीक्षण भी पूर्ण नहीं हो पाया और परीक्षण होने वाले आंकड़ों में भी मात्र 21.7 प्रतिशत को सजा हो पाई, शेष 78.3 प्रतिशत बरी हो गए।[2] जिससे महिलाओं में न्याय के प्रति सुरक्षा और सम्मान की भावना कम हुई हैं।

सुझाव – सरकार द्वारा महिलाओं के हित में यद्यपि अनेक कानून बना दिये जाते है किन्तु उनके प्रति जागरूकता हेतु किए गए प्रयास सफल नहीं हो पाते अथवा औपचारिकता पूर्ण करके उनकी इतिश्री कर ली जाती हैं। केवल कानून बना देना ही आवश्यक नहीं है, बल्कि इस बात की भी महती आवश्यकता है कि उनके प्रति केवल महिलाओं को ही नहीं बल्कि पुरूषों को भी जागरूक करने के सार्थक प्रयास किए जाए। इस हेतु निम्नलिखित सुझाव हैं–

1. महिला अधिकारों के प्रति महिलाओं के लिए प्रशिक्षण कार्यक्रम आयोजित किए जाने चाहिए, जिनमें उनकी उपस्थिति अनिवार्य की जानी चाहिए।
2. महिलाओं से संबंधित आवश्यक कानूनों से संबंधित एक अध्याय अनिवार्य रूप से आधार पाठ्यक्रम के स्नातक प्रथम वर्ष में अथवा कक्षा 12 वीं में अनिवार्य प्रश्न पत्र के रूप में शामिल किया जाना चाहिए जिससे केवल छात्राएं ही नहीं छात्र भी इस हेतु जागरूक हो सकें एवं समाज को जागरूक कर सकें।
3. विभिन्न संगठनों यथा महिला संगठनों, एनसीसी, एनएसएस, नेहरू युवा केन्द्र, एनजीओ, राजनैतिक संगठन, एनएसयूआई, एबीवीपी, राजनैतिक पार्टियों आदि के प्रशिक्षण सत्र में भी महिला कानून जागरूकता संबंधी अनिवार्यता पर भी बल दिया जाना चाहिए।
4. जिस प्रकार 15 अगस्त अथवा 26 जनवरी, आयकर बकाया होने पर या अन्य कोई टैरिफ या कर बकाया होने पर सरकार या संबंधित कंपनी संबधित व्यक्ति को एसएमएस करती है। ठीक उसी प्रकार उक्त महिला संबंधी कानूनों के प्रति जागरूकता हेतु आधुनिक टेक्नोलॉजी का सहारा लिया जाना अधिक उपयोगी होगा।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. सिंह मीनाक्षी – महिला कानून, महेन्द्र बुक कम्पनी, गुडगांव, हरियाणा, 2013
2. श्रीवास्तव सुधारानी, श्रीवास्तव रागिनी – मानव अधिकार और महिला उत्पीड़न।
3. डॉ. वर्मा एम.एल. – घरेलू हिंसा से महिला संरक्षण अधिनियम, 2005 पेज 150 से 185
4. मध्यप्रदेश मानव अधिकार आयोग, भोपाल – महिलाओं के कानूनी अधिकार।
5. राष्ट्रीय अपराध ब्यूरो, नई दिल्ली – 30 अगस्त 2016 को जारी महिला अपराध संबंधी आंकड़े।
6. साक्षात्कार श्री घनश्याम बामनिया – उप अधीक्षक, पुलिस महिला अपराध शाखा, देवास (म.प्र.)
7. वैयक्तिक सर्वेक्षण – डॉ. केशव मणि शर्मा।
8. www.chauthiduniya.com/2012/03/rights and Law of women.
9. दैनिक भास्कर, 8 मार्च 2017, उज्जैन, महिला दिवस विशेषांक।
10. www.allrights.co.in महिलाएं जाने अपने अधिकार : घरेलू हिंसा अधिनियम पेज–24 नवंबर 10, 2013
11. एनडीटीवी इंडिया में प्रसारित सचिन जैन, सामाजिक कार्यकर्ता की रिपोर्ट।

तालिका

महिला कानून जागरूकता संबंधी उच्च शिक्षा प्राप्त महिलाओं द्वारा दिए गए उत्तर

क्र.	महिला कानून जानकारी संबंधी पूछे गए मुख्य प्रश्न	सर्वेक्षित महिलाओं का शैक्षणिक स्तर (दिया गया गलत उत्तर (प्रतिशत में))			
		प्राध्यापक	विधि स्नातक	शोधार्थी	स्नातक
1	2	3	4	5	6
1	म.प्र. में महिला अपराध की तत्काल सूचना देने हेतु हैल्पलाईन नंबर संबधी जानकारी	90%	100%	100%	100%
2	म.प्र. राज्य महिला आयोग का पता अथवा फोन नंबर संबंधी जानकारी	100%	100%	100%	100%
3	राष्ट्रीय महिला आयोग का पता या फोन नंबर संबंधी जानकारी	90%	100%	70%	100%
4	लिन-इन-रिलेशनशिप (सहजीवन) संबंधी मुख्य मामला की जानकारी	100%	100%	100%	100%
5	बेटी को घर से बाहर जाने पर रोक लगाने पर स्वतंत्रता संबंधी उपायों की जानकारी	100%	100%	100%	100%
6	घरेलू हिंसा अधिनियम लागू होने संबंधी जानकारी	100%	100%	90%	100%
7	महिला पर तेजाब फेंकने संबंधी सजा संबंधी जानकारी	100%	100%	100%	100%
8	18 वर्ष से कम आयु की लड़की का विवाह करवाने वाले पंडित को दी जाने वाली सजा संबंधी जानकारी	100%	100%	100%	100%
9	किसी महिला को गलत नाम से पुकारना अपराध है,,, संबंधी जानकारी	100%	100%	100%	100%
10	घरेलू हिंसा से प्रताड़ित महिला द्वारा शिकायत करने के स्थान संबंधी जानकारी	90%	90%	70%	90%
11	महिला अभियुक्त के बयान लेने हेतु उसे थाने पर बुलाने संबंधी जानकारी	90%	90%	70%	100%
12	पहली पत्नी जीवित होते हुए दूसरी शादी करने पर वर्णित दण्ड का प्रावधान, संबंधी जानकारी	80%	100%	70%	100%
13	महिला के चिकित्सकीय परीक्षण के समय पुरूष डॉक्टर द्वारा उसे छूना अपराध है,, संबंधी जानकारी	80%	70%	90%	50%

****

भारत के आर्थिक उदारीकरण का राष्ट्रीयकृत बैंकों की कार्यप्रणाली पर प्रभाव का मूल्यांकन

अनिता उपाध्याय *

प्रस्तावना – आर्थिक उदारीकरण किसी भी राष्ट्र के विकास का अनिवार्य अंग बन चुका है, भारतीय अर्थव्यवस्था का स्वरूप मिश्रित होने के कारण सार्वजनिक व निजी क्षेत्र की शक्तियों का उपयोग राष्ट्र हित में सम्भव था फिर भी सत्तर के दशक से ही यह महसूस किया जाने लगा कि सार्वजनिक क्षेत्र राष्ट्रीय विकास में अपेक्षित लक्ष्य प्राप्त नहीं कर पा रहे है तथा निजी क्षेत्र प्रशासनिक जटिलताओं एवं कठोर कानून व्यवस्था के कारण अपेक्षित गति से अपना योगदान नहीं कर पा रहे हैं। अस्सी के दशक के प्रारम्भिक वर्षो में सार्वजनिक क्षेत्र में निजी क्षेत्र के प्रवेश का श्री गणेश हुआ किन्तु सरकार किसी भी प्रकार के स्पष्ट वक्तव्य देने से बचती रही। इसी दशक के मध्य में तत्कालीन प्रधानमंत्री स्व. राजीव गॉधीं ने राष्ट्र को दिए अपने सम्बोधन में घोषणा की, कि सार्वजनिक क्षेत्र का विकास उन क्षेत्रों में किया जाए जहॉ पर निजी क्षेत्र अक्षम हो इसके पश्चात गरीबी उनमुलन कार्यक्रम के साथ स्थायी विकास के प्रयत्न प्रारंभ हुए। भारत सरकार द्वारा 30 जनवरी 1986 को एम.आर.टी.पी. एंव फैरा एक्ट में संशोधन किया गया। इस संसोधन के परिणामस्वरूप 23 उद्योगों को छोड़कर एम.आर.टी.पी. एंव फैरा एक्ट के लाइंसेंस से मुक्ति मिली। देश के औद्यौगिक पिछड़ापन को दूर करने के लिए भारत सरकार के द्वारा जून 1988 में औद्योगिक लाइसेंस प्रणाली में उदारीकरण को इस रूप में समावेषित किया गया कि 56 के स्थान पर केवल 26 उद्योगों के लिए लाइसेंस की अनिवार्यता को कायम रखा गया। भारत सरकार द्वारा उदारीकरण की प्रक्रिया को गति देने के लिए आर्थिक नीति में अनेक बदलाव किए गए। इन बदलाव में औद्योगिक नीति, विदेशी मुद्रा विनिमय प्रणाली, विदेशी व्यापार, आयात निर्यात नीति, मौद्रिक नीति आदि में परिवर्तन किये गये। जुलाई 1991 को सरकार ने नई औद्यौगिक नीति की घोषणा की। इस नीति के अन्तर्गत यहॉ ध्यान में रखा गया कि देश में विद्यमान इंस्पेक्टर राज प्रणाली से देश की औद्योगिक विरादरी को राहत उपलब्ध कराई जाए, जिससें देश का आर्थिक वातावरण सुदृढ़ हो सके।

इस नीति के द्वारा पहले 18 उद्योगों को छोड़कर सभी को लाइसेंस परमिट से मुक्त कर दिया गया। बाद में 13 उद्योगों को भी लाइसेंस परमिट से मुक्त कर दिया गया। लाइसेंस प्रणाली के साथ ही उदारीकृत विनिमय दर प्रबंध प्रणाली में भी बदलाव किया गया। जिससें भारतीय रिजर्व बैंकों को खुले बाजार में हस्तक्षेप करने का अधिकार प्राप्त हुआ परिणामत: विदेशी मुद्रा का भारतीय रिर्जव बैंक को विदेशी मुद्रा का 40 प्रतिशत सरकारी दर पर तथा 60 प्रतिशत खुले बाजार की दर से परिवर्तित करने की छूट प्राप्त हुई। अत: जुलाई 2009 को 13 उद्योगों में से लाईसेंस लेना 5 उद्योगों के लिए अनिवार्य कर दिया गया। इस प्रकार औद्योगिक क्षेत्र में नए उद्यमियों का प्रवेश आसान हो गया। देश में नए उद्यमियों को निवेश, व्यापार और तकनीक के क्षेत्रों में आकर्षित करने के लिए अनेक उदारपूर्ण व्यवस्थाऍ की गई भारतीय उद्योगों को अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर अधिक प्रतिस्पर्धी बनाने के लिए विदेशी निवेश को बढ़ाया गया इसका मुख्य स्त्रोत प्रत्यक्ष विदेशी निवेश (एफडीआई) तथा पोर्टपोलियों निवेश रहा। प्रत्यक्ष विदेशी निवेश के अन्तर्गत जब निवेशक अपना धन कारखाने, पूंजीगत वस्तुऍ, ऊर्जा में लगाते है, इसे एफ डी आई कहते है। यदि निवेशक अपना धन अंशों, ऋणपत्रों, बॉण्ड तथा अन्य प्रतिभूतियों में करते है, इसे पोर्टपोलियों निवेश कहा जाता है। पोर्टपोलियों निवेश की अपेक्षा प्रत्यक्ष विदेशी निवेश भारतीय अर्थव्यवस्था के लिए अधिक बेहतर होता है। क्योंकि जहॉ पोर्टपोलियों निवेशक अर्थव्यवस्था में थोड़ी सी गिरावट आने पर अपना पैसा निकाल लेते है, वही प्रत्यक्ष विदेशी निवेशक बाजार के उतार चढ़ाव को एक स्वाभाविक प्रक्रिया के रूप में लेते है।

इसी तरह 1991 से पूर्व भारतीय बैंकिग प्रणाली भी अप्रभावित रही। कहने का आशय यह है कि 1991 की आर्थिक उदारीकरण की नीति से पूर्व तक बैंकों का व्यापार संरक्षित एंव शासकीय प्रशासन की भॉति चलता रहता था। सम्पूर्ण बैंकिंग क्षेत्र अतिनियमित, अफसरशाही की कठोर प्रशासनिक प्रणाली तथा वित मंत्रालय के कठोर नियंत्रण में कार्यरत थी। बैंकों के मध्य किसी भी प्रकार की प्रतियोगिता नहीं थी बैंकों के ग्राहकों को किसी प्रकार का विकल्प उपलब्ध नही था क्योंकि पूरे बैंकिंग क्षेत्र में एक समान प्रमापित सेवाऍ प्रदान की जाती थी जिन पर लागू ब्याज दरों का निर्धारण पूर्व निश्चित एंव एक समान होता था। राष्ट्रीयकृत बैंकों को किसी भी प्रकार की बाहरी चुनौतीयों की आशंका नही थी क्योंकि व्यापार राष्ट्रीयकृत बैंक होने के कारण स्वत: मिलता रहता था। बैंको में जमाकर्ता इनमें अपने धन की सुरक्षा के कारण आश्वस्त रहते थे क्योकि उनकी जमाराशि का बीमा रहता था एवं विपरीत परिस्थितियों में सरकार द्वारा हस्तक्षेप एंव सहायता की आशा बनी रहती थी। 1991 की आर्थिक नीति में उदारीकरण के पश्चात निजी बैंकों से प्रतियोगिता की सम्भावना के कारण सरकारी बैंकों की कार्यप्रणाली में बहुत बदलाव हुए। उदारीकरण के ऐसे वातावरण में बैंको को स्वायतता मिली जिसके कारण पूरे बैंकिंग सेक्टर को Rule of the game में परिवर्तित कर दिया गया। सरकारी बैंको के स्वामित्व ढॉचे में विस्तार करके जनता की भागीदारी बढ़ाना आवश्यक हो गया। जिससे प्राइमरी बाजार एंव सेकेन्ड्री बाजार में बैंकों की पहुंच बढ़ाकर विस्तार के लिए आवश्यक संसाधन जुटाए जा सके जिसके लिए सरकार ने राष्ट्रीयकृत बैंको में अपनी पूंजी अंशदान कम करने की नीति लागू की जिससे बैंक के उच्च प्रबंध में गुणात्मक सुधार हुआ। बैंकों में Inclusive Banking के अन्तर्गत दूर खड़े व्यक्ति को भी बैंकिंग धारा में जोड़ने के लिए बिना न्यूनतम

* शोधार्थी, बरकततुल्ला विश्वविद्यालय, भोपाल (म.प्र.) भारत

शेष No Frill Accounts का प्रांरभ किया गया। समाज के सभी वर्गो को बैंकिंग प्रणाली से जोड़ने के लिए अनेकों योजनाएँ लागू की गई।

आधुनिक समय में बैंक अर्थव्यवस्था के केन्द्र बिन्दु, संचालक एंव नियंत्रक के रूप में कार्य कर रही है। देश की बैंकिंग व्यवस्था में तीव्र गति से परिवर्तन हुए इन परिवर्तनों में देश के बैंकिंग ढ़ॉचे में बदलाव, बैंक के कार्य का विस्तार एवं बैंकिंग विधि व्यवस्था में परिवर्तन सम्मिलित रहा है। बैंक ढ़ाचें में परिवर्तन करते समय इस तथ्य को ध्यान में रखा गया कि बैंकिंग सुविधाएँ देश की ग्रामीण जनसंख्या तक सरलता से पहुँच सके तथा सुविधाओं का उपभोग देश की ग्रामीण आबादी का अधिसंख्य हिस्सा कर सके। बैंकिंग सुविधाओं का ग्रामीण क्षेत्रों तक विस्तार करने के लिए भारतीय रिजर्व बैंक ने ग्रामीण क्षेत्रों तक राष्ट्रीयकृत बैंकों की शाखाएँ खोलने हेतु दिशा-निर्देश जारी किए। आर्थिक उदारीकरण ने देश की बैकिंग व्यवस्था में प्रतिर्स्पधा को बढ़ा दिया परिणामत: भारतीय बैंकों ने निगमित बैकिंग के स्थान पर खुदरा बैंकिंग क्षेत्र की ओर व्यवसाय का रूख किया। खुदरा बैंकिंग एक ऐसी व्यवस्था है जिसके अन्तर्गत बैंक समाज के समस्त वर्गो को लक्षित कर अपने उत्पाद एंव सेवाओं का विस्तार करते है। खुदरा बैकिंग बैंक व्यवसाय का महत्वपूर्ण अंग बन चुका है क्योंकि इस क्षेत्र में बैंकों का जोखिम बटा रहता है, जोखिम टुकड़े:टुकड़े में होने के कारण बैंकों के ऋण ज्यादा सुरक्षित रहते है ।

देश की समस्त बैंको द्वारा खुदरा ऋण एंव सेवाएँ जैसे आवास ऋण, उपभोक्ता ऋण, वाहन ऋण, शैक्षणिक ऋण, स्वर्ण ऋण, डेबिट एंव क्रेडिट कार्ड, पेंशन पर ऋण, बीमा कारोबार के लिए ग्राहकों को जोड़ना, बीमा प्रीमीयम का भुगतान, शेयर बॉड डिबेन्चर, म्युचुअल फण्ड का डिमेट खाते में जमा करवाना, आयकर रिर्टन का जमा एंव भुगतान विभिन्न शैक्षणिक संस्थाओं संबंधी कार्य, बाहरी चैकों का नि: शुल्क संग्रहण, इत्यादि कार्य किए जाते है।

उद्देश्य –

प्रस्तुत शोध कार्य के उद्देश्य निम्नांकित है –

1. राष्ट्रीयकृत बैकों के कार्यप्रणाली पर आर्थिक उदारीकरण के प्रभावों का अध्ययन करना।
2. आर्थिक उदारीकरण से राष्ट्रीयकृत बैकों की कार्यक्षमता में होने वाले परिवर्तनों का अध्ययन करना।
3. आर्थिक उदारीकरण से राष्ट्रीयकृत बैकों के ग्राहकों को उपलब्ध सेवाओं में गुणात्मक सुधार का अध्ययन करना।

शोध प्रविधि – प्रस्तुत शोध पूर्णत: प्राथमिक तथा द्वितीय समंकों पर आधारित है, प्राथमिक समंकों के संकलन के लिए भारतीय स्टेट बैंक तथा पंजाब नेशनल बैंक के कार्मिक विभाग को तथा ग्राहकों को सर्वेक्षण हेतु चुना गया। द्वितीय समंकों का संकलन बैंकों की वार्षिक प्रतिवेदन, पत्र-पत्रिकाओं, इन्टरनेट इत्यादि के द्वारा किया गया है।

उदारीकरण से पश्चात की स्थिति जानने के लिए भारतीय स्टेट बैंक तथा पंजाब नेशनल बैंक के हितग्रहियों से बैंक की कार्यप्रणाली का अध्ययन –

तालिका क्रमांक 1 (देख आगे पृष्ठ पर)

तालिका के माध्यम से पता चल रहा है कि सर्वेक्षित हितग्रहियों में से वर्ष 1980 -1985 के मध्य बैंक व्यवहार करने वाले बैंक के 4.5 प्रतिशत हितग्राही थे वही वर्ष 2005 से वर्ष 2010 तक बैक व्यवहार करने वाले 32.5 प्रतिशत हितग्राही है। अत: उदारीकरण से पूर्व बैंक व्यवहार करने वाले हितग्राहीयों की संख्या कम है। इसका कारण बैंक की जटिल प्रक्रिया है क्योंकि बैंक में खाता खोलने के लिए अत्याधिक दस्तावेज के कारण प्रेत्यक व्यक्ति बैंक मे खाता नहीं खोल पाता था लेकिन उदारीकरण के पश्चात बैंक ने अपनी कार्यप्रणाली को सरल बनाया तथा दस्तावेज में कमी करते हुए प्रेत्यक व्यक्ति कों बैंक से जोड़ने का प्रयास किया। वर्तमान समय में बैंक में खाता खोलना बहुत आसान हो गया है। इसलिए अत्यधिक हितग्राही वर्तमान समय में प्रेत्यक लेनदेन के लिए बैंक से जुड़ गये है।

तालिका क्रमांक 2 (देखे आगे पृष्ठ पर)

तालिका के आधार पर चयनित हितग्राहियों से पता चला कि बैंक व्यवहार में वर्तमान और पूर्व की स्थिति में बहुत अधिक अंतर है। कि 79 प्रतिशत सर्वेक्षित हितग्रहियों ने कहा कि राष्ट्रीयकृत बैंकों में लेन-देन की प्रक्रिया में बहुत अधिक परिवर्तन आया है। जहाँ पहले प्रेत्यक कार्य परम्परागत तरीक से होता था वही वर्तमान में प्रत्येक कार्य कम्प्यूटर पद्धति से किया जाता है। यहाँ सुविधा बैंक के द्वारा दी जाने के कारण हितग्रहियों को वर्तमान बैंक व्यवहार सुविधाजनक लगता है। 21 प्रतिशत हितग्राहियों को आधुनिक बैंकिंग पर कम भरोसा है।

तालिका क्रमांक 3 (देखे आगे पृष्ठ पर)

तालिका से स्पष्ट हो रहा है कि 81 प्रतिशत कार्मिक बैंक की कार्यप्रणाली को अपने अनुकूल मानते है। जिसका मुख्य कारण आधुनिक बैंकिग है क्योंकि आज बैंक में प्रत्येक कार्य कम्प्यूटर के द्वारा होता है अत्यधिक कार्य का दबाव कम होता है । पहले जहाँ प्रत्येक कार्य के लिए खाता बही का उपयोग किया जाता था जिसमें कार्य करने में समय अधिक लगता था लेकिन कम्प्यूटर ने बैंक कार्यप्रणाली को सरल बना दिया है। 19 प्रतिशत कार्मिको ने नकरात्मक जबाव देते बताया कि बैंक की कार्यप्रणाली उनके अनुकूल नहीं है। इसका मुख्य कारण आधुनिक बैंकिंग है, वर्तमान में प्रेत्यक कार्य कम्प्यूटर में होता है। जिसकी वजह से कम्प्यूटर डाटा में गड़बड़ी होने की संभावना भी होती है दूसरा, बैंक में कनेक्टविटी नहीं होने की स्थिति में बैंक व्यवहार प्रभावित होता है। जिससे ग्राहक तथा स्टाफ दोनों को परेशानी होती है।

तालिका क्रमांक 4 (देखे आगे पृष्ठ पर)

सर्वेक्षित हितग्राहियों में से 89.5 प्रतिशत सूचना तकनीकी के उपयोग के कारण अपनी कार्यक्षमता को बढ़ा हुआ महसूस करते है। प्राप्त आंकडो के आधार पर कहा जा सकता है कि इंटरनेट बैंकिंग, मोबाईल बैंकिंग के कारण प्रत्येक बैंकिंग व्यवहार आसान हो गया है। इसमें समय की बचत होती है 10 प्रतिशत सर्वेक्षित हितग्राहियों सूचना तकनीकी के उपयोग से अपनी कार्यक्षमता को बढ़ा हुआ महसूस नहीं करते है क्योंकि बैंक धोखाधड़ी के मामले बहुत अधिक होने के कारण सूचना तकनीकी पर विश्वास नहीं रख पाते है।

निष्कर्ष – उदारीकरण के पश्चात राष्ट्रीयकृत बैंकों की कार्यप्रणाली में भी अत्यधिक सुधार आया है इसमें ग्राहक संतुष्ठि का विशेष ध्यान रखा गया तथा ग्राहकों को राष्ट्रीयकृत बैंकों द्वारा विभिन्न प्रकार की सुविधा उपलब्ध कराई गई है। लोन प्रक्रिया को भी सरल कर दिया गया है। उदारीकरण के पश्चात् बैंक ग्राहकों में बचत की प्रवृत्ति को बढ़ाने में सफल हो रहा है। बैंक द्वारा खाता खोलना प्रक्रिया आसन कर दी गई है, बैंक ग्राहकों को अत्यधिक सुविधा खातों पर दे रहा है जैसे चैक सुविधा, इन्टरनेट बैंकिंग, मोबाइल बैंकिंग, बीमा सुविधा, एटीएम कार्ड, तथा अधिक ब्याज इत्यादि सुविधाओं के कारण बैंक अधिक ग्राहकों को अपने से जोड़ने में सफल हो रहा है

सुझाव –

1. ग्रामीण क्षेत्र तथा निम्न वर्ग समुदाय अधिकांशत: उपभोक्ता बैंकिंग व्यवहार एवं कार्यप्रणाली से अनभिज्ञ रहते हैं, इससे वे बैंक के साथ लेन–देन करने में झिझकते हैं। इस वजह से ना केवल उन्हें बल्कि बैंक के अधिकारियों व कर्मचारियों को भी अधिक कठिनाइयां आती है फलस्वरूप समय व धन दोनो व्यय होता है। अत: ग्रामीण उपभोक्ताओं को बैंकिंग व्यवहार से परिचित कराने के लिए बैंक को एक ऐसे व्यक्ति की नियुक्ति करना चाहिए जो उपभोक्ताओं को प्रत्येक बैंकिंग व्यवहार की जानकारी दें।
2. बैंक को अत्यधिक शाखाऐं ग्रामीण क्षेत्रों में खोलना चाहिए जिससे ग्रामीण वर्ग अत्यधिक संख्या में जुड़ सके। बैंक को अपने कर्मचारियों व अधिकारियों का प्रशिक्षण भी ग्रामीण परिवेश के अनुसार ही देना चाहिए ताकि ग्रामीण उपभोक्ता तथा कर्मचायिों व अधिकारियों के साथ सहज ढंग से व्यवहार कर सकें। –
3. जनता द्वारा अधिक से अधिक निक्षेप प्राप्त करने हेतु विशेष रणनीति एवं ग्राहकों से जमा प्राप्त हेतु आकर्षक जमा योजनाएँ बनाना होगा। बैंक द्वारा आधुनिक बैंकिंग पर लिया जाने वाला शुल्क कम होना चाहिए।
4. न्यायालयों द्वारा अपनायी जाने वाली लम्बी कानूनी प्रक्रियाओं एवं ब्याज दरों में रियायत आदि निर्णयों से बैंक की ऋण वसूली प्रभावित होती है एवं राजस्व की हानि होती है अत: सरकार द्वारा इन प्रक्रियाओं को बैंक के हित में परिवर्तित करना चाहिए।
5. बैंकों के मध्य ऋण वितरण क्षेत्र आवंटित कर देना चाहिए। आधार कार्ड से सभी सरकारी योजनाओं को अनिवार्य रूप से संबद्ध किया जाना चाहिए।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. तूर एन.एस., भारतीय बैंकिंग विधि, परम्परा एवं नये आयाम, तर्काधार व व्यवहारिक समस्याऐ।
2. इण्डियन इंस्टूयूट ऑफ बैंकिंग ऑफ फायनेंस, बैंक सामान्य प्रबंध तक्षमन पब्लिशर्स प्रा.लि. नई दिल्ली 2005
3. Efficiency and Effectieness of Bank Management in a Liberlised Environment, M.Basheer Ahmed and Uma Chandrasekaran Anmol Publication Pvt. New Delhi 2003
4. Joshi, Vasant, Joshi, vinay, managing Indian Banks, the Challegnes ahead sage Publication, New Delhi,2009
5. Gupta, C.B., Principles of management for Bankers, Sultan Chand & Sons, New Delhi, 1998
6. Roy, D.Ghosh, managing People in Branch Banking B.D.P. Publishers, Calcutta, 1999
7. Everlatest in Baning, State Bank of India, officers Assoication, Diwakar Printers, Bhopal, 2006
8. Roy Abhik, the Eveolution of the State Bank of India, Volume-IV, Penguin Group, New Delhi, 2009

तालिका क्रमांक 1

सर्वेक्षित हितग्रहियों का बैंक व्यवहार वर्ष के आधार पर वर्गीकरण

क्र.	बैंक व्यवहार वर्ष	भारतीय स्टेट बैंक के हितग्राही	पंजाब नेशनल बैंक के हितग्राही	कुल संख्या	प्रतिशत
1	1980–85	04	05	09	4.5
2	1985–90	09	10	19	9.5
3	1990–95	13	12	25	12.5
4	1995–2000	15	12	27	13.5
5	2000–2005	12	10	22	11
6	2005–2010	15	18	33	16.5
7	2010–2015	35	30	65	32.5
	योग	**100**	**100**	**200**	**100**

स्त्रोत – सर्वेक्षण से प्राप्त आकड़े।

तालिका क्रमांक 2

बैंक व्यवहार का उदारीकरण से पूर्व एवं पश्चात की स्थिति के आधार पर वर्गीकरण

क्र.	बैंक व्यवहार में वर्तमान एवं पूर्व की स्थिति	भारतीय स्टेट बैंक	पंजाब नेशनल बैंक	कुल संख्या	प्रतिशत
1	उदारीकरण से पूर्व की स्थिति	22	20	42	21
2	उदारीकरण के पश्चात की स्थिति	78	80	158	79
	योग	**100**	**100**	**200**	**100**

स्त्रोत – सर्वेक्षण से प्राप्त आकड़े।

तालिका क्रमांक 3

सर्वेक्षित कार्मिको का बैंक की कार्यप्रणाली के आधार पर प्राप्त मत

क्र.	बैंक की कार्यप्रणाली	भारतीय स्टेट बैंक	पंजाब नेशनल बैंक	कुल संख्या	प्रतिशत
1	अनुकूल है	84	78	162	81
2	अनुकूल नहीं है	16	22	38	19
		100	100	200	100

स्त्रोत – सर्वेक्षण से प्राप्त आकड़े ।

तालिका क्रमांक 4

तकनीकी के कारण कार्य क्षमता में बढ़ोत्तरी पर प्राप्त मत

क्र	तकनीकी का उपयोग	भारतीय स्टेट बैंक के हितग्राही	पंजाब नेशनल बैंक के हितग्राही	कुल संख्या	प्रतिशत
1	कार्यक्षमता बढ़ाता	90	89	179	89.5
2	कार्यक्षमता नहीं बढ़ाता	10	11	21	10.5
	कुल	100	100	200	100

स्त्रोत – सर्वेक्षण से प्राप्त आकड़े ।

****

कृषि विकास एवं ग्रामीण विकास में सहकारिता की भूमिका (जिला सहकारी कृषि और ग्रामीण विकास बैंक शाजापुर म.प्र.के संदर्भ में)

डॉ. संजय बाणकर *

शोध सारांश – कृषि भारतीय अर्थव्यवस्था का आधार स्तम्भ है। भारत सदैव से एक कृषि प्रधान देश रहा है। एवं मध्यप्रदेश को साधन सम्पन्न राज्य कहा जाता है क्योंकि प्राकृतिक सौन्दर्य, ऐतिहासिक धरोहरें एवं मानवीय व अन्य संसाधनों का यहां बाहुल्य है। आर्थिक विकास के विभिन्न साधनों में सहकारिता की भूमिका महत्वपूर्ण होती है । साथ मिलकर काम करने की भावना ही सहकारिता होती है। भारत के ग्रामीण क्षेत्रों में तो सहकारिता की भावना कूट-कूट कर भरी हुई है । कृषि भी एक ऐसा क्षेत्र है, जहां सहकारिता के माध्यम से कृषि का विकास हो सके। कृषकों की उन्नती एवं प्रगति इस बात पर निर्भर करती है कि वह अच्छे बीजों खादों दवाइयों का उपयोग करें। कृषकों को उसकी आय बढ़ाने के लिए यह आवश्यक होगा कि उसे पर्याप्त मात्रा में सुविधानुसार, उचित ब्याज पर अल्पकालिन, मध्यकालिन, दीर्घकालीन, ऋण की आवश्यकता उपलब्ध हो जाए।

प्रस्तावना – भारत की अर्थव्यवस्था के विकास का आधार उसका कृषि क्षेत्र है। ग्रामीण क्षेत्रों की उन्नति एवं औद्योगिक अर्थव्यवस्था का निर्माण कृषि विकास से ही सम्भव हैं। आर्थिक समृद्धि का मापक व देश की उन्नति का सूचकांक कृषि विकास ही है। भारत की लगभग दो तिहाई जनसंख्या गावों में निवास करती है। ग्रामीण क्षेत्रों में गरीबी एवं पिछड़ेपन का बाहुल्य है, इसकें मुख्य कारण पुराने ढंग की खेती, बेरोजगारी, ग्रामीण ऋण ग्रस्ता इत्यादि है। देश के बड़े भाग में बहुत बड़ा वर्ग सीमान्त कृषक, खेती हर मजदूर, शिल्पी, कारीगर, हरिजन, तथा आदिवासी वर्ग के रूप में निवास करता हैं। कृषि क्षेत्र का विकास कृषकों को पर्याप्त साख सुविधाएं प्रदान किए बिना सम्भव नहीं हैं। कृषकों का कृषि कि आधुनिक विधियां, रसायनिक खाद, उन्नत किस्म के बीज, सिंचाई की सुविधाएँ, कृषि उपकरण एवं विपणन सुविधाओं की आवश्यकता होती है। उपरोक्त आवश्यकताएँ कृषि की प्रारम्भिक आवश्यकताएँ है। समय-समय पर कृषकों को यदि पर्याप्त वित्त कि सुविधाएँ प्रदान की जाए तो कृषक उक्त साधनो का उपयोग करके कृषि उत्पादन बढ़ाने में सहयोग दे सकते है। कृषक का उत्पादन बढ़ाने से देश के उत्पादन एवं आय में वृद्धि हो सकती है।

15 अगस्त 1947 को भारत आजाद हुआ स्वतंत्रता के बाद कृषकों को साहूकारों एवं गैर संस्थागत संस्थाओं के शोषण से बचाने के लिए सरकार द्वारा स्वयं प्रयास किए गए। जिसमें सहकारी साख व्यवस्था को प्रजातांत्रिक स्वरूप देकर सर्वाधिक महत्व दिया गया।

कृषि विकास से आशय एवं आवश्यकता – कृषि विकास से तात्पर्य कृषि के क्षेत्र में उत्पादकता के उच्च स्तर को प्राप्त करने से होता है और यह लक्ष्य तकनीकी स्तर पर निर्भर करता है। कृषि भारतीय अर्थव्यवस्था का आधार स्तम्भ है,भारत सदैव से एक कृषि प्रधान देश रहा है। वर्तमान परिस्थितियों में यह कहना अतिश्योक्ति नहीं होगी कि कृषक की सम्पन्नता ही भारत की सम्पन्नता है।

मध्यप्रदेश को साधन सम्पन्न राज्य कहा जाता है क्योंकि प्राकृतिक सौन्दर्य, ऐतिहासिक धरोहरें एवं मानवीय व अन्य संसाधनों का यहां बाहुल्य है, यहाँ भी कृषि विकास की असीम सम्भावनाए हैं।

ग्रामीण विकास में सहकारिता की भूमिका – आर्थिक विकास के विभिन्न साधनों में सहकारिता की भूमिका महत्वपूर्ण होती है । साथ मिलकर काम करने की भावना ही सहकारिता होती है। भारत के ग्रामीण क्षेत्रों में तो सहकारिता की भावना कूट-कूट कर भरी हुई है । साथ-साथ काम करने से जहाँ एक ओर काम बंट जाता है, तो इसका प्रभाव उत्पादन पर भी पड़ता है सहकारिता एक ऐसा संगठन है, जिसके अंतर्गत लोग स्वेच्छा से मिलकर एवं संगठित होकर कार्य करते हैं । इसमें सबको बराबर समझा जाता है । सभी को समान अवसर व समान अधिकार प्राप्त होते है।

जिला सहकारी कृषि और ग्रामीण विकास बैंक का परिचय – सहकारी समितियों के पंजीयक अधिकारियों के सम्मेलन 1926 कृषि रॉयल कमीशन 1928 एवं केन्द्रीय बैंकिंग जाँच समिति के सुझावों के अनुसार देश में जिला सहकारी कृषि और ग्रामीण विकास बैंकों की स्थापना की गई ।

बैंक कृषकों की भूमि के अतिरिक्त अन्य स्थायी सम्पत्ति जैसे भवन बंधक रखकर भी ऋण प्रदान करती है । वर्तमान में ये बैंक कृषकों द्वारा क्रय किए गए यंत्र जैसे ट्रेक्टर, थ्रेशर, पावर, टिलर, आदि को बंधक रखकर भी ऋण स्वीकृत करते हैं । जिला सहकारी कृषि और ग्रामीण विकास बैंक का ढांचा सभी राज्यों में समान नहीं है। कुछ राज्यों में बैंक का ढांचा संघीय स्तर का है। राज्य शासन द्वारा 12 मार्च, 1963 को कृषकों को दीर्घकालीन ऋण सम्बन्धी सुविधाएँ उपलबध कराने हेतु तृतीय पंचवर्षीय योजना के अन्तर्गत मध्यप्रदेश शासन द्वारा इस बैंक की स्थापना शाजापुर जिले में हुई ।

शाजापुर जिला सहकारी कृषि और ग्रामीण विकास बैंक की वित्तीय

(तालिका देखे आगे पृष्ठ पर)

स्थिति – विगत वर्षो में बैंक व्यवसाय प्रभावित होकर कालातीत ऋणों की वसूली न होने से बैंक हानि में है एवं वर्ष 2005-06 में रूपये 30.46 लाख की हानि हुई पर 2009-10 में रूपये 777.71 लाख एवं वर्ष 2014-15 में रूपये 134.32 लाख की हानि हुई। जो विगत वर्षो की अपेक्षा ज्यादा है । वर्ष 2005-06 अधिकोष की संचित हानि 803.51 लाख थी। जो बढ़कर वर्ष 2009-10 में 2014.55 लाख एवं वर्ष 2014-15 में रूपये 2513.30 लाख रही है

* अतिथि विद्वान (वाणिज्य) शासकीय स्नातकोत्तर भेल महाविद्यालय, भोपाल (म.प्र.) भारत

जिसमें डूबत एवं संदिग्ध ऋण रू. 286.00 लाख व कालातीत ब्याज राशि का प्रावधान रू. 1099.53 लाख सम्मिलित है । केन्द्र शासन की ऋण राहत योजना 2010 एवं राज्य बैंक नाबार्ड के निर्देशानुसार वर्ष में एन.पी.ए. के अन्तर्गत कालातीत मूल 112.76 लाख एवं कालातीत ब्याज रू. 712.50 लाख आवश्यक होने से प्रावधान किया गया है । बैंक द्वारा व्यवसाय में वृद्धि करने हेतु तथा एन.पी.ए. अंतर्गत वर्गीकृत कालातीत ऋणों की अधिकतम वसूली कर बैंक को सक्षमता की श्रेणी में लाने हेतु प्रयास किए जा रहे हैं ।

वर्ष 2014–15 मे धारा 23 के अन्तर्गत 111 प्रकरण राशि 14.48 लाख के है। इसमें से दिंनाक 30.06.2015 तक 76 प्रकरण में राशि 9.92 लाख वसुली की जा चुकि है। शेष प्रकरणों पर कार्यवाही जारी है। धारा 26 में कुल उपलब्ध प्रकरण 3644 एवं राशि 1497.39 लाख में से 298 प्रकरण में से राशि 57.55 लाख की वसुली हुई। वर्ष 2016–17 में अनुमानित आय राशि 245 लाख होकर राशि 287 लाख का व्यय संभावित हैं। तद अनुसार राशि 42 लाख की हानि होना संभावित हैं। वर्ष 2014–15 में अंकेक्षण टीप होने की कार्यवाही जारी है एवं बैंक द्वारा कालातीत ऋण की वसुली हेतु राज्य विकास बैंक के निर्देशानुसार कार्यवाही की जा रही है।

बड़े बकायादारो से ऋण वसूली के विशेष प्रयास किए जा रहे है राज्य विकास बैंक के पत्र 4118,दिनांक 04.11.2011 के अनुसार 31 मार्च 11 पर एन.पी.ए. की श्रेणी में वर्गीकृत 31 मार्च 2015 पर भी कालातीत है ऐसे सदस्य लोक अदालत के माध्यम से समझौता कर ब्याज में नियमानुसार राहत प्राप्त कर सकते है।

कृषकों के लिए कृषि ऋण का महत्व – जिले की अधिकतम कृषि वर्षा पर आधारित है और वर्षा की अनिश्चितता के चलते ही किसान भी अपनी उपज के प्रति पूर्ण रूप से विश्वस्त नहीं होते है। कृषकों को अपना परिवार तो चलाना पड़ता ही है साथ ही कृषि से संबंधित कार्य भी उसे करने होते हैं और वर्षा न होने पर या कम होने पर उसके द्वारा लगाया गया बीज, खाद, दवाईया, सभी बेकार जाते है तथा उसे उसके द्वारा लगाई गई लागत भी प्राप्त नहीं हो पाती है। ऐसी परिस्थितियों में कृषक के सामने अनेक समस्याऐं उत्पन्न हो जाती है। जिसका समाधान करने में कृषक असफल रहता है और उपज ठीक न होने पर वह अपने उद्देश्यों, अपनी आवश्यकताओं को पूर्ण नहीं कर सकता है। कृषि वित्त कृषकों को उन्नति के मार्ग पर चलने के लिए प्रेरित करता है। कृषि की मुख्य आय का स्त्रोत उसकी कृषि उपज ही होती है। कृषकों की उन्नती एवं प्रगति इस बात पर निर्भर करती है कि वह अच्छे बीजों खादों दवाइयों का उपयोग करें। पर्याप्त मात्रा में सिंचाई के साधन पैदा करे कृषक अपनी उपज के माध्यम से उपरोक्त सभी साधनों का उपयोग नहीं कर सकता क्योंकि उपज का एक बडा भाग उसे अपने परिवार पर व्यय करना पडता है और ऐसी स्थिति में कृषक की उन्नति की आशा करना मात्र कल्पना होगी कृषकों को उसकी आय बढाने के लिए यह आवश्यक होगा कि उसे पर्याप्त मात्रा में सुविधानुसार, उचित ब्याज पर अल्पकालिन, मध्यकालिन, दीर्घकालीन, ऋण की आवश्यकता उपलब्ध हो जाए।

जिले में जिला सहकारी कृषि और ग्रामीण विकास बैंकों में विद्यमान समस्याएं निम्न हैं – अत्यधिक कागजी कार्यवाही, ऋण देने में विलम्ब, कृषि विभाग द्वारा अपूर्ण आवेदन प्राप्त करना, राजस्व रिकार्ड समस्या, राजनैतिक प्रभाव सम्बधि समस्या, कृषकों की अशिक्षा एवं रूढ़िवादिता, ऋण वसूली में कठोरता, भ्रष्टाचार बैंक की विभिन्न योजनाओं की जानकारी न होना, आदि ।

सुझाव – शाजापुर जिले में जिला सहकारी कृषि और ग्रामीण विकास बैंकों में विद्यमान समस्याओं, कठिनाईयों एवं बाधाओं के परिप्रेक्ष्य में उनके शीघ्र एवं स्वस्थ विकास के लिए सुझाव दिए जा रहे हैं । जिसके परिणाम स्वरूप उन्हे उचित दिशा एवं गति मिल सके और वे जिले की कृषि वित्त की पूर्ति में महत्वपूर्ण एवं प्रभावी भूमिका का निर्वाह कर सकेंगे ।

- जिला सहकारी कृषि और ग्रामीण विकास बैंक ऋण स्वीकृत करने के पहले कृषक की भूमि का मूल्यांकन करता है ,इस मूल्यांकन की विधि में सुधार होना चाहिए । इसलिए कि भूमि का मूल्य अन्य अनेक बातों के साथ साथ उसकी स्थिति एवं उत्पादकता पर निर्भर करता है ।
- जिला सहकारी कृषि और ग्रामीण विकास बैंक द्वारा अपनी कठिन ऋण वितरण प्रणाली को सरल बनाना चाहिए, कठिन विधि अशिक्षित कृषकों को और भी कठिन एवं जटिल लगने लगती है, ये अशिक्षित कृषक परेशान होकर ऋण लेने का विचार त्याग देते हैं और वे ऋण लेने हेतु महाजन या जमींदार के पास जाकर उच्च दर से ऋण लेता है, क्योंकि उनके ऋण देने की विधि बहुत सरल होती है ।
- शाजापुर जिले में कृषि पर कार्यशील जनसंख्या का बहुत दबाव है क्योंकि ग्रामीण क्षेत्रों में रोजगार के अवसरों की बहुत कमी है । जिला सहकारी कृषि और ग्रामीण विकास बैंक को ऐसी योजनाओं का भी वित्त पोषण करना चाहिए, जिससे रोजगार के नवीन अवसरों का सृजन हो सके।
- किश्तों की नियमित रूप से वसूली पर ध्यान रखा जावे किश्तों की वसूली विनियोग के अनुसार कम अधिक रखी जानी चाहिए बैंक की उपविधियों में यह संशोधन करने का प्रस्ताव रखना चाहिए कि फसलों के नष्ट होने, अतिवृष्टि या अनावृष्टि अथवा अन्य प्राकृतिक प्रकोप के समय किश्तों के भुगतान के समय में भी वृद्धि की जा सकती है ।
- वर्तमान में बैंक की शाखाएँ कार्यरत हैं, जो गाँव की बैंक शाखाओं से दूर हैं। उस स्थान पर, बैंक को अपनी शाखा स्थापित करने का प्रयत्न करना चाहिए अत: देशभर में प्राथमिक जिला सहकारी कृषि और ग्रामीण विकास बैंक का एक जाल बिछा होना चाहिए।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. अग्रवाल, डॉ. अमित (2007) 'भारत में ग्रामीण विकास', विवेक प्रकाशन, जवाहर नगर, नई दिल्ली ।
2. अग्रवाल डॉ. जी.के. एवं डॉ. एस.एस. पाण्डेय, (2001) 'ग्रामीण समाज शास्त्र', साहित्य भवन पब्लिशर्स, आगरा ।
3. Batra, Vinod - (1986) "Development Banking in India", Print well Publishing House, Jaipur.
4. Agrawal - A.N, (1996) "Indian Economics Problem of Development and Planning", New Delhi
5. Agrawal A.N, (1985) "Indian Banking Vikas" Publishing House , New Delhi.
6. **आर्टिकल्स,** 'ग्रामीण क्षेत्र का समाज – आर्थिक सर्वेक्षण' सामाजिक सहयोग, अंक 68 जलीं, Dec – 2008
7. गौड, श्यामलाल 'ग्रामीण विकास में बैंकों की भूमिका' बैंकिंग व्यवसायिक जर्नल, अंक 68 जलीं, Dec – 2008
8. सिंहल, डॉ. रामप्रकाश 'क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक स्थिति एवं संभावना', बैंकिंग चिन्तन – अनुचिन्तन अंक 1 जलीं, Dec 2007 प्रतिवेदन एवं पत्र–पत्रिकायें।

9. वार्षिक प्रतिवेदन – जिला सहकारी कृषि एवं ग्रामीण विकास बैंक,शाजापुर।
10. सहकारी समाचार – म.प्र. राज्य संघ, भोपाल।
11. मध्यप्रदेश संदेश पत्रिका – मध्यप्रदेश शासन।
12. नई दुनिया, दैनिक भास्कर ,पत्रिका – भोपाल, ईन्दौर।
13. कृषक जगत, कृषक दूत – भोपाल।

Website -
1. wwww.google.co.in
2. wwww.wikipedia.com

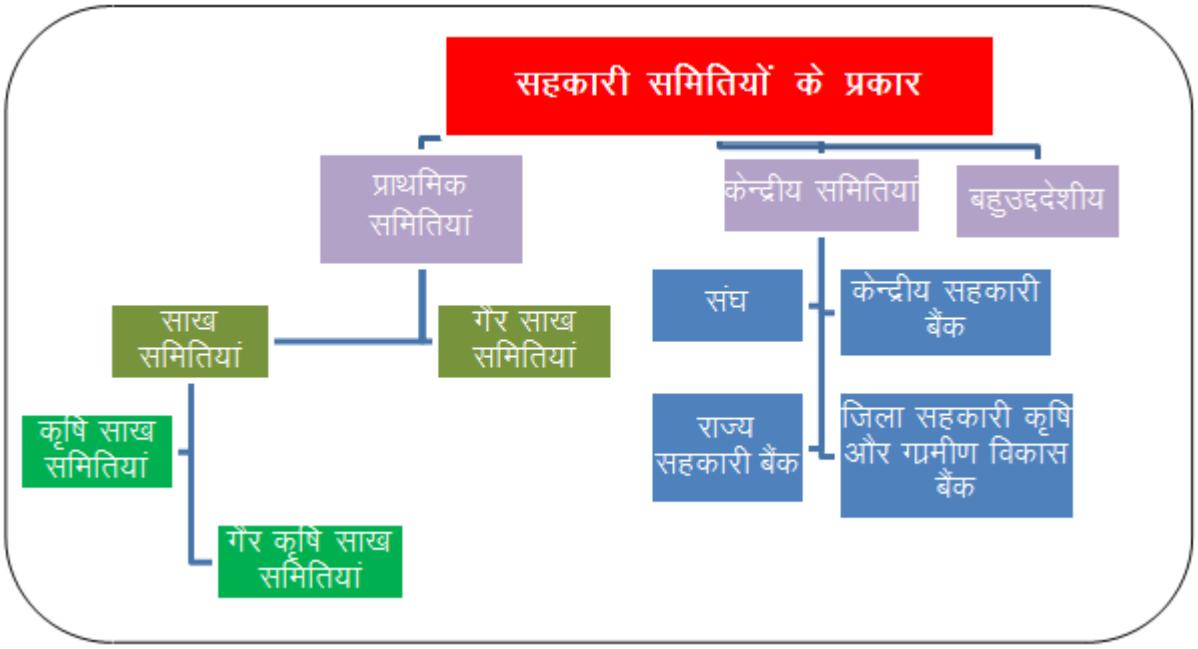

शाजापुर जिला सहकारी कृषि और ग्रामीण विकास बैंक की वित्तीय स्थिति

क्र.	विवरण	2006	2007	2008	2009	2010	2011	2012	2013	2014	2015
1	अंशपूँजी (लाख में)	202.81	218.36	218.94	237.84	227.54	227.97	205.54	188.35	178.36	178.36
2	निधियाँ एवं कोष (लाख में)	294.78	297.46	490.80	490.85	1316.35	1317.05	1318.06	1319.51	1319.54	1402.29
3	शीर्ष बैंक का शेष ऋण (लाख में)	2347.31	2769.52	2894.52	2813.92	2689.00	2232.22	2251.97	2167.60	2107.82	2107.82
4	निक्षेप सदस्य (लाख में)	299.97	273.47	286.57	226.61	149.74	104.92	89.12	77.88	38.91	26.23
5	कार्यशील पूँजी (लाख में)	2936.75	3359.79	3497.08	3326.09	3525.95	2892.88	2423.21	2339.79	2314.26	2375.18
6	सदस्यों पर शेष (लाख में)	2188.75	2510.86	2582.60	2389.16	2123.73	1527.65	1415.62	1288.85	1206.66	1138.10
7	वर्ष की हानि (लाख में)	30.46	27.91	342.22	62.76	777.71	176.87	63.28	58.62	65.65	134.32
8	संचित हानि	803.51	831.87	1174.09	1236.84	2014.55	2191.42	2254.70	2313.32	2378.97	2513.30

****

ग्रामीण कृषि विकास के क्षेत्र में बैंक ऑफ इण्डिया की साख सुविधाओं के प्रभाव का मूल्यांकन

डॉ. सीमा दुबे *

शोध सारांश – बैंक ऑफ इण्डिया के माध्यम से कृषि विकास की असीम संभावनाएँ निहित है। बैंक इस क्षेत्र में अपनी एक प्रभावशील भूमिका निभा सकता है। वास्तव में यह एक बहुत ही दुरुह एवं जटिल कार्य है, परन्तु यह भी एक निर्विवाद तथ्य है कि ग्रामीण स्तर पर स्थापित बैंक की सभी शाखाएँ छोटे–बड़े सभी गाँवों में सीमांत कृषक से लेकर वृहद कृषकों तक की साख माँग की पूर्ति का सर्वाधिक सुलभ, सरल एवं सुगम माध्यम तथा आशा की किरण है। प्रस्तुत अध्ययन में बैंक की वित्तीय व्यवस्था बैंक द्वारा संचालित सम्पूर्ण योजनाओं एवं उनके प्रबंध एवं बैंक की समस्या का गहराई से अध्ययन किया गया है एवं अध्ययन के उपरांत कुछ ऐसे ठोस एवं व्यवहारिक सुझाव प्रस्तुत किए गए हैं। जिन्हें यदि पूरी निष्ठा एवं निष्पक्षता से कार्यान्वित किया जाए तो नि:संदेह ही यह बैंक कृषि क्षेत्र की वित्तीय साख तथा संसाधनों की माँग की पूर्ति कर ग्रामीण कृषि विकास में महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वहन कर सकेगी।

प्रस्तावना – विगत वर्षों से भारत में कृषि प्रौद्योगिकी का विकास तीव्रता से हुआ है। उन्नत प्रौद्योगिकी अधिक उपज देने वाली प्रजातियों के बीजों, फसल सुरक्षा, रासायनिक उर्वरकों के प्रयोग ट्रेक्टरों, यंत्रों तथा उपकरण और सिंचाई की सुविधाओं के रूप में प्रकट हुई है। कृषि में इस प्रौद्योगिकी के विकास का पूरा लाभ प्राप्त करने के लिए कृषकों को बड़ी मात्रा में साख एक अत्यन्त महत्तवपूर्ण एवं आवश्यक आगत निर्मित हो गई। 'साख किसानों को उसी प्रकार सहारा देती है। जिस प्रकार फाँसी पर लटके हुए व्यक्ति को जल्लाद की रस्सी।'

ग्रामीण क्षेत्रों की उन्नति तभी संभव है, जब कृषि की पर्याप्त उन्नति हो। सफल कृषि के लिए जहाँ अन्य अनेक कारक आवश्यक हैं, वहीं कृषि साख व्यवस्था अत्यन्त महत्तवपूर्ण कारक है। साख की सुलभ, सस्ती, पर्याप्त और समुचित मात्रा एवं उसको प्राप्त करने के नियमों तथा शर्तों का भी कृषि पर महत्वपूर्ण प्रभाव पड़ता है। भारत विकासशील देश के साथ–साथ कृषि प्रधान देश भी है, गत कुछ वर्षों में भारतीय कृषि में क्रान्तिकारी परिवर्तन हुए हैं। विगत के दशकों में कृषि क्षेत्र में पूँजी निवेश की मात्रा बहुत तेजी से बढ़ी है। कृषि का यंत्रीकरण और कृषि आधारित उद्योगों में वृद्धि से कृषि क्षेत्र में विनियोगों का महत्व बढ़ गया है तथा वित्त की माँग में अत्यधिक वृद्धि हुई है। कृषि विकास के लिए कृषि वित्त प्रदान करने की दृष्टि से 1968 तक भारत सरकार ने पाया कि निजी वाणिज्यिक बैंकों द्वारा कृषि की उपेक्षा की गई क्योंकि इन बैंकों द्वारा किया गया वित्त पोषण इनके कुल ऋण का मात्र 2 प्रतिशत था। जब बैंकों का राष्ट्रीयकरण हुआ तब से कृषि विकास हेतु साख उपलब्ध कराई जाने लगी। इसी क्रम में बैंक ऑफ इण्डिया द्वारा कृषि क्षेत्र में वित्त की आवश्यकता प्राय: खाद, बीज एवं कीटनाशकों के क्रय, कूप निर्माण एवं कूप सुधार हेतु कृषि यंत्र एवं उपकरणों के क्रय हेतु नलकूप, गोबर, गैस, पाईप लाईन, पशुधन, लघु एवं कुटीर उद्योग आदि हेतु होती है। कृषिविकास के लिये बैंक ऑफ इण्डिया द्वारा उपलब्ध कराए गए ऋणों में वृद्धि दर्ज की गई है, कृषि ऋणों में हुई यह वृद्धि बैंक की कृषि विकास हेतु तत्परता एवं निष्ठा को अभिव्यक्त करती है। बैंकों द्वारा कृषि विकास हेतु ऋण केवल धनी एवं बड़े कृषकों को ही प्रदान नहीं किये बल्कि मध्यम, लघु एवं सीमांत कृषकों को भी आसान शर्तों तथा कम ब्याज दर पर ऋण प्रदान करने का अनूठा प्रयास किया गया है। बैंक द्वारा कृषि कार्य हेतु अलग–अलग कार्यों के लिए अलग–अलग प्रकार के ऋण उपलब्ध कराए जाते हैं।

उद्देश्य –

1. कृषि एवं ग्रामीण क्षेत्र में समृद्धि लाने के लिए तथा समन्वित ग्रामीण विकास करने के लिये वित्तीय सहायता उपलब्ध कराना है।
2. बैंक ऑफ इण्डिया द्वारा किस प्रकार की कार्य प्रणाली अपनायी जा रही है।
3. बैंक ऑफ इण्डिया द्वारा किए गए कृषि विकास कार्यों का मूल्यांकन करना।

प्रकल्पना –

1. बैंक ऑफ इण्डिया द्वारा प्रदत्त कृषि वित्त से कृषि उत्पादकता पर अनुकूल प्रभाव पड़ा है।
2. बैंक ऑफ इण्डिया कृषि वित्त के माध्यम से कृषकों को साहूकारों के चुंगल से छुड़ाने में आंशिक सफल हुआ है।
3. कृषकों द्वारा कृषि के अन्य साधनों की तुलना में बैंक ऑफ इडिया को प्राथमिकता दी गई है।

शोध विधि – प्रस्तुत शोध–पत्र में अध्ययन द्वितीय समंक के आधार पर किया गया है। द्वितीय समंकों को आवश्यकतानुसार बैंक ऑफ इण्डिया द्वारा प्रकाशित वार्षिक प्रगति प्रतिवेदन से अपने अध्ययन के लिए प्रस्तुत किया गया है।

शोध अध्ययन – बैंक ऑफ इण्डिया ग्रामीण विकास को प्रोत्साहित करने के लिए कृषि, लघु उद्योग, कुटीर ग्रामीण एवं ग्रामीण उद्योग, हस्तकला तथा ग्रामीण क्षेत्रों की अन्य संबंधित आर्थिक क्रिया–कलापों के लिए समस्त उत्पादन एवं विनियोग कार्यक्रम के लिए वित्त प्रदान करता है। बैंक ऑफ

* सहायक प्राध्यापक, भारतीय महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत

इण्डिया कृषि क्षेत्र में विभिन्न प्रकार की योजनाओं का संचालन किया जा रहा है। बैंक ऑफ इण्डिया ने सिंचाई सुविधा को ध्यान में रखकर कृषकों को खेतों में कुओं का निर्माण कराने तथा खेतों में पक्की नालियों को बनाने विद्युत अथवा डीजल पम्प के क्रय हेतु पाईप खरीदने, सिंचाई साधनों के लिए सिंचाई ऋण प्रदान किए गए हैं। इस क्षेत्र में बैंक ऑफ इण्डिया द्वारा विगत दशक में लगभग 33 करोड़ रुपयों का आवंटन किया गया है। इस प्रकार के ऋण को प्रदान करने का उद्देश्य यह है कि कृषक सिंचाई साधन क्रय कर कृषि में इनका आर्थिक उपयोग कर अपने सिंचित क्षेत्र में वृद्धि करें ताकि सिंचाई हेतु उसे वर्षा पर निर्भर नहीं रहना पड़े और वह अपनी पैदावार बढ़ा सके। बैंक द्वारा सिंचाई हेतु वित्त उपलब्ध कराए जाने का ही प्रभाव है। कि विगत कुछ वर्षों में किसानों की सिंचाई हेतु वर्षा के जल पर निर्भरता लगातार कम हो रही है। इसके अतिरिक्त कृषकों को मौसमी फल बोने के लिए समय पर श्रेष्ठ किस्म के बीज उपलब्ध नहीं हो पाते यदि बीज उपलब्ध हो जाते हैं, तो इन्हें बोने के पश्चात् भूमि उर्वरता बढ़ाने के लिए श्रेष्ठ रासायनिक खाद उपलब्ध नहीं हो पाती न ही तैयार फसल के संरक्षण हेतु कीटनाशक दवाई उपलब्ध हो पाती है। अत: उपरोक्त साधनों की पूर्ति हेतु बैंक कृषकों को फसल ऋण उपलब्ध कराती है। विगत दशक में किसानों को फसल ऋण के रूप में बैंक द्वारा लगभग 693 करोड़ रुपयों का ऋणों का आवंटन किया जा चुका है। बैंक ऑफ इण्डिया द्वारा यह राशि गेहूँ, ज्वार, मूँगफली, तेलिय बीज, दाल व अन्य क्षेत्र में वितरित की गई है। बैंक ऑफ इण्डिया फलोत्पादन तथा फसलों के लिए वित्त प्रदान करती आ रही है परन्तु गत वर्षों से बैंक ऑफ इण्डिया द्वारा इसकी अनेक किस्म की योजनाओं का चयन कर उन्हें स्वीकृत किया गया है। इसमें फलोत्पादन, प्लांटेशन, फसलें जिसमें चाय, काफी, रबर, इलायची, नारियल आदि शामिल हैं। पुष्प उत्पादन में, मसाले, सुगंध एवं इत्र वाले पौधे, सब्जियाँ, पान, रेशम उत्पादन, मधुमक्खी पालन, जड़ी-बूटियाँ आदि बैंक ऑफ इण्डिया द्वारा इस क्षेत्र में कृषकों को आकर्षित करने के लिए विभिन्न प्रयास किए जा रहे हैं जिसमें बैंक द्वारा बैंकर्स अनुसंधान अधिकारियों, विकास अधिकारियों तथा कृषकों के लिए कार्यशालाओं का आयोजन किया जाता है। ग्रामीण क्षेत्रों में जाकर योजनाओं का चयन/उनका अवलोकन व निरीक्षण करना तथा विभिन्न प्रकार के सेमिनार, प्रशिक्षण तथा कार्यशालाओं के माध्यम से विचारों का आदान-प्रदान कर बागान एवं बागवानी क्षेत्र में वृद्धि करना। बागवानी एवं प्लांटेशन फसलों में ऋण वितरित करना एक चुनौती है। बैंक ऑफ इण्डिया द्वारा चुनौतीपूर्ण कार्य सफलता से सम्पादित किया जा रहा है। विगत दशक में बैंक द्वारा इस क्षेत्र में कुल 3,83,687 रुपयों का ऋण का वितरण किया जा चुका है। इसके अतिरिक्त बैंक ऑफ इण्डिया द्वारा बंजर भूमि विकास हेतु विगत दशक में लगभग 192 करोड़ रुपये के ऋण वितरण किया जा चुका है और बैंक द्वारा दिए गए इस ऋण में लगातार वृद्धि दर्ज की गई है। कृषि यंत्रीकरण को प्रोत्साहित करने के लिए बैंक ऑफ इण्डिया द्वारा कृषकों को कृषि संबंधी आधुनिक यंत्रों व औजारों को क्रय करने के लिए भी ऋण प्रदान किए गए हैं। कृषक इस ऋण का उपयोग कृषि कार्य हेतु ट्रेक्टर खरीदने, भूमि को समतल बनाने के लिए ट्रिलर खरीदने, प्रेशर मशीन खरीदने, बैलगाड़ी, ट्रक खरीदने तथा कृषि संबंधी अन्य उपकरण एवं औजार खरीदने के लिए करता है। कृषि यंत्रीकरण के क्षेत्र में भी दिये गये ऋणों में बढ़ने की प्रवृत्ति पाई गई। बैंक द्वारा कृषि यंत्रीकरण के क्षेत्र में भी कुल 82 करोड़ रुपये का ऋण विगत दशक में दिया गया। बैंक द्वारा यंत्रीकरण के क्षेत्र में सर्वाधिक ऋण ट्रेक्टर हेतु प्रदान किया गया है, जो कुल ऋण का 76.49 प्रतिशत है। इसके अतिरिक्त बैंक द्वारा डेयरी विकास हेतु कुल 61 करोड़ रुपये की राशि ऋण के रूप में प्रदान की गई। भेड़, बकरी, मत्स्य पालन व बायो गोबर गैस में भी बैंक द्वारा क्रमश: बढ़ती दर से ऋण राशि का वितरण किया गया है। बैंक द्वारा कृषकों को कृषि के अतिरिक्त उद्योगों के लिए भी ऋण राशि का आवंटन किया जाता है, ताकि कृषक केवल कृषि पर आश्रित न रहकर उद्योगों को भी अपनी आजीविका का साधन बना सके। इस हेतु बैंक द्वारा विगत दशक में कुल 4 करोड़ रुपये ऋण के रूप में प्रदान किए गए हैं। बैंक द्वारा ग्रामीण उद्योग हेतु दिए गए ऋण में लगातार वृद्धि दर्ज की गई है।

बैंक ऑफ इण्डिया द्वारा विगत दशक में विभिन्न क्षेत्रों से कुल दिये गये ऋण में बढ़ने की प्रवृत्ति पाई गई यह वृद्धि प्रतिशत में क्रमश: 79.98%, 98.16%, 106.98%, 108.48%, 96.35%, 86.85%, 88.30%, 88.98%, 80.02%, व 86.90% रही।

कृषि वित्त के क्षेत्र में उल्लेखनीय प्रगति हुई है परन्तु कृषि वित्त संबंधी विद्यमान मांग के परिप्रेक्ष्य में संस्थागत कृषि वित्त की आपूर्ति अभी तक सीमित है। प्रदेश में कृषि वित्त के आकार एवं संरचना में व्यापक परिवर्तन हमारे समक्ष उपस्थित हुए हैं। बैंकों द्वारा कृषि विकास के लिए प्रदान किये गये वित्त की मात्रा में तीव्र गति से वृद्धि हुई है।

उज्जैन जिले में ग्रामीण कृषि विकास के क्षेत्र में बैंक ऑफ इण्डिया की साख सुविधाओं के प्रभाव का मूल्यांकन करने के लिए कृषक परिवारों का चयन किया गया है। सर्वेक्षित कृषि परिवारों में वृहद कृषक, मध्यम कृषक तथा सीमांत कृषक सम्मिलित है। सर्वेक्षित कृषकों के द्वारा सभी प्रकार की फसलें बोई जाती है। सर्वेक्षण के दौरान यह पाया गया कि बैंक से ऋण लेने के पश्चात् कृषकों के स्तर में काफी सुधार हुआ। ऋण के पूर्व उत्पादन वृहद कृषकों का 4730 क्वि., मध्यम कृषक 2944 क्वि., लघु कृषक 654 क्वि. व सीमांत 286 क्वि. था जो ऋण पश्चात् बढ़कर 6398 क्वि., 4183 क्वि., 1027 क्वि. व 449 क्वि. हो गया।

कृषकों को बैंक से ऋण के पश्चात् पूँजी परिसम्पत्ति में भी बढ़ने की प्रवृत्ति पाई गई है और यह वृद्धि क्रमश: 5% से 20% तक दर्ज की गई। बैंक ऑफ इण्डिया द्वारा सभी कृषक की अल्पावधि साख आवश्यकता की पूर्ति 100%, मध्यावती साख आवश्यकता की पूर्ति वृहद कृषकों की 90% व मध्यम, लघु एवं सीमांत कृषकों की 80% की जाती है।

अत: यह कहा जा सकता है कि बैंक कृषकों की साख आवश्यकता को पूर्ण करने में सक्षम है तथा कृषकों के जीवन स्तर को व कृषि को उन्नत करने में अपनी महत्वपूर्ण भूमिका अदा कर रहा है।

बैंक के समक्ष ऋण के संबंध में आने वाली समस्याएँ – बैंक ऑफ इण्डिया ने व्यापारिक क्षेत्र की सरकारी नीति के अनुरूप कृषि क्षेत्र में ऋण देने की निरन्तर योजनाएँ बनाई है और इनको क्रियान्वित करने के लिए भरसक प्रयास भी किए है, लेकिन इस क्षेत्र में ऋण देने में बैंकों को अनेक समस्याओं का सामना करना पड़ता है-

1. ऋण के कार्यक्रम एवं परियोजनाओं के चयन से संबंधित समस्याएँ।
2. कृषि ऋण विस्तार हेतु पर्याप्त कोषों की कमी।
3. कृषि भूमि स्वामित्व अभिलेखों का उपलब्ध नहीं होना।
4. ऋण वसूली में राजनैतिक हस्तक्षेप।
5. ऋण वितरण में मध्यस्थ।

कृषकों को आने वाली ऋण से संबंधित समस्याएँ –

1. ग्रामीण क्षेत्र में ऋण की योजनाओं के पर्याप्त प्रचार एवं प्रसार का प्रभाव।

2. पर्याप्त एवं समय पर ऋण न मिलना।
3. तकनीकी सलाह की कमी।
4. बैंक से ऋण के लिए आवेदन प्रस्तुत करते समय अनावश्यक औपचारिकताएँ।
5. वसूली नीति का दोषपूर्ण होना।

सुझाव –

1. ऋण आवेदन प्रक्रिया को सरल बनाया जाए एवं अनावश्यक औपचारिकताओं में कमी।
2. कृषि ऋण स्वीकृति हेतु निर्धारित प्रक्रिया होनी चाहिए एवं समयसीमा का निर्धारण किया जाना चाहिए।
3. ऋण भुगतान पद्धति का विकास किया जाए।
4. ग्राहक सेवा शिविर आयोजित किये जाने चाहिए।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. डॉ. जी.के अग्रवाल एवं डॉ. एस.एस. पाण्डे, सामाजिक शोध आगरा।
2. डॉ. एच.के. कपिल, अनुसंघान विधियाँ (व्यवहारिक विज्ञान में) हरप्रसाद भार्गव बुक हाउस, आगरा।
3. ग्राम विकास ज्योति, अगस्त 96
4. वार्षिक साख योजना, बैंक ऑफ इण्डिया (2002 से 2011)
5. बैंक ऑफ इण्डिया वार्षिक साख योजना, उज्जैन।
6. उज्जैन जिला सांख्यिकी कार्यालय, उज्जैन जिला सांख्यिकी पुस्तिका, 2010
7. बैंक पत्रिका तारंगण।
8. पी.एन. वाष्णेय, बैंकिंग विधि एवं व्यवहार, सुलतानचन्द एण्ड सन्स, नईदिल्ली।
9. Bank Of India Performance highlights.

****

उज्जैन जिले की कृषि उपज मण्डी में समितियों का गठन, निर्वाचन क्षेत्रों में आरक्षण एवं मण्डी समिति निधि

डॉ. मोईन खान *

प्रस्तावना – मध्यप्रदेश कृषि उपज मण्डी अधिनियम 1972 की धारा 10 एवं 11 के उपबंधों के अधीन मण्डी समितियों का गठन किया जाता है। प्रत्येक मण्डी समिति में कम से कम आठ सदस्य तथा अधिक से अधिक 20 सदस्य होंगे जैसा कि, राज्य शासन अधिसूचना द्वारा विनिर्दिष्ट करें।

मण्डी समिति के गठन में निम्नलिखित सदस्य सम्मिलित होंगे ।

1. 'अध्यक्ष प्रत्यक्ष रूप से धारा 12 के अधीन निर्वाचित होगा, जिसका निर्वाचन उन व्यक्तियों के द्वारा किया जायेगा जो कृषकों और व्यापारियों के प्रतिनिधियों के निर्वाचन में मत देने की पात्रता रखते हो।
2. निर्वाचित सदस्यों में से कृषकों के दस प्रतिनिधि होंगे, जो मण्डी क्षेत्र के निर्वाचन क्षेत्रों में से इस अधिनियम और उसके अधीन बनाए गए नियमों के अनुसार प्रत्यक्ष निर्वाचन द्वारा चुने गए हो।
3. निर्वाचित सदस्यों में से व्यापारियों का एक प्रतिनिधि होगा जो उन व्यक्तियों में से चुना जाएगा जो इस अधिनियम के अधीन व्यापारियों या प्रसंस्करण या विनिर्माण कारखानों के स्वामियों के रूप में लगातार दो वर्षों की कालावधि से अनुज्ञप्ति धारण किए है।
4. एक सदस्य राज्य विधानसभा या लोकसभा का वह प्रतिनिधि होगा जिसके निर्वाचन क्षेत्र की कम से कम पचास प्रतिशत जनसंख्या ऐसे ग्रामीण क्षेत्रों में निवास करती हो । जो किसी नगर पालिका निगम, नगर परिषद् या नगर पंचायत की स्थानीय सीमाओं के बाहर हो।
5. एक सदस्य उस मण्डी क्षेत्र में कृत्य कर रही है। सरकारी विपणन सोसायटी का एक प्रतिनिधि जो उस सोसायटी की प्रबंधकारिणी समिति द्वारा निर्वाचित किया जाएगा।
6. एक सदस्य राज्य शासन के कृषि विभाग का एक अधिकारी जो कलेक्टर द्वारा नाम निर्दिष्टि किया जाएगा।
7. एक सदस्य उन तुलैयों एवं हम्मालों का प्रतिनिधि होगा जो उन तुलैयों या हम्मलों में से होगा जो इस अधिनियम के अधीन लगातार 6 माह की कालावधि से अनुज्ञप्तिधारण किए हो एवं जो प्रत्यक्ष निर्वाचन द्वारा निर्वाचित होगा।
8. एक सदस्य जिला केंद्रीय सहकारी बैंक का प्रतिनिधि होगा जो का तो ऐसे बैंक का अध्यक्ष होगा या उसकी प्रबन्ध समिति का ऐसा अन्य सदस्य होगा जो बैंक के अध्यक्ष द्वारा नामनिर्दिष्ट किया जाए।
9. एक सदस्य जिला भूमि विकास बैंक का प्रतिनिधि होगा जो या तो ऐसे बैंक का अध्यक्ष होगा या उसकी प्रबन्ध समिति का ऐसा सदस्य होगा जो बैंक के अध्यक्ष द्वारा नामनिर्दिष्ट किया जाए।
10. एक सदस्य मण्डी क्षेत्र की अधिकारिता के भीतर आने वाली ग्राम पंचायत था जनपद पंचायत या जिला पंचायत का प्रतिनिधि होगा जो जिला पंचायत अध्यक्ष द्वारा नाम निर्दिष्ट किया जायेगा।

मध्यप्रदेश कृषि उपज मण्डी अधिनियम 1972 की धारा 11(1) के अधीन मण्डी समिति के गठन के लिए समस्त सदस्यों को मत देने का अधिकार होगा किन्तु धारा 11(1) के खण्ड (च) एवं (ध) के अधीन ऐसे सदस्य जो नाम निर्दिष्ट किए गए हो या विशेष आमंत्रित सदस्य के रूप में आते हो उन्हें मतदान का अधिकार नहीं रहेगा।

मण्डी क्षेत्र का निर्वाचन क्षेत्रों में विभाजन तथा स्थानों का आरक्षण – 'मण्डी अधिनियम 1972 की धारा 11 (क) के अनुसार कलेक्टर किसी मण्डी क्षेत्र को निर्वाचन क्षेत्रों में विभाजन करने की संख्या उतनी रखेगा जितनी कि मण्डी क्षेत्र में से चुने जाने वाले कृषकों के प्रतिनिधि की संख्या आती हो अर्थात् कृषकों के प्रतिनिधियों के चुने जाने की क्षेत्रीय संख्या के बराबर ही मण्डी क्षेत्र को निर्वाचित क्षेत्रों में विभाजित किया जायेगा।

मण्डी अधिनियम के प्रावधान के अनुसार मण्डी समितियों में अनुसूचित जातियों एवं अनुसूचित जनजातियों के प्रतिनिधित्व को सुनिश्चित करने के लिए स्थान आरक्षित रखें जाएगे। आरक्षित स्थानों की संख्या का अनुपात उस मण्डी समिति में करें जाने वाले स्थानों की कुल संख्या के साथ वही होगा जो उस मण्डी समिति के क्षेत्र में अनुसूचित जातियों या जनजातियों की जनसंख्या का उस क्षेत्र की कुल जनसंख्या के साथ होगा। यदि किसी मण्डी समिति के क्षेत्र में अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के सदस्यों के लिए स्थानों की कुल संख्या 50 प्रतिशत या उससे कम रहने पर उस मण्डी समिति के कुल सदस्यों की संख्या में से 25 प्रतिशत स्थान अन्य पिछडे वर्ग के लिए आरक्षित रखे जाएंगे। किसी मण्डी समिति में अनुसूचित जाति, अनुसूचित जनजाति या पिछले वर्ग के आरक्षित स्थानों की संख्या एक तिहाई से कम रहने पर शेष पद अनुसूचित जाति, अनुसूचित जनजाति तथा पिछड़ा वर्ग की महिलाओं को आरक्षित किए जाएगें।

मण्डी समिति के सदस्यों का कार्यकाल – मण्डी अधिनियम के प्रावधानों के अनुसार मण्डी समिति के प्रत्येक सदस्य का कार्यकाल प्रथम साधारण सम्मेलन से अगले पांच वर्षो के लिए होता है। यदि इस समयावधि के अन्तर्गत नवीन मण्डी समिति का गठन नहीं किया जाता है, तो निर्धारित अवधि की समाप्ति पर समिति को विघटित समझा जाता है। कोई भी सदस्य स्वेच्छा से मण्डी समिति की सदस्यता त्यागने के लिए कलेक्टर को आवेदन प्रस्तुत कर सकता है। त्याग पत्र देने के 15 दिन के पश्चात् सदस्यों की सदस्यता समाप्त हो जाती है। यदि किसी सदस्य की मृत्यु कार्यकाल समाप्त हो जाने के पूर्व हो जाती है, तो वह स्थान रिक्त माना जाता है तथा इस रिक्त स्थान की पूर्ति नियमानुसार निर्वाचन या सहयोजन द्वारा की जाती है।

* (वाणिज्य) यश महाविद्यालय, बदनावर (म.प्र.) भारत

मण्डी समिति के अध्यक्ष एवं उपाध्यक्ष –मध्यप्रदेश कृषि उपज अधिनियम 1972 के प्रावधानों के अनुसार प्रत्येक मण्डी समिति का एक अध्यक्ष होता है, जिसका निर्वाचन प्रत्यक्ष रूप से कृषकों एवं व्यापारियों के प्रतिनिधि द्वारा किया जाता है। अध्यक्ष पद के उम्मीदवार के लिए कृषक प्रतिनिधि होना अनिवार्य है।

मण्डी अधिनियम की धारा 12 की उपधारा (2) के अनुसार 'राज्य में मण्डी अध्यक्ष का पद अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के लिए रखा जाएगा। अनुसूचित जाति एवं अनुसूचित जनजाति वर्ग की कुल संख्या का अनुपात राज्य में कुल जनसंख्या के साथ जितना है, उतना ही अनुपात मण्डी अध्यक्षों की कुल पदों की संख्या के साथ आरक्षण के लिए रखा जाएगा। अध्यक्ष के पदों की कुल जनसंख्या के 25 प्रतिशत स्थान अन्य पिछडे वर्गों के लिए आरक्षित रखे जायेंगे। इसी प्रकार अनुसूचित जाति, अनुसूचित जनजाति एवं पिछड़ा वर्ग की महिलाओं के लिए एक तिहाई (1/3) पद आरक्षित रखें जाएगे।'

'मण्डी समिति का एक उपाध्यक्ष होगा जिसका चुनाव मण्डी समिति के प्रथम सम्मिलन में मण्डी समिति के निर्वाचित सदस्यों में से निर्वाचित सदस्यों द्वारा ही विहित रीति से किया जाता है यदि समिति का अध्यक्ष अनुसूचित जाति, अनुसूचित जनजाति या अन्य पिछडे वर्ग का नहीं हैं, तो उपाध्यक्ष इन्हीं जातियों, जनजातियों या वर्गों के निर्वाचित सदस्यों में से चुना जाएगा। उपाध्यक्ष पद के उम्मीदवार के लिए कृषक होना आवश्यक है। मण्डी समिति के अध्यक्ष एवं उपाध्यक्ष का कार्यकाल समिति के प्रथम सम्मिलन की तारीख से पांच वर्ष की अवधि के लिए होगा।'

अध्यक्ष एवं उपाध्यक्ष द्वारा किसी भी समय कलेक्टर को लिखित में सम्बोधित करके त्यागपत्र द्वारा अपना पद त्याग सकते है। ऐसा त्यागपत्र कलेक्टर द्वारा स्वीकार किए जाने की तारीख से प्रभावी होता है।

भारसाधक अधिकारी की नियुक्ति – मध्यप्रदेश कृषि उपज मण्डी अधिनियम 1972 की धारा 10 के अनुसार 'यदि कोई मण्डी प्रथम बार स्थापित की जाती है तो प्रबन्ध संचालक आदेश द्वारा दो वर्ष से अधिक की समयावधि के लिए किसी व्यक्ति को भारसाधक अधिकारी के रूप में नियुक्त करेगा। प्रबन्ध संचालक के नियंत्रण के अध्यधीन रहते हुए भारसाधक अधिकारी इस अधिनियम के अधीन मण्डी समिति के समस्त शक्तियों का प्रयोग करेगा तथा समस्त कर्तव्यों का पालन करेगा।'

इसी प्रकार जब मण्डी समिति भंग होती है या उनका कार्यकाल समाप्त होने के पश्चात् भी नवीन समिति गठित नहीं की जाती है। उक्त परिस्थिति में भी प्रबन्ध संचालक के आदेश पर भारसाधक अधिकारी नियुक्त किया जाता है। नवीन मण्डी समिति का गठन हो जाने पर प्रथम सम्मिलन के लिए निर्धारित दिनांक से भारसाधक अधिकारी को अपने पद पर बने रहने का अधिकार नहीं रहता है एवं उसका पद समाप्त हो जाता है। अधिनियम के अधीन भारसाधक अधिकारी अपनी सेवाओं के लिए वेतन एवं भत्तें प्रबन्ध संचालक द्वारा नियत मण्डी समिति निधि से प्राप्त करेगा।'

राज्य मण्डी बोर्ड सेवा का गठन – मध्यप्रदेश कृषि उपज मण्डी अधिनियम 1972 की धारा 26 के अनुसार 'राज्य शासन बोर्ड तथा मण्डी समितियों के लिए अधिकारियों एवं कर्मचारियों का प्रबन्ध करने के प्रयोजन के लिए एक सेवा का विहित रीति से गठन करेगी जिसे राज्य मण्डी बोर्ड सेवा कहा जाएगा।'

राज्य मण्डी बोर्ड सेवा के सदस्यों की भर्ती, अर्हता, नियुक्ति, पदोन्नति, वेतनमान, अवकाश, अवकाश वेतन, कार्यकारी भत्ता, उधार, पेंशन, ग्रेज्युटी वार्षिकी, अनुकम्पा निधि, भविष्य निधि, पदच्युति हटाये जाने, आचरण, विभागीय दण्ड, अपील तथा अन्य सेवा शर्तों के सम्बन्ध में बोर्ड नियम बनाएगा। राज्य मण्डी बोर्ड सेवा के सदस्यों को, जो मण्डी समिति के नियंत्रण के अधीन कार्य कर रहे हैं, दिए जाने के लिए अपेक्षित वेतन, भत्ते उपदान तथा अन्य सदस्य मण्डी समिति निधि पर प्रभार होंगे। संचालक राज्य मण्डी बोर्ड सेवा के किसी सदस्य का स्थानांतरण एक मण्डी समिति से किसी अन्य मण्डी समिति को कर सकता है।'

सचिव एवं अन्य अधिकारी – मध्यप्रदेश कृषि उपज मण्डी अधिनियम 1972 की धारा 27 एवं 30 के अनुसार 'प्रत्येक मण्डी समिति का एक सचिव और ऐसे अन्य अधिकारी होंगे जो राज्य मण्डी बोर्ड सेवा के सदस्य होंगे या जो राज्य शासन या शासकीय सहायता प्राप्त सहकारी संस्थाओं या सार्वजनिक क्षेत्र के उपक्रमों की सेवाओं के ऐसे सदस्य हों, जिनकी सेवाएं बोर्ड द्वारा प्रतिनियुक्ति पर प्राप्त की गई हों। सचिव, मण्डी समिति का प्रधान कार्यापालन अधिकारी होगा और उस मण्डी समिति में पदस्थ समस्त अधिकारी एवं कर्मचारी उसके अधीनस्थ होंगे। सचिव मण्डी समिति के प्रति उत्तरदायी होगा और मण्डी समिति के नियंत्रण के अधीन होगा।

प्रत्येक मण्डी समिति ऐसे अन्य अधिकारियों तथा सेवकों की नियुक्ति कर सकेगी जो कि उसके कर्तव्यों के दक्षतापूर्ण निर्वहन के लिए आवश्यक तथा उचित हो। परन्तु किसी भी पद का सृजन संचालक की पूर्व मंजूरी के बिना नहीं किया जायेगा। मण्डी समिति स्वयं के द्वारा नियुक्त किये गये अधिकारियों तथा सेवकों की नियुक्ति, वेतन अवकाश, अवकाश, भत्ते, पेंशन, उपदान, भविष्य निधि में अभिदाय आदि तथा अन्य सेवा शर्तों को विनियमित करने के लिए तथा उनको शक्तियाँ, कर्तव्य एवं कृत्य प्रत्यायोजित करने के लिए उपलब्ध करने हेतु उपविधियाँ बना सकेगी।

मण्डी समिति निधि – मध्यप्रदेश कृषि उपज मण्डी अधिनियम 1972 की धारा 38 एवं 39 के अनुसार मण्डी समिति द्वारा प्राप्त किया गया समस्त धन एक निधि में जो मण्डी समिति निधि कहलायेगी, संदत्त किया जायेगा और मण्डी समिति द्वारा इस अधिनियम के अधीन या उसके प्रायोजनों के लिए उपगत किए गए समस्त व्यय उक्त निधि में से भुगतान किए जाएगे। ऐसे व्यय की पूर्ति किये जाने के पश्चात् मण्डी समिति के पास बचा हुआ कोई अधिशेष ऐसी रीति में जैसा कि विहित की जाये, विनिहित किया जायेगा।

मण्डी समिति निधि की समस्त धनराशियों को किसी सहकारी बैंक में या यदि मण्डी समिति के मुख्यालय पर ऐसी बैंक विद्यमान न हो तो डाकघर, बचत बैंक में या किसी ऐसे बैंक में जो बैंककारी कम्पनी अधिनियम 1970 की प्रथम अनुसूची में तत्समय नवीन बैंक के रूप में विनिर्दिष्ट किया गया हो जमा की जायेगी।

मण्डी अधिनियम की धारा 38 के उपबंधों के अधीन रहते हुए मण्डी समिति निधि केवल निम्न प्रयोजनों के लिए व्यय की जा सकेगी–

- मण्डी प्रांगणों के लिए स्थानों का अर्जन।
- मण्डी प्रांगणों का अनुरक्षण एवं सुधार।
- मण्डी के लिए तथा मण्डी प्रांगण का उपयोग करने वाले व्यक्तियों की सुविधा या सुरक्षा के लिए आवश्यक भवनों का निर्माण तथा उनकी मरम्मत।
- मानक बाटों तथा मापों को बनाए रखना।
- स्थापना सम्बन्धित प्रभारों की पूर्ति के लिए।
- उन उधारों पर जो मण्डी के विकास के लिए किए जाए, ब्याज का भुगतान तथा ऐसे उधारों के सम्बन्ध में निक्षेप निधि की व्यवस्था।

- फसल सम्बन्धी आंकड़ों तथा कृषि उपज के विपणन की जानकारी को संग्रहित किया जाना तथा प्रभारित किया जाना।
- मण्डी समिति के लेखों का अंकेक्षण करने के व्यय।
- अध्यक्ष को मानदेय, मण्डी समिति के अध्यक्ष, उपाध्यक्ष तथा अन्य सदस्यों का यात्रा भत्ता एवं सम्मिलन में उपस्थित होने के लिए सदस्य को देय बैठक फीस का भुगतान।
- राज्य विपणन विकास निधि के प्रति अभिदाय।
- राज्य शासन के आदेश को कार्यान्वित करने के लिए किसी व्यय की पूर्ति।
- कृषि उत्पादन की वृद्धि तथा वैज्ञानिक भण्डारकरण के लिए किसी योजना के प्रति अभिदाय।
- कृषि उपज के विपणन के लिए हाट बाजारों के विकास का कार्य करने के लिए।
- इस अधिनियम के अधीन निर्वचनों पर व्ययों का भुगतान।
- राज्य शासन की पूर्व मन्जूरी के अध्यधीन रहते हुए, कोई अन्य प्रयोजन जिस पर मण्डी समिति निधि से किया जाने वाला व्यय लोकहित में हो। आदि व्ययों का भुगतान मण्डी समिति निधि में से किया जाता हैं।'

निष्कर्ष – उज्जैन जिले की समस्त कृषि उपज मण्डी समितियों का संगठन मध्यप्रदेश कृषि उपज मण्डी अधिनियम 1972 के अनुसार किया जाता है। नागदा मण्डी समिति को उज्जैन जिले में स्थापित सर्वाधिक पुरानी मण्डी होने का गौरव प्राप्त है, नवीनतम् स्थापित उन्हेल मण्डी है उज्जैन नगर स्थित मण्डी समिति जिले की सर्वाधिक बड़ी मण्डी है जहाँ प्रतिवर्ष 428.54 हजार मैट्रिक टन की आवक होती है। मण्डी समिति के अधिकारी एवं सेवकों की नियुक्ति उनके कर्तव्यों एवं शक्तियों का निर्धारण भी इस अधिनिमय के अनुसार किया जाता है।

मण्डी समितियों के सदस्यों में से निर्वाचित सदस्यों की संख्या (12/20) का 3:5 के अनुपात में है जिससे मण्डियों में राजनैतिक प्रभुत्व अधिक रहता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. भारतीय कृषि का अर्थतन्त्र, डॉ. एन.एल.अग्रवाल।
2. मध्यप्रदेश कृषि उपज मण्डी अधिनियम एवं नियम, डॉ. राधेश्याम द्विवेदी।
3. कार्यालय,मध्यप्रदेश राज्य कृषि विपणन बोर्ड, उज्जैन।
4. www.mpmandiborad.com

****

महिला उद्यमिता सशक्तिकरण

दीप्ति जोठे *

शोध सारांश – हम सभी जानते है कि भारत एक प्रभावशाली देश है लेकिन आज परिदृश्य बदल रहा है। आज महिलाओं को समाज के सभी क्षेत्रों में पुरूष वर्ग की तरह समान अधिकार प्राप्त है। आज व्यवसाय के विभिन्न क्षेत्रों में महिलाए पुरूष वर्ग की तरह बढ़-चढ़कर हिस्सा ले रही है। बैंक के क्षेत्र में भी चाहे वह अंतर्राष्ट्रीय स्तर का हो या राष्ट्रीय स्तर का इन क्षेत्रों में महिलाए उच्च पदों पर आसीन है। हालांकि यह एक अलग मामला नहीं है । वैश्विक महिला उद्यमिता के स्कोर कार्ड 2015 के अनुसार भारत 32 देशों की सूची में से 29वें स्थान पर है। इसलिए इस पत्र में हम भारत में एक महिला उद्यमी की चुनौतियों का स्तर शामिल कर, महिलाओं की स्थिति का विश्लेषण करने का प्रयास इसके माध्यम से किया है। 21वीं सदी में महिलाओं के जीवन के विभिन्न क्षेत्रों में सफलता के लिए प्रयास करने के लिए, उन्हें उनके कार्यों को करने की स्वतंत्रता, और ज्यादा से ज्यादा अवसर की प्राप्ति के लिए प्रयास कर रहे है। लेकिन इसके बाद भी ऐसा क्या कारण है, जो कि महिला उद्यमी को आगे बढ़ने से रोक रहा है। एक राष्ट्र की स्वतंत्र अर्थव्यवस्था वही होती है जिसमें देश के नागरिक (महिलाये व पुरूष) स्वतंत्र रूप से भागीदारी निभाते है। सफलता की सीढ़ी इन दोनों के बीच आपसी सहयोग पर निर्भर करती है। फिर भी आज देखा जाए तो व्यापार के क्षेत्र में महिलाओं का प्रतिनिधित्व केवल मुट्ठी भर है। महिला उद्यमी को एक नये व्यवसाय में एक उद्यमी के रूप में किन समस्याओं का सामना करना पड़ता है एवं ऐसे कौन-से मुख्य कारण है, जो कि महिला उद्यमी को आगे बढ़ने से रोक रहे है। इसका प्रयास इस पत्र के माध्यम से किया गया है।

सरकार और अन्य संस्थानों के क्रम में महिला उद्यमी के कौशल को विकसित करने के लिए, महिलाओं के बीच जागरूकता बढ़ाने के लिए इन कार्यक्रमों को चलाने की जरूरत हैं।

शब्द कुंजी – महिला उद्यमी, उद्यमिता ।

प्रस्तावना – स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् विभिन्न क्षेत्रों में महिलाओं ने, न केवल उच्च पदों की प्राप्ति की, बल्कि यह भी साबित कर दिया है कि वे शारीरिक ओर मानसिक शक्ति दोनों ही तरह से किसी भी कार्य को करने योग्य है। उदाहरण के लिए पायलेट, इंजीनियर, राजनेता, उद्योगपति, पुलिस अधिकारी, सिविल सेवकों और कुछ अन्य क्षेत्रों में भी वे अपनी पहचान बना चुकी है। महिला उद्यमियों के रूप में भी वे अपनी योग्यता को साबित कर वे समाज की हर चुनौतियों से निपटने के लिए तैयार है। लेकिन वास्तव में उनकी स्थिति में और अधिक सुधार लाने और महिला की उद्यमशीलता कौशल को प्रोत्साहित करने के लिए सरकार के समक्ष मांग रखी है और इसके लिए सरकार भी प्रयासरत है। कुछ आंकड़ों के अनुसार भारत में महिला उद्यमियों का 10 प्रतिशत है, जो कि एक खराब स्थिती का परिचायक है।

रोजगार, परिदृश्य, तथ्य और आँकड़े – स्वरोजगार महिलाओं पर आधारित सीपीएस (वर्तमान जनसंख्या सर्वेक्षण) रोजगार के स्तर के एक सर्वेक्षण के अनुसार स्वरोजगार पुरूषों की तुलना में स्वरोजगार महिला उद्यमियों की संख्या कम है। 12 वर्षों में अर्थात वर्ष 1994 से 2006 तक विभिन्न उद्योगों जैसे थोक व्यापार, परिवहन, विनिर्माण, और संचार में स्वरोजगार पुरूष वर्गों की तुलना में, स्वरोजगार महिला उद्यमियों की संख्या कम है। हाल ही में समझोते के अध्ययन से पता चलता है कि स्थान और एक लिंग अनुपात किसी भी व्यवसाय को शुरू करने में बड़ी भूमिका को निभाते है। अमेरिका, कनाडा और आस्ट्रेलिया जैसे बड़े देशों में जहाँ महिला उद्यमियों को उच्च दर्जा प्राप्त है एवं कुछ आंकड़ों के अनुसार कुछ देश ऐसे है जहाँ महिला उद्यमियों के कमी के स्तर को दर्शाता है। उनमें से है, बांग्लादेश, पाकिस्तान और भारत। विभिन्न अन्य आंकड़ों के अनुसार भारत और पाकिस्तान में महिलाओं को लघु-व्यवसायों के मालिकों के रूप में देखा जा सकता है। इसका सबसे बड़ा कारण सामाजिक मानदण्डों और बड़े व्यवसायों की सीमित संख्या जो कि महिलाओं द्वारा चलाए जा रहे है।

लिंग अनुपात – जीईडीआई स्थान

क्रमांक	देश	स्थान
1	संयुक्त राज्य अमेरिका	83
2	ऑस्ट्रेलिया	80
3	स्वीडन	73
4	फ्रेंच	67
5	जर्मनी	67
6	चिली	55
7	ग्रेट ब्रिटेन	54
8	पालैण्ड	51
9	स्पेन	49
10	मेक्सिको	43
11	साउथ अफ्रीका	42
12	कोरिया	42
13	चीन	42
14	पेरू	40

* शोधार्थी (वाणिज्य) सरोजनी नायडू शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, भोपाल (म.प्र.) भारत

15	जापान	40
16	पनामा	39
17	थाइलैण्ड	38
18	टर्की	36
19	रूस	36
20	ब्राजील	35
21	मलेशिया	32
22	जमेका	30
23	नाइजीरिया	29
24	मोरक्को	27
25	गायना	27
26	भारत	26
27	युगाण्डा	19
28	मिश्र	19
29	बांग्लादेश	17
30	पाकिस्तान	11

भारत में कार्यक्रमों की शुरूआत – भारत में श्री मोदी जी की सरकार के द्वारा विभिन्न कार्यक्रमों की शुरूआत की गई जो कि भारतीय महिलाओं के लिए प्रभावी साबित हुई है।

सातवीं पंचवर्षीय योजना – इस योजना के तहत भारत सरकार द्वारा एक विशेष समूह के रूप में महिलाओं पर ज्यादा ध्यान केन्द्रित कर दिया है। सरकार ने नये तरीकों के माध्यम से एक व्यवसाय में महिला उद्यमियों को शामिल करने, उनके निर्णय लेने की प्रक्रिया और महिलाओं की एक व्यवसाय में भागीदारी बढ़ाने का प्रयास इस योजना के माध्यम से किया है।

आठवीं पंचवर्षीय योजना – इस योजना के तहत, प्रधानमंत्री रोजगार योजना और ईडीपी ग्रामीण महिलाओं के बीच उद्यमशीलता के गुणों को विकसित करने हेतु, इस कार्यक्रम को चलाया गया। कुछ अन्य रोजगार महिलाओं के लिए चलाई गई थी। जिसमें सहकारी योजनाएँ, एवं कृषि के क्षेत्र में भी महिलाओं की भागीदारी को शामिल किया गया था।

नौवी पंचवर्षीय योजना – इस योजना के तहत स्वर्ण जयंती ग्राम स्वरोजगार योजना, स्वर्ण जयंती शहरी रोजगार योजना, नई योजना जो महिला विकास निगम के नाम से चलाई गई, और विभिन्न योजनाए जैसे भारतीय उद्योग और विकास बैंक (सिडबी), महिला विकास निधि, राष्ट्रीय महिला कोष आदि के रूप में शामिल की गई है।

भारत सरकार ने महिलाओं को व्यवसाय में उच्च जोखिम लेने और उन्हें प्रोत्साहित करने के लिए यह कदम उठाए है। यह योजनाए महिलाओं को व्यवसाय में धन-अर्जन करने एवं उन्हें विभिन्न योजनाओं में भागीदार बनाने के लिए प्रोत्साहित करने में मदद करती है। उपलब्ध विकल्पों में से इस तरह की विस्तृत सारणी के साथ यह एक उद्यमिता, संस्कृति व महिलाओं के चारों और घूमने के लिए व्यवहार्य है। यह न केवल एक समावेशी समाज कार्य होगा बल्कि यह रोजगार, समृद्धि और एक आधुनिक भारतीय समाज की भलाई के लिए भी प्रोत्साहित करेगा।

अनुसंधान क्रियाविधि – प्रत्येक शोध अध्ययन के लिए आंकड़ों की आवश्यकता होती है। चाहे वह प्राथमिक हो अथवा द्वितीयक। यह शोध अध्ययन भारत में महिला उद्यमी का वर्णानात्मक अध्ययन है। इस शोध अध्ययन हेतु द्वितीयक आंकड़ों का बड़े पैमाने पर विश्लेषण किया गया है जिनके स्त्रोत निम्न है – पत्रिकाए, समाचार-पत्र, किताबे, इंटरनेट आदि।

भारत में वे समस्याए जिन्हें महिला उद्यमियों द्वारा सामना करना पड़ा-

1. वित्त की कमी
2. परिवार के समर्थन का अभाव
3. कड़ी प्रतिस्पर्धा
4. रस्में और असुरक्षा की भावना
5. शिक्षा का अभाव
6. सीमित गतिशीलता
7. पुरूष – हावी समाज
8. कम जोखिम क्षमता
9. कच्चे माल की कमी
10. समाज की पिछड़ी मानसिकता

इन्हीं कारणों की वजह से भारत में महिला उद्यमियों की संख्या कम है। उपरोक्त कुछ आंकड़ों का उल्लेख किया गया है। शिक्षा और सीमित गतिशीलता का अभाव महिला उद्यमियों के लिये पर्याप्त संख्या का भारत में न होना इसका सबसे बड़ा कारण है।

सुझाव – महिलाओं को प्रोत्साहित करने के लिए सरकार द्वारा पर्याप्त कदम उठाए है लेकिन कभी-कभी ये उठाए गए कदम महिलाओं के लिए पर्याप्त नहीं है। जैसा कि हम सब जानते है कि वित्त (पैसे, धन) किसी भी उद्यम को सुचारू रूप से चलाने में एवं उसे विकसित करने हेतु आवश्यक है। इसलिए सरकार को महिला उद्यमियों के लिए अधिक से अधिक सब्सिडी और कम ब्याज दर पर ऋण उपलब्ध कराने चाहिए और साथ ही साथ इन्हें राज्य और स्थानीय ग्रामीण स्तरों पर कार्यक्रमों के रूप में शुरू करने, व्यवसाय की जोखिमों को कम करने, एवं निवेश कार्यक्रमों को प्रोत्साहित करने में मदद करेंगे।

सरकार महिलाओं को उनके स्वयं का व्यवसाय आरंभ करने हेतु प्रोत्साहित करती है। हालांकि इन कार्यक्रमों को संशोधित करने की आवश्यकता है। बड़े पैमाने पर इन कार्यक्रमों को चलाने के लिए सरकार महिलाओं को पर्याप्त धन के साथ सब्सिडी की सहायता भी उपलब्ध करानी चाहिए। जिससे वे अपने व्यवसाय का कुशलतापूर्वक संचालन कर सके। बैंकों को ब्याज की दरों में छूट के प्रावधान करने चाहिए एवं पूँजीपर कम दरों पर ब्याज लगाने चाहिए ताकि महिलाओं को अपने व्यवसाय को प्रारंभ करने में किसी बड़ी समस्या का सामना न करना पड़े। सरकार को छोटे शहरों एवं ग्रामीण क्षेत्रों में उद्यमिता विकास के लाभों के बारे में एवं उद्यमिता जागरूकता बढ़ाने हेतु कार्यक्रमों को चलाये। साथ ही साथ इन क्षेत्रों में पर्याप्त सुविधाए उपलब्ध करावे। सरकार द्वारा ये सब प्रयास आवश्यक रूप से किए जाने चाहिए, क्योंकि यही विकास देश की अर्थव्यवस्था को विकसित करने में मदद करेगा।

भारतीय महिला उद्यमियों के लिए प्रेरणास्त्रोत –

इंद्रा नूयी चैयरमैन	–	सीईओ पैप्सिको की अध्यक्ष
नैना लाल किदवई	–	समूह (Group) महाप्रबंधक HSBS भारत
किरण मजूमदार	–	सीएमडी Biocon
कल्पना चावला	–	अंतरिक्ष यात्री
सुनीता विलियम्स	–	अंतरिक्ष यात्री
किरण बेदी	–	भारत की सर्वप्रथम आईपीएस अधिकारी

निष्कर्ष – इस शोध अध्ययन के माध्यम से यह निष्कर्ष निकाल सकते है

कि सरकार एवं गैर–सरकारी संगठनों के द्वारा विभिन्न कार्यक्रमों व योजनाओं को चलाया जाना चाहिए, जिससे उद्यमिता के क्षेत्र में महिलाए आगे बढ़ सके। सरकार द्वारा अब तक विभिन्न कार्यक्रमों का संचालन किया गया है लेकिन यह पर महिलाओं की संख्या उद्यमिता के क्षेत्र में कम वृद्धि हुई है। मेरे विचार में इनका सबसे बड़ा कारण यह है जिन योजनाओं एवं कार्यक्रमों को उद्यमिता के क्षेत्र में चलाए जा रहे है, उन्हें अच्छी तरह से विज्ञापित नहीं किया जाता है। यह पर जागरूकता कार्यक्रमों की सख्त जरूरत है और यह सब समाज के हर क्षेत्रों के बीच किया जाना चाहिए। जो महिलाए प्रेरणास्त्रोत रही है उनकी भी जिम्मेदारी है कि वे स्कूल एवं महाविद्यालय में पढ़ने जा रही छात्राओं को अपने जीवन में किए गए संघर्षो की बाते बताए ताकि स्कूल व महाविद्यालय में पढ़ने वाली छात्राएं उन सबसे उत्तेजित होकर वे कुछ नये कार्यों को करने एवं उन कार्यों में आने वाली जोखिमों को वहन करने में सक्षम हो सके तभी उद्यमिता कौशल का विकास होगा और आने वाले समय में महिलाए बेहतर निर्णय – निर्माता के रूप में जानी जा सकेगी।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1 व्यापार और प्रबंधन के जर्नल (IOSR, JBM) www.iosrjournals.org
2 भारत में एक आर्थिक शक्ति के रूप में महिलाओं के स्वयं के व्यापार की स्थिति में एक अंतर्दृष्टि
3 www.iimahd.ernat.in/publications/data/2005/08/07indirap/pdf.
4 Shejwalkar पी सी उद्यमिता Ameya पुणे प्रकाशन 1996.
5 वर्तमान जनसंख्या सर्वेक्षण के एक सर्वे (सीपीएस) डेल द्वारा
6 छोटे पैमाने में रेड्डी पी.एन. औद्योगिक उद्यमिता उद्योग डेल्टा प्रकाशन हाऊस, न्यू दिल्ली 1998.
7 Unshardo न्यू जर्सी एक विकासशील समाज में महिलायें, आशीष प्रकाशगन हाऊस नई दिल्ली 193।

****

नर्मदा झाबुआ ग्रामीण बैंक का विश्लेषणात्मक अध्ययन

डॉ. हेमसिंह मण्डलोई *

प्रस्तावना – वर्तमान मे बैंकिंग एक ऐसा क्षेत्र है, जिसके आसपास अर्थव्यवस्था के विकास की धुरी टिकी हुई है। सभ्यता एवं संस्कृति के विकास के साथ ही औद्योगिक एवं आर्थिक क्षेत्र में दिन दूनी एवं रात चौगुनी वृद्धि हुई है। इसका श्रेय बैंकिग क्षेत्र को जाता हैं, क्योंकि बैंको के द्वारा विभिन्न उद्देश्यों के लिए सुगमता एवं सरलता से ऋण उपलब्ध कर दिया जाता है। बैंकिंग व्यवस्था के अन्तर्गत सम्पूर्ण बैंकिंग संस्थानों को शामिल किया जा सकता है जो कि बैंकिग सेवा का प्रदाय करती है। ये संस्थाऐं एक विस्तृत भौगोलिक क्षेत्र में वहॉ की आवश्यकतानुसार विभिन्न प्रकार की वित्त सेवाऐं उपलब्ध करवाती है। अत: यह कहा जा सकता है कि भारतीय बैंकिग व्यवस्था देश की सांस्कृतिक, सामाजिक एवं आर्थिक अनेक विविधताओं से परिपूर्ण है।

क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक का परिचय – भारत में क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक का उद्भाव 2 अक्टूम्बर 1975 को ग्रामीण साख की पूर्ति के लिए हुआ। 1 जून 1987 के अन्त तक भारत के विभिन्न राज्यों में कुल 196 क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक अधिनियम 1976 के द्वारा स्थापना की गई थी। ग्रामीण बैंक की स्थापना एक ऐसी परिकल्पना के आधार पर की गयी है,जो कि स्थानीय हो, ग्रामोन्मुखी हो तथा वाणिज्यिक सिद्धान्तों पर संगठित हो।

क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक की आवश्यकता इसलिए अनुभव की गई क्योंकि वाणिज्यिक एवं सहकारी बैंक जैसी संस्थाऐं ग्रामीण क्षेत्रों के गरीब एवं छोटे उधारकर्ताओं की वित्तीय संबंधी आवश्यकता की पूर्ति करने के लिए पर्याप्त संख्या में नहीं थी।

क्षेत्रीय ग्रामीण बैंको के उद्देश्य – क्षेत्रीय ग्रामीण बैंको की स्थापना का उद्देश्य ग्रामीण जनता तक बैंकिंग सेवा की प्रदाय करना जिससे समाज के कमजोर एवं गरीब वर्ग को आसानी से सस्ते ऋण उपलब्ध हो सके एवं उनकी छोटी-छोटी बचतों को संग्रहित कर उन बचतों को ग्रामीण क्षेत्रों में उत्पादन गतिविधियों के लिए प्रयुक्त करना, जिससे ग्रामीण विकास तेजी से हो सके एवं ग्रामीण जनता साहुकारों एवं महाजनों पर निर्भर न रहे।

नर्मदा झाबुआ ग्रामीण बैंक – नर्मदा झाबुआ ग्रामीण बैंक 1 नवम्बर 2012 को भारत सरकार की अधिसूचना के द्वारा नर्मदा मालवा ग्रामीण बैंक तथा झाबुआ धार क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक को समामेलन कर नर्मदा-झाबुआ ग्रामीण बैंक अस्तित्व में आया है। जिसका कार्यक्षेत्र म.प्र. के 14 जिलों में फैला हुआ है, जो कि पश्चिमी म.प्र. के अन्तर्गत आते है। बैंक का प्रधान कार्यालय इन्दौर में स्थापित किया गया है। नर्मदा झाबुआ ग्रामीण बैंक की 2015-16 में कुल 373 शाखा का कार्यरत है, जिनमें 255 ग्रामीण, 87 अर्द्ध शहरी, 19 शहरी व 12 महानगरीय शाखा है। विस्तृत क्षेत्र में फैली इन शाखाओं पर प्रभावी नियंत्रण व अन्य सुविधाऐं प्रदान करने हेतु 6 क्षेत्रीय कार्यालय देवास, सीहोर, उज्जैन, धार, झाबुआ व खरगोन में स्थापित है।

अध्ययन का उद्देश्य – मेरे शोध का मुख्य उद्देश्य नर्मदा झाबुआ ग्रामीण बैंक द्वारा पश्चिम म.प्र. के जिलों में प्रदाय किए जाने वाले ऋण व्यवस्था का अध्ययन करना एवं बैंक अपने उद्देश्यों की पूर्ति में सफल हुई है या नहीं का पता लागाना।

शाखाओं की क्षेत्र एवं जिलेवार संख्या (तालिका देखे आगे पृष्ठ पर)

नर्मदा झाबुआ ग्रामीण बैंक द्वारा कृषि क्षेत्र को बढ़ावा देने हेतु अल्पावधि ऋण किसान क्रेडिट कार्य योजना, स्टार बंधक योजना, डेयरी, भण्डारण, वेयर हाउस, ग्रामीण गृह ऋण योजना, शैक्षणिक ऋण योजना, ऑटो फायनेन्स आदि प्रमुख योजनाओं के लिए ऋण प्रदाय किया जाता है।

तालिका क्रमांक-1 (देखे आगे पृष्ठ पर)

तालिका का अध्ययन करने से ज्ञात होता है कि वर्ष 2014-15 में कुल ऋण वितरण 330225.07 लाख है, जो वर्ष 2015-16 में बढ़कर 346359.46 लाख हो गया है। कुल ऋण वितरण में जहां वर्ष 2014-15 में कृषि ऋण का भाग 88.63 प्रतिशत है, वही वर्ष 2015-16 में घटकर 84.20 प्रतिशत है। इसका कारण है कि गतवर्ष मानसून कृषि के अनुकुल होने से कृषकों ने कृषि ऋण एवं किसान क्रेडिट कार्ड का पूर्ण उपयोग नहीं किया। जिससे अन्य प्राथमिकता के क्षेत्रों में अधिक ऋणों का वितरण किया गया।

तालिका क्रमांक-2 (देखे आगे पृष्ठ पर)
(ग्राफ देखे आगे पृष्ठ पर)

तालिका का अध्ययन करने से ज्ञात होता है कि कुल लक्ष्य से लक्ष्य प्राप्ति 94.15 प्रतिशत है। राजगढ़, उज्जैन, इन्दौर, झाबुआ, अलीराजपुर, धार जिले में अपने लक्ष्य से कम ऋण विवरण किया गया है, जबकि अन्य जिलो में अपने लक्ष्य से अधिक की लक्ष्य प्राप्ति हुई है। पिछड़े जिलो में लक्ष्य प्राप्त न होने का मुख्य कारण जिले की अधिकांश आबादी निरक्षर एवं दूर ग्रामीण अंचल में निवासरत है, जो बैंकिंग पहुँच से दूर है।

निष्कर्ष एवं सुझाव –नर्मदा झाबुआ ग्रामीण बैंक पश्चिमी म.प्र. के 14 जिलों में कृषि क्षेत्र के साथ-साथ अन्य क्षेत्र में भी अपनी महत्वपूर्ण उपस्थिति दर्ज कर लगातार अपने लक्ष्य की और अग्रसर हो रही है। बैंक द्वारा ग्रामीण क्षेत्र को विशेष तौर पर ध्यान में रखकर अपनी साख योजना को बनायी जा रही है, चूंकि कुछ जिलो के आबादी ऐसे पहाड़ी एवं दूर ग्रामीण क्षेत्र में निवास करती है। जहां तक बैंक की सुविधाएं पहुँचा पाने में अनेक परेशानी आ रही है। बैंक को अपने लक्ष्य प्राप्ति हेतु निम्न सुझावों पर ध्यान देना आवश्यक है –

1. पिछड़े जिलो की अधिकांश जनसंख्या गांवो में निवास करती है,4 जो

* सहायक प्राध्यापक (वाणिज्य) महाराजा भोज शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, धार (म.प्र.) भारत

बैंकिंग जैसी सुविधाओं से अनभिज्ञ है अत: उन्हें बैंकिंग सेवाओं की जानकारी देना।

2. बैंक द्वारा किसानों हेतु जो योजनाऐं चलाई जा रही ह उनका उचित प्रचार-प्रसार करना।
3. बैंक की अधिक से अधिक शाखाओं ग्रामीण क्षेत्रों में खोलना जिससे अधिक से अधिक लोग बैंक से जुड़ सके।
4. ग्रामीण पृष्ठभूमि के अनुसार कृषि एवं उसके सहायक कार्यो हेतु ऋण योजना को बनाकर ऋण वितरण करना।
5. कागजी कार्यवाही व खानापूर्ति कम से कम हो जिससे कृषक बैंक से ऋण लेने में सहज सहसूस करें।
6. कृषकों को दिये जाने वाले ऋण में पूर्ण पारदर्शिता होना चाहिए व नियमानुसार हो।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. मुद्रा बैंकिग एवं विदेशी विनियम - डॉ. जे.सी. वार्ष्णेय।
2. भारत में बैंकिंग विधि एवं व्यवहार - वी.पी. अग्रवाल।
3. बैंकिंग के सिद्धान्त - डॉ. हरीशचन्द्र शर्मा।
4. नर्मदा झाबुआ ग्रामीण बैंक वार्षिक प्रतिवेदन 2015-16।
5. Websites – njgb.in
6. समाचार पत्र -पत्रिकाऐं एवं जर्नल्स।

शाखाओं की क्षेत्र एवं जिलेवार संख्या (31 मार्च 2006 की स्थिति में)

क्षेत्र का नाम	जिले का नाम	ग्रामीण	अर्द्धशहरी	शहरी	महानगरीय	कुल
देवास	देवास	27	06	06	00	39
	शाजापुर	12	06	00	00	18
	आगर मालवा	03	06	00	00	09
खरगोन	खरगोन	21	11	01	00	33
	खण्डवा	19	02	03	00	24
	बुरहानपुर	09	02	02	00	13
सीहोर	राजगढ़	29	08	00	00	37
	सीहोर	15	07	00	00	22
उज्जैन	इन्दौर	08	06	00	12	26
	उज्जैन	17	06	06	00	29
झाबुआ	झाबुआ	16	06	00	00	22
	अलीराजपुर	13	01	00	00	14
	बड़वानी	13	07	00	00	20
धार	धार	53	13	01	00	67
	योग	**255**	**87**	**19**	**12**	**373**

स्त्रोत - नर्मदा झाबुआ ग्रामीण बैंक वार्षिक प्रतिवेदन 2015-16 पेज नं. 17

तालिका क्रमांक-1
नर्मदा झाबुआ ग्रामीण बैंक द्वारा ऋण वितरण
(राशि रू हजारो में)

क्र.	विवरण	2014-15	2015-16
1	**कृषि ऋण -**		
	फसल ऋण एवं किसान क्रेडिट कार्ड	28899260	28827103
	सावधि कृषि ऋण	369623	336565
	कुल कृषि ऋण	29268883	29163668
2	**सूक्ष्म, लघु एवं मध्यम उद्यम (कुल)**	831772	2036804
3	**अन्य प्राथमिकता क्षेत्र**	1675397	2048729
	प्राथमिकता क्षेत्र कुल	31776052	33249201
4	**गैर प्राथमिकता क्षेत्र**	1246455	1386745
	महायोग -	**33022507**	**34635946**

स्त्रोत - नर्मदा झाबुआ ग्रामीण बैंक, वार्षिक प्रतिवेदन 2015-16

तालिका क्रमांक–2

नर्मदा झाबुआ ग्रामीण बैंक की वार्षिक साख योजना वर्ष – 2015–16

(राशि रूपये हजारों में)

क्र.	जिले का नाम	लक्ष्य	प्राप्ति	प्राप्ति (प्रतिशत में)
1	देवास	4511013	5626449	124.73
2	शाजापुर	2187736	2699129	123.38
3	आगर मालवा	989144	1099623	111.17
4	खरगोन	2051118	2898409	118.25
5	खण्डवा	2077054	2395200	115.32
6	बुरहानपुर	735409	1515654	206.10
7	राजगढ़	5270200	4655202	88.33
8	सीहोर	590686	2957787	500.74
9	उज्जैन	6277462	3603466	57.40
10	इन्दौर	1955402	1473743	75.37
11	झाबुआ	958360	853714	89.08
12	अलीराजपुर	741950	333980	45.01
13	बड़वानी	1062066	1279223	120.45
14	धार	6979722	3244367	46.48
	योग –	**36787322**	**34635946**	**94.15**

स्त्रोत – नर्मदा झाबुआ ग्रामीण बैंक, वार्षिक प्रतिवेदन – 2015–16

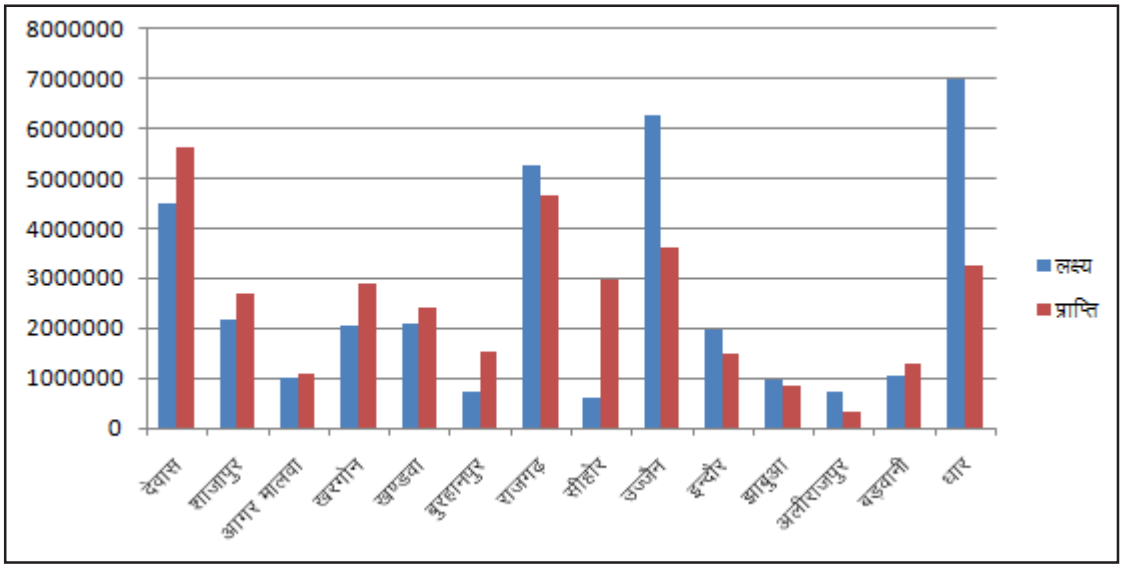

****

धार जिले में वैकल्पिक शिक्षा कार्यक्रम का क्रियान्वयन (वर्ष 2002-03 से 2008-09)

डॉ. बी. एस. सिसोदिया *

प्रस्तावना – मध्यप्रदेश सरकार ने जिले में शिक्षा के विकास हेतु अनेकों कार्यक्रम प्रारंभ किए है जिनका उद्देश्य आदिवासियों में शिक्षा का प्रसार कर उनको स्वावलम्बी बनाना है। इस हेतु वैकल्पिक शिक्षा कार्यक्रम, औपचारिकेतर शिक्षा कर्यक्रम, बुक बैंक योजना (नि:शुल्क पाठ्य पुस्तकों का प्रदाय) बालिकाओं के लिए नि:शुल्क गणवेश वितरण, छात्रवृत्ति का प्रदाय इत्यादि कार्यक्रम प्रमुख है।

प्राथमिक शिक्षा के लोक व्यापीकरण के अन्तर्गत वैकल्पिक शिक्षा कार्यक्रम प्रारंभ किया गया। इसका उद्देश्य कम आबादी वाले गाँवों (जहां शासकीय मानकों के अनुसार प्राथमिक शाला खोलना संभव नहीं है) एवं औपचारिक शिक्षण सुविधा उपलब्ध होने के बावजूद भी बालक/बालिका लाभ नहीं ले पा रहे हैं, ऐसे 6 से 14 वर्ष के आयु के समूह के बच्चों को प्राथमिक शिक्षा उपलब्ध कराना है।

इस कार्यक्रम के क्रियान्वयन हेतु प्रत्येक ग्राम पंचायत सर्वेक्षण के माध्यम से ऐसे स्थानों को चिन्हित करती है, जहां पर शैक्षणिक सुविधा उपलब्ध नहीं है। इसके आधार पर विकासखण्ड वार सूची तैयार कर उसे वार्षिक बजट योजना में सम्मिलित किया जाता है। वैकल्पिक शालाओं के लिए शिक्षक, प्रशिक्षण कार्यक्रम एवं सामग्री की व्यवस्था, मध्यप्रदेश राज्य शैक्षिक अनुसंधान एवं प्रशिक्षण परिषद, राजीव गांधी प्राथमिक शिक्षा मिशन एवं स्वैच्छिक संस्था दिगम्बर (जयपुर) के सहयोग से किया जाता है।

अध्ययन का उद्देश्य – प्रस्तुत शोध पत्र धार जिले में वैकल्पिक शिक्षा कार्यक्रम योजना का अध्ययन निम्न उद्देश्यों की पूर्ति के लिए किया गया है-

1. वैकल्पिक शिक्षा कार्यक्रम के जिले में 06 से 11 वर्ष के छात्र-छात्राओं की प्रवेशित संख्या का अध्ययन।
2. वैकल्पिक शिक्षा कार्यक्रम के अन्तर्गत जिले में 11 से 14 वर्ष के छात्र-छात्राओं की प्रवेशित संख्या का अध्ययन।

समंको का संकलन – प्रस्तुत शोध पत्र धार जिले में वैकल्पिक शिक्षा कार्यक्रम का क्रियान्वयन द्वितीयक स्त्रोतों से प्राप्त समंको पर आधारित है। उक्त अध्ययन हेतु विभिन्न वर्षो (2002-03 से 2008-09) के समंको का विस्तृत विवरण अग्रतालिका क्रमांक-1 व 2 में प्रस्तुत किया गया है।

शोध अध्ययन की दृष्टि से धार जिले में चल रहे वैकल्पिक शिक्षा कार्यक्रम को निम्नानुसार प्रस्तुत किया गया है –

(अ) 6 से 11 वर्ष के बच्चों के लिए प्राथमिक शालाओं में भर्ती अभियान – धार जिले में वैकल्पिक शिक्षा कार्यक्रम के अन्तर्गत कक्षा 1 से 5वीं तक के बच्चों को प्रवेश दिया जाता है। अध्ययन अवधि में इस कार्यक्रम के अन्तर्गत 6 से 11 वर्ष के बच्चों की प्रवेश संख्या को अग्र तालिका क्रमांक-01 से प्रदर्शित किया गया है।

विश्लेषण – तालिका क्रमांक-1 का निरीक्षण करने से स्पष्ट होता है कि वर्ष 2002-03 में 124669 छात्र तथा 97456 छात्राओं ने प्रवेश लिया। प्रवेशित विद्यार्थियों ने अ.जा. एवं अ.ज.जा. वर्ग के क्रमश: 10226 एवं 61860 छात्र तथा 7732 एवं 40314 छात्राएँ सम्मिलित है, जबकि अन्य वर्ग के छात्र एवं छात्राओं की संख्या क्रमश: 52583 एवं 49410 रही। इस वर्ष प्रवेशित कुल विद्यार्थियों की तुलना में अ.ज.जा. वर्ग के छात्र तथा छात्राओं का प्रतिशत क्रमश: 49.61 प्रतिशत एवं 41.36 प्रतिशत रहा। इस कार्यक्रम के अन्तर्गत 2003-04 से 2008-09 के दौरान 2005-06 के अतिरिक्त सभी वर्ग के विद्यार्थियों की प्रवेश संख्या में निरंतर वृद्धि दर्ज की गयी है। वर्ष 2005-06 में कुल 144915 छात्रों एवं 121079 छात्राओं में प्रवेश लिया, जिनमें अ.जा. एवं अ.ज.जा. वर्ग के क्रमश: 10835 एवं 30312 छात्र तथा 10335 एवं 72919 छात्राएँ सम्मिलित है। इस वर्ष प्रवेशित विद्यार्थियों में दोनों वर्ग के छात्रों की संख्या गतवर्ष की तुलना में क्रमश: 24.28 प्रतिशत, 62.29 प्रतिशत कम रही, जबकि दोनों वर्ग की छात्राओं की प्रवेश संख्या में 6.71 प्रतिशत एवं 32.70 प्रतिशत की वृद्धि दर्ज की गई। वर्ष 2005-06 में अ.ज.जा. वर्ग के छात्र एवं छात्राओं की कुल प्रवेश संख्या कुल छात्र/छात्राओं की तुलना में क्रमश: 20.91 प्रतिशत एवं 60.22 प्रतिशत रही। वर्ष 2006-07 में अ.जा., अ.ज.जा. तथा अन्य वर्ग के छात्र/छात्राओं की प्रवेश संख्या गतवर्ष की तुलना में कम रही, जबकि समग्र रूप से अ.ज.जा. वर्ग के छात्र-छात्राओं की प्रवेश स्थिति कुल की तुलना में क्रमश: 53.86 प्रतिशत एवं 60.75 प्रतिशत दर्ज की गई। वर्ष 2007-08 में इनकी प्रवेश संख्या कुल प्रवेशित छात्र/छात्राओं की तुलना में क्रमश: 69.95 प्रतिशत एवं 71.12 प्रतिशत दर्ज की गयी। वर्ष 2008-09 में कुल 159385 छात्रों तथा 146938 छात्राओं के प्राथमिक शालाओं में प्रवेश किया। जिसमें अ.जा. वर्ग के 11394 छात्र तथा 10801 छात्राएँ, अ.ज.जा. वर्ग के 103884 छात्र तथा 100008 छात्राएँ एवं अन्य वर्ग के 44107 छात्र तथा 36129 छात्राएँ सम्मिलित है।

इस प्रकार निष्कर्ष निकलता है कि वैकल्पिक शिक्षा कार्यक्रम के अन्तर्गत वर्ष 2008-09 में वर्ष 2002-03 की तुलना में प्राथमिक शिक्षा हेतु शालाओं में प्रवेशित छात्र एवं छात्राओं की संख्या में क्रमश: 1.28 गुना एवं 1.51 गुना वृद्धि दर्ज की गई। इस प्रकार विगत सात वर्षो में कुल प्रवेशित छात्र एवं छात्राओं की संख्या में क्रमश: 27.85 प्रतिशत एवं 50.77 प्रतिशत वृद्धि दर्ज की गयी। अ.ज.जा. वर्ग के छात्र एवं छात्राओं की प्रवेश संख्या की स्थिति का सिंहावलोकन करने से स्पष्ट होता है कि इनकी प्रवेश

* सहायक प्राध्यापक (वाणिज्य) महाराजा भोज शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, धार (म.प्र.) भारत

संख्या में वृद्धि क्रमश: 67.93 प्रतिशत एवं 148.07 प्रतिशत दर्ज की गयी जो कि प्रशंसनीय है।

अत: यह कहने में कोई संशय नहीं है कि वैकल्पिक शिक्षा कार्यक्रम सफल रहा हैं।

(ब) 11 से 14 वर्ष के बच्चों के लिए माध्यमिक शाला में भर्ती अभियान– धार जिले में वैकल्पिक शिक्षा कार्यक्रम के अन्तर्गत कक्षा 6 से 8वीं तक के बच्चों को प्रवेश दिया जाता है। अध्ययन अवधि में इस कार्यक्रम के अन्तर्गत 11 से 14 वर्ष के बच्चों की प्रवेश संख्या को उम्र तालिका क्रमांक–2 से प्रदर्शित किया गया है।

उपरोक्त तालिका क्रमांक–2 का निरीक्षण करने से स्पष्ट होता है कि वैकल्पिक शिक्षा कार्यक्रम योजना के अन्तर्गत माध्यमिक शिक्षा हेतु वर्ष 2002–03 में 45463 छात्र एवं 52271 छात्राओं ने प्रवेश लिया। प्रवेशित विद्यार्थियों में अ.जा. एवं अ.ज.जा. वर्ष के क्रमश: 3705 एवं 7269 छात्र तथा 1798 एवं 7269 छात्राऐं सम्मिलित है, जबकि अन्य वर्ग के छात्र एवं छात्राओं की संख्या क्रमश: 34489 एवं 16204 रही। इस वर्ष प्रवेशित कुल विद्यर्थियों की तुलना में अ.ज.जा. वर्ग के छात्र तथा छात्राओं का प्रतिशत क्रमश 15.98 प्रतिशत एवं 28.76 प्रतिशत रहा। इस कार्यक्रम के अन्तर्गत वर्ष 2003–04 से 2008–09 के दौरान विद्यार्थियों की प्रवेश संख्या में निरंतर वृद्धि हुई है। वर्ष 2005–06 में कुल 55813 छात्रों एवं 41148 छात्राओं ने प्रवेश लिया, जिनमें अ.जा. एवं अ.ज.जा. वर्ग के क्रमश: 4185 एवं 2567 छात्र तथा 3095 एवं 21196 छात्राऐं सम्मिलित है। वर्ष 2005–06 में प्रवेशित अ.जा. एवं अ.ज.जा. वर्ग के छात्रों की संख्या गतवर्ष 2004–05 की तुलना में क्रमश: 15.27 प्रतिशत एवं 90.66 प्रतिशत कम रही जबकि दोनों वर्ग की छात्राओं की संख्या में क्रमश: 4.88 प्रतिशत एवं 27.69 प्रतिशत की वृद्धि दर्ज की गयी। इस वर्ष अ.ज.जा. वर्ग के छात्र–छात्राओं की प्रवेश संख्या की तुलना में क्रमश: 4.59 प्रतिशत एवं 51.51 प्रतिशत रही।

तालिका क्रमांक–01(देखे)

तालिका क्रमांक–02 (देखे आगे पृष्ठ पर)

वर्ष 2006–07 में कुल 67092 छात्रों एवं 47880 छात्राओं ने प्रवेश लिया जिसमें अ.जा. एवं अ.ज.जा. वर्ग के क्रमश: 4117 एवं 28658 छात्र एवं 2590 एवं 18675 छात्राएँ सम्मिलित हैं। जबकि अन्य वर्ग के छात्र एवं छात्राएँ क्रमश: 34317 एवं 26615 रही। इस वर्ष अ.ज.जा. वर्ग के विद्यार्थियों का कुल से प्रतिशत क्रमश: 42.71 प्रतिशत एवं 39.00 प्रतिशत रहा। वर्ष 2007–08 में कुल 68898 छात्र एवं 49274 छात्राओं ने प्रवेश लिया था। जिसमें अनुसूचित जनजाति वर्ग के छात्र एवं छात्राओं की संख्या क्रमश: 45.62 प्रतिशत एवं 4.43 प्रतिशत रही।

वर्ष 2008–09 में कुल 73710 छात्र एवं 52157 छात्राओं ने प्रवेश लिया जिसमें 5858 छात्र तथा 3653 छात्राएँ अ.जा. वर्ग से एवं 37524 छात्र तथा 26164 छात्राएँ अ.ज.जा. वर्ग की सम्मिलित है जबकि अन्य वर्ग के छात्र एवं छात्राएँ क्रमश: 30328 एवं 22340 रही। अ.ज.जा. वर्ग के छात्र–छात्राओं की संख्या वर्ष 2008–09 में कुल प्रवेशित विद्यार्थियों की तुलना में क्रमश: 50.90 प्रतिशत एवं 50.16 प्रतिशत रही।

निष्कर्ष – इस प्रकार निष्कर्ष निकलता है कि वैकल्पिक शिक्षा कार्यक्रम के अन्तर्गत वर्ष 2008–09 में वर्ष 2002–03 की तुलना में माध्यमिक शिक्षा हेतु विद्यालयों में प्रवेशित छात्र–छात्राओं की संख्या में क्रमश: 1.62 गुना एवं 2.06 गुना वृद्धि दर्ज की गयी। इस प्रकार विगत सात वर्षो में कुल प्रवेशित छात्र–छात्राओं की संख्या क्रमश: 62.13 प्रतिशत एवं 106.39 प्रतिशत की वृद्धि दर्ज की गयी। इसी प्रकार अ.जा. एवं अ.ज.जा. वर्ग के छात्र–छात्राओं की प्रवेश संख्या में वृद्धि क्रमश: (58.11 प्रतिशत एवं 103.17 प्रतिशत) तथा 416.22 प्रतिशत एवं 259.94 प्रतिशत) दर्ज की गयी जो कि सराहनीय है अत: यह कहने में कोई अतिश्योक्ति नहीं की सरकार द्वारा प्रांरभ वैकल्पिक शिक्षा कार्यक्रम सफल रहा हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. भारतीय शिक्षा का विकास – गुप्ता एवं ममता।
2. कार्यक्रम आदिवासी विकास विभाग, धार म.प्र.।
3. जिला सांख्यिकी पुस्तिका, धार 2009 पेज नं. 60, 61
4. दैनिक समाचार पत्र नईदुनिया, दैनिक भास्कर, पत्रिका आदि।

तालिका क्रमांक–01

धार जिले में 6 से 11 वर्ष के बच्चों के लिए वैकल्पिक शिक्षा कार्यक्रम के अन्तर्गत प्रवेश संख्या

वर्ष	कुल प्रवेश		अ.जा.		अ.ज.जा.		अन्य		अ.ज.जा. का कुल से प्रतिशत	
	छात्र	छात्राएँ	छात्र	छात्राएँ	छात्र	छात्राएँ	छात्र	छात्राएँ	छात्र	छात्राएँ
2002–03	124669	97456	10226	7732	61860	40314	52583	49410	49.61	41.36
2003–04	101627	101627	12214	8273	65622	43211	52413	50143	50.38	42.51
2004–05	140496	106699	14309	9685	80389	54949	45798	42065	57.21	51.49
2005–06	144915	121079	10835	10335	30312	72919	103768	37825	20.91	60.22
2006–07	131456	110230	8364	8120	70809	66966	52283	35144	53.86	60.75
2007–08	146229	140471	10509	10568	102297	99917	33423	29986	69.95	71.12
2008–09	159385	146938	11394	10801	103884	100008	44107	36129	65.17	68.06

स्त्रोत – जिला सांख्यिकी पुस्तिका 2009 पेज नं. 60, 61

तालिका क्रमांक–02

धार जिले में 11 से 14 वर्ष के बच्चों के लिए वैकल्पिक शिक्षा कार्यक्रम के अन्तर्गत प्रवेश संख्या

वर्ष	कुल प्रवेश		अ.जा.		अ.ज.जा.		अन्य		अ.ज.जा. का कुल से प्रतिशत	
	छात्र	छात्राएँ	छात्र	छात्राएँ	छात्र	छात्राएँ	छात्र	छात्राएँ	छात्र	छात्राएँ
2002–03	45463	25271	3705	1798	7269	7269	34489	16204	15.98	28.76
2003–04	49681	27642	4200	2161	19027	10318	26454	15163	38.29	37.32
2004–05	53894	33674	4939	2951	27486	16600	21469	14123	51.00	49.29
2005–06	55813	41148	4185	3095	2567	21196	49061	16857	4.59	51.51
2006–07	67092	47880	4117	2590	28658	18675	34317	26615	42.71	39.00
2007–08	68898	49274	4576	3084	31434	21402	32888	24788	45.62	43.43
2008–09	73710	52157	5858	3653	37524	26164	30328	22340	50.90	50.16

स्त्रोत – जिला सांख्यिकी पुस्तिका 2009 पेज नं. 60, 61

****

कृषि उपज मण्डी समिति देवास का आय-व्यय का विश्लेषण- एक अध्ययन

रामकन्या देवड़ा * डॉ. जी. एल. खांगोडे **

प्रस्तावना – भारत देश के आर्थिक विकास में कृषि का महत्वपूर्ण स्थान है। कृषि भारत देश में केवल जीविकोपार्जन का साधन या उद्योग धंधा ही नहीं बल्कि संपूर्ण अर्थव्यवस्था की रीढ़ है। कृषि देश की अर्थव्यवस्था में एक महत्वपूर्ण भूमिका अदा करती है। देश की अधिकांश जनसंख्या गांव में निवास करती है एवं कृषि कार्य ही उनका प्रमुख व्यवसाय है। भारतीय कृषक एक कठोर परिश्रमी के रुप में जाने जाते है। जो कड़ी मेहनत और खून पसीना बहाकर देश के लिए खाद्यानों एवं कृषि उपजों का उत्पादन करते है। स्वतंत्रता प्राप्ति के पूर्व से भारत में कृषि एवं कृषकों दोनों की स्थिति अत्यंत दयनीय थी, फसल उत्पादन की अधिकांश मात्रा का विक्रय साहूकारों, व्यापारियों एवं आढ़तियों को गाँवों में ही कर देते थे। कृषकों को उनकी उपज उचित मूल्य प्राप्त नहीं होता था। कृषि विपणन व्यवस्था अत्यन्त दोषपूर्ण थी, कृषि बाजार में मध्यस्थों की प्रभुसत्ता थी, दोषपूर्ण नापतौल व्यवस्था, अनुचित ब्याज दर, फसल भूगतान की दोषपूर्ण प्रणाली एवं विवाद की स्थिति में कृषक का पक्ष सदैव निर्बल रहता था। भारत देश कृषि प्रधान देश है, इसलिए कृषि क्षेत्र को अनदेखा नहीं किया जा सकता। यदि कृषि असफल रहती है, तो सरकार एवं राष्ट्र दोनों ही असफल रहते है। कृषि एवं कृषक की दयनीय स्थिति के कारण यह महसूस किया गया कि नियंत्रित कृषि उपज मंडियों की स्थापना की जाए। जिसके अन्तर्गत कृषि उत्पादनों का क्रय-विक्रय अधिनियमों के अधीन प्रावधानों के माध्यम से हो। अत: भारत में नियंत्रित मण्डी समितियों की स्थापना की गई।

मण्डी समितियों का आधारभूत स्वरुप – राज्य शासन द्वारा किसी भी क्षेत्र में मण्डी की स्थापना कृषकों एवं जनप्रतिनिधियों की मांग पर की जाती है। इसके लिए राज्य शासन अधिसूचना का प्रकाशन गजट में करती तत्पश्चात् आवश्यक जानकारी एकत्रित करके मण्डी का क्षेत्र निर्धारित किया जाता है तथा इसके संबंध में एक माह के अंदर प्राप्त आपत्तियों एवं सुझावों पर राज्य शासन द्वारा आवश्यक कार्यवाही कर गजट में मण्डी की स्थापना एवं क्षेत्र संबंधी अधिसूचना जारी कर दी जाती है और मध्यप्रदेश कृषि उपज मण्डी अधिनियम1972 के अनुसार स्थापना की जाती है।

उद्देश्य- मण्डी के आय-व्यय के विश्लेषण के आधार पर विपणन प्रक्रिया का अध्ययन करना।

शोध विधि – समस्त प्रकार के आय-व्यय पूर्व पांच वर्षो 2009-10 से 2013-14 तक की आवक आदि से संबंधित संमक जो कि मण्डी द्वारा तैयार किया गया है।

शोध क्षेत्र एवं सीमाऐं- शोध का अध्ययन क्षेत्र देवास जिला कृषि उपज मण्डी तक ही सीमित रखा गया है।

आय संरचना- मध्यप्रदेश कृषि उपज मण्डी अधिनियम 1972 की धारा 19 एवं उसकी उपधाराओं के अंतर्गत वित्त के संदर्भ में निम्न व्यवस्थाएं की गई है अर्थात कृषि विपणन उसी दशा में वैध माना जावेगा। जब निम्न व्यवस्थाओं का पालन किया गया हो।

(अ) कृषि उपज के संदर्भ में विधिवत् लेखा करना।

(ब) कृषि उपज के संबंध में मण्डी प्रभार का भुगतान करना।

इस प्रकार मंडियों को वित्त प्रबंध हेतु सक्षम बनाया गया है। जिससे मण्डी समितियाँ अपने उत्तरदायित्व को कुशलता से निभा सके।

मण्डी समिति को अपनी वित्त व्यवस्था के लिए अनेक स्त्रोत मण्डी अधिनियम 1972 में विद्यमान है जिनका अध्ययन निम्न बिन्दुओं में किया गया है-

(अ) मण्डी शुल्क

(ब) अनुज्ञप्ति शुल्क

(स) भण्डारण शुल्क

(द) अन्य आय

(दुकान किराया, ब्याज से आय, वाहन शुल्क से आय, जलपान गृह (केन्टीन) किराया, जुर्माना/शास्तियां, हरी घास आदि)

शासन द्वारा मण्डी समितियों को मण्डी शुल्क वसुल करने के संबंध में अधिनियम में पर्याप्त शक्तियॉ प्रदान की गई हैं। मण्डी शुल्क के अभाव में किया जाने वाला विपणन वैध माना जावेगा।

मण्डी शुल्क से आय- देवास मण्डी में शुल्क ही वित्तीय प्रबंध का सबसे बड़ा स्त्रोत है। मण्डी में उपज के विक्रय के पश्चात् यह शुल्क क्रेताओं से वसूल किया जाता है। जिसकी न्यूनतम दर 0.50 प्रतिशत हैं, एवं अधिकतम दर 2 रुपये प्रति सैकड़ा मण्डी शुल्क व्यापारियों से लिया जाता है। विगत पांच वर्षो में मण्डी समिति देवास को प्राप्त मण्डी शुल्क निम्न तालिका द्वारा स्पष्ट की गई है।

देवास कृषि उपज मंडी की आय (सारिणी देखे अन्तिम पृष्ठ पर)

(ब) अनुज्ञप्ति शुल्क से आय – मण्डी समिति द्वारा मण्डी कर्मचारियों तथा व्यापारियों, हम्मालों, तुलावटियों, प्रसंस्करणकर्ताओं, भण्डार कर्ताओं आदि व्यक्तियों को मण्डी समिति में कार्य करने के लिए अनुज्ञप्ति प्रदान की जाती है, तत्पश्चात ही कोई व्यक्ति मण्डी कृत्यकारी के रुप में कार्य कर सकता है। कोई भी व्यक्ति विपणी से बिना अनुज्ञप्ति लिए, विपणी में व्यापार नहीं कर सकता। प्रत्येक वर्ष इस अनुज्ञप्ति का निर्धारित शुल्क का भुगतान कर नवीनीकरण करवाना होता हैं। मण्डी समिति द्वारा प्रदान की जाने वाली अनुज्ञप्ति पर वह कुछ राशि शुल्क के रुप में उक्त व्यक्तियों से लेती है। जिसे अनुज्ञप्ति शुल्क कहा जाता है।

* शोधार्थी, शासकीय माधव कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत
** सहायक प्राध्यापक, शासकीय माधव कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत

(स) अन्य साधनों से आय – मण्डी समितियों का आय के प्रमुख स्त्रोत में अनुज्ञप्ति शुल्क आते हैं । इनके अलावा जो बड़ा शीर्षक है। उसमें हमने भण्डारण शुल्क को शामिल किया है, परन्तु मंडी की कुल आय ने इन तीनों शीर्षकों को छोड़ कर भी आय प्राप्त होती है। जिसे अन्य साधनो से आय शीर्षक के अन्तर्गत रखा गया है। जिनमें मुख्य रुप से निम्न मदें शामिल हैं– (1) आर्थिक दण्ड एवं जुर्माना (2) सेन्ट्रीशॉप किराया (3) ब्याज से आय (4) वाहन शुल्क से आय (5) गोबर गालन एवं हरी घास (6) जलपान गृह (केन्टीन) का किराया।

व्यय संरचना – कृषि उपज मंडी अधिनियम में जिस प्रकार वित्त के क्षेत्र में मण्डियों को आत्मनिर्भर बनाया गया है, वह प्रशंसनीय है। जैसा कि मण्डियों की आय के संबंध में अधिकार प्रदान कर उन्हें स्वायत्ता अधिनियम में दी गई है उसी प्रकार समिति के व्यय हेतु भी नियम व उपनियमों द्वारा उसका दायित्व निर्धारित किया गया है–

मण्डी अधिनियम के अनुसार सर्वप्रथम समस्त मण्डियाँ प्राप्त आय को मंडी निधि में हस्तांतरित करेगी तत्पश्चात ही उसमें से कोई व्यय किया जावेगा। मध्य प्रदेश कृषि उपज मंडी अधिनियम 1972 की धारा 38 के अंतर्गत निम्नासार व्याख्या की गई–

मंडी समिति निधि – मध्य प्रदेश कृषि उपज मंडी अधिनियम 1972 की 38 में मण्डी समिति निधि के संकलन एवं इसी अधिनियम की धारा 39 में निधि के उपयोजन के संबंध में निम्न प्रावधान किए गए है–

धारा 38 (1) के अनुसार – 'मंडी समिति द्वारा प्राप्त समस्त धन एक निधि में जो मण्डी समिति निधि कही जाएगी प्रदत्त किए जाएगे और मण्डी समिति द्वारा इस अधिनियम के अधीन उसके प्रयोजनों के लिए उपगम किए गए समस्त व्यय उक्त निधि में से चुकाए जाएगे। ऐसे व्ययों की पूर्ति किये जाने के पश्चात् मण्डी समिती के पास बचा हुआ कोई अधिशेष ऐसी रीति में जैसा कि विहित की जाए, विनिहित किया जाएगा, परन्तु ऐसी धनराशियाँ जो प्रतिभूति निक्षेप, भविष्य निधि के प्रति किए अभिदायों के लिए या किसी अधिसूचित कृषि उपज के सबंध में भुगतान के लिए या तुलैया,हम्माल अथवा अन्य कृत्य कार्यो को देय प्रभारो के लिए समिति द्वारा प्राप्त किया गया हो मण्डी समिति निधि का भाग नहीं होगा किन्तु रेखांकन अलग से किया जाएगा।

धारा38 (2) के अनुसार मण्डी समिति के समस्त धन तथा उपधारा(1) में विनिर्दिष्ट की गई अन्य राशियाँ किसी सहकारी बैंक या यदि मण्डी समिति के मुख्यालय पर ऐसा बैंक विद्यमान न हो तो डाकघर बचत बैंक या किसी ऐसे बैंक में जो बैंक कार्य कंपनी अधिनियम 1970 की प्रथम अनुसूची में तत्समय नवीन बैंक के रूप में विनिर्दिष्ट किया गया हो निक्षिप्त की जाएगी।

निधि का उपयोजन संबधी प्रावधान है। इसी अधिनियम की धारा 68 के उपबंधो के अधीन रखे हुए मंडी समिति निधि केवल निम्नार्किंत प्रयोजनों के लिए व्यय की जा सकेगी –

1. मण्डी प्रांगण के लिए स्थान/स्थानों का अर्जन
2. प्रांगणो का अनुरक्षण एवं सुधार।
3. मण्डी प्रांगण का उपयोग करने वालो के लिए सुविधा एवं सुरक्षा पर व्यय।
4. मानक बोटो एवं मापो को बनाएरखना।
5. लेखाओं की सपरीक्षण करने में उपगम व्यय ।
6. राज्य विपणन विकास निधि के प्रति अभिराय ।
7. राज्य शासन के आदेश का कार्यान्वन करने हेतु व्यय की पूर्ति ।
8. वैज्ञानिक भण्डारण हेतु अभिदान।
9. कृषको हेतु संचार साधनों की व्यवस्था हेतु व्यय।
10. अधिनियम के अधीन निर्वाचन पर व्यय एवं अध्यक्ष उपाध्यक्ष व सदस्यो का मानदेय तथा भत्तों आदि का भुगतान ।
11. इनके अलावा राज्य सरकार के पूर्व मंजूरी से ऐसा व्यय जो लोक हित में हो।

मण्डी समिति द्वारा किए जाने वाले व्ययों में स्पष्ट है कि मण्डी समिति द्वारा कृषि उपजो के विपणन मे गुणात्मक सुधार हेतु किए जाने वाले व्ययो को प्राथमिकता दी गई है।

मण्डी समिति देवास द्वारा मुख्य रूप से निम्न शीर्षको में व्यय किया जाता है –

(अ) स्थापना व्यय
(ब) निर्माण व्यय
(स) बोर्ड शुल्क
(द) अन्य व्यय

(अ) स्थापना व्यय – मण्डी समितियों में कुल व्यय का अधिकांश भाग इसी मद पर व्यय होता है। इसके अन्तर्गत अधिकारियों, कर्मचारियों को किया गया भुगतान (वेतन, भत्ता, बोनस, यात्रा व्यय) अथवा वेतन के बदले किया गया कोई भुगतान शामिल है।

(ब) निर्माण व्यय – मंडी समिति द्वारा मंडी प्रांगण में किए जाने वाले पूंजीगत व्यय अर्थात भण्डारग्रह, विश्रामग्रह, भवन आदि के निर्माण पर जो खर्च किया जाता है, उसे इस श्रेणी में रखा जाता है।

(स) बोर्ड शुल्क – मंडी समिति को प्रतिवर्ष मंडी शुल्क में से कुछ निश्चित प्रतिवर्ष राशि बोर्ड शुल्क के रुप में म.प्र. कृषि विपणन बोर्ड को चुकाना अनिवार्य है। इस शुल्क का समायोजन प्रमुख रुप से मुंडी शुल्क की राशि में से ही किया जाता है।

देवास कृषि उपज मण्डी का व्यय (सारिणी देखे आगे पृष्ठ पर)

(द) अन्य व्यय – मण्डी समितियों द्वारा उक्त व्ययों के अलावा भी अन्य मदों पर राशि व्यय की जाती है। जिसके अंतर्गत निम्न व्ययों को शामिल किया है –

1. कार्यालयीन व्यय 2. मण्डी प्रांगण के अन्य साधारण आयगत व्यय 3. विद्युत व्यय 4. टेलीफोन बिलों का भुगतान 5. गोदाम, कार्यालय, भवन, विश्राम, गृहों के रख–रखाव का व्यय 6. निर्माण पर किए गए गैर पूंजीगत व्यय 7. विपणन संबंधी व्यय 8. समिति के पदाधिकारियों का मानदेय, भत्तो आदि 9. कृषि सूचना केन्द्र पर किया गया व्यय 10. लेखन सामग्री, छपाई बिक्री, डायरी व केलेंडर, पुस्तक पत्रिका आदि पर व्यय।

संदर्भित देवास मण्डी में किए गए विविध व्ययों के पांच वर्षो का विवरण तालिका द्वारा प्रस्तुत किया गया है–

देवास कृषि उपज मण्डी समिति की आर्थिक स्थिति – मण्डी समितियों की स्थापना का मुख्य उद्देश्य कृषकों को उनकी उपज का उचित मूल्य दिलवाना होता है। इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए मण्डी समिति को अनेक आधारभूत सुविधाओं की व्यवस्था करनी होती है, जिनके लिए धन खर्च करना होता है। इस धन को विभिन्न स्त्रोतों से जुटाने के लिए मण्डी को अधिकार भी प्रदान किए गए है। परन्तु मण्डी का व्यवहार तभी विवेकपूर्ण माना जाऐगा, जबकी इसके द्वारा आय की तुलना में व्यय कम किए गए है। अर्थात मण्डीयों को बचतों की प्राप्ति होना चाहिए। बचतों की मात्रा ही ही उनकी आर्थिक स्थिति की सुदृढ़ता या कमजोरी को प्रकट करती है।

देवास कृषि उपज मण्डी समिति की आर्थिक स्थिति (तालिका देखे)
तालिका से निम्नलिखित बातें स्पष्ट होती हैं–

1. इस मण्डी समिति को पिछले 5 वर्ष में प्राप्त आय उसके व्ययों से अधिक रही हैं। अर्थात सभी 5 वर्षों में में बचत की स्थिति रही हैं।
2. इस मण्डी को सबसे कम बचत 2009–10 में हुई हैं। वर्ष में 4508821 रुपये की बचत हुई हैं।
3. इस मण्डी समिति को सबसे अधिक बचत 2012–13 में हुई हैं, इस वर्ष में 30747330 रुपये की बचत हैं।
4. मण्डी के आय–व्यय के आंकड़ों पर दृष्टि डालने से स्पष्ट होता है कि मण्डी समिति की आर्थिक स्थिति सुदृढ़ हैं। इसमें विभिन्न स्त्रोतों से पर्याप्त मात्रा में आय प्राप्त होकर सुविधाओं के विस्तार में आवश्यक वृद्धि हुई हैं।

निष्कर्ष – मण्डी समितियों की स्थापना का मुख्य उद्देश्य कृषकों को उनकी उपज का उचित मूल्य दिलवाना होता हैं। अपने इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए मण्डी को अनेक आधारभूत सुविधाओं की व्यवस्था करनी होती हैं, जिनके लिए धन की आवश्यकता होती हैं। इन सुविधाओं को पूरा करने के लिए मण्डी समितियों द्वारा जो धन खर्च किया जाता हैं, उसकी पूर्ति के लिए समितियों को विभिन्न स्त्रोतों से आय प्राप्ति के अधिकार भी दिए गए हैं। मण्डी का व्यवहार विवेकपूर्ण तभी माना जायेगा, जब आय की तुलना में व्यय कम हो, अर्थात मण्डी समितियों को बचत होना चाहिए। बचतों की मात्रा ही उनकी आर्थिक स्थिति की सुदृढता या कमजोरी को प्रदर्शित करती हैं। जहाँ तक मैंने जानकारी एकत्रित की हैं, इस बात से सन्तुष्टि हैं कि मण्डी समिति अपने इस लक्ष्य को प्राप्त करने में सफल रही है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. म.प्र. कृषि उपज मण्डी अधिनियम एवं नियम (भीमसेन खेत्रपाल)
2. म.प्र. कृषि उपज अधिनियम 1972 के.एल.सेठी
3. विपणन प्रबंध, अग्रवाल एवं श्रीवस्तव

शासकीय एवं अशासकीय प्रकाशन –

1. मण्डीसमिति देवास के वार्षिक प्रतिवेदन
2. उज्जैन जिला सांख्यिकीय पुस्तिकाऐं।

देवास कृषि उपज मंडी की आय

क्र.	वर्ष	मण्डी शुल्क से आय	अनुज्ञप्ति शुल्क से आय	अन्य आय	कुल आय
1	2	3	4	5	6
1	2009–10	113039745	183160	10698181	123921086
2	2010–11	148902512	112600	6388176	155403288
3	2011–12	158227398	71480	9517955	167816833
4	2012–13	179047268	81880	11724554	190853702
5	2013–14	242311788	109700	17992530	260414018

स्त्रोत– कृषि उपज मण्डी समिति देवास के लेखों से प्राप्त।

देवास कृषि उपज मण्डी का व्यय

वर्ष	स्थापना व्यय	निर्माण व्यय	बोर्ड शुल्क	आरक्षित निधि	स्थाई निधि	अन्य व्यय	कुल व्यय
2009–10	12230123	5139246	15840910	4536462	11341151	70323373	119411265
2010–11	16033683	4870480	21199157	5965108	14912770	81466439	144447637
2011–12	19494149	3532046	22586963	6334791	15837035	85183794	152968778
2012–13	24007994	6743542	22143905	6217041	13193967	87799923	160106372
2013–14	26261761	4949713	35205613	9695954	25436768	131100530	232650339

स्त्रोत– कृषि उपज मण्डी समिति देवास के लेखों से प्राप्त।

देवास कृषि उपज मण्डी समिति की आर्थिक स्थिति

क्र.	वर्ष	कुल आय रू. में	कुल व्यय रू में	बचत रू में
1	2009–10	123921086	11941265	4508821
2	2010–11	155403288	144447637	10955651
3	2011–12	167816833	152968778	14848055
4	2012–13	190853702	160106372	30747330
5	2013–14	260414018	232650339	27763679

स्त्रोत– कृषि उपज मण्डी समिति देवास के लेखों से प्राप्त।

****

सार्वजनिक वितरण प्रणाली के अन्तर्गत उचित मूल्य भण्ड़ारगृह संचालक के व्यवहार के प्रति उपभोक्ताओं की संतुष्टि का अध्ययन (ग्वालियर जिले के विशेष सन्दर्भ में)

सीमा भार्गव *

प्रस्तावना – भारत में सार्वजनिक वितरण प्रणाली का प्रादुर्भाव सन् 1939 में द्वितीय विश्वयुद्ध के समय हुआ। स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् उक्त व्यवस्था परिवर्तनशील है।[1] वर्तमान में खाद्यान्न उत्पादन से अधिक महत्व वितरण और उपभोक्ता सन्तुष्टि है। आधुनिक अर्थव्यवस्था में उपभोक्ता व्यावसायिक जगत का राजा माना जाता है। उपभोक्ता सन्तुष्टि व्यवसाय की सफलता एवं उसके दीर्घ जीवन का आधार होता है।[2] उपभोक्ता सन्तुष्टि का मापन विपणन–प्रबंधन की सर्वाधिक महत्वपूर्ण क्रिया है।

सार्वजनिक वितरण प्रणाली के हितग्राही की स्थिति खुले बाजार के उपभोक्ता की तुलना में विभिन्नता लिए हुए है। इन उपभोक्ताओं को दो वर्गो में विभक्त किया गया है। जिनमें बी. पी. एल. तथा ए. ए. वाय. को शासकीय नीतियों के अन्तर्गत अत्यन्त न्यून दरों पर खाद्यान्न की आपूर्ति की जाती है। उपभोक्ता सामान्य बाजार की स्थितियों के समान प्रतिस्पर्धा की स्थिति में नहीं होता है।[3] इसी प्रकार सामग्री की आपूर्ति शासकीय नीतियों के अन्तर्गत की जाती है।

शासन द्वारा निर्धन वर्ग को सामाजिक न्याय प्रदान करने के लिए न्यूनतम मूल्यों पर सामग्री उपलब्ध करवाने के दृष्टिकोण से सार्वजनिक वितरण प्रणाली को लागू किया है। जिससे निर्धन वर्ग समाज में स्वस्थ्य व सम्मानजनक जीवनयापन कर सके।

उक्त वितरण व्यवस्था में उपभोक्ता एवं आपूर्तिकर्ता दोनों का व्यवहार खुले बाजार की स्थितियों जैसा नहीं होता है। विपणन की सामान्य अवस्था में विक्रेता का व्यवहार सर्वाधिक महत्वपूर्ण है।[4] आपूर्तिकर्ता के व्यवहार से प्रभावित क्रेता उसका स्थायी अथवा अस्थायी ग्राहक बनता है। उचित मूल्य दुकानों के माध्यम से वस्तुओं के विक्रय पर यह मनोविज्ञान लागू नहीं होता है, ग्राहक की मजबूरी सामग्री को क्रय करने की अधिक रहती है।[5] व्यावहारिक रूप से यह अपेक्षा की जाती है कि ग्राहक को गुणवत्तापूर्ण वस्तुओं के प्रदाय के साथ दुकानदार का अच्छा व्यवहार भी उपभोक्ता संतुष्टि को प्रभावित करता है।

अध्ययन के उद्देश्य – सार्वजनिक वितरण प्रणाली के प्रति हितग्राहियों की सन्तुष्टि का अध्ययन करना।

शोध समस्या चयन – सार्वजनिक वितरण प्रणाली का मुख्य उद्देश्य गरीब, निर्धन एवं अतिनिर्धन परिवारों को आवश्यक उच्च किस्म की उपभोग सामग्री न्यूनतम मूल्य पर उपलब्ध कराना है किन्तु सार्वजनिक वितरण प्रणाली के अन्तर्गत उपलब्ध सुविधाओं का लाभ लेने में हितग्राहियों की संख्या में कमी आई है। अधिकांश उचित मूल्य दुकानदारों द्वारा लाभ कमाने के लिए उपभोग वस्तुओं का बाजार में विक्रय, रजिस्टरों में फर्जी नामांकन दर्ज किया जाता है। एक महत्वपूर्ण समस्या उपभोक्ताओं के प्रति संचालकों के व्यवहार है। संचालकों के व्यवहार के परिणामस्वरूप उपभोक्ताओं की उचित मूल्य दुकानों से सामग्री क्रय की मनोवृत्ति पर सकारात्मक अथवा नकारात्मक प्रभाव की जांच करना अध्ययन का मुख्य उद्देश्य है।

परिकल्पना – H_0 ग्वालियर जिले में उचित मूल्य दुकानों के संचालकों के व्यवहार से हितग्राही सन्तुष्ट नहीं है।

शोध प्रविधि – सार्वजनिक वितरण प्रणाली के अन्तर्गत संचालित उचित मूल्य की दुकानों के संचालकों के व्यवहार के प्रति हितग्राहियों की सन्तुष्टि के अध्ययन के लिए प्राथमिक समंकों के संकलन के लिए ग्वालियर जिले को समग्र मानते हुए जिले के समस्त 4 तहसिलों – ग्वालियर, चीनोर, डबरा तथा भितरवार में प्रत्येक से 100–100 ऐसे उत्तरदाताओं का चयन किया गया, जो उचित मूल्य दुकानों से सामग्री का क्रय करते है। ग्वालियर जिले की समस्त 4 तहसिलों से कुल 400 उत्तरदाताओं को निर्देशन के रूप में सम्मिलित किया गया है। उपर्युक्त कार्यों को संपादित करने के लिए साक्षात्कार अनुसूची का प्रयोग किया गया है।

प्रतिचयन का आकार = चयनित तहसिलों की संख्या X उत्तरदाताओं की संख्या

400 = 4 X100

इस प्रकार प्रतिचयन का कुल आकार **400** होगा।

संकलित तथ्यों का विश्लेषण – अध्ययन में चयनित उत्तरदाताओं से साक्षात्कार अनुसूची से प्राप्त समंको का विश्लेषण विभिन्न तालिकाओं के माध्यम से किया गया है –

तालिका क्रमांक – 1 – उत्तरदाताओं का सामाजिक–आर्थिक परिदृश्य

क्र.	विशेषता	विवरण	प्रतिशत
1	लिंग	पुरूष	67%
		महिला	33%
2	शिक्षा	अशिक्षित	15%
		शिक्षित	85%
3	व्यवसाय	मजदूरी	57%
		अन्य	43%
4	आय	औसत वार्षिक	12400
5	सदस्यों की संख्या	1 से 5 सदस्य	61%
		5 से अधिक सदस्य	39%
6	राशनकार्ड का प्रकार	सफेद	62.5%
		नीला	25%
		पीला	12.5%

स्रोत – प्राथमिक सर्वेक्षण से प्राप्त समंकों का विश्लेषण वर्ष 2014

* शोधार्थी (वाणिज्य) विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत

तालिका क्रमांक 1 के अनुसार अध्ययन में सम्मिलित 400 उत्तरदाताओं में 67 प्रतिशत पुरूष तथा 33 प्रतिशत महिलाएं है जिनमें 15 प्रतिशत अशिक्षित, 85 प्रतिशत शिक्षित है। शिक्षित उत्तरदाताओं में प्राथमिक तथा माध्यमिक स्तर तक शिक्षित है। उच्च शिक्षित उत्तरदाताओं की सहभागिता नगण्य हैं। आय का प्रमुख स्रोत मजदूरी 57 प्रतिशत तथा 43 प्रतिशत अन्य प्रकार के रोजगार में संलग्न है। सभी उत्तरदाताओं की आय का औसत 12400 रू. वार्षिक है। उत्तरदाताओं के परिवार में 1 से 5 सदस्यों की संख्या वाले उत्तरदाता 61 प्रतिशत तथा 5 से अधिक सदस्य संख्या वाले उत्तरदाता 39 प्रतिशत है। शासन द्वारा विभिन्न आय वर्गो के अनुसार राशन कार्ड का रंग निर्धारित किया गया है। जिससे उनकी सामग्री की मात्रा तथा मूल्य की सुविधा का लाभ लिया जाता है। अध्ययन में सफेद राशन कार्डधारी 62.5 प्रतिशत, नीला 25 प्रतिशत तथा पीला 12.5 प्रतिशत उत्तरदाता सम्मिलित है।

उचित मूल्य दुकानदारों के व्यवहार का अध्ययन – निर्देशन में चयनित उत्तरदातओं से उचित मूल्य दुकानों के संचालकों के व्यवहार का अध्ययन करने के लिए व्यवहार को चार वर्गो में विभाजित किया गया है। उक्त तालिका विश्लेषण से प्राप्त तथ्यों के परिणाम तालिका क्रमांक 2 से स्पष्ट है –

तालिका क्रमांक – 2

उचित मूल्य दुकान संचालकों का व्यवहार

क्र.	विवरण	आवृत्ति	प्रतिशत
1	अच्छा	40	10
2	बहुत अच्छा	10	2.5
3	खराब	240	60
4	साधारण	110	27.5
	योग	**400**	**100**

स्रोत – प्राथमिक सर्वेक्षण से प्राप्त समंकों का विश्लेषण वर्ष 2014

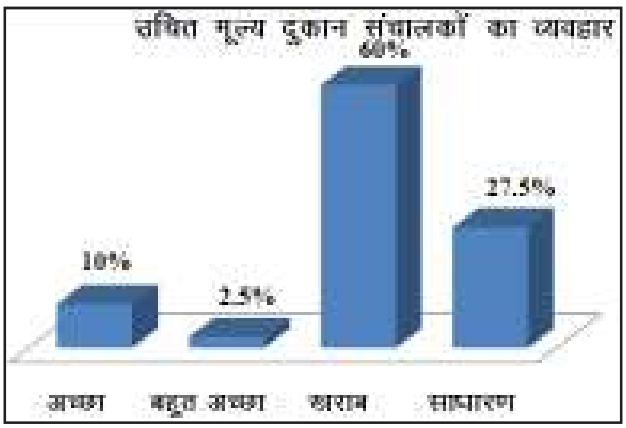

तालिका क्रमांक 2 से स्पष्ट है कि सर्वाधिक 60 प्रतिशत उत्तरदाताओं के अनुसार उचित मूल्य दुकान संचालक का व्यवहार खराब है। 27.5 प्रतिशत उत्तरदाताओं के अनुसार संचालकों का व्यवहार साधारण है। 10 प्रतिशत उत्तरदाताओं के अनुसार उचित मूल्य दुकानों के संचालकों का व्यवहार अच्छा है, जबकि 2.5 प्रतिशत उत्तरदाताओं के अनुसार दुकान संचालकों का व्यवहार बहुत अच्छा है।

परिकल्पना परीक्षण –

H_0 : ग्वालियर जिले में उचित मूल्य दुकानों के संचालकों के व्यवहार से हितग्राही सन्तुष्ट नहीं है।

H_a : ग्वालियर जिले में उचित मूल्य दुकानों के संचालकों के व्यवहार से हितग्राही सन्तुष्ट है।

उपर्युक्त वर्णित शून्य परिकल्पना का परीक्षण तालिका क्रमांक 2 के अनुसार उचित मूल्य दुकानों के संचालकों के व्यवहार के प्रति हितग्राही सन्तुष्टि का परीक्षण किया गया है, जिसके परिणाम निम्नानुसार है –

सर्वाधिक **60 प्रतिशत** उत्तरदाताओं के अनुसार उचित मूल्य दुकान संचालकों का व्यवहार खराब है। अत: हमारी वैकल्पिक परिकल्पना **(H_a:)** अस्वीकृत होती है तथा शून्य परिकल्पना **(H_0:)** स्वीकृत होती है **(H_a:)** **'ग्वालियर जिले में उचित मूल्य दुकानों के संचालकों के व्यवहार से हितग्राही सन्तुष्ट नहीं है।'** स्वीकृत होती है। उचित मूल्य दुकानों के संचालकों द्वारा ग्रामीण तथा पिछड़े क्षेत्रों में शासन द्वारा प्रदत्त सामग्री का शासकीय मूल्य पर पूर्ण विक्रय नहीं करते, अधिकांश मामलों में उचित मूल्य दुकानों पर उपलब्ध होने वाली सामग्री का संचालकों द्वारा बाजार/बनिये अथवा शहरी क्षेत्रों में अधिक मूल्य पर कर दिया जाता है। ग्रामीण क्षेत्र के उपभोक्ताओं द्वारा मांग किए जाने पर सामग्री उपलब्ध नहीं हो पाती है। जिससे दुकान संचालक तथा ग्रामीणों के मध्य विवाद की स्थिति उत्पन्न हो जाती है।

हितग्राहियों को उचित मूल्य दुकानों से व्यवहार करने में समस्याऐं – उचित मूल्य दुकानों के सम्बन्ध में मात्र दुकान संचालक के व्यवहार की समस्या नहीं है बल्कि हितग्राहियों की अन्य समस्याओं में – अशिक्षा के कारण हितग्राहियों को सार्वजनिक वितरण प्रणाली की जानकारी का अभाव, खाद्य सामग्री का निर्धारित मात्रा की अपेक्षा कम मात्रा में वितरण एवम् खाद्य सामग्री में मुख्य रूप से गेहूँ, चावल का ही वितरण किया जाना, वस्तुओं की गुणवत्ता का अभाव, दुकानों के खुलने–बंद होने में अनियमितता, दुकानों को कम सामग्री का वितरण, नाप–तौल में धोखाधड़ी, उचित मूल्य दुकानों की दूरी, पिछड़े क्षेत्रों में उचित मूल्य दुकानों का अभाव आदि समस्याएँ व्याप्त हैं।

उपभोक्ता सन्तुष्टि वृद्धि हेतु सुझाव – वर्तमान में सार्वजनिक वितरण प्रणाली के अन्तर्गत सामग्री का वितरण निर्धन परिवारों को किया जाता है। सदस्यों की संख्या एवं आवश्यकता के अनुरूप सामग्री की उपलब्धता सुनिश्चित किया जाना आवश्यक है। सामग्री की गुणवत्ता, मूल्य, मात्रा तथा अवधि का निर्धारण एवं सुनिश्चित संचालन के साथ वितरकों में मानवीय व्यवहार में वृद्धि किया जाना आवश्यक है।

निष्कर्ष – निष्कर्ष रूप में कहा जा सकता है कि सार्वजनिक वितरण प्रणाली की सफलता के लिए श्रेष्ठ सामग्री की उपलब्धता, मात्रा तथा गुणवत्ता में सुधार से ही खाद्य सुरक्षा का लक्ष्य प्राप्त नहीं होगा बल्कि हितग्राहियों के प्रति संचालकों के मानवीय व्यवहार में सुधार के प्रयासों की सफलता अनिवार्य है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. सर्राफ संजय (1985), 'सार्वजनिक वितरण प्रणाली' भोपाल जिले के विशेष सन्दर्भ में, बरकतउल्ला विश्वविद्यालय, भोपाल, (अप्रकाशित शोध प्रबंध)
2. डॉ. सक्सेना आर. बी. (1995), 'विक्रय प्रबंध' किताब महल इलाहाबाद, उ.प्र.। पृ. 132
3. ग्रोवर सी. एल., कत्याल राकेश (2004), 'स्टोर कीपिंग एवं क्रय', रमेश बुक डिपों जयपुर। पृ 234
4. डॉ. सक्सेना एस. सी. एवं डॉ शुक्ल एस. एम. (2005), 'व्यावसायिक प्रबंध', साहित्य भवन आगरा। पृ. 49
5. डॉ. वाष्णेय जे. सी. 'विपणन, विक्रय – कला एवं विज्ञापन' कैलाश पुस्तक सदन, ग्वालियर। पृ. 57

ग्रामीण पलायन रोकने में मनरेगा की भूमिका का अध्ययन (शाजापुर जिले के विशेष संदर्भ में)

सुनील आडवानी *

शोध सारांश – भारत की ग्रामीण जनसंख्या का प्रतिशत निरंतर कम हो रहा है, जिसके पीछे मुख्य कारण गांव से शहरों की ओर पलायन हैं। स्वतंत्र भारत की पहली जनगणना 1951 में ग्रामीण आबादी का अनुपात 83 प्रतिशत था। जनगणना 2001 के अनुसार हमारे देश की कुल जनसंख्या का 72.2 प्रतिशत गावों में निवासरत थी, जबकि 2011 की जनगणना के अनुसार देश की कुल जनसंख्या 121.02 करोड़ आंकलित की गई है। जिसका 68.84 प्रतिशत गांव में निवास करती हैं। इन आंकड़ों को देखने पर स्पष्ट परिलक्षित होता है कि भारतीय ग्रामीण लोगों का शहरों की ओर पलायन तेजी से बढ़ रहा हैं। ग्रामीणों का शहरों की ओर पलायन रोकने और उन्हें गांव में ही रोजगार उपलब्ध कराने के लिए केन्द्र एवं राज्य सरकार की ओर से विभिन्न योजनाएं चलाई जा रही हैं। सरकार की कोशिश है कि गांव के लोगों को गांव में ही रोजगार मिले। इस दिशा में केन्द्र सरकार द्वारा 02 फरवरी 2006 को आन्ध्र प्रदेश के अनंतपुर जिले से 'महात्मा गांधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी योजना' प्रारंभ की गई। प्रारंभ में देश के 200 जिलों में यह योजना लागू की गई, जिसे बाद में देश के सभी जिलों तक विस्तारित किया गया। इस योजना के अंतर्गत अकुशल मजदूरों को एक वित्तीय वर्ष में कम से कम 100 दिनों का रोजगार देने की गारंटी दी गई। प्रस्तुत शोध–पत्र में ग्रामीण महिलाओं के मनरेगा के माध्यम से आर्थिक सशक्तिकरण हेतु भागीदारी के साथ ग्रामीण पलायन रोकने में मनरेगा की भूमिका का अध्ययन, शाजापुर जिले के विशेष संदर्भ में किया गया हैं।

प्रस्तावना – पूर्व राष्ट्रपति एवं मिसाइल मैन डॉ. ए.पी.जे. अब्दुल कलाम कहा करते थे कि 'शहरों को गांवों में ले जा कर ही ग्रामीण पलायन पर रोक लगायी जा सकती है।' उनके इस कथन के पीछे यह कटू सत्य छिपा है कि गांवों में शहरों की तुलना में 5 प्रतिशत आधारभूत सुविधाएं भी उपलब्ध नहीं हैं। रोजगार एवं शिक्षा जैसी आवश्यकताओं की कमी के अलावा गांवों में बिजली, स्वच्छता, आवास, चिकित्सा, सड़क, संचार जैसी अनेक सुविधाएं बहुत कम हैं। परम्परागत जाति व्यवस्था का शिकंजा, शहरों में औद्योगिक इकाईयों की स्थापना, नगरीय चकाचौंध, गांवों में शिक्षा एवं साक्षरता का अभाव, रोजगार एवं मौलिक सुविधा का अभाव आदि ऐसे कारण है, जिससे ग्रामीण पलायन शहरों की ओर बढ़ रहा हैं। इसके अलावा गांव में कृषि भूमि का लगातार कम होते जाना जनसंख्या बढ़ने और प्राकृतिक आपदाओं के चलते रोजीरोटी की तलाश में ग्रामीणों को शहरों की तरफ जाना पड़ रहा हैं। बीते कुछ वर्षों में गांव छोड़कर शहरों की ओर पलायन करने वाले ग्रामीणजनों की संख्या में निरंतर बढ़ोत्तरी देखी जा रही हैं। इससे कई प्रकार के असन्तुलन भी उत्पन्न हो रहे हैं। शहरों पर आबादी का दबाव बुरी तरह बढ़ रहा है, वहीं गांव में कामगारों की भी कमी का अनुभव किया जाने लगा हैं। भारतीय समाज की मुख्य विशेषता 'संयुक्त परिवार' है, जो कि परिवार परम्परा और समाज में संतुलन बनाए रखती है। पलायन होने से परिवार में विघटन होता नजर आ रहा हैं। प्रवास एवं पलायन के कारण सामाजिक विघटन को भी बढ़ावा मिल रहा है, जिससे अनेक गांव समाप्ति की कगार पर हैं। इन्हें बचाने के लिए ठोस कदम की आवश्यकता है क्योंकि ग्रामीण क्षेत्र भारतवर्ष का आधार हैं।

गांवों से शहर की अेर पलायन को रोकने एवं रोजगार की तलाश में भटक रहे ग्रामीणों को गांवों में ही रोजगार उपलब्ध कराने की दिशा में 'मनरेगा' एक महती योजना हैं।

शोध के उद्देश्य–

1. मनरेगा की उपयोगिता का अध्ययन करना।
2. ग्रामीण पलायन रोकने में मनरेगा की भूमिका का अध्ययन करना।
3. ग्रामीण महिलाओं की आर्थिक स्थिति का अध्ययन एवं विश्लेषण करना।

शोध परिकल्पनाऐं –

1. मनरेगा के कारण ग्रामीणों के लिए रोजगार अवसरों में वृद्धि हुई हैं।
2. मनरेगा से ग्रामीणों के शहरों की ओर पलायन में कमी आयी हैं।
3. मनरेगा से ग्रामीणजनों का आर्थिक सशक्तिकरण हुआ हैं।

शोध प्रविधि एवं क्षेत्र – प्रस्तुत शोध कार्य वैज्ञानिक पद्धति पर आधारित है,जो सांख्यिकी, अर्थशास्त्र, समाजशास्त्र एवं वाणिज्य के विभिन्न आयामों को समाहित किए हुए हैं। शोध प्रबंध में समाहित विभिन्न पहलुओं का अध्ययन एवं विश्लेषण करने के लिए प्रयुक्त समग्र में से इकाईयों के चयन हेतु आकस्मिक निदर्शन पद्धति का प्रयोग किया गया हैं। अध्ययन के लिए शाजापुर जिले के दो विकासखण्डों शाजापुर एवं मोहन बड़ोदिया का चयन दैव निदर्शन पद्धति के आधार पर किया गया हैं। इन विकासखण्डों से 5–5 गांवों का चयन किया गया हैं। प्रत्येक चयनित गांव में से 25 व्यक्तियों का चयन करके कुल 250 हितग्राहियों से प्राथमिक समंकों का संकलन किया गया हैं।

सांख्यिकीय तकनीक – प्राथमिक समंकों के संकलन हेतु अवलोकन एवं साक्षात्कार अनुसूची का प्रयोग किया गया हैं। साक्षात्कार अनुसूची में बंद एवं खुले विकल्पों वाले प्रश्नों को सम्मिलित किया गया हैं। खुले विकल्पों वाले प्रश्नों हेतु सर्वेक्षण के पश्चात् प्राप्त जानकारी के आधार पर एक संकेत पुस्तिका तैयार की गई। उक्त संकेत पुस्तिका के आधार पर साक्षात्कार अनुसूची में संकेतीकरण किया गया। इसके पश्चात् सभी तथ्यों को कम्प्यूटर

* अतिथि विद्वान (वाणिज्य) शासकीय कन्या महाविद्यालय, शाजापुर (म.प्र.) भारत

के माध्यम से विश्लेषित किया गया हैं।

द्वितीयक समंकों का संकलन मध्यप्रदेश पंचायत एवं ग्रामीण विकास विभाग द्वारा प्रकाशित दस्तावेज शासकीय प्रकाशन, विषय से संबंधित ग्रन्थ, शोध पत्र-पत्रिकाएं, प्रतिवेदन आदि से किया गया हैं।

शोध व्याख्या – 'मनरेगा' ग्रामीण क्षेत्र में निवास करने वाले परिवारों को रोजगार उपलब्ध कराने की एक कानूनी योजना हैं। योजनान्तर्गत ग्रामीण क्षेत्र में निवास करने वाले प्रत्येक परिवार को एक वित्तीय वर्ष में कम-से-कम 100 दिवस का रोजगार सुनिश्चित किया गया हैं। अधिनियम के अन्तर्गत रोजागार की प्राप्ति में 33 प्रतिशत भागीदारी महिलाओं की तय की गयी हैं। योजनान्तर्गत महिला-पुरूषों को बराबर पारिश्रमिक दिया जाएगा। मजदूरों को उनके निवास स्थान से 5 किलोमीटर के दायरे में ही रोजगार उपलब्ध कराया जाएगा।

कार्यस्थल पर पीने का पानी, छाया, विश्राम स्थल, प्राथमिक चिकित्सा पेटी एवं बच्चों के लिए झूलाघर की व्यवस्था उपलब्ध रहेगी। कार्य के दौरान चोट लगने या घायल होने पर शासन द्वारा नि:शुल्क इलाज करवाया जाएगा। मनरेगा के अन्तर्गत हितग्राही या लाभार्थी होने के लिए परिवार का ग्राम पंचायत का स्थानीय निवासी होना आवश्यक हैं। स्थानीय ग्राम पंचायत में पंजीयन होने के साथ-साथ परिवार को पंचायत से जॉब कार्ड मिला हों एवं परिवार के वयस्क सदस्य ने अकुशल मानव श्रम करने के लिए आवेदन किया होना चाहिए। 'मनरेगा' योजना का मुख्य उद्देश्य ग्रामीण क्षेत्रों में स्थायी प्रकृति की परिसम्पत्तियों का निर्माण करना, ग्रामीण क्षेत्रों से रोजगार की तलाश में होने वाले पलायन को रोकना एवं ग्रामीणों की आजीविका सुरक्षित करना ताकि कोई भी ग्रामीण परिवार भूखा न रहें।

ग्रामीण पलायन रोकने में मनरेगा की भूमिका का अध्ययन हेतु किए गये शोध से यह स्पष्ट हुआ है कि शाजापुर जिले में मनरेगा के लागू होने के बाद से पलायन में आंशिक रूप से कमी आयी हैं। कुल 18 प्रतिशत ग्रामीणों के अनुसार पलायन में कमी हुई हैं।

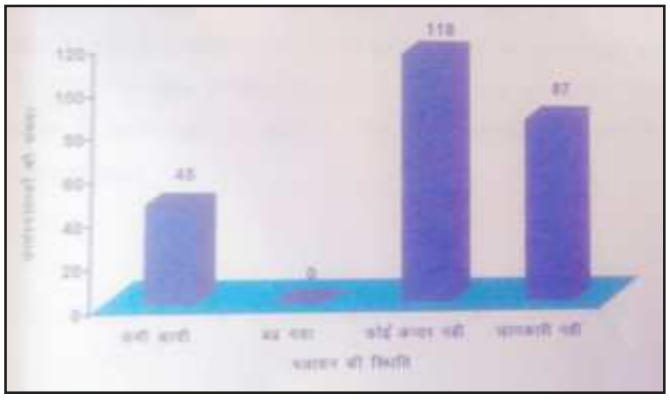

दूसरी तरफ मनरेगा के कारण ग्रामीणों के लिए रोजगार अवसरों में वृद्धि एवं मनरेगा की उपयोगिता का अध्ययन करने से यह पता चलता है कि 41.2 प्रतिशत ग्रामीणजनों के अनुसार मनरेगा के कारण बाजार में मजदूरी की दर में सकारात्मक वृद्धि हुई हैं। मनरेगा की उपयोगिता संबंधी तालिका निम्न हैं –

क्र.	आपके परिवार के लिए मनरेगा की उपयोगिता	संख्या	प्रतिशत
1	भूखा नहीं सोना पड़ता	0	0
2	स्वास्थ्य में सुधार	3	1.2
3	उधारी चुकाने में आसानी	12	4.8
4	मजदूरी की दर में वृद्धि	103	41.2
5	व्यस्त मौसम में मजदूरों की कमी बढ़ गयी हैं	34	13.6
6	श्रमिकों की उत्पादकता में कमी आयी	21	8.4
7	कोई परिवर्तन नहीं	28	11.2
8	जानकारी नहीं	49	19.6
	कुल	250	100.00

अध्ययन से यह भी ज्ञात होता है कि मनरेगा से ग्रामीणजनों का आर्थिक सशक्तिकरण हुआ हैं। सम्पत्तियों की उपलब्धता का अध्ययन करने से निम्न जानकारी प्राप्त हुई हैं –

क्र.	सम्पत्तियों का विवरण	संख्या	प्रतिशत
1	बिजली	236	94.4
2	पंखा	225	90.0
3	टी.वी.	165	66.0
4	मोटर साईकिल	19	7.6
5	ट्रेक्टर	0	0

तालिका का अध्ययन करने पर ज्ञात होता है कि अधिकांश परिवारों के पास बिजली, पंखा एवं टेलीविजन उपलब्ध है, जो उनकी आर्थिक स्थिति में वृद्धि का सूचक हैं।

सुझाव – मनरेगा योजना के प्रभावी क्रियान्वयन एवं इस योजना के उद्देश्यों की प्राप्ति हेतु निम्न सुझाव प्रस्तुत हैं –

1. मनरेगा में प्रदान की जाने वाली मजदूरी की दर में वृद्धि करते हुए बाजार में प्रचलित मजदूरी की दर के अनुरूप मजदूरी भुगतान करना चाहिए जिससे ग्रामीणजनों का आर्थिक सशक्तिकरण हो सके।
2. मनरेगा में कार्यशील दिनों की संख्या में वृद्धि करना चाहिए। जिससे ग्रामीणजनों को स्थायी रोजगार प्राप्त हो एवं पलायन पर प्रभावी रोक लग सके।
3. मनरेगा के प्रावधानों का प्रभावी क्रियान्वयन होना चाहिए। जिससे हितग्राही उससे पूर्ण रूप से लाभान्वित हो सकें।
4. मनरेगा में मजदूरी का भुगतान दैनिक आधार पर किया जाना चाहिए।

निष्कर्ष – मनरेगा योजना भारत सरकार के द्वारा चलाई जाने वाली एक महती योजना है। जिसके परिणामस्वरूप भारत में रोजगार सृजन के साथ-साथ जन मानस के स्वास्थ्य, रहन-सहन एवं व्यवहार में सकारात्मक परिवर्तन हुए हैं। मनरेगा ने गरीब एवं असहाय वर्ग के लोगों का आत्मविश्वास बढ़ाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभायी हैं परंतु यह सभी परिणाम योजना में किये गये विनियोग की तुलना में पर्याप्त नहीं हैं। मनरेगा योजना ग्रामीण पलायन रोकने में आंशिक रूप से ही सफल रही है, जबकि इस योजना के परिणामस्वरूप ग्रामीणों का आर्थिक सशक्तिकरण हुआ हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. 'कैसे रोके गांव से पलायन' पदमसिंह चौधरी, कुरूक्षेत्र, 2012
2. राष्ट्रीय रोजगार गारंटी अधिनियम 2005
3. जिला सांख्यिकी पुस्तिका, जिला सांख्यिकी कार्यालय, शाजापुर
4. मनरेगा की वेबसाईड www.mnrega.nic.in A

भारत में ई-कॉमर्स की संभावनाएं एवं चुनौतियां

डॉ. वी. पी. मीणा *

शोध सारांश – विशाल उपभोक्ता बाजार एवं लगभग 70% आबादी तक इन्टरनेट की पहुंच होने से ई-कॉमर्स व्यवसाय के विस्तार की भारत में असीम संभावनाएं मौजूद हैं। इसमें सालाना 34% की दर से वृद्धि की संभावना हैं। लेकिन ग्राहकों में जागरूकता की कमी होना, तकनीकी ज्ञान का पर्याप्त न होना, डिलीवरी सिस्टम व्यवस्थित न होना, धोखाधड़ी होने की संभावना, आदि ई-कॉमर्स व्यवसाय के विस्तार में प्रमुख बाधाएं हैं। उपभोक्ता सुरक्षा, तकनीकी सुधार एवं कानूनी प्रावधानों को कड़ाई से लागू कर इसका तेजी से विस्तार किया जा सकता हैं। इससे न केवल रोजगार के अवसर बढेंगे बल्कि भारतीय अर्थव्यवस्था के विकास में मदद भी मिलेगी।

प्रस्तावना – जब इलेक्ट्रॉनिक माध्यमों से वस्तुओं एवं सेवाओं का लेन-देन किया जाता है, तो उसे ई-कॉमर्स या इलेक्ट्रॉनिक कॉमर्स कहते है। सरल शब्दों में कहा जाए तो इलेक्ट्रॉनिक संचार माध्यमों से व्यवसाय संचालित करना ई-कॉमर्स कहलाता है। आधुनिक तकनीक के युग में यह व्यवसाय संचालित करने का सबसे सरल एवं सस्ता माध्यम हैं। यह व्यवसाय के परंपरागत तरीके की बजाय 24 घंटे संचालित होने वाला व्यवसाय है। इसमें माल एवं सेवाओं के जटिल वितरण नेटवर्क जैसे उत्पादक, थोक विक्रेता, फुटकर विक्रेता तथा ग्राहक, को समाप्त कर सीधे इलेक्ट्रॉनिक माध्यमों से उपभोक्ता से संपर्क स्थापित किया जाता हैं। इससे न केवल समय एवं श्रम की बचत होती है बल्कि अन्य अप्रत्यक्ष लागतें कम होने से उपभोक्ता को वस्तुएं कम कीमत पर भी उपलब्ध हो जाती हैं। ई-कॉमर्स व्यवसाय के विस्तार को देखते हुए सरकार ने सूचना प्रौद्योगिकी अधिनियम 2000 पारित कर इलेक्ट्रॉनिक लेन-देन को कानूनी मान्यता प्रदान की है। अब तो सेबी भी ई-कॉमर्स के माध्यम से म्यूचुअल फण्ड की बिक्री करने की अनुमति देने पर विचार कर रहा है।

उद्देश्य – प्रस्तुत शोध पत्र का मुख्य उद्देश्य भारत में ई-कॉमर्स व्यवसाय के विस्तार की संभावनाओं का पता लगाना एवं संभावित चुनौतियां एवं उनके समाधान हेतु सुझाव देना है।

ई-कॉमर्स के स्वरूप – [1] **–** व्यापारिक लेन-देन एवं पक्षकारों के आधार पर ई-कॉमर्स के कई स्वरूप प्रचलित है। यथा व्यवसाय से व्यवसाय (B to B) - इसके अन्तर्गत दो व्यवसायिक संस्थाओं के बीच इलेक्ट्रॉनिक माध्यमों से व्यवसाय किया जाता है। व्यवसाय से उपभोक्ता (B to C) इसके अन्तर्गत कम्पनी द्वारा सीधे उपभोक्ता को वस्तुएं एवं सेवाएं बेची जाती है। जब तीसरे पक्षकार के माध्यम से दो उपभोक्ताओं के बीच वस्तुओं का लेन-देन होता है, तो उसे उपभोक्ता से उपभोक्ता (C to C) ई-कॉमर्स कहते है। सरकार एवं नागरिकों के बीच लेन-देन या सरकारी सुविधाओं का आदान-प्रदान सरकार एवं नागरिक ई-कॉमर्स (G to C) कहलाता हैं। इसके माध्यम से सरकार को अपनी योजनाओं को पात्र हितग्राहियों तक पहुंचाने में आसानी होती है।

ई-कॉमर्स संबंधी कानूनी प्रावधान-[2] इन्टरनेट के माध्यम से संचालित व्यवसाय को नियंत्रित करने के उद्देश्य से सरकार ने सूचना प्रौद्योगिकी अधिनियम 2000 पारित किया है। इसके माध्यम से डिजिटल हस्ताक्षर को कानूनी मान्यता प्रदान की गई है। अध्याय 1 में कम्प्यूटर नेटवर्क या कम्प्यूटर सिस्टम से बिना मालिक की अनुमति के जानकारी एक्सेस करने को अपराध की श्रेणी में रखा गया है। अध्याय 10 में इलेक्ट्रॉनिक माध्यम से व्यापार करने संबंधी मामलों की सुनवाई के लिए अलग से ट्रिब्यूनल गठित करने का प्रावधान है। जिसका अध्यक्ष उच्च न्यायालय के न्यायाधीश के समकक्ष योग्यता रखने वाला व्यक्ति होगा। अध्याय ग्यारह में विभिन्न अपराधों जैसे कम्प्यूटर डॉक्यूमेंट से छेड-छाड़ करना, कम्प्यूटर सिस्टम को हेक करना, इलेक्ट्रॉनिक फार्म में आपत्ति जनक सूचना प्रकाशित करना आदि को अपराध की श्रेणी में रखा गया है। इसके लिए 2 वर्ष से लेकर 10 वर्ष तक की सजा एवं 2 लाख से 5 लाख रूपयें तक जुर्माने का प्रावधान है। व्यक्ति या कम्पनियों द्वारा व्यावसायिक सूचनाओं के गलत उपयोग करने पर पीड़ित पक्षकार को 1 करोड़ रू. तक हर्जाना प्राप्त करने का प्रावधान अधिनियम में किया गया।

ई-कॉमर्स के फायदे – ई-कॉमर्स व्यवसाय से न केवल छोटे एवं बड़े सभी कारोबारियों को अपने व्यवसाय के विस्तार के अवसर प्राप्त होते हैं, बल्कि जटिल वितरण नेटवर्क समाप्त होने से समय एवं श्रम की बचत होती है। अप्रत्यक्ष लागतों में कमी होने के कारण वस्तुएं एवं सेवाएं कम कीमत पर उपभोक्ता को उपलब्ध हो जाती है। इसके अलावा ऑनलाईन शॉपिंग करने पर उपभोक्ता के समक्ष कई विकल्प मौजूद रहते है। इसके माध्यम से न केवल वह वस्तुएं एवं सेवाएं खरीद सकता है बल्कि अपनी समस्याओं का समाधान भी करा सकता है।

ई-कॉमर्स की चुनौतियां –

- **जागरूकता की कमी होना –** ई-कॉमर्स व्यवसाय के प्रति जागरूकता की कमी के कारण इसका पर्याप्त विस्तार नहीं हो सका है। क्योंकि लगभग 70% (4) आबादी तक इन्टरनेट की पहुंच होने के बावजूद केवल 4.6 (4) करोड़ लोगों द्वारा ऑनलाईन शॉपिंग करना इनमें से केवल 11% (10) द्वारा मोबाईल शॉपिंग करना, यह दर्शाता है कि ग्राहकों में अभी ई-कॉमर्स व्यवसाय के प्रति जागरूकता की कमी है।

* सहायक प्राध्यापक (वाणिज्य) पं.बा.कृ. शर्मा 'नवीन' शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, शाजापुर (म.प्र.) भारत

- **डिस्काउन्ट बढ़ा-चढ़ाकर पेश करना-**[8] – ई-कॉमर्स कंपनियां विज्ञापनों में एक ही वस्तु के दो मूल्य दर्शाती हैं। सूची मूल्य और बिक्री मूल्य, प्रत्येक कंपनी एक ही वस्तु का सूची मूल्य अलग-अलग बढ़ाकर बताती है। जबकि बिक्री मूल्य समान होता है। इससे ग्राहक अधिक कटौती समझकर उस कंपनी की ओर आकर्षित होता है, जिसके सूची मूल्य और बिक्री मूल्य में सबसे अधिक अंतर होता है। जबकि वास्तव में ऐसा होता नहीं है अर्थात् ग्राहकों को गलत तरीके से भ्रमित करने का प्रयास किया जाता है।
- **डिलीवरी सिस्टम ठीक न होना –** डिलीवरी सिस्टम ठीक न होने के कारण ई-कॉमर्स कंपिनयों की पहुंच ग्रामीण क्षेत्रों तक नहीं हो सकी है। शहरों में भी डिलीवरी के दौरान माल आदेशानुसार न होने या खराब निकलने की खबरें आए दिन समचार पत्रों में पढ़ने को मिलती हैं। इसका ई-कॉमर्स के विस्तार पर विपरीत प्रभाव पड़ता है।
- **फर्जी वेबसाइट बनाकर धोखाधड़ी करना –** [7] – ई-कॉमर्स व्यवसाय में एक समस्या यह भी है कि तकनीक के जानकार व्यक्ति फर्जी वेबसाइट बनाकर लोगों के साथ धोखाधड़ी करते हैं। इससे ऑनलाईन शॉपिंग के प्रति लोगों का विश्वास कम हो जाता है। फर्जी वेबसाइट के माध्यम से धोखाधड़ी करने का मामला इन्दौर में कार खरीदी के संबंध में आया था। जिसमें वेबसाइट वे.डॉट.कॉम पर कार बुक करवाई गई थी और इसके लिए 7 लाख रूपयें उक्त कंपनी के खाते में जमा भी करवा दिए गए थे लेकिन समय पर कार की डिलीवरी नहीं हो सकी। जांच करने पर वेबसाईट फर्जी पाई गई।
- **कुशल प्रबंधन की कमी –** ई-कॉमर्स व्यवसाय की सफलता का आधार ही कुशल प्रबंधन है। इसके बिना ई-कॉमर्स की कल्पना भी नहीं की जा सकती हैं। प्रबंधन की कमी का ताजा उदाहरण देश की बड़ी ई-कॉमर्स कंपनी स्नेपडील का है। जिसके संचालकों को घाटे के कारण अपने वेतन में कटौती करना पड़ी एवं कर्मचारियों की छटनी का निर्णय लेना पड़ा है।[11]

भारत में ई-कॉमर्स व्यवसाय की संभावनाएं- भारत में विशाल उपभोक्त बाजार उपलब्ध होने तथा इन्टरनेट सुविधाओं का विस्तार होने से ई-कॉमर्स का विस्तार तेजी से हुआ है। औद्योगिक संगठन सी.आई.आई. के अनुसार इसमें प्रतिवर्ष लगभग 34% की दर से वृद्धि होने की संभावना है। वर्ष 2009 में ई-कॉमर्स व्यवसाय 2.9 अरब डालर, 2014 के 13.6 अरब डालर, वर्ष 2015 में 16 अरब डालर था जो बढ़कर वर्ष 2018 में 40.3 अरब डालर और वर्ष 2020 तक 102 अरब डालर होने की संभावना है। सतत् नवाचार, स्मार्ट फोन, इन्टरनेट के विस्तार से ई-शॉपिंग करने वालों की संख्या में लगातार वृद्धि हो रही है। वर्ष 2013 में जहाँ यह 2 करोड़ थी, वह वर्ष 2015 में 4 करोड़ हो गई। वर्ष 2018 में इसके 14 करोड़ एवं वर्ष 2020 तक लगभग 22 करोड़ होने की संभावना है। अर्थात् 7 वर्षो में ई-शॉपिंग करने वालों की संख्या लगभग 10 गुणा हो जाएगी। ई-शॉपिंग पर प्रति व्यक्ति खर्च में लगभग 18% की वृद्धि संभावित है। वर्ष 2013 के यह प्रति व्यक्ति 147 डालर था, वर्ष 2015 में बढ़कर 247 डालर प्रति व्यक्ति हो गया। वर्ष 2018 इसमें 288 डालर एवं 2020 तक 464 डालर प्रति व्यक्ति होने की संभावना है।[12]

ई-कामर्स व्यवसाय के विस्तार को देखते हुए ही देश के बड़े-बड़े उद्योग समूह जैसे टाटा, बिरला, रिलायंस भी नई ई-कॉमर्स कंपनियां शुरू करने या इनमें निवेश की संभावनाएं तलाश रहें हैं। ई-कॉमर्स के विस्तार को देखते हुए स्नेपडील गांवों में 5000 कियोस्क खोलने जा रही है। अमेजन 24 घंटे में देश के किसी भी कोने में माल की डिलीवरी करने की व्यवस्था कर रहा है, तो फ्लिपकार्ट ग्रामीण क्षेत्रों में बेहतर डिलीवरी के लिए डाकघर की मदद ले रही है।[3]

एसोचैम ने ई-कॉमर्स व्यवसाय के विस्तार से वर्ष 2016 में लगभग 2.50 लाख[6] रोजगार के अवसर पैदा होने की संभावना व्यक्त की थी। इस व्यवसाय से सरकार के राजस्व में भी वृद्धि होने की संभावना है। केन्द्रीय प्रत्यक्ष कर बोर्ड ने विदेशी ई कॉमर्स कंपनियों द्वारा भारत में किए जाने वाले लेन-देन पर 6-8% इक्वलाईजेशन लेवी लगाने की सिफारिश की है।[9] वहीं कई राज्य सरकारें ई-कॉमर्स कंपनियों के माध्यम से की जाने वाली बिक्री पर वेट लगाने की तैयारी कर रही है।[5]

निष्कर्ष एवं सुझाव – यद्यपि भारत में ई-कॉमर्स व्यवसाय की असीम संभावनाएं मौजूद है। लेकिन यह तभी संभव है, जबकि शहर से लेकर गांव तक इंटरनेट सुविधाओं एवं आधुनिक तकनीक का विस्तार किया जाए। ई-कॉमर्स कम्पनियों को भी चाहिए की वे अपनी ब्रांडिग के साथ-साथ ग्राहकों के विश्वास को जीते क्योंकि ग्राहक और कम्पनी के बीच विश्वास ही ऐसी चीज है, जिसके आधार पर उपभोक्ता ऑनलाईन शॉपिंग करने के लिए तैयार होता है। यदि इसमें पहले ही लेन-देन में कोई समस्या आती है, तो ग्राहक का कंपनी पर से विश्वास उठ जाता है जो उस कम्पनी के लिये घातक होता है। क्योंकि ग्राहक स्वयं कंपनी का अच्छा विज्ञापनकर्ता भी है। ई-कॉमर्स कंपनियों को भी नियोजित तरीके से आगे बढ़ना होगा। डिलेवरी सिस्टम में सुधार करने एवं ऑनलाईन धोखाधड़ी को रोकने के लिए सरकार को भी कड़े कानूनी प्रावधान करना होगा। तभी भारत जैसे विशाल उपभोक्ता बाजार में ई-कॉमर्स व्यवसाय का विस्तार संभव है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. उपाध्याय- शर्मा दयाल व्यावसायिक वातावरण रमेश बुक डिपो जयपुर - नई दिल्ली
2. ए. मंसूर एवं अनुराग सीथा इन्टरनेट एण्ड ई-कॉमर्स प्रज्ञा पब्लिकेशन प्रा.लि. ई-38, इण्डस्ट्रीयल एरिया मथुरा (उ.प्र.)

दैनिक समाचार पत्र -

3. दैनिक भास्कार उज्जैन संस्करण दिनांक - 01/01/15 पृष्ठ क्रमांक 17
4. दैनिक भास्कर उज्जैन संस्करण दिनांक - 13/04/15 पृष्ठ क्रमांक 08
5. दैनिक भास्कर उज्जैन संस्करण दिनांक - 06/09/15 पृष्ठ क्रमांक 13
6. दैनिक भास्कर उज्जैन संस्करण दिनांक - 15/02/16 पृष्ठ क्रमांक 13
7. नई दुनिया इंदौर संस्करण दिनांक - 29/02/16 पृष्ठ क्रमांक 13
8. दैनिक भास्कर उज्जैन संस्करण दिनांक - 10/03/16 पृष्ठ क्रमांक 13
9. दैनिक भास्कर उज्जैन संस्करण दिनांक - 22/03/16 पृष्ठ क्रमांक 13
10. दैनिक भास्कर उज्जैन संस्करण दिनांक - 27/03/16 पृष्ठ क्रमांक 18
11. दैनिक भास्कर उज्जैन संस्करण दिनांक - 27/02/17 पृष्ठ क्रमांक 11
12. नई दुनिया इन्दौर संस्करण दिनांक - 28/02/17 पृष्ठ क्रमांक 08
13. वेबसाईट- **www.statista.com**

****

भारत में एकीकृत ग्रामीण विकास कार्यक्रम एक अध्ययन

डॉ. स्मृति जैन *

प्रस्तावना – एकीकृत ग्रामीण विकास की अवधारणा के अर्थ है कि ग्रामीण क्षेत्र में निवास करने वाली सम्पूर्ण जनसंख्या का सर्वांगीण विकास उसमें उसकी आय तथा जीवन स्तर को ऊँचा उठाना एवं सुधार लाने से है। भारत गांवों का देश है। इसमें सामान्य, पिछड़ा वर्ग, अनुसूचित जाति, अनुसूचित जनजाति के पुरूष एवं महिलाए निवास करती हैं। व्यवसायिक विभाजन के आधार पर दृष्टिपात करें तो कृषक (वृहत, मझौले, लधु एवं सीमान्त) खेतीहर श्रमिक, भूमिहीन श्रमिक, गैर कृषि श्रमिक और परम्परागत व्यवसाय में लगे लोग आते है।

स्वतंत्रता के बाद यह बात तय हो चुकी थी कि ग्रामीण भारत में रह रहे अधिसंख्य लोगों के जीवन को अच्छा एवं गरिमापूर्ण बनाने के लिए प्रयत्न किया जाना आवश्यक है। इसी अवधारणा को ध्यान में रखकर केन्द्र तथा राज्य सरकारों ने ग्रामीण विकास की कई योजनाओं की शुरूआत की है। जिसमें रोजगार उन्मुख, आवास, सिंचाई के साधन, स्वास्थ्य, गरीबी उन्मूलन, स्वच्छ पेयजल, स्वच्छता तथा ग्रामीण सड़कें आदि से सम्बन्धित कार्यक्रम शुरू किए गए हैं। 11 वी पंचवर्षीय योजना तक केन्द्र सरकार के ग्रामीण विकास विभाग तथा राज्य सरकारों के पंचायत एवं ग्रामीण विकास विभागों ने बड़ी मोटी रकमों को इन कार्यक्रमों पर व्यय किया है, किन्तु जो ग्रामीण विकास भारत या राज्यों में होना चाहिए वह नहीं हुआ है। मैं यह नहीं कह रही हूँ कि ग्रामीण विकास हुआ ही नहीं पर यह अवश्य कहूंगी कि जो विकास होना चाहिए वह निर्धारित लक्ष्य एवं व्यवस्थित ढंग के अनुसार नहीं हुआ है। अभी बहुत कुछ होना बाकी है। क्योंकि सुधार एक सतत प्रक्रिया है और सुधार की दिशा में हम आगे बढ़ें हैं।

जिस देश में एक अरब 30 करोड जनसंख्या निवास करती हो और लगभग 70 प्रतिशन जनसंख्या का भाग कृषि पर आजीविका को आधार लेकर गांव में निवास करती हो तो निश्चित है कि वहां का विकास सर्वोपरि है।

इस्पाक (एशिया के लिए आर्थिक एवं सामाजिक कमीशन) ने ग्रामीण क्षेत्रों में समन्वित विकास की रूपरेखा तैयार की है। जिसमें मापदण्ड इस हेतु किए हैं। भारत इन्हीं मानदण्डों पर ग्रामीण विकास की रूपरेखा तय कर कदम उठा रहा है।

ग्रामीण विकास की परिकल्पना मुख्यत: गरीबी को भी अभिलक्षित करता है। ऐसी योजनाओं में गरीबी के लिए समनाधर्मी नीति के आधार पर सभी वर्गो संस्थाओं एवं संगठनों का सहयोग प्राप्त होना श्रेयस्कर है। मात्र सरकार सहयोग इसमें पूर्ण उपलब्धि प्रदान नहीं कर सकता है। इसमें संसाधनों का समुचित तथा अधिकतम उपयोग ही सफलता की कुंजी है। ग्रामीण विकास की अवधारणा प्राचीन काल से ही अवतरित है। इसका सर्वप्रथम प्रयोग अर्थशास्त्र में किया गया [1] भारतीय साहित्य में रवीन्द्रनाथ टैगोर ने विकास के गुणात्मक पक्ष पर अधिक बल दिया है। विश्वबैंक ने भी ग्रामीण विकास कार्यक्रम, गरीब ग्रामीण छोटे–छोटे और सीमान्त किसानों, भूमिहीनों और किरायदारों का आर्थिक और सामाजिक जीवन में सुधार लाने की एक व्यूह रचना है।

[2] 1858 से 1919 तक ब्रिटिशकाल में ग्रामीण विकास की प्रक्रिया विद्यमान थी। 1906 में भारतीय कृषि सेवा प्रारंभ की गई थी। इसी तरह 1920 से 1950 तक ब्रेयनी प्रयोग एवं गॉधीजी का सेवाग्राम कई रचनात्मक कार्यो को प्रारंभ किया गया बिनोबाजी की ग्रामदान, भूदान, ग्रामीण विकास की ही अवधारणा थी।

1948 में इटावा पायलट परियोजना में सामुदायिक विकास परियोजना इसी का हिस्सा थी। [3] स्वाधीनता पश्चात तो निरन्तर ग्रामीण विकास पर जोर दिया जा रहा है। 2004 तक लगभग 74 योजनाए चालू थी। जिनमें प्रमुख्यत: सामुदायिक विकास कार्यक्रम (1952), कुंआ निर्माण कार्यक्रम (1966), सीमान्त कृषक एवं कृषि श्रमिक एजेन्सी(1970–71) कार्य के बदले अनाज योजना (1977–78), अन्त्योदय स्वरोजगार योजना (1978), एकीकृत समम्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम (1979–80), इंदिरा आवास योजना (1985), जवाहर रोजगार योजना (1989), रोजगार आश्वासन योजना(1993), निर्माण ग्राम पुरूस्कार (2003), प्रधानमंत्री सड़क योजना (2000), दीनदयाल उपाध्याय गोकुल ग्राम योजना (2004), आदि बहुत योजनाए लागू की हैं। राष्ट्रीय स्तर पर इन योजनाओं के लिए नवीन ढांचा तैयार (1999) कर कुछ योजनाओं को आपस में मिलाकर ग्रामीण विकास किया जा रहा है। जिसमे जवाहर ग्राम समृद्धि योजना (1999) इसे सम्पूर्ण ग्रामीण रोजगार में शामिल कर लिया गया है। स्वर्ण जयंती ग्राम स्वरोजगार योजना(1999) ग्रामीण स्वच्छता कार्यक्रम, ग्रामीण आवास योजना (2000) वाटर शेड आदि योजनाए तत्कालीन समय में चालू की गई है।

ग्रामीण विकास कार्यक्रम का नवीन ढ़ांचा 1999 से वर्तमान तक – देश में जब ग्रामीण विकास योजनाओं का एक बढ़ा समूह बहुत सारे नाम एवं बहुत सारे उद्देश्य के साथ लागू किया गया तो निश्चित है कि ग्रामीणजनों को इनके नाम याद रखना कठिन हो गया। तब प्रश्न आया कि इनके संचालन/क्रियान्वयन में कठिनाई हो रही है। अत: ग्रामीण विकास का नवीन ढाँचा तैयार हुआ एवं इन सात आठ वर्षो में एक नवीन ढांचा ग्रामीण विकास योजनाओं का तैयार किया गया। उसी क्रम में इन्हें संचालित/क्रियान्वित किया जा रहा है।

जवाहर ग्राम समृद्धि योजना (JGSY) - जवाहर ग्राम समृद्धि योजना 1

* गाडरवाड़ा, जिला–नरसिंहपुर (म.प्र.) भारत

अप्रैल 1999 को शुरू की गई ताकि पूववर्ती जवाहर रोजगार योजना को पुनर्गठित करके ग्राम स्तर पर ग्रामीण ढ़ांचागत सुविधाओं का विकास सुनिश्चित किया जा सके। अत: जवाहर रोजगार योजना का इसमें विलय करके सरकार ने जवाहर ग्राम समृद्धि योजना लागू की।

(स्त्रोत वार्षिक रिपोर्ट 1999-2000 भारत सरकार ग्रमीण विकास मंत्रालय नई दिल्ली पेज 27) पुन: यह योजना 1 अप्रैल 2002 को सम्पूर्ण ग्रामीण रोजगार योजना में शामिल कर दी गई।

स्वर्ण जयंति ग्राम स्वरोजगार योजना (S.G.S.Y.) – 1 अप्रैल 1999 से इसे शुरू किया गया। इसमें 1980 की सम्बन्धित ग्रामीण विकास कार्यक्रम, डवांकरा (1982), ट्राईसेम (1979), उन्नत किस्म औजार की आपूर्ति (1992),गंगा कल्याण योजना (1997),दस लाख कुँओ की योजना (1988),इन सभी को इस योजना में समाहित कर दिया गया।

स्त्रोत (वही) इस योजना का मूल उद्देश्य बैंक ऋण तथा सरकारी सब्सिडी के तालमेल से आय उपार्जन, परिसम्पत्तियाँ सृजित कर सहायता प्राप्त ग्रामीण परिवारों को गरीबी रेखा से ऊपर लाना है। इस विधि में 75 : 25 के अनुपात में केन्द्र एवं राज्यों द्वारा अंशदान दिया जाता हे। जनवरी 2005 तक गठित स्व-सहायता समूह की संख्या 19 लाख, सहायता प्राप्त स्व-रोजगारियों की संख्या 51.25 लाख, वितरित सबसीडी-3657.46 करोड रूपये थी।

(स्त्रोत- वार्षिक रिपोर्ट 2004-05 भारत सरकार ग्रामीण विकास मंत्रालय नई दिल्ली पेज 26)

केन्द्रीय ग्रामीण स्वच्छता कार्यक्रम – ग्रामीण भारत में 22 प्रतिशत परिवारों में शौचालय सुविधाए होने का अनुमान है। अत: बढ़ाने के लिए यह योजना लागू की गई। इसमें शौचालयों का निर्माण, विद्यालय स्वच्छता, आंगनवाड़ी स्वच्छता आदि शामिल था। निर्मल ग्राम पुरूस्कार इसी योजना का हिस्सा (2003) था।

प्रधानमंत्री ग्राम सड़क योजना – 25 सितम्बर 2000 को शुरू हुई थी। इसका लक्ष्य 500 से अधिक आबादी वाले गांवों को बाहरमासी सड़कों से जोड़ना था। इस पर 2003-04 में 2325 करोड़ रूपये का बजट रखा गया (स्त्रोत वार्षिक रिपोर्ट 2004-05 पेज 134)

सम्पूर्ण ग्रामीण रोजगार योजना (SGRY) – 25 सितम्बर 2001 को शुरू किया गया। उद्देश्य ग्रामीण क्षेत्रों में अतिरिक्त मजदूरी रोजगार करने के अलावा खाद्य सुरक्षा और परिसम्पत्तियों का सृजन करना था।

हरियाली परियोजना – 27 जनवरी 03 से शुरू की गई परियोजना के अन्तर्गत 100 वृक्ष लगाने वाले व्यक्ति को वनरक्षक नियुक्त किया जावेगा, और पंचायत की ओर से 100 रूपये प्रतिमाह प्रदान किया जाएगा।

इसके अतिरिक्त वाटर शेड विकास कार्यक्रम काम के बदले अनाज योजना, ग्रामीण क्षेत्र में शहरी सुविधाओं का प्रावधान आदि योजनाए ग्रामीण विकास हेतु संचालित की गई।

इन सभी प्लान योजनाओं का अनुमोदित परिव्यय 2005-06 में 18334 करोड रूपये जबकि 2003-04 में 10270 करोड़ रूपये था। (स्त्रोत वार्षिक रिपोर्ट 2004-05 पेज 139 भारत सरकार ग्रामीण विकास मंत्रालय नई दिल्ली)

वर्तमान में महात्मा गांधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी योजना (अधिनियम 2008)(मनरेगा) लागू है। यह योजना ग्रामीण विकास हेतु प्रमुख योजनाओं में शामिल है।

इस प्रकार एकीकृत ग्रामीण विकास कार्यक्रम की विकास यात्रा संचालित है। केन्द्र में जब सरकारें बदलती हैं तो अपने अनुरूप योजनाओं का नाम बदल जाता है किन्तु ग्रामीण विकास की अवधारणा एक समान होती है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. एस.त्रिपाठी - डेवलपमेंट फॉर रूरल पूअर, रावत पब्लिकेशन, जयपुर 1988
2. डब्लू. आर. लेसली - प्लानिंग इन रूरल इनवायर्नमेंट (न्यूयार्क)1987
3. अली हैदर - ग्रामीण विकास का प्रशासनिक वित्तीय प्रबंध, बुक एनक्लेव जयपुर 2006
4. वार्षिक रिपोर्ट - 1999, 2000, भारत सरकार, ग्रामीण विकास मंत्रालय, नई दिल्ली।

****

नीमच विधानसभा क्षेत्र की राजनीतिक गतिविधियों का विश्लेषण(सन् 2003 से 2008 तक)

डॉ. कविता शर्मा *

प्रस्तावना – जनमत या लोकमत को लोकतांत्रिक व्यवस्था का आधार माना जाता है। लोकतंत्र जनता का शासन जनता के द्वारा, जनता के लिए है। स्वाभाविक ही है, इस प्रकार के किसी भी शासन के संचालन में जनता के मत या राय का अहम महत्व होता है। **वाटर लिपमैन** ने इसी आधार पर कहा कि – 'जनमत जनता के अन्तर्तम मानस की अभिव्यक्ति है।'

परंतु शासन सम्पूर्ण जनता द्वारा कभी संचालित नहीं होकर यह कार्य थोड़े व्यक्तियों द्वारा किया जाता हैं, जिनको यह दायित्व जनता के मत से सौंपा जाता है। केंद्र में जो अधिकार लोकसभा को प्राप्त है, राज्य में वही अधिकार विधानसभा के पास है।

भारत में लोकतंत्र और निर्वाचन की व्यवस्था प्राचीनकाल से रही है, प्रजातांत्रिक देश में निर्वाचक प्राणवायु का काम करता है। निर्वाचन प्रक्रिया के माध्यम से हम यह ज्ञात कर सकते है कि किसी देश में प्रजातंत्र का अस्तित्व है अथवा नहीं। मतदाताओं के व्यवहार और निर्वाचन के परिणाम से ही किसी देश में प्रजातंत्र की सफलता और असफलता का आंकलन किया जा सकता है। लोकतंत्र में मताधिकार का प्रयोग करने वाले सभी नागरिकों को समानता का अधिकार होता है। मताधिकार एक कर्तव्य है, जो राज्य या राष्ट्र द्वारा उन व्यक्तियों को दिया जाता है, जिनके विषय में यह समझ लिया जावें कि वे इनका प्रयोग राष्ट्र या राज्य हित में करने की योग्यता रखते है।

भारतवर्ष एक लोक–कल्याणकारी देश है। यहां लोकतंत्रात्मक शासन व्यवस्था है। इस कारण राजनीति से जनता का सीधा संबंध है, प्रमुख रूप से दो निर्वाचन प्रणालियां अहम है, जो सभी जगह प्रचलित है –

पहली – प्रत्यक्ष निर्वाचन प्रणाली।
दूसरी – अप्रत्यक्ष निर्वाचन प्रणाली।

उद्देश्य –

1. नीमच विधानसभा क्षेत्र की राजनीतिक गतिविधियों का पता लगाना।
2. राजनीतिक गतिविधियों से संबंधित समस्याओं का पता लगाकर उनका समाधान ढूंढना।
3. नीमच क्षेत्र का राजनीतिक विश्लेषण कर प्रत्येक राजनीतिक दलों का आम जनता एवं क्षेत्र के विकास में क्या भूमिका रही हैं, उसका विश्लेषण।
4. नीमच विधानसभा क्षेत्र में विभिन्न राजनीतिक दलों की भूमिका।

साहित्य समीक्षा –

1. **एम.व्ही. पायली** के अनुसार – विधानसभा की रचना लोकसभा के ढॉचे पर है तथा विधान परिषद् की राज्यसभा से समानता हैं।
2. **आचार्य भालचंद गोस्वामी 'प्रखर'** के अनुसार – विधानसभा किसी भी राज्य की जनता के उन प्रतिनिधियों का सदन या समूह हैं, जिन्हें यह संविधान के अंतर्गत एक निर्धारित अवधि में चुनकर भेजती है, ताकि वे प्रतिनिधि उनकी आशा आकांक्षाओं की पूर्ति कर सके।

शोध प्रविधि – शोध अध्ययन में प्राथमिक एवं द्वितीयक संयको का प्रयोग किया गया है।

नीमच विधानसभा की राजनीतिक गतिविधियों का विश्लेषण – नीमच जिले का गठन 6 जुलाई 1996 को किया गया। नीमच की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि पर नजर डालें तो नीमच वर्तमान में नीमच सिटी, छावनी व बघाना का संयुक्त रूप हैं। इस जिले में तीन विधानसभा क्षेत्र सम्मिलित हैं। राजनीति और निर्वाचन में सुविधा की दृष्टि से वर्ष 2008 में क्षेत्र का परिसीमन किया गया। इस परिसीमन में 46 मतदान केंद्र **जावद** विधानसभा क्षेत्र के कटकर नीमच में सम्मिलित कर दिए गए जबकि नीमच विधानसभा क्षेत्र में वर्ष 2008 में पूर्व के 36 मतदान केंद्र कटकर मल्हारगढ विधानसभा क्षेत्र में शामिल किए गए थे। यहां पर स्पष्ट करना प्रासंगिक होगा कि मतदान केंद्र मल्हारगढ़ विधानसभा क्षेत्र मंदसौर जिले के अंतर्गत आता है। इन मतदान केंद्रों में फेरबदल से नीमच विधानसभा क्षेत्र के राजनीतिक समीकरण बदले हैं।

भारत का संविधान लागू होने पर वर्ष 1952 में सभी राज्यों में प्रथम आम चुनाव कराए गए। देश के पहले आम चुनाव के पूर्व जब संविधान का निर्माण हो रहा था, तभी राष्ट्रीय राजनीति में नीमच ने दस्तक दे दी थी। उस समय श्री सीताराम जाजू संविधान सभा के सदस्य बने। संविधान सभा में उनकी दस्तक से ही नीमच, राष्ट्रीय राजनीति का अहम हिस्सा बन गया। इस जिले ने प्रदेश को एक नहीं दो–दो मुख्यमंत्री दिए है –

1. श्री विरेंद्रकुमार सकलेचा
2. श्री सुंदरलाल पटवा

तीनो सदनों विधानसभा, लोकसभा तथा राज्यसभा में नीमच के प्रतिनिधियों ने अपनी सशक्त उपस्थिति दर्ज की। परम्परागत रूप से देखें तो पिछले 13 विधानसभा एवं एक उपचुनाव में नीमच क्षेत्र पर 7 मर्तबा कांग्रेस और 6 मर्तबा भाजपा एवं 1 बार जनतादल ने जीत का परचम लहराया एवं राजनीति में अपनी–अपनी पार्टियों का दबदबा कायम किया।

प्रथम आम चुनाव वर्ष 1952 से लेकर वर्ष 2008 के चुनावों तक नीमच विधानसभा क्षेत्र कांग्रेस–भाजपा (जनसंघ) की झोली में हो रहा है। इस क्षेत्र के मतदाताओं ने न कभी जातिवाद को हवा दी, न ही निर्दलियों को महत्व दिया। नीमच विधानसभा क्षेत्र भाजपा या कांग्रेस में से किसी का गढ़ नहीं रहा।

* अतिथि विद्वान, शासकीय महाविद्यालय, तहसील – जावद, जिला – नीमच (म.प्र.) भारत

मध्यप्रदेश विधानसभा के लिए वर्ष 2008 में सभी 230 सीटों के लिए 27 नवम्बर गुरूवार को वोट डाले गए। वर्ष 2008 के विधानसभा चुनाव में विधानसभा क्षेत्र क्रमांक 229 नीमच में कुल मतदाता 1,55,002 थे, जिनमें पुरूषों की संख्या 79,874 एवं महिलाओं की संख्या 75,128 सम्मिलित हुए। इस चुनाव में भाजपा के प्रत्याशी श्री खुमानसिंह शिवाजी ने कांग्रेस के प्रत्याशी श्री रघुराजसिंह चौरड़िया को पराजित किया।

वर्ष 2008 के इस चुनाव में प्रमुख दल कांग्रेस और भाजपा के अलावा बहुजन समाजपार्टी, लोक जनशक्ति पार्टी, भारतीय जनशक्ति पार्टी और निर्दलीय उम्मीदवारों ने भी भाग्य आजमाया जिसमें भाजपा के श्री खुमानसिंह शिवाजी विजयी रहे, उन्होंने अपने निकटतम प्रतिद्वंदी श्री रघुराजसिंह चौरड़िया को हराया।

निष्कर्ष – निष्कर्ष रूप से यह कहा जा सकता है कि नीमच विधानसभा क्षेत्र में प्रारंभ से ही भाजपा, कांग्रेस ये दोनों दल ही अग्रसर रहे हैं एवं सत्ता का हस्तांतरण भी इन दोनों दलों के मध्य होता रहा हैं इस क्षेत्र में इन दोनों दलों की सशक्त भूमिका देखते हुए यह कहा जा सकता है कि यहां पर किसी तीसरे दल को स्थापित होने में अभी काफी समय लगेगा इसलिए ऐसा कह सकते है कि आगे आने वाले समय में भी इस विधानसभा क्षेत्र में इन दोनों दलों का दबदबा कायम रहेगा।

यह कहा जा सकता है कि नीमच विधानसभा क्षेत्र एक ऐसा क्षेत्र हैं, जो अपने धार्मिक, सांस्कृतिक, साहित्यिक गौरव के साथ ही राजनीति में अपना एक अलग स्थान बनाया हैं तथा इसने केंद्र स्तर की राजनीति को प्रभावित किया है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. द इंडियन जर्नल ऑफ पॉलिटिक्स।
2. पॉलिटिकल साइंस रिव्यु, राजस्थान विश्व विद्यालय, जयपुर।
3. इकॉनोमिक एण्ड पॉलिटिकल विकली मुम्बई।
4. इंडिया टुडे, नई दिल्ली।
5. दैनिक भास्कर, इंदौर।
6. स्व. श्री सीताराम जाजू स्मृति ग्रंथ, नीमच, नीमच जिला दर्शन।

****

Economic And Social Inequality In Madhya Pradesh

Namrata Ganguly * Priyanka Kurup **

Abstract - When people think of social inequality, they generally frame this in terms of socio-economic class. People who have accumulated much wealth occupy the top echelons of the society and enjoy the most privileges as brought on by their money and social status. There are many forms of socio-economic inequalities and stratifications. This article argues that socio-economic inequality is caused by many non-economic factors, such as stratification and racism. After all, factors such as these prevent many members of marginalized social groups from fully benefitting from social institutions such as education and workforce. Many industrialized countries, developing countries and countries that have recently made transition from communism to market oriented economies are characterized by high and increasing income inequality. Trends in income inequality have been understood to have ethical significance for different reasons. Some have argued that lessening income inequality is a valuable goal in itself. Hope this paper will set forth certain issues related to socio-economic inequality which is a matter of concern in many regards.
Key words - Inequality, Social, Economic, Unemployment.

Introduction - India is the world's largest democracy, having population of more than 1.2 billion people. Despite making substantial financial gains since the introduction of market-based economic reforms in early 1990s, the country has started achieving a high economic growth. But still about 20 million people live below the poverty line. This bears testimony to the fact that economic disparities still exist in India despite high GDP growth of the economy. Problems such as economic and social inequality, poverty, poor infrastructure are some of the main underlying areas of concern for the developing country. Economic and social inequality aspects are measured through the Five Year Plans. After the introduction of Tenth Plan, the issue of uneven growth and increase in the Socio economic imbalance were witnessed. Economists and socialists directed efforts to direct developmental sources that are less developed and Madhya Pradesh was one among them. Rich cultural heritage, peaceful law, order situation, good connectivity with neighboring states enhanced the state as one of the emerging economy with high potential but despite having many positive features and factors the state witnessed an unequal imbalance between the economic and social aspects. The areas which need to be balanced and show equitable socio economic development are health and nutrition, specifically for women and children, access to safe drinking water and sanitation, housing and availability of electricity, financial inclusions of marginalized sections and productivity of agricultural crops and high poverty ratio.

Economic and Social Inequality - India is a vast country endowed with rich resources, relief features and biodiversity. It is called a melting pot of various castes, creeds and communities. Social and **economic inequalities** have existed in India from the ancient past and are still continuing today in varying degrees. Inequality – whether economic, social or political has been an issue of much debate and discussions both in national and international contexts. The most visible aspect is that of economic inequality - one that entails inequality of opportunity accentuated by gender, ethnicity, disability, and age, among others. Economic inequality also has a universal nature – as it is a concern both among the rich and poor countries.

The Indian society has comparatively developed a lot in terms of social inequality. The castes, are no longer determined along the profession of the people. The people of low castes have a high profession and vice-versa. But still somewhere down the line, the caste system prevails in Indian society. The Scheduled Castes and Backward classes have still not come on a par with general categories-both economically and socially. That is why these classes are still given certain reservations in education and employment. Apart from this, economic development in India is not structured properly. There are regional disparities in some regions states like Punjab, Haryana, Tamil Nadu, Maharashtra, Karnataka and Gujarat are developed. Industry, agriculture and services network in these states are adequate. The incidence of poverty in these states is low. On the other hand, there are the States of Bihar, Jharkhand, Madhya Pradesh, Chhattisgarh, Andhra

*Assistant Professor, Career College, Bhopal (M.P.) INDIA
**Assistant Professor, Career College, Bhopal (M.P.) INDIA

Pradesh, Rajasthan and Uttar Pradesh where industry is not properly established; agriculture is orthodoxic; infrastructure is poor; education, health care, transportation, marketing facilities are inadequate.

Does Inequality Matters ? - While studying and referring to so many economic and social aspects the most obvious and often questions that comes in front of us, does inequality really matters? There are so many aspects which have to be thought upon related to the economic and social disparities.

A wide social and economic disparity would lead states to:

- Weak business structure,
- Low democracy quality,
- High level of corruption,
- Unproductive and/or over-dimensioned state structures,
- Lack of equal opportunities in the economic and social spheres.

An increase of social inequality indicates a setback in the progress of a states people. Such a situation is indicative of a reduction in the Human Development Index. Therefore, a state can be progressing economically at the expense of a decline in human development.

Obviously, this situation cannot be understood as progress of a state because economic growth has to be a vehicle that supports human development. It has no sense to talk about economic growth without to take into account its contribution to human development. In the past few years, we have experienced a huge setback in the indexes related to social and economic progress in state. Take, for instance, the issue of basic human needs and we might well ask: How many people in developed states are below a minimum nutrition and basic medical care? How many people in developed states are below the poverty line? Particularly the more vulnerable groups, such as:

- Child poverty (it is on the rise in several developed states)
- Abject poverty (the same as that described in the preceding point)
- Growing number of food banks in many advanced economies.

There are many issues both social and economic which shows there is a huge gap existing among both the factors. About issues like satisfaction with housing, access to electricity, personal safety etc. Global deep crisis triggered by an economic system based mainly on financial speculation jointly with inappropriate economic measures and structural reforms, the countries income gap between a states richest and poorest people is enlarging and thus, access to basic social and economic rights is under serious threat in some developed.

Unemployment and Economic and Social inequality - Unemployment is worse than create low wage jobs, this is a constantly-repeated mantra within many advanced economies. Wages must be worthy to improving the living conditions of the people because this fact will lead to the creation of middle classes which would strengthen purchasing power and domestic business structures.

"Advanced economies should compete through the quality and added value in differentiated products rather than trying to gain competitiveness through a strategy of low wages" Precarious and poorly-paid work, labour flexibility "in excess", less costly hiring, cheaper dismissal, different modalities of hiring this kind of employment policies lead to a reduction of social security contributions, higher rates of poverty, inequality and social exclusion and, as a result, to less consumer spending for a large segment of the state's population. Large socio-economic inequalities lead to serious social conflicts, unstable governments and countries. Mediterranean European countries are an unfortunate example of this and this lead to the collapse of foreign investment especially direct investment.

Cause of economic inequality in India -

- **Lack of educational opportunities:** Illiteracy is one of the single factor that has kept our people idle and ignorant for centuries. So, such people have not been able to earn just sufficient livelihood for themselves.
- **Gap between rich and poor**: There exists an increasing gap between rich and poor. Rich people are able to increase their resources by earning huge profits while income of poor people has not increased. This has widened gap between them.
- **Law of inheritance**. Some people inherit their parental property, business, etc. They remain economically strong though out while poor people inherit family debt and increased family burden. This increases the inequality.
- The unequal and unjust land holdings in agriculture are an important reason for rural inequality of income. Rich farmers have big land holdings while some farmers have uneconomic land holdings.
- Increasing unemployment, under-employment and disguised unemployment are re-sponsible for inequalities of income.

Causes of social inequality in India -

- **Caste System** – Caste system in society, particularly with reference to few Asian countries, exists since ancient times. In a few countries, such as India, it is considered to be the ideology of life. Though with the effort of various governments this has reduced somewhat in recent past but still it is not dead. Under this caste system a section of society enjoys more opportunity compared to others, based on their upper caste thereby creating inequality.
- **Gender inequality** - It is prevalent in all societies for centuries and continues to exist even today. An example of gender inequality is female feticide. The widespread practice of aborting female feticide happens everyday. One of the most forms of discrimination faced by a girl after marriage is dowry. Education is also less available to women and as a result, literary rates are low.

- **Unequal distribution of wealth** - When national wealth, generated as a result of economic growth of a country is not proportionately distributed among different sections of society, the social inequality arises. The upper or developed strata of society takes the share of growth whereas the deprived class or lower strata of society gets very little proportionate of wealth to their population. This unequal distribution of wealth further deepens the difference between the rich and poor strata of society. This ultimately adds to social inequalities.

Steps to reduce inequalities in Indian Society - The inequality can be reduced. In fact it is diminishing in urban areas, specially tier 1 and tier 2 cities. Women and marginalized sections get equal (or reaching towards equal) representation in offices, elections or in decision making. Some steps that are taken by government will slowly but surely help in reducing all these equalities –

- PMJDY to reduce financial inequality, for an improved financial inclusion among the rural areas.
- 33% representation of women in Panchayati raj, makes their voices heard and helps them in doing welfare works for the women.
- Caste based reservation- though this is debatable, it helps in marginalised sections of the socitey to get jobs and prosper with good education.

There are many more policies which will take their time to show the fruits, but the times are surely changing. Inequality has surely reduced, though it becomes increasingly difficult for the government to get the required results from the sections suffering from inequality. Society should also change its mindset towards marginalized people. This has happened in the urban areas to an extent, and it will take its due time to reach rural areas.

Conclusion - The importance of measures of inequality lies in the fact that, they can help nations in their effort to track poverty and inequality levels. The measures of inequality can be compared to gross domestic product figures. If GDP increases, it is assumed that the people in a country are doing better. However, if the inequality indices are rising as well, it suggests that the majority of the population may not be experiencing increased income. India cannot be included in the list of developed countries until all sections of its people are benefited from the fast economic progress which the country has been experiencing for the last decade or so. The executives and officials should implement such a policy whereby the weaker sections are economically uplifted and are able to lead a better life-enjoying at least the basic amenities and look higher in near future. No doubt, India has made progress in addressing the structural drivers of inequalities through a range of rights-based policies as well as legal and programme initiatives. However, in order to address root causes of economic inequality, an inclusive economic growth model ought to promote equitable access to resources and services, and at the same time, create decent jobs and livelihoods for all women and men.

References :-

1. Chatterjee (1993),The Nation and its Fragmants: Colonial and Postcolonial Histories. Priceton: Priceton University Press.
2. Deshpande (2000), Redresing Economic Inequality. Review of Social Economy 58(3):382-399.
3. Gupta (2000), Interrogating Caste: Understanding Hierarchy and Difference in Society. New Delhi: Penguin Books.
4. Mohanty (2006), Social Inequality Labour Market Dynamics and Reservations . Economic and Political Weekly 41(46):3777-3789.
5. http://www.insightsonindia.com.

✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻

महिला श्रमिकों की आर्थिक स्थिति का अध्ययन – उमरिया जिले के विशेष संदर्भ में

डॉ. शाहीन परवीन *

शोध सारांश – वैश्वीकरण के कारण से समाज में बेरोजगारी बढ़ी है, जिससे रोजगार की तलाश में बड़े शहरों को मजदूरों का पलायन बढ़ रहा है। महगाई बढ़ने के अनुपात में परिवार की आय में वृद्धि नहीं होने के कारण महिलाएं मजदूरी (श्रमिक) के रूप में आय प्राप्त करती हैं। इस उद्देश्य के लिए दैव निदर्शन विधि से 100 महिला मजदूरों का चयन किया गया हैं। उपकरण के रूप में स्वनिर्मित प्रश्नावली का उपयोग महिला श्रमिकों की आर्थिक स्थिति कि अध्ययन से निष्कर्ष प्राप्त हुआ है कि महिलाओं को श्रमिक के रूप में जो कार्य मिलता है उसकी मजदूरी अपर्याप्त होने के कारण आर्थिक स्थिति संतोष प्रद नही हैं।

प्रस्तावना – आज समाज वैश्वीकरण के दौर से गुजर रहा है इसमें कई क्रांतिकारी परिवर्तन हुए फिर भी हमारे समाज में बेरोजगारी की समस्या सुरसा की भांति फैलती ही जा रही हैं। ग्रामीण लोग बड़े शहरो को मजदूरी के लिये परिवार सहित पलायन हो रहे है।[1] अर्थव्यवस्था में सदैव श्रम एवं अन्य साधनों को पूर्ण रोजगार प्राप्त रहता है, यह एक सामान्य स्थिति है , यदि कभी पूर्ण रोजगार से विचलन होता है तो यह एक असमान्य स्थिति होगी।[2] वर्तमान समय में महंगाई की दर बढ़ती जा रही है किन्तु परिवार की आय में आनुपातिक वृद्धि नही होने के कारण से परिवार की महिलाएं अपनी आर्थिक स्थिति अपने श्रम के द्वारा श्रमिक (मजदूरी) करके अपने परिवार का भरण–पोषण भी करती हैं।

उद्देश्य – उमरिया जिले की महिला श्रमिकों की आय व उनके व्ययों व बचतों का अध्ययन करना।

चर –प्रस्तुत शोध–पत्र के निम्नलिखित चरो को सम्मलित किया गया है –

1. स्वतंत्र चर – मनरेगा के द्वारा प्राप्त कार्य से आय , ठेकेदारी प्रथा में मजदूरी का कार्य करना , अन्य किसी प्रकार का कार्य करना।
2. परतंत्र चर – इसके अन्तर्गत ऐसे तत्वों को शमिल किया जाता है– जो आपस में अंतक्रिया करतें हैं। जैसे कार्य का वातावरण , आय का स्तर , लिंग तत्व आदि।[3]

उपकरण – प्रस्तुत शोध–कार्य में उपकरण के रूप में शोधकर्ता द्वारा स्वनिर्मित अनुसूची (प्रश्नावली) का प्रयोग किया गया हैं :–

1. व्यक्तिगत संबंधी अनुसूची (प्रश्नावली) इसमें 15 प्रश्नों को शामिल किया गया हैं।
2. श्रमिकों की आर्थिक स्थिति संबंधी (प्रश्नावली) में 20 प्रश्नों को शामिल किया गया हैं।

शोध प्रविधि – समंको के संकलन की दो विधियां है, प्राथमिक समंक एवं द्वितीय समंक ।

1. प्राथमिक समंक – वे समंक जिनका संकलन स्वयं शोधार्थी द्वारा किया जाता है। ये समंक शोध के उद्देश्य के अनुरूप होते हैं।
2. द्वितीयक समंक – वे समंक जिनका संकलन किसी संस्था या व्यक्ति द्वारा किया जाता है, द्वितीयक समंक कहलाते हैं।[4]

महिलाओं के चयन हेतु आदर्श प्रणाली का प्रयोग किया गया हैं। महिलाओं की आर्थिक स्थिति के अध्ययन के लिए कुछ द्वितीयक समंको का भी प्रयोग किया जाता हैं।

सीमांकन – प्रस्तुत शोध कार्य में 18 वर्ष से अधिक की श्रमिक महिलाओं द्वारा प्राप्त मजदूरी से आर्थिक स्थिति का अध्ययन करने के लिए केवल उमरिया जिले की महिलाओं को चयन हेतु शामिल किया गया है।

परिकल्पना – प्रस्तुत शोध–पत्र में निम्नलिखित परिकल्पनाएँ की गई है–

1. उमरिया जिले की महिला श्रमिकों को मांग के अनुरूप कार्य मिल जाता है।
2. उमरिया जिले की महिला श्रमिकों को प्राप्त मजदूरी पर्याप्त है।
3. उमरिया जिले की महिला श्रमिकों को प्राप्त मजदूरी से भविष्य के लिए बचत की जाती है।

न्यादर्श – प्रस्तुत शोध–कार्य में उमरिया जिले की श्रमिक महिलाओं को प्राप्त मजदूरी , प्राप्त मजदूरी से अनिवार्य आवश्यकताओं की पूर्ति , बचत , जीवन स्तर के प्रभाव का अध्ययन करने के लिए 100 महिला मजदूरों को न्यादर्श प्रणाली से चुना गया है। प्रदत्त प्रश्नावलियों को एकत्रित करके उसका मूल्यांकन किया गया है। प्राप्तांको के आधार पर मास्टर सीट तैयार की गई है। आंकड़ो का सांख्यकीय विश्लेषण करके निष्कर्ष निकाला गया है और आवाश्यकतानुसार सुरक्षा दिए गए हैं।[5]

सारणी क्रमांक – 01 (देखे आगे पृष्ठ पर)

सारणी से यह स्पष्ट हो रहा है कि 18–40 वर्ष की आयु वर्ग की महिला श्रमिकों को औसतन 7 प्रतिशत काम नहीं मिल पाता है। 40–60 वर्ष की आयु वर्ग की महिला श्रमिको को औसतन 5 प्रतिशत काम नहीं मिल पाता है। 60 वर्ष से अधिक की महिलाओं को 3 प्रतिशत काम नहीं मिल पाता है जब कि समग्र के आधार पर औसत मजदूरी की पूर्ति के 15 प्रतिशत कमी होती है , मॉग एवं पूर्ति में केवल 8 प्रतिशत का अंतर है इससे यह निष्कर्ष निकलता है कि औसतन महिला श्रमिकों को कार्य अधिकांश मिल जाता है।

सारणी क्रमांक – 02 (देखे)

सारणी से यह स्पष्ट हो रहा है कि महिला श्रमिकों का अधिकांश व्यय' का भाग (हिस्सा) अनिवार्य वस्तुओं की आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु किया जाता है। अन्य व्ययों के लिए 60 वर्ष से अधिक उम्र की महिलाए सर्वाधिक खर्च की है। अत: निष्कर्ष निकलता है कि अधिकांश अनिवार्य आवश्यकताओं

* अतिथि विद्वान (अर्थशास्त्र) प. शंभूनाथ शुक्ल शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, शहडोल (म.प्र.) भारत

की पूर्ति हो जाती है किन्तु प्राप्त मजदूरी अपर्याप्त हैं।

सारणी क्रमांक – 03 (देखे)

सारणी क्रमांक 03 से यह स्पष्ट है 18–40 वर्ष की महिला श्रमिकों द्वारा सर्वाधिक बचत बैंको में बचत खाता के माध्यम से की है तथा सबसे कम 60 वर्ष से अधिक की महिला श्रमिकों के द्वारा बैंको में बचत खाता खोला गया है। पोस्ट आफिस में औसतन बचत खाते सभी आयु वर्ग की महिलाओं द्वारा खोले जाते है। अधिक उम्र या 60 वर्ष से अधिक उम्र की महिलाओं द्वारा नगदी के रूप में अधिक बचत की जाती है।

सारणी से यह स्पष्ट हो रहा है कि बैंकिग व पोस्ट आफिस की शाखाओं में वृद्धि हुई हैं।

परिकल्पनाओं को सत्यापन –

1. उमरिया जिले की महिला श्रमिकों को औसतन भाग के अनुरूप कार्य मिल जाता है। यह परिकल्पना सत्य हैं। (सारणी क्र. 01 से)
2. उमरिया जिले की महिला श्रमिकों को प्राप्त मजदूरी पर्याप्त है, यह परिकल्पना असत्य है। (सारणी क्र. 02 से)
3. उमरिया जिले की महिला श्रमिकों को प्राप्त मजदूरी से भविष्य के लिए बचत की जाती है यह परिकल्पना आंशिक सत्य है। (सारणी क्र. 03 से)

महिला श्रमिकों की आर्थिक स्थिति मजबूत करने हेतु निम्न सुझाव है–

1. महिला श्रमिकों की न्यूनतम मजदूरी की जानकारी पंचायत सभा में प्रतिमाह दी जानी चाहिए।
2. न्यूनतम मजदूरी से कम मजदूरी देने वाले नियोक्ता पर अपराध दर्ज करना चाहिये या अर्थदण्ड लगाना चाहिए।
3. महिला श्रमिकों को संगठित होना चाहिए जिससे आर्थिक शोषण न किया जा सकें।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. दैनिक भास्कर 24 मार्च 2016 , पेज नं. 06
2. जैन, डॉ.पी.के., समष्टि अर्थशास्त्र 2015, मध्यप्रदेश हिन्दी ग्रंथ अकादमी , भोपाल पेज नं. 85
3. गुप्ता, डॉ.बी.एन., सांख्यकी के सिद्धांत , एस वी पी डी पब्लिकेशन हाउस, आगरा 2010 पेज नं. 20 से 27 तक।
4. शुक्ला, डॉ. एस.एम., सांख्यकी के सिद्धांत , 2008 साहित्य भवन पब्लिकेशन, आगरा पेज नं. 412
5. शुक्ला , डॉ. एस.एम., सांख्यकी के सिद्धांत , 2008 साहित्य भवन पब्लिकेशन, आगरा पेज नं. 428

सारणी क्रमांक – 01 – उमरिया जिले के विभिन्न आयु वर्ग के महिला श्रमिक मजदूरों की औसत मजदूरी की मॉग व पूर्ति

आयु वर्ग (वर्षो में)	महिला श्रमिकों की संख्या	औसत मजदूरी की मॉग प्रतिशत में	औसत मजदूरी की पूर्ति प्रतिशत में
18–40	58	56	51
40–60	37	34	32
60 से ऊपर	05	03	02
योग	**100**	**93**	**85**

सारणी क्रमांक – 02 – उमरिया जिले के विभिन्न आयु–वर्ग के महिला (श्रमिक) मजदूरों द्वारा विभिन्न व्ययों का प्रतिशत

क्र.	व्यय की मदे	व्यय प्रतिशत में (औसत)		
		18–40 वर्ष	40–60 वर्ष	60 वर्ष से अधिक
1	भोजन	36	39	31
2	वस्त्र	29	26	18
3	मकान	17	19	15
4	स्वास्थ्य/चिकित्सा	6	9	18
5	श्रृंगार सामग्री	10	7	5
6	शिक्षा	2	–	–
7	अन्य	–	–	13
	योग	100	100	100

सारणी क्रमांक – 03 – उमरिया जिले के विभिन्न आयु–वर्ग की महिला श्रमिकों द्वारा बचत का प्रतिशत–

क्र.	बचत का प्रकार	बचत प्रतिशत		
		18–40 वर्ष	40–60 वर्ष	60 वर्ष से अधिक
1	बैंक में बचत खाता	53	47	18
2	पोस्ट ऑफिस में बचत खाता	38	41	31
3	अन्य प्रकार से	09	12	51
	योग	100	100	100

****

भारत में भूमि सुधार - एक मूल्यांकन

वन्दना सोनी *

शोध सारांश – भूमि सुधार जैसे प्रगतिवादी कानूनों को बनाने और उनका सही कार्यान्वयन करने के लिए कठोर राजनैतिक निर्णयों और प्रभावी राजनैतिक समर्थन, नियंत्रण तथा दिशा-निर्देश की जरूरत होती है। देश के ग्रामीण क्षेत्रों में जो सामाजिक-आर्थिक स्थितियाँ मौजूद है, उन्हें देखते हुए भूमि सुधारों के क्षेत्र में तब तक कोई खास प्रगति होने की उम्मीद नहीं है। जब तक की उपयुक्त राजनैतिक इच्छा न हो। यह दुर्भाग्य की बात है कि देश में इस राजनैतिक इच्छा का अभाव है। नीति व कानून बनाने तथा उनका कार्यान्वयन करने में जो बड़ी खाई पाई जाती है यह इसका प्रत्यक्ष प्रमाण है। स्वतंत्रता के बाद सार्वजनिक जीवन के किसी भी क्षेत्र में सिद्धान्त व व्यवहार के बीच तथा नीति-घोषणा व उसके कार्यान्वयन के बीच इतनी बड़ी खाई नहीं रही है, जितनी कि भूमि सुधारों के क्षेत्र में पाई जाती है। यदि दृढ़ और सुस्पष्ट राजनैतिक इच्छा होती तो बाकी सभी कठिनाइयों पर विजय पाई जा सकती थी। परन्तु यह इस इच्छा के अभाव का ही परिणाम है कि छोटी-मोटी रूकावटें भी भारतीय भूमि-सुधार कानूनों के रास्ते में चट्टाने बनकर खड़ी हो गई। देश में जिस तरह की राजनैतिक शक्ति संरचना है, उससे कोई और उम्मीद की भी नहीं जा सकती थी।

प्रस्तावना – अर्द्ध विकसित देशों की अधिकांश जनसंख्या कृषि पर निर्भर रहती है। भारत में भी लगभग 68 प्रतिशत जनसंख्या कृषि पर निर्भर है तथा राष्ट्रीय आय में कृषि का लगभग 34 प्रतिशत योगदान है तथा देश का औद्योगिक विकास भी कृषि पर निर्भर करता है। यह कहना अनुपयुक्त न होगा कि देश का आर्थिक विकास भूमि-सुधार पर निर्भर है। देश का कृषि विकास उपयुक्त भूमि सुधारों पर निर्भर करता हैं अत: देश के आर्थिक विकास और भूमि सुधारों में घनिष्ठ सम्बन्ध है।

भूमि सुधार के अन्तर्गत वे सब परिवर्तन आते है, जो भू-धारण प्रणाली में किए जाते है, जैसे कृषकों के भू-अधिकारों की सुरक्षा, उपयुक्त लगान का निर्धारण, अतिरिक्त भूमि का भूमिहीनों व छोटे कृषकों के बीच वितरण तथा वे सब परिवर्तन जो कृषि क्षेत्र में उत्पादन वृद्धि को प्रोत्साहित करते है, जैसे-चकबंदी व सहकारी कृषि के लिए आवश्यक सुविधाएँ इत्यादि। अर्थशास्त्रियों का मत है कि ये संस्थागत परिवर्तन कृषि विकास के लिए अत्यन्त आवश्यक है।

आर्थर लुई ने अर्द्ध विकसित अर्थव्यवस्था में भूमि सुधार को इस प्रकार व्यक्त किया है, अल्पविकसित देशों में ग्रामीण संस्थाओं में होने वाले परिवर्तन, जिन्हें सामान्यत: भूमि सुधार कहा जा सकता है, वहाँ के राजनैतिक तथा आर्थिक जीवन की धारा को मोड़ने में बड़ा भारी महत्व रखते है क्यों कि एक तो इन सुधारों का उत्पादकता से सम्बन्ध होता है। दूसरी ओर भूमि-समस्याओं के वास्तविक समाधान का देश में राजनैतिक सत्ता के वितरण लोगों की योग्यता तथा जनतंत्रीय नागरिकता के उत्तरदायित्व को वहन कर सकने की योग्यता से सीधा सम्बन्ध है। इसलिए भी इसका महत्व है कि यदि भूमि-समस्याओं का समाधान नहीं किया गया तो यह भयंकर विप्लव को जन्म देते है। इस कथन से यह स्पष्ट हो जाता है कि अल्प विकसित देशों में भूमि सुधार आर्थिक विकास, सामाजिक परिवर्तन तथा स्तर एवं राजनैतिक दृष्टिकोण भी अत्यन्त महत्वपूर्ण है।

भूमि सुधार के क्षेत्र में अभी तक जो प्रगति हुई, वह बहुत ही धीमी और असन्तोषजनक ठहरती है। जमींदारी उन्मूलन को छोड़कर अन्य किसी दिशा में कोई विशेष प्रगति नहीं की जा सकी है। आज भी देश में बहुत बड़े पैमाने पर खेती काश्तकारों द्वारा की जाती है। अनेक स्थानों पर लगान की दरें ऊँची है और बेदखली का डर काश्तकारों को लगा रहता है। सीमाबन्दी नीति के अन्तर्गत अपेक्षाकृत थोड़ी भूमि प्राप्त की जा सकी है और भूमिहीन व छोटे किसानों की बीच उसका बंटवारा और भी कम रहा है। ग्रामीण क्षेत्र में भारी असमानताएं बनी हुई है और साथ ही छोटी व छिटकी जोतें कृषि-क्षेत्र में भरी पड़ी है।

इस प्रकार दिशा ठीक होने पर भी भूमि-सुधार का कार्य वांछित गति से आगे नहीं बढ़ सका है। फलस्वरूप इससे विकास और सामाजिक न्याय के मोर्चे पर जिन अच्छे परिणामों की आशा की गई थी, वे नहीं निकल सकें है। इस धीमी एवं असन्तोष प्रगति में भूमि सुधार से सम्बन्धित इन दोषों व कमियों का मुख्य हाथ रहा है।

अध्ययन के उद्देश्य –

1. भारत में भूमि सुधार का विश्लेषण करना –

विश्लेषण – भारत में भूमि सुधार सम्बन्धी नीति संविधान में निर्धारित राज्य के निर्देशक तत्व के अनुच्छेद 39 के सन्दर्भ में बनायी गयी है। इसमें कहा गया है कि राज्य अपनी नीति का संचालन इस प्रकार करेंगे जिसके परिणामस्वरूप समुदाय की सम्पत्ति का स्वामित्व व नियन्त्रण इस प्रकार विभाजित हो जिससे सामूहिक हित का सर्वोत्तम रूप से समाधान हो सके तथा अर्थव्यवस्था इस प्रकार संचालित हो। जिससे धन व उत्पादन साधनों का अलाभकारी केन्द्रीकरण न हो सके। स्वतन्त्रता से पूर्व भारत की भू-धारण प्रणाली में मध्यस्थों की भरमार थी और भूमि का स्वामित्व थोड़े-से लोगों के पास था। इस प्रकार भू-धारण व्यवस्था संविधान के विपरीत थी। अत: संविधान के उद्देश्यों के अनुरूप इसे परिवर्तित करना आवश्यक हो

* शोधार्थी, शासकीय सरोजिनी नायडू कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, भोपाल (म.प्र.) भारत

गया। इस सन्दर्भ में भूमि सुधार एक राष्ट्रीय समस्या बन गयी।

भारत में भूमि सुधार कार्यक्रमों में पहला प्रमुख कार्य मध्यस्थों अथवा जमींदारों का उन्मूलन किया जाना है। यह कार्य सर्वप्रथम मद्रास में 1948 में आवश्यक अधिनियम पारित करके किया गया। भारत में कृषि क्यों कि राज्य सरकार का विषय है। इसलिए जमींदारी उन्मूलन हेतु सभी राज्यों में अलग-अलग अधिनियम पारित किए गए। मध्यप्रदेश, उत्तरप्रदेश तथा बिहार में जमींदारी उन्मूलन अधिनियम सन् 1951 में पारित किया गया।

जम्मू एवं कश्मीर राज्य को छोड़कर शेष सभी राज्यों में जमींदारी प्रथा का उन्मूलन कर दिया गया तथा इसके बदले में उन्हें क्षतिपूर्ति दी गयी। क्षतिपूर्ति का आधार दरें तथा भुगतान की रीति सभी राज्यों में अलग-अलग थी।

भूमि सुधार का एक महत्वपूर्ण एव विवादास्पद पहलू जोत की सीमाबन्दी या जोत की उच्चतम सीमा निर्धारण है। इसके अन्तर्गत मुख्य रूप से दो बातें शामिल होती है, प्रथम जोत की अधिकतम सीमा का निर्धारण जिससे अधिक कोई भी व्यक्ति अपने पास भूमि नहीं रख सकता था तथा द्वितीय, इस अधिकतम सीमा से ऊपर भूमि रखने वाले भू-स्वामियों से अधिक भूमि लेकर छोटे तथा भूमिहीन मजदूरों में उसको बाटँना। इस प्रकार जोतों की सीमाबन्दी से जहाँ एक ओर बड़े भू-स्वामियों की भूमि मात्रा में कमी आती है वहाँ दूसरी ओर छोटे व भूमिहीन कृषि मजदूरों के पास भूमि की मात्रा बढ़ती है। इसमें भूमि का वितरण करते समय इस बात का ध्यान रखा जाता है कि स्वयं खेती करने वाले किसानों को ही भूमि दी जाए।

भारत में जनसंख्या बहुत अधिक है, जबकि भूमि की मात्रा कम है, यह स्थिति उस समय और भी दयनीय हो जाती है, जबकि भूमि का स्वामित्व थोड़े-से व्यक्तियों के हाथों में केन्द्रित हो और बहुत बड़ी संख्या में लोग भूमिहीन हों। भू-स्वामित्व के सम्बन्ध में यह असमानता आर्थिक, सामाजिक एवं राजनैतिक किसी भी दृष्टिकोण से अनुचित व खतरनाक है। इससे न तो भूमि का पूर्ण उपयोग सम्भव होगा और न ही समान में सन्तोष बनाए रखा जा सकेगा, परिणामस्वरूप यह स्थिति किसी भी समय सामाजिक विस्फोट का कारण बन सकती है। अत: सामाजिक न्याय की दृष्टि से इस असमानता को दूर करना आवश्यक है। जोतों की सीमाबन्दी इस दिशा में मदद करती है। भूमि के समुचित वितरण होने पर ही हम आर्थिक, सामाजिक एवं राजनैतिक समानता की बात सोच सकते है।

ग्रामीण क्षेत्रों में भूमि ही आय का प्रमुख स्त्रोत है परन्तु इसका वितरण असमान है। सन् 1990-91 में 1 हेक्टेयर से कम जोत वाले 59 प्रतिशत किसान थे जिनके पास कुल कृषि भूमि को केवल 15 प्रतिशत भाग था जबकि 10 हैक्टेयर से अधिक जोत वाले केवल 1.7 प्रतिशत किसान थे जिनके पास कुल कृषि भूमि का 17 प्रतिशत भाग था। इसके अतिरिक्त काफी बड़ी संख्या में भूमिहीन किसान भी है। अत: जोत की अधिकतम सीमा का निर्धारण करके तथा छोटे एवं भूमिहीन किसानों में भूमि का पुनर्वितरण करके इस स्थिति में सुधार किया जा सकता है, इससे आय व धन की विषमताओं को कम करने में भी मदद मिलेगी।

नवीन अधिनियमों के परिणामस्वरूप सितम्बर 2001 में कुल मिलाकर लगभग 73.66 लाख एकड़ भूमि जोत सीमा के ऊपर घोषित की जा चुकी है जिनमें से 64.95 लाख एकड़ भूमि अधिकार में ली गयी है और उसमें से 53.79 लाख एकड़ भूमि 55.84 लाख भूमिहीन श्रमिकों व अन्य योग्य व्यक्तियों में वितरित की जा चुकी है।

जोत की अधिकतम सीमा नये अधिनियमों में राज्यानुसार भिन्न-भिन्न है। प्रति परिवार जोत की अधिकतम सीमा मध्यप्रदेश में 7.28 से 21.85 हैक्टेयर, उत्तरप्रदेश में 7.30 से 18.25 हैक्टेयर, राजस्थान में 7.25 से 70.82 हैक्टेयर तथा बिहार में 6.07 से 18.21 हैक्टेयर है।

निष्कर्ष - इस तरह के अनेक कारकों से भूमि-सुधार का कार्य बहुत पिछड़ा हुआ है। चूंकि विकास और न्याय, दोनों दृष्टियों से यह कार्य बहुत महत्वपूर्ण और आवश्यक है, इसलिए स्थिति में तेजी से सुधार लाने के लिए उपाय किए जाने चाहिए। सर्वप्रथम आवश्यकता इस बात की है कि भूमि सुधार से छोटे किसानों को कुछ लाभ पहुंचा है, उसे संघटित किया जाए। इसके लिए यह जरूरी है कि इन किसानों को आवश्यक कृषि साधन उपलब्ध कराए जाएं और ये सहकारिता के आधार पर कृषि कार्य करें। दूसरे जो अधिनियम अब तक बनाए गए है, उनको भरपूर ढंग से अमल में लाया जाए। इसके लिए दो-एक बातों की ओर विशेष ध्यान देने की जरूरत है, एक तो भूमि के सम्बन्ध में सारे रिकार्ड पूरे और सही होने चाहिए और समय के साथ उसमें आवश्यक संशोधन होते रहने चाहिए जिससे कि आंकड़े पुराने न पड़ने पाएं। दूसरे, समितियों, राजनीतिक सम्मेलनों आदि के माध्यम से भूमि सुधार के कार्य से लोगों को सम्बद्ध रखने की आवश्यकता है। ये लोग वर्तमान अधिनियमों को अमल कराने में सहायक सिद्ध होगें।

राजनैतिक इच्छा के अभाव के साथ ही प्रशासनिक तंत्र की उदासीनता पर भी विचार करना आवश्यक है। वास्तव में इन दोनों में चोली-दामन का साथ है। प्रशासनिक तंत्र की उदासीनता, राजनैतिक इच्छा के अभाव से पैदा होती है। यह बात इस तथ्य से सिद्ध होती है कि जहां कहीं भी उत्साही प्रशासकों ने ईमानदारी के साथ भूमि सुधार को लागू करने की कोशिश की उनका राजनैतिक नेताओं ने तुरन्त तबादला करा दिया। इससे उन प्रशासकों का मनोबल टूट गया और सामान्य प्रषासन भी भूमि सुधारों के प्रति उदासीन हो गया।

इन बातों से सिद्ध हो जाता है कि भूमि सुधारों को कार्यान्वित करने की जिन लोगों को जिम्मेदारी सौंपी गई थी, उन्होंने स्वयं ही उसे विध्वंस कर दिया। राजनीतिज्ञ प्रशासक और बड़े किसान की जो तिकड़ी है उसके परिणामस्वरूप धनी किसान वर्ग की शक्ति उभर कर सामने आई है। धनी किसान वर्ग की यह शक्ति अब राज्य सरकारों, क्षेत्रीय तथा स्थानीय प्रशासन पर छा गई है और भूमि हथियाने तथा भूमि सुधारों को प्रभावहीन बनाने में सबसे बड़ी रूकावट बन गई है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. ए. एन अग्रवाल 'भारतीय अर्थव्यवस्था' विकास पब्लिशिंग हाऊस प्रा.लि.-1982 पेज नं. 398, 400
2. एस. के मिश्र एवं वी. के पुरी 'भारतीय अर्थव्यवस्था' हिमालय पब्लिशिंग हाऊस-2008 पेज नं. 359, 360
3. डॉ. विष्णुदत्त नागर एवं डॉ. वल्लभदास मेहता 'भारतीय अर्थव्यवस्था' मध्यप्रदेश हिन्दी ग्रन्थ अकादमी भोपाल 2015 पेज नं. 176, 177
4. डॉ. अनुपम गोयल 'यूनीफाइड अर्थशास्त्र' शिवपाल अग्रवाल एण्ड कम्पनी इन्दौर पेज नं. 106, 107, 109, 111

****

नगरीय स्थानीय संस्थाओं में अनुसूचित जनजातीय प्रतिनिधियों के नेतृत्व की भूमिका

दीवानसिंह बारिया *

प्रस्तावना – 74 वें संविधान संशोधन अधिनियम के पश्चात् आज यदि देखा जाए तो नगरीय स्थानीय संस्थाओं के माध्यम से जिले में और विकासखण्डों में विकास की गति तेज हुई है। इसके साथ ही जनप्रतिनिधियों की स्थिति भी राजनीतिक क्षेत्र में काफी मजबूत हुई है। इसी कारण आज स्थानीय नगरीय संस्थाओं में अनुसूचित जनजाति वर्ग के पुरूष और महिलाओं की सहभागिता बढ़ी है तथा वे अपने घरों से बाहर निकलकर नेतृत्व कर रहे है। आज नगरीय संस्थाओं में महिलाएँ पुरूषों के बराबर अपने पद का उपयोग कर रही है इसका मुख्य कारण शिक्षा का प्रचार–प्रसार है क्योंकि महिलाएँ शिक्षित होकर आज राजनीति में आगे आ रही है और कुशल नेतृत्व कर रही है।[1]

प्रस्तुत नगरीय स्थानीय क्षेत्र में नगर पंचायत और नगरपालिका के अध्यक्ष, उपाध्यक्ष और पार्षदों से जब शहरी क्षेत्र के विकास के बारे में चर्चा की जाए तो उनके द्वारा कई प्रकार के सुधार और स्थानीय स्तर की प्रमुख समस्याओं को बताया गया और कहा गया कि इन समस्याओं को प्रतिनिधियों के द्वारा हल करने का हर संभव प्रयास किया जाता है। नगरीय सुधार के अंतर्गत आने वाली योजनाओं का क्रियान्वयन सुचारू रूप से प्रतिनिधयों के द्वारा किया जा रहा हैं। इन योजनाओं में शहरी स्वच्छता अभियान के अंतर्गत स्वच्छ पेयजल की व्यस्था, नालियों की साफ–सफाई, कुड़ा–कचरा शहर से दूर करना आदि पर विशेष रूप से ध्यान देकर शहर में सुन्दर और सुहावने वातारण की ओर ध्यान दिया जा रहा है। विभिन्न प्रकार की पेंशन योजनाओं जैसे – वृद्धा पेंशन, विधवा पेंशन आदि के मध्यम शहरी क्षेत्रों के निवासियों की आर्थिक सहायता करना भी स्थानीय जनप्रतिनिधियों के नेतृत्व का एक हिस्सा है।

फिर भी स्थानीय नगरीय संस्थाओं के क्षेत्र में देखा गया कि आज भी वहाँ शिक्षित जनप्रतिनिधियों की काफी कमी हैं, इसी कारण वे अपने क्षेत्र या वार्ड का विकास नहीं कर पाते। उन्हें यह भी पता नहीं होता हैं कि हम जिस पद पर है, उसके कारण अपने क्षेत्र या वार्ड का विकास और भी अच्छा कर सकते है।

स्थानीय स्वशासन से आशय–स्थानीय शासन का अर्थ उन स्थानीय संस्थाओं के शासन से है, जो जनता द्वारा चुनी जाती है तथा जिन्हें राष्ट्रीय अथवा राज्य सरकार के नियंत्रण में रहते हुए भी स्थानीय शासन के मामलों में अधिकार एवं दायित्व प्राप्त होते हैं। इन अधिकारों का प्रयोग ये संस्थाएँ किसी उच्च अधिकारी के नियंत्रण के बिना अपने विवेक से कर सकती हैं। स्थानीय शासन को ऐसा शासन कहा गया हैं, जो अपने सीमित क्षेत्र में प्रदत्त अधिकारों का उपयोग करता हैं परन्तु स्थानीय शासन अपने क्षेत्र में सम्प्रभु नहीं होता हैं। स्थानीय शासन की संस्थाएँ राज्य सरकारों द्वारा दिए गये अधिकारों का उपयोग करती हैं और राज्य विधान मण्डल द्वारा बनायी गयी विधियों को लागू करती हैं। स्थानीय संस्थाओं के सदस्य स्थानीय जनता द्वारा चुने जाते हैं तथा स्थानीय संस्थाओं के माध्यम से शासन में स्थानीकरण के साथ प्रशासकीय अधिकारों का विकेन्द्रीकरण किया जाता हैं।

आधुनिक राज्यों का क्षेत्रफल बहुत बड़ा होता हैं। इस वजह से केन्द्रीय सरकार द्वारा स्थानीय मामलों की समूचित देखभाल संभव नहीं हो पाती हैं। अत: विकेन्द्रीकरण के सिद्धांत के आाधार पर स्थानीय शासन का कार्य स्थानीय संस्थाओं को सौंप दिया जाता हैं। प्रारम्भिक समय में ये संस्थाएँ सरकारी होती थी, किन्तु 19वीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में इन संस्थाओं में लोकतंत्रीय सिद्धान्त लागू किया गया। इस प्रकार स्थानीय संस्थाएँ शासकीय अधिकारों का विकेन्द्रीकरण हैं। स्थानीय सरकार अथवा स्थानीय शासन को अनेक प्रकार से परिभाषित किया गया है –

1. इनसाइक्लोपीडिया ऑफ ब्रिटानिका के अनुसार – स्थानीय शासन का अर्थ है, एक पूर्ण राज्य की अपेक्षा एक अंदरूनी, प्रतिबंधित एवं छोटे क्षेत्र में निर्णय लेने तथा उनको क्रियान्वित करने वाली सत्ता।
2. कार्ल जे. फ्रेडरिक के अनुसार – यदि स्थानीय उद्देश्य की दृष्टि से देखा जाए तो स्वायत्त शासन स्थानीय समाज पर एक प्रशासकीय व्यवस्था हैं जो व्यवस्थापन के नियमों द्वारा इस प्रकार विनियमित होती हैं कि सरकार की सत्ता का वह ऐसे समय प्रतिनिधित्व करे जब वह स्थानीय रूप से सक्रिय हैं।
3. गिलक्राइस्ट के अनुसार – स्थानीय संस्थाएँ अधीनस्थ संस्थाएँ हैं, लेकिन एक सीमित क्षेत्र में कार्य करने की इनमें क्षमता हैं।
4. डॉ. आशीर्वादम ने इसे और अधिक स्पष्ट करते हुए बताया कि – स्थानीय शासन केन्द्रीय सरकार के अधिनियम द्वारा निर्मित एक ऐसी शासकीय इकाई हैं, जिसके क्षेत्रान्तर्गत नगर होते हैं। और जो अपने अधिकार क्षेत्र की सीमाओं के भीतर प्रदत्त अधिकारों का उपयोग लोक कल्याण के लिए करती हैं।
5. महात्मा गांधी का भी मानना था कि आत्मनिर्भर गांवों के द्वारा ही वास्तविक लोकतंत्र की प्राप्ति संभव हैं। उनके अनुसार स्वतंत्रता स्थानीय स्तर से प्रारम्भ होनी चाहिए। इस प्रकार प्रत्येक गांव एक गणराज्य अथवा पंचायत राज होगा। प्रत्येक के पास पूर्ण सत्ता एवं शक्ति होगी। इसका अर्थ यह हैं कि प्रत्येक गांव को आत्मनिर्भर होना चाहिए और अपनी आवश्यकताओं को स्वयं पूर्ण करना होगा ताकि वह समपूर्ण प्रबन्ध स्वयं चला सके।

उपर्युक्त परिभाषाओं के आधार पर स्पष्ट रूप से स्थानीय शासन का अभिप्राय यही हैं कि स्थानीय मामलों का प्रबन्ध स्थानीय व्यक्ति स्वयं अपने

* शोधार्थी (राजनीतिशास्त्र) विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत

प्रतिनिधियों के माध्यम से करें। स्थानीय आवश्यकताओं हितों और समस्याओं को सबसे अधिक वे ही लोग समझ सकते हैं, जो वहाँ रहते हैं। अत: स्थानीय प्रशासन पर स्थानीय जनता का नियंत्रण ही उपयुक्त माना गया हैं। यदि स्थानीय क्षेत्र का प्रशासन केन्द्र अथवा प्रान्तीय सरकार के अधिकारियों द्वारा चलाया जाए तो उसे स्थानीय प्रशासन कहा जायेगा, स्थानीय शासन या स्थानीय स्वशासन नहीं।

स्थानीय नगरीय संस्थाओं के जनप्रतिनिधियों ने यह भी बताया कि समय-समय पर बैठकों का आयोजन किया जाता हैं। इन बैठको में सभी सदस्यों के साथ सहयोगपूर्ण व्यवहार किया जाता हैं। सभी सदस्यों को समान अवसर प्रदान किए जाते हैं। स्थानीय नगरीय संस्थाओं की बैठकों में वे अपनी बातों और समस्याओं रखने के लिए हमेशा प्रयासरत रहते हैं। इन बैठकों में किसी प्रकार का सामाजिक भेदभाव नहीं होने दिया जाता और न ही किया जाता हैं।

नगरीय स्थानीय संस्थाएँ – भारत में स्थानीय शासन की वर्तमान संरचना ब्रिटिश शासन की देन हैं। भारत में भी स्वायत्त शासन को वही रूप दिया गया जो कि ब्रिटेन में हैं। भारत में स्थानीय स्वायत्त शासन संस्थाएँ मुख्यत: दो वर्गों में बाँटी गयी हैं। शहरी एवं ग्रामीण बड़े नगरों में इन्हें नगर निगम कहा जाता हैं और मध्यम व छोटे शहरों में नगरपालिका और नगर पंचायत। ग्रामीण क्षेत्रों में इसे पंचायत राज व्यवस्था नाम देकर तीन स्तरों पर लागू किया गया हैं।

भारत में स्थानीय स्वायत्त संस्थाएँ अतीत काल से चली आ रही हैं। स्थानीय सरकार को मानव की मनोवैज्ञानिक और व्यवहारिक आवश्यकता के रूप में रेखांकित किया गया हैं। मानव की सदैव यह इच्छा रही हैं कि जो भी सरकार हो वह उसके स्वयं के द्वारा शासित एवं अच्छी होनी चाहिए। मानव प्रकृति से स्वकेन्द्रित होता हैं। वह कभी यह पसन्द नहीं करता हैं कि उसके सार्वजनिक मामलों का निर्णय कोई और करे। मानव मन की यही इच्छा अति प्राचीन काल से स्थानीय संस्थाओं के विकास का अन्तर्निहित दर्शन हैं।

नगरीय शासन-भारत में नगरीय शासन व्यवस्था प्राचीन काल से ही प्रचलन में रही हैं लेकिन इसे कानूनी रूप सर्वप्रथम 1687 में दिया गया, जब ब्रिटिश सरकार द्वारा मद्रास शहर के लिए नगर निगम संस्था की स्थापना की गई। बाद में 1793 के चार्टर अधिनियम के अधिन मद्रास, कलकत्ता तथा बम्बई के तीनों महानगरों में नगर निगम की स्थापना की गई। बंगाल में नगरीय शासन प्रणाली को प्रारम्भ करने के लिए 1842 में तत्कालीन वायसराय लार्ड रिपन ने नगरीय शासन व्यवस्था में सुधार करने का प्रयास किया, लेकिन वह राजनीतिक कारणों से अपने इस कार्य में असफल रहा। नगरीय प्रशासन के विकेन्द्रीकरण पर रिपोर्ट देने के लिए 1909 में शाही विकेन्द्रीकरण आयोग का गठन किया गया, जिसकी रिपोर्ट को आधार बनाकर भारत सरकार अधिनियम 1919 में नगरीय प्रशासन के सम्बन्ध में स्पष्ट प्रावधान किया गया, जिसमें किए गये प्रावधानों के अनुसार नगरीय शासन व्यवस्था छिन्न-भिन्न हो गयी।

सच्चे लोकतंत्र की स्थापना के लिए स्थानीय स्वशासन की संस्थाएँ अनिवार्य हैं। लोकतंत्र के वास्तविक परिणाम स्थानीय शासन के द्वारा ही जनता के लिए प्राप्त हो सकते हैं। स्थानीय स्वशासन केन्द्रीय सरकार या राज्य सरकार के अधिनियम द्वारा निर्मित एक ऐसी शासकीय इकाई होती हैं जिसमें जिला, नगर या ग्राम जैसे एक क्षेत्र की जनता द्वारा निर्वाचित प्रतिनिधि होते है और जो अपने अधिकार क्षेत्र की सीमाओं के भीतर प्रदत्त अधिकारों का उपयोग लोक कल्याण के लिए करते है।

नगरीय शासन व्यवस्था के सम्बन्ध में संवैधानिक प्रावधान – नगरीय शासन व्यवस्था के सम्बन्ध में मूल संविधान में कोई प्रावधान नहीं किया गया था लेकिन इसे 7वीं अनुसूची की राज्य सूची में शामिल करके यह स्पष्ट कर दिया गया था कि इस सम्बन्ध में कानून केवल राज्यों में नगरीय शासन व्यवस्था के सम्बन्ध में कानून बनाया गया था। इन कानूनों के अनुसार नगरीय शासन व्यवस्था के संचालन के लिए निम्नलिखित निकायों को गठित करने के सम्बन्ध में प्रावधान किया गया था-

1. नगर निगम।
2. नगर पालिका।
3. नगर क्षेत्र समितियाँ।
4. अधिसूचित क्षेत्र समिति तथा।
5. छावनी परिषद।

नगरीय शासन सम्बन्धी संवैधानिक उपबंध (भाग 9-क)

क्र.	अनुच्छेद	विवरण
1	अनुच्छेद 243 'त'	परिभाषा
2	अनुच्छेद 243 'थ'	नगरपालिकाओं का गठन
3	अनुच्छेद 243 'द'	नगरपालिकाओं की संरचना
4	अनुच्छेद 243 'ध'	वार्ड समितियों आदि का गठन और संरचना
5	अनुच्छेद 243 'न'	स्थानों का आरक्षण
6	अनुच्छेद 243 'प'	नगरपालिकाओं की अवधि
7	अनुच्छेद 243 'फ'	सदस्यता के लिए निरर्हताएँ
8	अनुच्छेद 243 'ब'	नगरपालिकाओं आदि की शक्तियाँ प्रधिकार और उत्तरदायित्व
9	अनुच्छेद 243 'भ'	नगरपालिकाओं द्वारा कर आरोपित करने की शक्ति और उनकी निधियाँ
10	अनुच्छेद 243 'म'	नगरपालिकाओं हेतु वित्त आयोग
11	अनुच्छेद 243 'य'	नगरपालिकाओं के लेखाओं की संपरीक्षा
12	अनुच्छेद 243 'य' (क)	नगरपालिकाओं के लिए निर्वाचन
13	अनुच्छेद 243 'य' (ख)	संघ राज्य क्षेत्र को लागू होना
14	अनुच्छेद 243 'य' (ग)	इस भाग का कतिपय क्षेत्रों को लागू न होना
15	अनुच्छेद 243 'य' (घ)	जिला योजना के लिए समिति
16	अनुच्छेद 243 'य' (ङ)	महानगर योजना के लिए समिति
17	अनुच्छेद 243 'य' (च)	विद्यमान विधियों पर नगरपालिकाओं का बना रहना
18	अनुच्छेद 243 'य' (छ)	निर्वाचन सम्बन्धी मामलों में न्यायलयों के हस्तक्षेप का वर्णन

निष्कर्ष-सर्वमान्य कल्याणकारी राज्य का मूल उद्देश्य स्थानीय शासन के माध्यम से ही पूरा हो सकता हैं। प्रत्येक सभ्य समाज में स्थानीय संस्थाए आधुनिक सभ्यता का हृदय कहलाती हैं। प्रजातान्त्रिक शासन व्यवस्थाओं में जन चेतना का मूल केन्द्र पंचायत, नगरपालिका एवं नगर निगम जैसी स्थानीय संस्थाए रही है। जिन पर व्यक्ति को सहायता एवं सामाजिक सुरक्षा प्रदान करने की संवैधानिक जिम्मेदारी हैं, जिसे पंचायत एवं नगरपालिका जैसी संस्थाओं की मदद से ही पूरा किया जा सकता है। प्रत्येक स्तर पर

जनता की भागीदारी और शासन के उद्देश्यों को पूरा करने की आवश्यकता हैं। जन चेतना प्रजातंत्र का आधार है, जिसे प्रभावशाली बनाने में स्थानीय शासन की छोटी–छोटी इकाईयाँ सक्रिय रूप सें मददगार हो सकती हैं।

भारत की आजादी के बाद भारतीय संविधान में अनुच्छेंद 40 के अन्तर्गत स्थानीय निकायों की व्यवस्था संविधान में की गई। डॉ. अम्बेडकर के विचारों में अधिकांश नगरो एवं गाँवों में अस्पृश्यता, जात–पात एवं पिछड़ापन अधिक था। इन कारणो से ग्रामों एवं नगरीय संस्थाओं कां स्वायत्ता न प्रदान कर राज्य सरकारो के नियन्त्रण में रखने का परामर्श दिया, जिसमें पं. जवाहर लाल नेहरू सरदार पटेल एवं अनेक संविधान निर्माता डॉ. अम्बेडकर के विचारों से सहमत थे।

अत: निष्कर्ष तौर पर कह सकते हैं कि नगरीय स्थानीय संस्थाओं के प्रतिनिधियों के अच्छे राजनीतिक नेतृत्व से नगरों के विकास में गति आई हैं। साथ ही उचित और अच्छी शिक्षा के कारण इन संस्थाओं में भ्रष्टाचार के क्षेत्र में भी कमी आई हैं।

सुझाव –

1 नगरीय स्थानीय संस्थाओं नेतृत्व में अनुसूचित जनजातिय महिलाओं को अधिक से अधिक शिक्षित एवं जागरूक बनाया जावे ताकि वे अपने अधिकारों को जान सके एवं उनकी सामजिक स्थिति में भी सुधार हो सके।

2 नगरीय स्थानीय संस्थाओं विकास कार्यक्रम नेतृत्व के अन्तर्गत शिक्षा, रोजगार, कृषि विकास, तकनीकी, पेयजल, तथा ग्रामीण विकास सम्बन्धी कार्यो के लिए वित्तीय व्यवस्था की जाए तथा इन्हीं कार्यो पर अधिक वित्त व्यय किया जाना चाहिए।

3 नगरीय संस्थाओ में राजनीतिक नेतृत्व में राज व्यवस्था हेतु अनुसूचित जनजाति प्रतिनिधियों को और अधिक अधिकार प्रदान किये जाने चाहिए।

4 स्थानीय संस्थाओं में राजनीतिक नेतृत्व के लिए अनुसूचित जनजाति की सामाजिक, शैक्षणिक तथा आर्थिक स्थिति को ऊपर उठाने के हर सम्भव प्रयास किए जाने चाहिए।

5 अनुसूचित जनजातियों के नगरीय स्थानीय संस्थाओ में निर्वाचित प्रतिनिधियों को प्रशिक्षण दियाा जाना चाहिए।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. मुतालिब एवं खान, थ्यौरी ऑफ लोकल गवर्नमेंट, स्टालिंग पब्लिकेशन्स, नई दिल्ली,1983, पृ.क्र.–259
2. वेंकटराव, बी. ए हण्डरेड इयर्स ऑफ लोकल गवर्नमेंट इन आसाम, बानी प्रकाश मण्डल, गोहाटी, 1965, पृ.क्र.–1
3. आशीर्वादम, ए.डी., राजनीति विज्ञान, एस. चांद कम्पनी लिमिटेड, नई दिल्ली, 1989, पृ.क्र.–664
4. भार्गव, बी.एस., पंचायती राज सिस्टम एण्ड पॉलिटिकल पार्टिज, आशीष पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली, 1979
5. गौड़, के.के., भारत में ग्रामीण नेतृत्व का उदीयमान स्वरूप, मानक पब्लिकेशन्स, नई दिल्ली, 1997
6. wwww.mobibharatdiscovery.org/india, 31/09/2015

****

खादी वस्त्र उत्पादन – वर्तमान चुनौतियाँ

मेघश्याम गुर्जर * प्रो. हिमाद्री घोष **

प्रस्तावना – हाथों द्वारा कताई तथा बुनाई की कला भारत वर्ष में प्राय: ऐतिहासिक युग से ही विकसित हुई।कपास तथा रेशे से बने वस्त्र भारत वर्ष की सीमा लांघकर यूरोपीय देशों में निर्यात होते थे एवं अत्यधिक पसन्द किए जाते थे। भारत में निर्मित सूती मलमल के वस्त्र ग्रीस, रोम, इटली, इंग्लैण्ड इत्यादि देशों में अत्यधिक लोकप्रिय थे।

भारतीय सूती वस्त्र (कैलिको) को इंग्लैण्ड में अत्यधिक लोकप्रियता हासिल थी और इसके चलते वहाँ के व्यापारियों को अपने वस्त्रो को बेचने में कठिनाइयों का सामना करना पड़ता था। सन् 1698 के प्रकाशित पुस्तक 'नेकेड ट्रूथ' में लिखा है कि 17 वी शती के इंग्लैण्ड के शासक द्वारा भारतीय सूती वस्त्र (कैलिको) पर पाबन्दी लागू की गई। परन्तु बाद में वहाँ के लोक दबाव के चलते सन् 1736 में इस बंदी को वापस लिया गया। 1800 शती में भाप पर चलने वाले इंजिन, स्पीनिंग जीनी, म्युअल मशीन और फ्लाय शटल पवर लूम के आविष्कार से सूती वस्त्र उद्योग में एक नयी क्रान्ति आई। इस समय भारत पर अंग्रेजों का पूरी तरह आधिपत्य स्थापित था। इस के चलते भारतीय हस्त वस्त्र निर्माण उद्योग पूर्णत: बदल गया। सन् 1771 में इंग्लैण्ड में पहली टेक्सटाइल मील की स्थापना हुई। तत्पचात् अनेक वस्त्र मिलों का निर्माण हुआ। भारतीय वस्त्र उद्योग जो की हाथों द्वारा निर्मित वस्त्रों का सबसे बड़ा निर्माता तथा निर्यातक था,वह कपास की उत्पादन तथा इसे वस्त्र निर्माण की कच्ची सामग्री के रूप में इंग्लैण्ड को भेजने वाला बड़ा निर्यातक बन कर रह गया।

अंग्रेजों ने भारतीय वस्त्र उद्योग को बड़ी बेहरमी व योजनाबद्ध तरीके से खत्म करना शुरु कर दिया। क्योंकि स्टीम, लूम पर बनने वाले वस्त्रों से भारत में निर्मित हस्त वस्त्र अधिक गुणवत्ता व दर्जे के थे व जो इंग्लैण्ड के उपभोक्ताओं में अधिक लोकप्रिय थे। एच.एच. विलसन लिखते है, अंग्रजों ने अपने राजनैतिक शक्ति द्वारा भारतीय वस्त्रों की ब्रिक्री रोकने हेतु इन वस्त्रों पर 60 से 70 प्रतिशत टैक्स लगाया। जिससे भारत में निर्मित वस्त्र जो 50 से 60 प्रतिशत सस्ते व उच्च श्रेणी के थे, वे महंगे किए गए। इंग्लैण्ड में बने मशीन निर्मित वस्त्रों पर कोई टैक्स नहीं था। दूसरी ओर भारतवर्ष में वस्त्र बुनाई करने वाले बुनकरों को अंग्रेजी सरकार द्वारा खत्म किया गया। बंगाल के गवर्नर लॉर्ड बेन्टिक ने इस बात को कबूल किया कि अंग्रेजी सरकार द्वारा सूती वस्त्रों की बुनाई करने वाले बुनकरों की उंगलियों को काटा गया। जिससे बुनाई का कार्य खत्म हुआ व कताई करने वाले हजारों लाखों महिलाओं को बेरोजगार कर भूखे मरने के लिए छोड़ दिया गया।

अंग्रेजों द्वारा अपनाए गए इस षड़यंत्र से भारत के गांवों में बेरोजगारी अत्यधिक मात्रा में बढ़ने लगी और इसमें प्रतिवर्ष वृद्धि होती गई। इसके विरुद्ध अनेक भारतीय राष्ट्रीय नेताओं ने आवाज उठायी व भारतीय ग्रामीण उद्योगों को बचाने हेतु विदेशी वस्त्रों को बहिष्कार करने का जनता से आह्वान किया एवं स्वदेशी का नारा दिया, इन राष्ट्रीय नेताओं ने स्वयं भारत में निर्माण वस्त्रों को अपनाया। सन् 1891 के राष्ट्रीय कांग्रेस के 7वें अधिवेश में इस पर अध्यादेश पारित किया। देश की कई पत्र–पत्रिकाओं ने जनजागृति का कार्य किया व धीरे–धीरे आन्दोलन ने पूरे भारतवर्ष में जोर पकड़ लिया। मोहनदास करमचन्द गाँधी जिन्हें पूरी दुनियां 'महात्मा गाँधी' के नाम से अधिक जानते है, वे केवल राष्ट्रपिता ही नहीं अपितु आधुनिक खादी के जनक भी थे। इस कारण खादी के सम्बन्ध में उनके विचार व उद्देश्य अत्यधिक महत्वपूर्ण है। गाँधी जी ने सन् 1908 में चरखे को पुन: जीवित किया। उनका मानना था कि कताई के बिना 'स्वराज' असंभव है। उनके विचारे के अनुसार में चरखा ही भारतीय अर्थ व्यवस्था की नींव है। इस प्राचीन उद्योग को पुन: जीवित करना व इससे लाखों लोगों को आर्थिक स्वालम्बन प्राप्त होगा तथा यही स्वराज्य पाने का रास्ता है। अन्तत: सन् 1915 में जब गाँधी जी भारत में आये तो उस समय विदेशी वस्तुओं पर बहिष्कार की मूहिम जोरों पर थी। सन् 1915 के आखिर उन्होंने खादी उत्पादन का कार्यक्रम प्रस्तुत किया। खादी उत्पादन का केन्द्र गुजरात के काठीयावाड़ में शुरु किया। सन् 1921 के नागपुर अधिवेशन में चरखें को कांग्रेस के झण्डें पर सम्मानित स्थान दिया गया।

'चरखा संघ' नाम से एक संगठन की स्थापना हुई। गाँधी जी ने खादी को आर्थिक तथा राजकीय हेतु से अपनाया था। भारत को समझने के लिए गाँधी जी द्वारा किए गए भारत भ्रमण के समय उन्हें ग्रामीण भारतियों की आर्थिक स्थिति व अत्यधिक गरीबी को करीब से देखने का मौका मिला। इससे उनको दृढ़ विश्वास हुआ कि कताई–बुनाई के द्वारा गांवों का पुन: निर्माण अधिक से अधिक रोजगार निर्माण, गांवों का स्वालम्बन संभव है। इस पर अमल करते हुए कताई व बुनाई की इकाईयाँ गांव–गांव में शुरु कर दी गई। हाथों द्वारा बनाए गए वस्त्रों को **खादी** नाम गाँधी जी ने दिया। इस खादी की बिक्री हेतु ग्रामीण क्षेत्रों में खादी भण्डारों की स्थापना की गई व खादी की कीमत कम से कम रखी गई। ज्यों कि शहरी मिल द्वारा बनाए गए वस्त्रों से सस्ते हो ताकि उन्हें शहरी लोगों द्वारा खरीदा जाए।

उद्देश्य एवं साहित्य समीक्षा इस शोध का उद्देश्य जनमानस में खादी की अवधारणा को समझना और खादी वस्त्र उद्योग में चुनौतियों का अध्ययन करना है ।

कोठारी अर्पिता (2016) अपने शोध पत्र में भारतीय संसाधनों, खादी उत्पादन, प्रयोग व उसकी मर्यादाओं पर ध्यान आकर्षित किया है। वे कहती है कि भारत असीमित संभावनाओं से भरा देश हैं। इस संभावनाओं

* एसोसिएट प्रोफेसर, वनस्थली इन्स्टीट्यूट ऑफ डिजाइन, वनस्थली विद्यापीठ (राज.) भारत
**निदेशक, वनस्थली इन्स्टीट्यूट ऑफ डिजाइन, वनस्थली विद्यापीठ (राज.) भारत

का उचित प्रयोग देश की बेरोजगारी को कई मात्रा में कम से कम कर सकती है। ग्राम विकास देश की आर्थिक प्रगति की रीड़ की हड्डी है और इसी कारण स्वतंत्रता के पश्चात् सरकार द्वारा खादी तथा ग्रामोद्योग कमिशन की स्थापना की गई। परन्तु खादी को आम जनता में उचित स्थान देने से यह असफल रही व आज फिर खादी को वर्तमान के युवक युवतियों में स्वतंत्रता पूर्व की लोकप्रियता देने हेतु पुन: नये से प्रयास करने की महति आवश्यकता है।

तिवारी आदित्य व अन्य (2016) के अनुसार वस्त्र प्रसंस्करण उद्योग वर्तमान में विश्व के प्राकृतिक वातावरण को प्रदूषित करने वाला एक बड़ा उद्योग है। नागरिक बैंक के अनुसार इस उद्योग द्वारा विश्व के पानी प्रदूषण में 20 प्रतिशत हिस्सेदारी है। वस्त्र प्रसंस्करण प्रक्रिया में स्वास्थ्य तथा वातावरण को प्रदूषित करने वाले रसायनों का प्रयोग होता है। इसे रोकने के कई उपायों में नैसर्गिक रंगों का प्रयोग है। नैसर्गिक पर्यावरण पूरक, जमीन में घूलने वाले व साथ ही इससे शरीर की त्वचा पर कोई बुरा प्रभाव नहीं होता व यह हमें नैसर्गिक घटक जैसे फूल, जड़, पत्तियां, आदि से प्राप्त होते है।

वर्तमान के 21वीं सदी के आधुनिक बाजार में खादी को अन्तर्राष्ट्रीय ब्राण्ड के साथ स्पर्द्धा करनी पड़ रही है। अर्थात् खादी वस्त्र उद्योग के सामने बाजार में अपना हिस्सा बनाने के लिए कई चुनौतियाँ हैं–

उत्पादन हेतु नये यंत्रों का निर्माण व उत्पादन केन्द्रों पर मशीन के पुर्जों की सहजता से उपलब्धता – वर्तमान में खादी उत्पादन के प्रयोग में लिए जाने वाले कताई मशीन, करघे, जैसी मशीनों में नये आविष्कारों की अधिक आवश्यकता है, जो कि कम श्रम व अधिक उत्पादन देने योग्य हों व साथ ही इनके कलपूर्जे दूर गावों में स्थित उत्पादन केन्द्रों पर सहजता से व समय पर उपलब्ध हो।

कताई पूर्व, कताई, बुनाई एवं तैयार उत्पादों पर अन्तिम परिसज्जा के समय गुणवत्ता में सुधार लाना – वर्तमान में धागों की कताई में सीमित प्रकार के धागों का उत्पादन होता है। इसमें नये प्रयोगों के साथ फैन्सी धागों का निर्माण हेतु नये प्रयोग व अन्तिम परिसज्जा के समय गुणवत्ता में सुधार हेतु अधिक ध्यान देना होगा।

खादी वस्त्रों में रंगाई हेतु पक्के एवं पर्यावरण पूरक रासायनिक तथा नैसर्गिक रंगों का प्रयोग व रंगाई तकनीक में सुधार – खादी वस्त्र उपभोक्ताओं में अप्रिय होने का एक मुख्य कारण रंगों का वस्त्रों से धुंधला पड़ना यह भी है क्योंकि वस्त्र रंगाई में अधिकतर सस्तें व हानिकारक रंगों का प्रयोग व रंगाई में आधुनिक तकनीक का प्रयोग न होना यह है। वर्तमान में बाजार में इको फ्रेण्डली रासायनिक व नैसर्गिक रंग उपलब्ध हैं व रंगाई तकनीक में नित नये प्रयोग हो रहे हैं। जिन्हें खादी में अपनाया जाना चाहिए।

बाजार की मांग के अनुसार योजनात्मक उत्पादन : वर्तमान में खादी वस्त्रों का उत्पादन पारम्परिक पद्धति से व गिने चुने प्रकार के किए जा रहे हैं। जबकि वर्तमान में देश का बाजार युवाओं का है। आज भारत दुनिया का सबसे युवा देश है। जहाँ 60 प्रतिशत से अधिक संख्या युवाओं की है व वर्तमान में उनके आधुनिक जीवन शैली को देखते हुए विभिन्न प्रकार के खादी उत्पादन को बनाना होगा।

कलर फोरकास्टिंग के अनुसार बुनाई तथा छपाई युक्त वस्त्रों में नवीनतम अलंकरण – वस्त्रों का देश में सबसे बड़ा उपभोक्ता युवाओं में खादी वस्त्रों का अप्रिय होने का एक मुख्य कारण वस्त्रों में नवीनतम अलंकरण तथा कलर फोरस्काटिंग के अनुसार रंगों का न होना यह भी है। वस्त्रों में वर्षो पुराने डिजाइन प्रयोग हो रहे हैं। इसमें अलंकरणों की अत्यधिक कमी, बाजार की मांग, सीजन के अनुसार रंगों का प्रयोग न होना इत्यादि कारण है।

आक्रमक विपणन योजना बनाना : खादी वस्त्र जो की अपने नैसर्गिक गुणों के कारण वर्तमान में अत्यधिक उपयुक्त है। यह दृढ़ता से उपभोक्ता के सामने प्रस्तुत करने की व खादी के प्रयोग से देश के आर्थिक, सामाजिक प्रभाव को उपभोक्ता को बतलाने की आवश्यकता है। इसलिए वर्तमान पत्र, पत्र–पत्रिका, टेलीविजन, रेडियो, पारम्परिक व आधुनिक माध्यमों का प्रभावी व आक्रमक प्रयोग की आवश्यकता है।

खादी वस्त्रोत्पादन क्षेत्र में तकनीकी शिक्षा प्राप्त व्यक्तियों का समावेश अथवा उनकी सेवाओं को लेना – खादी वस्त्रोत्पादन में कताई से लेकर रंगाई, बुनाई, छपाई, अलंकरण, उत्पादों की अन्तिम परिसज्जा, विपणन इत्यादि में दिखने वाली कमियों का कारण सम्बन्धित विषयों में तकनीकी ज्ञान युक्त व्यक्तियों का अभाव होना यह है।

खादी प्रशिक्षण केन्द्रों के विकास हेतु निरन्तर सुधार – वर्तमान देश के खादी प्रशिक्षण केन्द्रों की स्थिति दयनीय दिखाई देती है। वर्षो पुराने पाठ्यक्रम कताई, बुनाई, रंगाई, तकनीक, प्रशिक्षण केन्द्रों की खराब अवस्था, उदासीन वातावरण इत्यादि में सुधार लाने की आवश्यकता है।

खादी वस्त्र उत्पादन केन्द्रों में कार्यक्षमता बढ़ाने हेतु अनुकूल स्थितियों का निर्माण – अधिकतर खादी उत्पादन केन्द्र ग्रामीण क्षेत्रों में है व इन केन्द्रों की स्थिति यहां कार्य करने वाले कार्यकर्ताओं की उत्पादन क्षमता को प्रोत्साहित करने जैसी नजर नहीं आती। इन केन्द्रों पर बिजली, पीने योग्य पानी, महिला तथा पुरुष कार्यकर्ताओं के लिए स्वतंत्र स्वच्छता गृह, महिला कार्यकर्ताओं के बच्चों के लिए स्वतंत्र कमरों की कमी है। उत्पादन हेतु प्रयोग में लिए जाने वाले यंत्रों को नियमित देखभाल की कमी, कलपूर्जों की उपलब्धता न होना, इत्यादि कारणों से अपेक्षित उत्पादन नहीं होता।

खादी वस्त्र से जुड़े बुनकर व अन्य कार्यकर्ताओं के विकास हेतु निरन्तर योजनाओं का निर्माण व निर्वाहन – सरकार द्वारा खादी कार्यकर्ताओं के लिए बनाये गए योजनाओं का लाभ उन तक पहुंचाना व समय समय पर स्थानीय स्तर पर लाभदायी योजनाओं का निर्माण तथा उनका लाभ कार्यकर्ताओं को देना।

निष्कर्ष – खादी गांधी जी की भारत को देन है। यह बहु आयामी वस्त्र है, जो पूर्णत: हाथों द्वारा बनाया जाता है। यह गरमी में ठण्डा व सर्दी में गर्म होता है। खादी का गांवों के विकास में अपनी महत्वपूर्ण भूमिका है। यह अत्यधिक रोजगार देने वाला व्यवसाय है। परन्तु वर्तमान में इसकी लोकप्रियता लगातार कम होती नजर आती है। इसके कहीं कारण है जिनमें निम्नस्तर की बुनाई, अलंकरण की नये पन का अभाव, रंगों का धुलाई के दौरान उतरना, रंग फिरके पड़ना, नये पैटर्न का अभाव, वर्तमान के नये बदलाव पसन्द व मांग के अनुसार नहीं होना आदि है। नैसर्गिक रंग तथा ईको फ्रेंडली रसायनिक रंग यह पर्याय अपनाने से पर्यावरण प्रदूषण बचाने में मदद हो सकती है। वर्तमान के युवाओं की लोक संख्या में अत्यधिक हिस्सेदारी को देखते हुए खादी में आवश्यक बदलाव से खादी को बड़ा बाजार प्राप्त हो सकता है। साथ ही लाखों लोगों को रोजगार प्राप्त हो सकता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. Sharma Yogesh Chandra (1970) "Cotton Khadi in Indian Economy", Navjeevan Publishing House, Ahmedabad 380014
2. लाल शिव कुमार (1981), 'गांधी एण्ड विलेज' अग्रीकोल प., एकेडमी, नई दिल्ली।

3. अयप्पा सी.सी. (1989) 'प्रोपर्टीज ऑफ नेचुरल डाइज' बैंगलौर
4. सम्पादक (1985), 'रजत जयन्ती स्मरणिका' टोंक जिला, खादी ग्रामोद्योग समिति, टोंक।
5. Ghandhi, M.K. (1960), "Village Industries" Navjeevan Publishing House, Ahmedabad 380014
6. Kothari Arpita, " Khadi the Future Textile" International Conference Empowering Khadi and Handlooms Through Design Intervention, Souvenir CGF, Baroda 2016,
7. Lakwal Richa (2014), "Dyeing to sustain : Encouraging Eco Conscious Life Style and Social Responslity", NIFT, Hyderabad
8. Joshi (2002), "Ghandi ji on Village" Selected and Compile with an Introuduction, Meghshyam T. Ajgonkar, Mumbai Publsihing trust, Ahmedabad.
9. विश्व प्रकाश गुप्त (1997), आजादी के पचास साल, भाग 2, राधा पब्लिकेशन्स, नई दिल्ली, 1997
10. पॉल, मालनकर, नायक (1996), 'नेचुरल डाइज टेक्सटाइल डायर एण्ड प्रिन्टर 23 अक्टूबर।

****

भारत में दिव्यांगों के हित में प्रशासनिक दृष्टिकोण – एक आनुभाविक अध्ययन

डॉ. मनीष चौधरी *

शोध सारांश – स्वतंत्रता के बाद भारत सरकार ने विकलांगों के लिए छोटे बडे कई प्रावधान किए है। शासन की नीतियों का सम्पूर्ण क्रियान्वयन प्रशासनिक व्यवस्था के हाथों में होता है। प्रशासक शासन के चौथे अंग के रूप में भी परिभाषित किया जा सकता है। किन्तु भारत के लगभग सभी राज्यों में तथा पूरे शहरों में विकलांग व्यक्तियों को अपने अधिकारों को प्राप्त करने की आशा कहीं न कहीं प्रशासनिक असंवेदनशीलता के कदमों तले कुचली हुई नजर आती है। यहाँ पर ग्रामीण क्षेत्रों के विषय में कुछ जानना अधेरे में जुगनु की चमक के समान ही होगा। यह भी नहीं तो मरू भूमि में मरीचिका के समान तो अवश्य ही होगा क्योंकि.....हजारों गाँवों में दिव्यांगों के अधिकारों से सम्बधित सूचनाएँ अब तक नहीं पहुँच सकी है। यदि इसकी जबाबदारी प्रशासन की है। तो विकलांगता के प्रति प्रशासनिक दृष्टिकोण तो दिव्यांगों के भविष्य के लिए शुभ संकेत नहीं देता किन्तु विगत् कुछ वर्षों में प्रशासनिक शून्यता समाप्त हो रही है, पर इसकी गति बढ़ाने की आवश्यकता है। यह एक आनुभाविक अध्ययन है।

प्रस्तावना – नि:शक्तजन अधिनियम 1995 के तहत गठित केन्द्रीय कार्यपालिका समिति की गैर सरकारी सदस्य वंदना बेदी ने यह बताया है। कि **'गैर सरकारी संगठन प्रतिनिधियों में मेरे सहित, एक भी ऐसा नहीं है। जो विकलांग हो। समिति को उन योग्य गैर सरकारी संगठन प्रतिनिधियों की भागीदारी सुनिश्चित करनी चाहिए जो स्वयं विकलांग व्यक्ति हो'**[1] यह अनुभव दिव्यांगों के प्रति शासन प्रशासन के ढुल मुल दृष्टिकोण को प्रदर्शित करता है। **'जब यह बात समिति की बैठक में रखी गई की विकलांगों को तथा विकलांगों के लिए कार्य कर ही संस्थाओं को इन समितियों में प्रतिनिधित्व मिलना चाहिए, क्योंकि वे ही उपर्युक्त परिस्थितियों के आधार पर सुझाव दे सकते हैं।'**[2] इस पर तात्कालीन **'सभापति और सामाजिक न्याय और अधिकारिता मंत्रालय के सचिव ने इसे यह कह कर टाल दिया कि मानसिक बीमारी वाले विकलांग केन्द्रीय कार्य समिति में अपने आपको प्रतिनिधित्व देने लायक योग्यता नहीं रखते हैं।'**[3] यहां पर मानसिक रूप से दिव्यांगों के प्रति सभापति का यह तर्क अन्य दिव्यांगों को भी समिति में प्रतिनिधित्व से दूर करता नजर आता है। क्योंकि.....इस तर्क के बाद इस प्रस्ताव पर कदाचित कोई बात नहीं हुई। इस प्रस्ताव को एक बार पुन: **'गैर सरकारी संगठन के प्रतिनिधियों ने जब यह मामला समिति की बैठक में उठाया तो उनके विचार को नकार दिया गया हैं। नौकर शाह अन्य सदस्यों के साथ जानकारियाँ बाँटना नहीं चाहते या समिति की बैठक केवल कागजी होती है।'**[4] वैसे तो इन समितियों के कार्यो का विस्तृत ब्यौरा अधिनियम के खण्ड 2 में दिया गया है। इसके नियमानुसार समिति की बैठक प्रत्येक 3 माह में एक बार अनिवार्य रूप से बुलाई जानी चाहिए किन्तु बैठक का आयोजन त्रैमासिक नहीं किया जा रहा था और जब बैठक निर्धारित होती तो कई बार गणपूर्ती न होने के कारण बैठक को आगे बढ़ा दिया जाता था। यह भी एक असंवेदनशीलता को प्रदर्शित करने वाली बात है। इसके विरूद्ध एक जनहित याचिका भी लगाई गई **'इस याचिका के बाद सर्वोच्चन्यायालय ने आदेश पारित किया कि समिति को तीन महीने में बैठक बुलानी चाहिए तब ऐसा होना शुरु हुआ कम से कम ये नियमित बैठके तो आयोजित हो रही है परन्तु अब भी उन्हें जरूरी समय नहीं दिया जा रहा है। सामान्यत: बैठक दोपहर 4 बजे बुलाई जाती है और 5.30 बजे समाप्त हो जाती है। यदि समिति को केन्द्रीय समन्वय समिति के नीतिगत निर्णय लागू करते हैं। तो इन बैठकों के लिए ज्यादा समय दिया जाना चाहिए।'**[5] परंतु उक्त बैठकों में निर्णय हो पाए इस पर प्रश्नचिन्ह लगा रहता है।

कानून में एक और महत्वपूर्ण पद नि:शक्त जन आयुक्त का है। जोकि कार्यकारिणी समिति की बैठकों में अनिवार्य रूप से उपस्थित होता है। इसकी स्थिति पर भी गम्भीर चिंतन की आवश्यकता महसूस होती है। क्योंकि **'मुख्य आयुक्त सामान्यत: इन बैठकों में बहुत ही निष्क्रिय भूमिका निभाते हैं। क्योंकि मुख्य आयुक्त का पद सामाजिक न्याय और अधिकारिता मंत्रालय के सचिव से नीचे है और मुख्य आयुक्त से यह अपेक्षा नहीं की जा सकती कि, वह मंत्रालय के विपरीत कोई लाइन पकड़ेंगे।'**[6] दिसम्बर 2008 में बेंगलोर में एक्शनएड द्वारा आयोजित दिव्यांगों के एक राष्ट्रीय सम्मेलन में बात उठाई गई थी कि, **'मुख्य आयुक्त नि:शक्तजन तथा राज्यों में आयुक्त नि:शक्तजनों की नियुक्ति औपचारिकता मात्र है। आंध्र प्रदेश, कर्नाटक तथा उ.प्र. को छोड़कर अन्य सभी राज्यों में इस पद को अप्रशासनिक पद के रूप में बताया गया है। जिसके कारण प्रशासनिक अधिकारी आयुक्तों के निर्णयों की सरेआम अनदेखी करते नजर आते हैं। कई राज्यों में तो इस पद पर राजनैतिक व्यक्ति को संतुष्टि देने के लिए नियुक्त कर दिया जाता है और अधिकांश राज्यो में गैर विकलांग व्यक्ति कि नियुक्ति इस पद को निष्क्रिय असंवेदनशील एवं शासकीय सुविधाओं में परिपूर्ण बना देता है।'**[7] इन विवरणों से स्पष्ट होता है। कि केन्द्र में मुख्य आयुक्त हो अथवा राज्यों में आयुक्त इनकी भूमिका को शिथिल कर दिया गया है। श्रम एवं रोजगार मंत्रालय भारत सरकार तथा मानव संसाधन विकास मंत्रालय में विकलांगों के लिए विभिन्न राज्यों में विशेष रोजगार कार्यालय तथा व्यवसायिक पुनर्वास केन्द्रों की स्थापनाएं की गई

* अतिथि व्याख्याता (राजनीति विज्ञान) महाराजा भोज शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, धार (म.प्र.) भारत

जिनमें बड़ी आशा से विकलांगों द्वारा पंजीयन करवाया जाता है। किन्तु लापरवाही के कारण न तो दिव्यांगों को रोजगार के अवसर प्रदान किए जाते है और ना ही उन्हें निर्धारित बेरोजगारी भत्ता प्राप्त हो पाता है। व्यावसायिक पुनर्वास एवं स्वरोजगार के लिए दिव्यांगों को ऋण सुविधा प्राप्त करने हेतु सामाजिक न्याय एवं अधिकारिता मंत्रालय द्वारा दिव्यांग वित्त एवं विकास निगम की स्थापना की गई। जिसका मुख्यालय फरीदाबाद में स्थित है। किन्तु इसकी ऋण प्रक्रिया अत्यधिक जटिल है। जिससे दिव्यांग व्यक्ति इसका लाभ नहीं उठा पाते।

'सूचना का अधिकार अधिनियम 2005' के अन्तर्गत माँगी जाने वाली सूचना सामान्यतौर पर बैठकों में लिए गए निर्णय को भी गोपनीय बताकर देने से मना कर दिया जाता है।

यह बातें तो केन्द्रीय एवं राज्य स्तरों पर देखी जाती है। किन्तु जिला एवं संभाग स्तर पर दिव्यांगों उनके परिजनों तथा दिव्यांगों के लिए कार्य कर रही है स्वयं सेवी संगठनों को दिव्यांगों के हित में शासकीय सुविधाएं तथा अनुदान प्राप्त करने के लिए कर्मचारियों से लगाकर अधिकारियों तक कथित भ्रष्टाचार का सामना करना पड़ता है। प्रोजेक्ट पास करवाने के लिए फाइल के वजन की बात भी कही जाती है। किन्तु कोई भी खुलकर इस भ्रष्टाचार के विरूद्ध साक्ष्य प्रस्तुत नहीं कर सकता। यदि कोई यह कार्य करता है। तो उसे ही उलझाने का प्रयास किया जाता है। प्रशासन की यह असंवेदनशीलता दिव्यांग व्यक्तियों की दयनीय स्थिति को भी अनौपचारिक लाभ का साधन बना लेती है।

सामान्य तौर पर सैन्य प्रशासन में दिव्यांगों के लिए कोई पद नहीं हो सकता किन्तु ये तर्क उस समय फिके पड़ जाते है जब विभिन्न दिव्यांगों को सैन्य छावनियों में कम्प्यूटर तथा टेलीफोन ऑपरेटरो के पदो पर भर्ती दी जाने लगी है। ये तो कार्यालयीन कार्य है, जिन पर दिव्यांगों को कोई समस्या नहीं आती किन्तु सैन्य पदो पर कार्य करने वालें सैनिको को किसी कार्यवाही में होने वाली दिव्यांगता के बाद भी पद पर बने रहने में कोई समस्या नहीं दिखाई देती। **'मार्च 2010 में भारतीय सैना में एक ऐसे ही विकलांग सैन्य अधिकारी को पदोन्नति करते हुए ब्रिगेडियर बनाने की तैयारी पूर्ण कर ली गई थी। ब्रिगेडियर एस.के. राजदान 4 अक्टूबर 1994 को एक आतंकवादी मुठभेड में विकलांगता का शिकार हो गए थे। इसके पश्चात् उन्हें कीर्ति चक्र प्रदान किया गया था। जिन्हें 2010 में पदोन्नति के द्वारा मेजर जनरल बना दिया गया है। इस पद पर पहुँचने वाले प्रथम विकलांग अधिकारी है।'**[8]

निष्कर्ष – प्रथम दृष्ट्या प्रशासनिक असंवेदनशीलता परिलक्षित होती है किन्तु 21 वीं शताब्दी के प्रारंभ से ही अधिकारियों की सोच सकारात्मक होती नजर आ रही है। इसमें पर्यवेक्षण को बढ़ाने की आवश्यकता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. श्री रतुडी राजीव कॉम्बट लो (द्विमासीक) सामाजिक कानून सूचना केन्द्र नहीं दिल्ली अप्रेल मई 2008 पृ. सं. 32
2. तदैव।
3. तदैव।
4. तदैव पृष्ठ संख्या 33
5. तदैव।
7. मण्डावरा श्यामकुमार एवं तिवारी हेमन्त (सम्मेलन प्रतिवेदन) युवा विकलांग मंच म.प्र. के प्रतिनिधि बंगलोर 15 से 18 दिसम्बर 2008
7. पत्रिका समाचार पत्र पृ. 15 इंदौर रविवार 21 मार्च 2010
8. डॉ. जोसेफ आर.ए. विशेष शिक्षा एवं पुनर्वास पृ. सं. 296 समाकलन प्रकाशन वाराणसी 2005

****

ग्रामीण विकास में विज्ञान का योगदान

डॉ. समीना खॉन खटक *

प्रस्तावना – हमारे जीवन को सुविधाजनक , स्वस्थ व आत्म–निर्भर बनाने में विज्ञान का अभूतपूर्व योगदान रहा है। यह एक कटु सत्य है कि विज्ञान की इस अविश्वस्नीय , प्रगति के यदि कुछ नकारात्मक प्रभाव हमारे जीवन व हमारे आस–पास के वातावरण पर पड़े हो, परन्तु विज्ञान के अभाव में मानव सभ्यता इस शिखर पर नहीं होती जहाँ आज हम है। आज एक ओर परमाणु विज्ञान का रक्षा क्षेत्र में एक से एक विध्वसंक हथियार बनाने में प्रयोग किया जा रहा है, वहीं दूसरी और परमाणु वैज्ञानिक ऊर्जा के क्षेत्र में देश को आत्म निर्भर बनाने के प्रयत्न कर रहे है। यही नहीं परमाणु विज्ञान को कैंसर जैसी असाध्य बीमारी के इलाज हेतु उपयोग में लाया जा रहा है और इस दिशा में लगातार अनुसंधान जारी है। आज हमारे देश में मूलभूत और अनुप्रयुक्त विज्ञान के क्षेत्र की नवीनतम जानकारी से लैस अनुभवी वैज्ञानिकों का समुह उपलब्ध है, जो नई प्रोद्यौगिकियों का उपयोग कर सकता है और देश के भावी विकास का ढांचा तैयार कर सकता है।

संसार में पिछले 4–5 दशकों में जो एक सबसे अविश्वस्नीय क्रान्तिकारी प्रगति हुई है, वह है सूचना प्रोद्यौगिकी का क्षेत्र। इसके फलस्वरूप विश्व में संचार क्रांन्ति का उदय हुआ और सूचनाओं और विचारों का आदान–प्रदान त्वरित गति से होना सम्भव हो सका। भारत इस क्षेत्र में एक शक्ति बनकर उभरा और आज हमारा सूचना प्रोद्यौगिकी उद्योग 150 मिलियम डॉलर का राजस्व कमाने वाला उद्योग बन गया है। आई.टी. क्षेत्र में विश्व की 55 फीसदी हिस्सेदारी भारत के पास है और भारत विश्व का तीसरा सबसे बड़ा स्टार्टअप हब बन गया है। आज देश में करोड़ों बैंक खातों को आधार से जोड़कर बैकिंग प्रणाली में पारदर्शिता लाना विज्ञान द्वारा ही सम्भंव हो पाया है।

भारत में ग्रामीण विकास की सम्भावना की कल्पना भी विज्ञान व तकनीक के अभाव में नहीं की जा सकती थी। भारत गावों का देश है और यहाँ की करीब 70 प्रतिशत जनसंख्या गांवो में निवास करती है, अत: विज्ञान व तकनीक की प्रगति को ग्रामीण विकास से जोड़कर देश में समग्र विकास के सपने को साकार कर पाना ही सरकारों का भी प्रयास रहा है। भारत की जनसंख्या का एक बहुत बडा हिस्सा कृषि से जुड़ा है और हमारी अर्थव्यवस्था में 17 प्रतिशत हिस्सेदारी के साथ कृषि क्षेत्र सबसे बडा रोजगार देने वाला क्षेत्र भी है। देश की करीब 52 प्रतिशत जनसंख्या कृषि क्षेत्र व इससे जुड़ी अन्य गतिविधियों से जुड़ी हुई है, जैसे डेयरी, पशु–पालन, कृषि उपकरण, खाद्, बीज, व्यवसाय इत्यादि। सीधे या परोक्ष रूप से देश की आधी से अधिक जनसंख्या यदि कृषि क्षेत्र से जुड़ी हुई है, तो यह प्रश्न प्रासांगिक है कि इस क्षेत्र में विज्ञान का क्या योगदान है और इस क्षेत्र में अधिक से अधिक विकास हेतु क्या प्रयास किए गए है और क्या किया जाना वांछित है।

देश की ग्रामीण विकास प्रक्रिया को और अधिक गति प्रदान करने हेतु यह आकंलन आवश्यक हो जाता है कि विगत 70 दशकों में ग्रामीण क्षेत्र को विज्ञान तथा तकनीक से होने वाले विकास का लाभ कितना मिला है। यह तो सर्वविदित है कि विज्ञान व तकनीक से होने वाले विकास का अधिकतर लाभ शहरी, क्षेत्रों में दिखाई देता है, जो कि न्याय संगत नहीं है। यदि ग्रामीण क्षेत्रों में विज्ञान का विकास शहरी क्षेत्रों के बराबर होता, जो कि होना चाहिए था, तो ग्रामीणों की शिक्षा, स्वास्थ जैसी बुनियादी आवश्यकताओं के साथ–साथ यातायात के साधनों, सिंचाई सुविधाओं कृषि में उपयोग होने वाले अत्यधिक उन्नत साधनों तक किसान की सुगमता पूर्वक पहुंच ज्यादा से ज्यादा वैज्ञानिक तरीकों से कृषि, कम से कम मानसून पर निर्भरता जैसी स्थिति हमारे देश में भी निर्मित की जा सकती थी।

दो तीन दशक पहले ग्रामीण क्षेत्रों में संचार जैसी बुनियादी सुविधा का अभाव था। लोगों को टेलीफोन की सुविधा हेतु पास में कस्बे या शहर में जाना पड़ता था। वहाँ भी टेलीफोन विभाग अथवा डाक विभाग के टेलीफोन पर घंटो इंतजार करने के पश्चात एसटीडी सुविधा द्वारा किसी से बात करना सम्भव हो पाता था। सुविधा भी बेहद निम्न स्तर की थी और सम्पर्क साधने के पश्चात भी बार–बार सम्पर्क टूट जाना आवाज सुनाई नहीं देना जैसी शिकायतें आम बात थी। आज की स्थिति बिलकुल उलट है। आज ग्रामीण क्षेत्रों में ही नहीं अपितु दूर दराज के ग्रामीण क्षेत्रों में भी मोबाईल क्रान्ति आ चुकी है। छोटे–छोटे गांवो में मोबाईल , इन्टरनेट सुविधा पहुंच जाने से ग्रामीण क्षेत्रों में शिक्षण , स्वास्थ के स्तर में परिवर्तन देखने को मिल रहा है।

आम ग्रामीण नागरिक की सामाजिक, आर्थिक राजनीतिक जागरूकता पर भी इसका व्यापक प्रभाव देखने को मिल सकता है। टीवी के प्रसार द्वारा कृषि को उन्नत बनाने हेतु देश विदेश में होने वाले विभिन्न आविष्कारों व नये–नये प्रयोगों की जानकारी किसानों तक पहुंच पाना सम्भंव हो सका है। एडुसेट की मदद से इसरों द्वारा ग्रामीण स्कुलों के बच्चों को इन्टरनेट उपग्रह द्वारा अतिरिक्त शिक्षण–प्रशिक्षण दिया जा रहा है। यह शिक्षा को दूर दराज के ग्रामीण इलाकों तक शिक्षा का विस्तार करने की इसरो की पहल है। पिछले एक दशक में संचार क्रान्ति ने ग्रामीण इलाकों के विकास में एक आमूलचूल परिवर्तन किया है, जो भारत जैसे गांवो के देश के लिए बेहतर आवश्यक था। एक ओर केन्द्र सरकार और राज्य सरकारों में सरकारी सेवाओं को डिजिटल माध्यमों से आम ग्रामीणों तक पहुंचाने का विचार जागा है, वहीं दुसरी और बाजार की शक्तियाँ भी ग्रामीण सुविधाओं और ढाँचागत विकास पर ध्यान केन्द्रित कर रही है। यही नहीं, 'डिजिटल इंडिया' के तहत ढाई लाख गांवो तक डिजिटल कनेक्टिविटी पहुंचाने और फोन सुविधा से जोड देने की केन्द्र सरकार की महत्वाकांक्षी योजना के चलते ग्रामीण विकास की

* सहायक प्राध्यापक (राजनीति विज्ञान) शासकीय विक्रम महाविद्यालय, खाचरौद, जिला – उज्जैन (म.प्र.) भारत

गति और तीव्र होना तय है। इस प्रकार संचार क्रांन्ति का लाभ ग्रामीण क्षेत्रों में पहुंचने से ना केवल उस क्षेत्र के लोगों की स्थिति में मूलभूत सुधार आया है अपितु देश के विकास व सकल घरेलु उत्पाद पर भी इसका असर पडता है। दूर संचार के साथ-साथ मनोरंजन से सम्बन्धित बुनियादी सुविधाओं का विकास भी तेजी से हुआ है।

केन्द्र सरकार सेटेलाईट टेलीविजन देखने हेतु डीटीएच (डायरेक्ट टू होम) सेवा को प्रोत्साहित कर रही है, जिससे ग्रामीण क्षेत्रों में टीवी सेवाओं की संख्या व उसकी गुणवत्ता में अपेक्षित सुधार लाया जा सके और इस तकनीक का उपयोग ग्रामीणों की सामाजिक व आर्थिक स्थिति , सुधारने में किया जा सके। सोर्स फोर चेन्ज जैसी अनेकों गैर-सरकारी संस्थाएँ ग्रामीण भारत की महिलाओं को सक्षम व आत्म निर्भर बनाने के लिए जो कुछ कर रही है , वह सब कुछ संचार क्रांन्ति व कम्प्यूटर क्रांन्ति के कारण ही सम्भंव हो सका है। यह संस्थाऐं ग्रामीण बी.पी.ओ. जैसी एक नई अवधारणा लेकर ग्रामीण महिलाओं को एक नई दिशा देने का प्रयास कर रही है।

कुछ दशक पूर्व तक ग्रामीण भारत की इतनी भयावह तस्वीर देखने को मिलती थी जहाँ ना बिजली थी, ना पीने योग्य पानी था। सड़कों के नाम पर कच्ची धुल भरी सडकें थी व आवागमन के साधनों का भी अभाव था। यद्यपि गांव से शहर की और पलायन तो अपेक्षित मात्रा में कम था परन्तु ग्रामीण भारत के लोग कुंए के मेढंक जैसा जीवन जीने को मजबूर थे। गांव में अस्पताल नहीं थे, डॉक्टर नहीं थे। हालाकि शिक्षा, स्वास्थ जैसी बुनियादी समस्याओं से अभी भी ग्रामीणों को झुझना पड़ता है। शहरी लोगों की तुलना में उनकी सुविधाएँ बेहद पिछड़ी हुई है परन्तु आज राजनीतिक जागरूकता व पंचायत स्तर पर सहभागिता के चलते ग्रामीणों की स्थिति में गुणात्मक सुधार आया है। इस जागरूकता में संचार क्रान्ति का बेहद महत्वपूर्ण योगदान रहा है।

सुचनाओं के त्वरित आदान-प्रदान के चलते राजनीतिक नेतृत्व को भी ग्रामीणों के स्तर में सुधार हेतु तथा ग्रामीण विकास हेतु अनेकों योजनाओं को लाना महत्वपूर्ण लगने लगा।

आज के समय किसान एक वर्ष में 3-4 फसल लेने के प्रयत्न करता है और यह भी प्रयास करता है कि कम रकबे में अधिक व जल्दी पैदा होने वाली फसल तैयार कर सकें। आधुनिक तकनीक के कारण किसान वर्षा पर अधिक निर्भर ना रह कर कृत्रिम सिंचाई के साधनों को भी अपनाने के प्रयत्न करता है जैसे बुंद-बुंद सिंचाई, ट्यूबवेल, नहर, बांध , तालाब आदि। उन्नत किस्म के बीज और खाद, आधुनिक कृषि उपकरण जैसे ट्रेक्टर, टिलर, सीडड्रिल, हारवेस्टर आदि ऐसे उपकरण है, जिनसे समय व पैसे की बचत होती है और उत्पाद भी अधिक मात्रा व उन्नत किस्म का होता है। यह विज्ञान की ही देन है कि आज इंडियन कोसिल फॉर एग्रीकल्चर रिसर्च ने लगातार अनुसंधान करके करीब 3500 किस्म की अधिक उपज व गुणों वाली किस्में तैयार की है , जो किसान और उपभोक्ता दोनों के लिए फायदे वाली होती है। इस और अधिक ध्यान दिया जाता है कि किसान कम समय में अधिक मात्रा की फसल का उत्पादन कर सके ताकि उसकी आर्थिक स्थिति सुदृढ हो सकें क्योंकि आर्थिक सम्पन्नता विकास का सबसे बेहतर पैमाना माना जाता है। खेतों में ड्रिप तथा स्प्रिंकलर विधि द्वारा कम पानी से अधिक भूमि की सिंचाई भी सम्भंव है। भूमिगत जल भण्डार का दोहन भी मशीनों द्वारा कम समय में अधिक गहराई तक करना विज्ञान द्वारा ही सम्भंव हो सका है। हालाँकि भूमिगत जल दोहन भूमिगत जल स्तर में गिरावट का मुख्य कारण भी बनता जा रहा है। संक्षेप में यह कहना गलत नहीं होगा कि भूमिगत जल का अत्यधिक दोहन , सिंचाई हेतु बड़े-बड़े बांधो का निर्माण, अधिक मात्रा में फसल पैदा करने हेतु अत्यधिक मात्रा में पेस्टी साईड व खादों का उपयोग जैसे कुछ ऐसे कदम है। जिनके अपने नुकसान भी आज देखने को मिल रहे है। फिर भी विज्ञान ने ग्रामीण क्षेत्रों में पिछले कुछ दशकों में एक ऐसी क्रान्ति पैदा कर दी है, जो आने वाले दशकों में ग्रामीण भारत की तस्वीर को पूरी तरह से बदल सकती है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. कुरूक्षेत्र - जुलाई 2016
2. योजना - दिसम्बर 2016

****

पुलिस बीट-व्यवस्था की समस्याएँ एवं समाधान

शेषा राम मीणा *

प्रस्तावना – ब्रिटीश काल से ही भारत में पुलिस-प्रशासन शांति- व्यवस्था हेतु उत्तरदायी रहा हैं। भारत में केन्द्र-राज्य दो स्तरों पर पुलिस की व्यवस्था रहती हैं। भारत में 1861 के अधिनियम द्वारा पुलिस व्यवस्था का उद्गम हुआ। सर्वप्रथम भारत में पुलिस थानों की व्यवस्था की एवं पुलिस व्यवस्था का पदाक्रम किया गया। संविधान की दृष्टि से पुलिस का अपना एक विभाग हैं। विभाग/प्रशासन राज्य सूची का विषय हैं। अत: इस विभाग पर गृह विभाग के द्वारा प्रत्यक्ष नियंत्रण रहता हैं। पुलिस विभाग की पूरी मोनिटरिंग गृह मंत्रालय द्वारा की जाती हैं।

वर्तमान में पुलिस को अनेक समस्याओं का सामना करना पड़ रहा हैं। विशेषत: पाली जिले की पुलिस प्रशासन को अनेको समस्याओं से जुझंना पड़ रहा हैं। जिसमें बीट व्यवस्था की प्रमुख समस्याएं निम्नलिखित है –

1. नफरी की समस्या – पाली जिला राजस्थान का मध्यवर्ती औद्योगिक,पर्यटक एवं मेहंदी नगरी के रूप में प्रसिद्ध हैं। जिले का पुलिस बेड़ा बहुत बड़ा हैं। सफल बीट व्यवस्था हेतु पर्याप्त पुलिस स्टाफ होना अतिआवश्यक हैं। परन्तु पाली जिले की पुलिस के पास कांस्टेबलों की संख्या में बहुत कमी हैं। एक बीट कांस्टेबल को दो से तीन बीट क्षेत्र आवंटित किए गए हैं। जो सुविधा की दृष्टि से नकारात्मक प्रभाव डालता हैं। बीट-कांस्टेबल अपने बीट क्षेत्र का पर्याप्त दौरा नहीं कर सकता व न ही अधिक समय देकर लोगों से रूबरू हो पाता हैं। अत: ऐसी स्थिति में बीट- व्यवस्था नाममात्र की व्यवस्था हो जाती हैं। पर्याप्त समय न देने एवं जनता से समय-समय पर नहीं मिलने से कई समस्याएं उत्पन्न हो रही हैं।

2. थानों में कार्यो की अधिकता – पुलिस थानों में कार्यो की अधिकता के कारण बीट कांस्टेबल को अपने बीट क्षेत्र में सम्पर्क के अवसर प्राप्त होते हैं। जिले में 26 थानों में 12 दिसम्बर 2016 तक कुल 6344 प्रकरण दर्ज हुए ,जिसमें 1199 स्टाफ की कमी व कार्यो की अधिकता के कारण लम्बित मामले हैं। ऐसे में बीट व्यवस्था की स्थिति दयनीय हो गयी हैं।

3. क्षेत्र का बड़ा होना – पाली जिले में बीट क्षेत्र बहुत बडे-बड़े हैं तथा बीट कांस्टेबल को छोटे-छोटे दो या तीन गावों या ढ़ाणियो को मिलाकर बनाए जाते हैं। पाली के दस थानों को छोड़कर शेष सभी ग्रामीण क्षेत्रों में स्थित हैं। जो दूर-दूर होने के कारण बीट कांस्टेबलों को परेशानियों का सामना करना पड़ता हैं

4. भौगोलिक कारकों की विषमताएं –जिले में भौगोलिक परिस्थितियाँ विषम हैं। यहाँ जनसंख्या का बसाव दूर-दूर पहाड़ी क्षेत्र,जलवायु कारकों के कारण थानों का क्षेत्र बहुत बड़ा हैं। जिसमें परिवहन असुविधा का सामना करना जनता की समस्या का सही समाधान ना होना भी एक अपराधियों में भय व जनता में विश्वासघात रहता हैं।

5. साधनों का अभाव – बीट क्षेत्र थानों से अधिकतम 35-40 किलोमीटर दूर होते हैं, पर अन्तिम स्थान तक समय पर पर्याप्त संसाधनों अभाव से अपने क्षेत्र में नहीं जा पाते हैं। राज्य सरकार ने सूचना तंत्रों को उपलब्ध कराए परन्तु इन्टरनेट, टॉवर,टेलीफोन सुविधा तथा टोल फ्री नंबर इन सभी में नेटवर्किंग की समस्या परिवहन असुविधा की वजह से समय पर बीट अधिकारी पहुँच नहीं पता हैं।

6. बढ़ती जनसंख्या,भाषा व शिक्षा – पाली जिले में 2.11 के अनुसार कुल जनसंख्या 2.37573 जिसमें से अधिकाश जनसंख्या (77.4प्रतिशत) ग्रामीण क्षेत्रों के गावों में बसता हैं। जनसंख्या वृद्धि दर(11.9) भी बीट क्षेत्र के सामने समस्याओं का कारण बन रही हैं।जिले में कुल साक्षरता 62.4 प्रतिशत व 48.0 महिला साक्षरता का स्तर हैं। गावों में 52 प्रतिशत महिला अनपढ़ है, तथा दलित समाज का स्तर बहुत ही ज्यादा कमजोर हैं। जिले में अन्य क्षेत्रों के निवासी होने से बीट कांस्टेबल को स्थानीय भाषा व क्षेत्र बोलियों का अनुभव ना होने से संवाद प्रतिक्रिया में बाधा बनती हैं।

7. राजनीतिक प्रभाव का बढ़ता दबाव – पुलिस विभाग में राजनीति के आगाज से ही उनका प्रभाव रहा हैं। पुलिस प्रशासन पर जनता का भरोसा कम होने की वजह भी राजनीति प्रभावशीलता हैं। जिनके कारण पुलिस प्रशासन की बीट व्यवस्था पर नकारात्मक प्रभाव पड़ता हैं। तथा न्याय में देरी, हत्या के सुराग ना लगना, अपराधियों की सजा, जेलों में केदियो की फरारी ,धाराओं में बदली भ्रष्टाचार, रिश्वतखोरी आदि वजह से आमजन की कम रसुखदारो व राजनीतिकों की सेवा में कांस्टेबल की तेनाती से आमजनता परेशानीयों से दु:खी हैं।

8. बीट प्रभारियों की समस्याएं – पाली जिला पुलिस प्रशासन में बीट कांस्टेबल ,बीट अधिकारियों की व्यक्तिगत समस्याएं - (1)आवास की समस्या (2)बच्चों की शिक्षा (3)मैस में भोजन की गुणवत्ता (4) ई-सूचना तकनीकी ज्ञान की (5) थानों व चौकियों में संसाधनों का अभाव

9. धन का अभाव – पुलिस बीट कांस्टेबल को इस कार्य हेतु किसी विशेष धन का कोई प्रावधान नहीं हैं। थानाधिकारी के आदेश अनुसार फील्ड तैनाती क्षेत्र में ड्यूटी अनिवार्य रहती हैं। फिल्ड में बैंकिग, ए.टी.एम. सुविधाओं का अभाव आदि समस्या से विचलित रहता हैं।

10. राज्य के नियंत्रण की समस्या – संविधान की दृष्टि से पुलिस का अपना एक विभाग हैं। विभाग/प्रशासन राज्य सूची का विषयहैं। अत:इस विभाग पर गृह विभाग के द्वारा प्रत्यक्ष नियंत्रण रहता हैं। पुलिस विभाग की पूरी मोनिटरिंग गृह मंत्रालय द्वारा की जाती हैं। कर्मचारीगण/कार्मिको की नियुक्ति ,पदोन्नति पदच्युति, भर्ती, वित्त व्यय और खर्चो पर राज्य सरकार

* शोधार्थी व स्कूल व्याख्याता (राजनीति विज्ञान) लोक प्रशासन विभाग,यू.सी.एस.एस.एच., एम.एल.एस.यू., उदयपुर (राज.) भारत

का नियंत्रण रहता हैं। स्थानान्तरण का भी अधिकार राज्य सरकार का हैं। पुलिस की समस्त योजनाएं सरकार के निर्देशों पर ही जारी होती हैं।

बीट पुलिस व्यवस्था की समस्याओंका समाधान –

1. सरकार को भर्ती द्वारा नफरी की समस्या का समाधान किया जाना चाहिए। इससे एक ओर बेरोजगारी भी दूर होगी साथ ही पुलिस बेड़े में भी वृद्धि कर समस्या का समाधान होगा एवं एक–एक बीट क्षेत्र में कांस्टेबल की नियुक्ति भी हो सकती हैं।
2. थानों में पर्याप्त स्टॉफ होने से कार्यो का बटवारा होगा जिससे मामले लम्बित नहीं रहेगे, न्याय समय पर प्राप्त हो सकेगा ,आमजन का विश्वास भी पुलिस में गहरा होगा।
3. पर्याप्त नफरी से क्षेत्रों का विभाजन होगा क्षेत्र एवं बीट क्षेत्र की समस्याओं का समाधान होगा।
4. बीट कांस्टेबलो को अपने क्षेत्र में अधिक उत्तरदायी व जिम्मेदारी हेतु उन्हें विशेष आर्थिक पैकेज दिया जाए एवं थानों में एक बीट विकास फण्ड स्थापित हो ताकि अति–आवश्यक समय में उसमें से पर्याप्त राशि का उपयोग बीट कांस्टेबल को प्राप्त हो सकेगा।
5. भामाशाहों एवं पुलिस सहायकों को प्रेरित कर थानों में मोटर–साइकिलों की व्यवस्था करवानी चाहिए ताकि आने–जाने की सुविधा हो सकेगी। जिसमें सरकार भी कुछ अंशदान करे ताकि बीट कांस्टेबलो को पर्याप्त यातायात साधन सुलभ हो सकता हैं।
6. शिक्षा व बढ़ती जनसंख्या वृद्धि के प्रभावी उपायो को जनता के बीच में पहुँचाया जाए ताकि समझ सके व उनका सहयोग प्राप्त हो। शिक्षा साक्षरता के बढ़ावे से जागरूकता बढेगी तथा बीट कांस्टेबल को क्षेत्रों में जनता का संवाद बढेगा।
7. राजनीतिक दलीय स्वार्थो के ऊपर उठकर जन–प्रतिनिधियों को जनहित के कार्यो पर अधिक महत्व देते हए राजनीतिकों के प्रभाव को कम किया जाना चाहिए।
8. बीट प्रभारियों/बीट कांस्टेबलों की निजी परेशानियों को उत्तम मेस भोजन ,आवासीय कॉलनियों को बनाना ,बच्चों की पर्याप्त शिक्षा एव मनोरंजन खेल मैदान की स्थापना की जाए। साथ ही थानों में एक चिकित्सालय सुविधा होनी चाहिए।
9. भ्रष्टाचार व दागी पुलिस कार्मिकों के विरुद्ध कड़े कदम उठाए जाए, पुलिस कार्मिकों के कर्तव्यों को स्पष्ट परिभाषित किया जाए। थानों में भ्रष्टाचार विरूद्ध स्लोगन एवं कथन को स्कूली शिक्षा में जोडा जाना चाहिए।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. विमल प्रसाद राय, 'पुलिस और समाज मनोवैज्ञानिक विश्लेषण ,केन्द्रीय हिंदी निदेशालय ,नई दिल्ली 1988।
2. शरद चन्द्र मिश्रा, 'पुलिस एडमिनिस्ट्रेशन इन इंडिया',नेशनल पुलिस अकादमी ,माउन्ट आबू ,राजस्थान।
3. एस.महारताज बेगम, 'डिस्ट्रिक्ट पुलिस एडमिनिस्ट्रेशन',अनमोल पब्लिकेशन प्रा.लि.,नई दिल्ली 1999।
4. जनसंख्या सेन्सेस, 2011

****

सन् 1857 ई. के विद्रोह के अल्पज्ञात स्मारक और स्थल (मन्दसौर के विशेष संदर्भ में)

डॉ. आकाश ताहिर *

प्रस्तावना – नीमच में अंग्रेजों की सैनिक छावनी थी,[1] अत: वहाँ विद्रोह का विस्फोट पूर्णरूपेण मेरठ के पदचिन्हों का अनुसरण करते हुए हुआ। सारे अंग्रेज अधिकारियों ने 4 जून, सन् 1857 ई. की अर्द्धरात्रि को अपने-अपने परिवारों के साथ अत्यन्त बदहवास और भयभीत स्थिति में अपनी जान बचाने के लिए पलायन किया। उन दिनों भी मंदसौर ग्वालियर राज्य का जिला मुख्यालय था और मालवा का सम्पन्न व्यापारिक केन्द्र किन्तु इस शहर में जो घटनाएँ घटित हुई वे अपने आप में अभूतपूर्व और अपने ढंग की बेमिसाल है।

26 अगस्त, सन् 1857 ई. को[2] मंदसौर में एक अत्यंत महत्वाकांक्षी स्वप्रियदर्शी और यायावर वृत्ति का नवयुवक फिरोजशाह आया। इसके पूर्व वह अफजलपुर में बैठकर मंदसौर आगमन की भूमिका तैयार करता रहा था। मक्का की धार्मिक यात्रा से लौटकर आने के कारण और तैमूरवंश का होने के कारण उसे प्रचुर जनसमर्थन मिला। देश में तथा ग्वालियर राज्य में जो घटनाएँ घटित हो रही थी। उस अस्थिरता और परिस्थिति जन्य तरलता का इस स्वप्रियदर्शी नवयुवक ने अचुक फायदा उठाया। उस नवयुवक का नाम मिर्जा हुमायूँ था और वह प्रबल जनसमर्थन के कंधों पर चढ़कर, इतिहास की धारा को अपने अनुकूल मोड़ते हुए शहजादा फिरोज के नाम से मंदसौर का बादशाह बन गया। उसने अंग्रेजों की सत्ता और मंदसौर के आस-पास स्थित देशी रियासतों के विरूद्ध आक्रामक रूख अपनाया। विशाल धनराशि का नजराना और शस्त्र भिजवाने के लिए उसके नाम से सीतामऊ, प्रतापगढ़, रतलाम, सैलाना और जावरा के शासकों के पास हुक्म-नामे जारी होने लगे। अंग्रेज और सिंधिया दोनों ही फिरोजशाह के विरूद्ध तत्काल कोई कार्यवाही करने में असमर्थ थे। निकटवर्ती देशी रियासतें भी फिरोजशाह के प्रचण्ड उत्कर्ष के आगे झुक गई।

जावरा नवाब ने मंदसौर से आने-जाने वाले पत्रों को बीच में इण्टरसेप्ट करवाया और उन पत्रों की जानकारी इन्दौर रेजीडेन्सी को निरन्तर और तत्काल भिजवाते रहे। सबसे महत्वपूर्ण पत्र अब्दुल सत्तार खाँ का था। इसने अपने गृह नगर जावरा अपने एक रिश्तेदार को अहं भावना में आकर लिखा था। हम 25 अक्टूबर को नीमच पर आक्रमण करने वाले हैं, इस पत्र के आधार पर जावरा नवाब ने नीमच में मेजर शावर्स को पत्र लिखकर नीमच पर संभावित आक्रमण की सूचना प्रदान की थी।[3] शनै:-शनै: सभी स्थानों पर क्रान्ति का प्राथमिक ऊबाल ठंडा पड़ने लगा और अंग्रेजों का पलड़ा भारी होने लगा ऐसी परिस्थितियों में शहजादा फिरोजशाह द्वारा 8 नवम्बर सन् 1857 को नीमच पर आक्रमण एक आत्मघाती कदम था। उसकी कोई नियमित सेना नहीं थी, जो लुंज-पूंज हुजूम था। उसमें तालमेल एकता और अनुशासन का पूर्णरूपेण अभाव था। दूसरे इस कदम से मंदसौर की प्रहारक और प्रतिरोध क्षमता जो थी वह भी बंट गई।

इस समय इन्दौर का रेजीडेन्ट हेनरी मेरियन ड्यूरेण्ड, धार और अमझेरा के विद्रोह को दबाने में व्यस्त था। उसने 7 नवम्बर तक धार का विद्रोह पूर्णरूपेण दबा दिया था और उसके पश्चात मंदसौर की कठिन चुनौती का सामना करने के लिए उसने एक दिन भी नहीं गंवाया। 8 नवम्बर को प्रात: 5 बजे ब्रिटिश सेना मंदसौर की ओर कूच कर गई।[4] देशी राज्यों की संयुक्त सेना के निर्माण को कार्यरूप देने के लिए, ड्यूरेण्ड के आदेश पर मेजर कीटिंग ने रतलाम और जावरा की यात्राएँ 1 नवंबर से 15 नवंबर सन् 1857 ई. को की। रतलाम, जावरा, सैलाना, प्रतापगढ़ और सीतामऊ राज्यों की सेना को मिलाकर जो संयुक्त सेना बनना प्रस्तावित थी उसमें जावरा को छोड़कर सभी ढुल-मूल थे। मेजर कीटिंग की रिपोर्ट को ब्रिटिश सेना के ताल पड़ाव पर जब ड्यूरेण्ड ने सुना तो वह गुस्से से बौखलाया और कहा-'हमें देशी राज्यों की सेना का न तो भरोसा है और न ही जरूरत, किन्तु फिर भी कानून के अनुसार इन राज्यों की सेना को हमारे साथ चलना होगा।'[5]

मंदसौर पर आक्रमण के लिए जो ब्रिटिश सेना ड्यूरेण्ड के नेतृत्व में आयी वह महू छावनी की थी। जिसे उस समय मालवा फील्ड फोर्स कहा जाता था। इस मालवा फील्ड फोर्स के साथ हैदराबाद घुड़सवार सेना की एक टुकड़ी भी थी मालवा फील्ड फोर्स का कमाण्डर ब्रिगेडियर स्टुअर्ट और हैदराबाद घुड़सवार सेना की टुकड़ी का कमाण्डर मेजर ऑर था।

दिनांक 22 नवम्बर सन् 1857 ई. बुधवार कुशल मार्ग निर्देशक के निर्देशन में शिवना नदी की खिड़की माता के स्थान से निर्विघ्न पार करके ब्रिटिश सेना ने अपना दूसरा कैम्प लगभग उसी स्थान के आस-पास स्थापित किया। हमेशा की तरह हैदराबाद केव्हल्री अग्रिम ठिकानों की खोज और गश्त के लिए निकली। तैलिया टैंक के पश्चिम में उसकी मुठभेड़ विख्यात क्रान्तिकारी हीरासिंह महीदपुरवाले की घुड़सवार सैनिक टुकड़ी से हुई। वह मंदसौर की मुख्य सेना के साथ नीमच से लौट रहा था किन्तु उससे एक पड़ाव आगे निकल आया था। हीरासिंह महीदपुर छावनी का घुड़सवार सैनिक था। विद्रोह करके अपने अनेक विश्वस्थ साथियों के साथ दिल्ली तक जाकर अंग्रेजों से लड़ा था। किन्तु जब वहाँ की परिस्थितियाँ ब्रिटिश दबाव के कारण प्रतिकूल होने लगी तब निराश होकर शहजादा फिरोजशाह की सेना में मंदसौर आ गया था। अप्रतिम शौर्य का धनी यह व्यक्ति, मध्युगीन राजपूत यौद्धा जैसा, स्वतंत्र अस्तित्व बनाए रखकर इस क्रान्ति की अवधि में अंग्रेजों से यहाँ-वहाँ लड़ रहा था। जो कि स्वयं के लिए भी घातक था। यह कमजोरी क्रान्ति के लिए भी घातक थी।[6]

इस मुठभेड़ का भी वही हुआ जो होना चाहिए था।पहले तो हिरासिंह का पलड़ा भारी लगा, किन्तु बाद में स्थिति बदलने लगी उसे पीछे हटना पड़ा

* सहायक प्राध्यापक एवं विभागाध्यक्ष (इतिहास) शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, धार (म.प्र.) भारत

और रात को पश्चिम के किसी सुदूर गाँव में आश्रय लिया। हैदराबाद केवेलरी अपने कैंप पर लौट आयी।

24 नवम्बर को जब गुराड़िया का युद्ध अपनी निर्णायक स्थिति में था उस समय हीरासिंह अपने साथियों के साथ देशी राज्यों की संयुक्त सेना से स्वप्रेरित प्रेरणा से लड़ने गया। यहाँ भी हार कर उसे पीछे हटना पड़ा। 24 नवम्बर सन् 1857 ई. गुरूवार यह युद्ध दो दिन तक चला मंदसौर की कमजोर सेना, भयंकर तोपखाने के सामने डटी रही। स्थिति यह थी कि अंग्रेजों के भी पाँव डगमगाने लगे थे। इसलिए वे बूरी तरह बौखला गये। अन्तत: मंदसौर सेना को पीछे हटना पड़ा और उसकी पराजय हुई।[7] अंग्रेजों ने इस क्षेत्र के आस-पास निर्दोष लोगों तक को गोलियों से भून डाला और लाशों का अम्बार लगा दिया। इसीलिए इस स्थान का नाम भुनियाखेड़ी पड़ा।

गुराड़िया की पराजय की सूचना रात्रि में मंदसौर पहुँची तब शहजादा फिरोजशाह का हौसला पूरी तरह समाप्त हो गया। अर्द्धरात्रि में ही वह अपने विश्वस्त साथियों के साथ मंदसौर को अपने हाल पर छोड़कर चलता बना। इस तरह लरगभग 90 दिनों तक मंदसौर में अंग्रेजों के विरूद्ध सषक्त चुनौती देने वाली शक्ति का अवश्यंभावी अंत हुआ।

मन्दसौर के स्मारक और स्थल – मन्दसौर का किला : मन्दसौर जिला मध्यप्रदेश के पश्चिम में 23°45'' उत्तर और 25°2'55'' उत्तर अक्षांश और 74°42' 30'' पूर्वी देशान्तर और 75°55'20 पूर्व में स्थित है।[8] मन्दसौर का किला शहर के मध्य में स्थित है। किला लाल बलुआ पत्थरों से निर्मित है किले के चारों ओर परकोटे बनाए गए हैं, महल भी किले के भीतर ही है। नीमच की घटना ने पश्चिमी मालवा के अन्य क्षेत्रों को भी प्रभावित किया। इसी श्रृंखला में मन्दसौर में 11 अगस्त 1857 ई. को शहजादा फिरोज द्वारा जावरा के विद्रोहियों और अन्य स्थानों से एकत्रित सिपाहियों के सहारे तत्कालीन ग्वालियर रियासत के इजारेदार मिर्जा अमीर बेग को अपदस्त करके मंदसौर के किले पर कब्जा करके स्वयं को बादशाह घोषित करवाया। इस नवीन शक्ति के उदय से भी अंग्रेजों को भयंकर खतरे की आहट सुनाई दे रही थी।

मल्हारराव होल्कर और अंग्रेजों के मध्य मन्दसौर में जनवरी, सन् 1818 ई. में संधि हुई।[9] तदन्तर मालवा पर अंग्रेजों का अधिकार हो गया।94 इस प्रकार मालवा क्षेत्र पर अंग्रेजों के वास्तविक एवं पूर्ण आधिपत्य का श्री गणेश मन्दसौर से ही हुआ था। आगे जाकर सन् 1857 ई. के स्वतंत्रता संग्राम में शहजादा फिरोज द्वारा गद्दी निशानी यहाँ करवाने से यह क्षेत्र उस कड़ी से भी जुड़ा रहा।[11]

मन्दसौर किले का मुण्डी गेट – जीरण के मैदान में ब्रिटिश सेना को पराजित कर विद्रोहियों ने विजयोल्लास में जीरण को खूब लूटा क्योंकि यहाँ के लोगों ने विश्वासघात किया था। लूट का माल, कैप्टन रीढ़ व कैप्टन टकर की कटी मुण्डियाँ व उनके छाती पर ढँकने के कपड़े को विजयचिन्ह के रूप में लेकर क्रांतिकारी भी रात को मन्दसौर आ गए। कटी हुई मुण्डियाँ मन्दसौर किले के पष्चिमी दरवाजे पर टाँग दी गयी। जिसे दूसरे दिन शहर के लोगों ने बड़ी प्रसन्नता के साथ देखा। इसी दिन से इस दरवाजे के प्राचीन नाम को छोड़कर इसे 'मुण्डी दरवाजा' कहना प्रारम्भ कर दिया। इसी से आगे चलकर यह 'मण्डी दरवाजा' हुआ।[12]

मन्दसौर में स्थित बारह पत्थर स्थान – विद्रोहियों में आपसी फूट, साधनों की कमी व धार से ड्यूरेण्ड के नेतृत्व में अंग्रेजों की विशाल वाहिनी के आ जाने से शहजादा फिरोज का पतन हो गया। उसे अपने कुछ चुनिन्दा विश्वस्त साथियों के साथ पलायन करना पड़ा। अंग्रेजों ने देश भक्तों का दमन प्रारम्भ किया। वर्तमान शासकीय बालक उच्चतर माध्यमिक विद्यालय क्रमांक एक के मैदान जो 'बारह पत्थर' के नाम से प्रख्यात था। यहाँ पत्थरों पर बैठाकर देशभक्तों को गोलियों से भुना गया। डी.आर.पी. लाईन के मैदान में तोपों से उड़ाया गया पर अंग्रेजों की भूख तो तभी शान्त हुई। जब उन्होंने मन्दसौर किले के मुख्य द्वार मुण्डी दरवाजे के सामने विद्रोही नेताओं में से अनवरखाँ जमादार, मुंशी गुलाम मोहम्मदखाँ तथा रहीमबक्श को 16 दिसम्बर 1857 को फांसी पर लटका कर जीरण की पराजय का प्रतिकार किया।[13]

मन्दसौर के भुनियाखेड़ी युद्धस्थल – मंदसौर शहर से 8 कि.मी. दूर भुनियाखेड़ी गाँव है। मंदसौर सेना ने ब्रिटिश सेना के ठीक सामने गुराड़िया गाँव के आगे ऊँचे टीले पर अपनी जबर्दस्त मोर्चाबंदी की इस सेना के साथ मंदसौर का तोपखाना था। गुराड़िया गाँव के आस-पास भयंकर युद्ध हुआ। मंदसौर सेना की प्रबल शक्ति रोहिल्ला जाति के विद्रोही थे। उन्होंने इस युद्ध में अंग्रेजों के दाँत खट्टे कर दिए। ब्रिटिश तोपखाने की श्रेष्ठता के कारण वे पीछे हटने को मजबूर हुए, किन्तु उनकी दृढ़ता और वीरता की प्रशंसा ग्वालियर राज्य के गजेटियर तक में की गई है।

24 नवम्बर 1857 ई. गुरूवार यह युद्ध दो दिन तक चला मंदसौर की कमजोर सेना, भयंकर तोपखाने के सामने डटी रही। स्थिति यह थी कि अंग्रेजों के भी पाँव डगमगाने लगे थे। इसलिए वे बुरी तरह बौखला गए। अन्तत: मंदसौर सेना को पीछे हटना पड़ा और उसकी पराजय हुई। अंग्रेजों ने इस क्षेत्र के आस-पास निर्दोष लोगों तक को गोलियों से भून डाला और लाशों का अम्बार लगा दिया। इसीलिये इसका नाम भुनियाखेड़ी पड़ा।[14]मन्दसौर के भुनियाखेड़ी स्थित कुंआ – भुनियाखेड़ी में फिरोजशाह की सेना और ब्रिटिश सेना के बीच युद्ध हुआ था। इस युद्ध में अन्तत: विद्रोही पराजित हुए थे। किन्तु अंग्रेजों के विरूद्ध संगठित होकर लड़ा गया यह युद्ध का इतिहास में महत्व है। भुनियाखेड़ी युद्ध स्थल से कुछ दूर एक कुंआ है। इस कुंए के बाहर पुरातत्व विभाग द्वारा एक सूचना अभिलेख लगाया गया है। जिसमें सन् 1857 ई. में हुए युद्ध का वर्णन किया गया है। युद्ध में अपनी पराजय सुनिश्चित जानकर विद्रोहियों द्वारा इसी कुंए में जहरीला पदार्थ मिला दिया गया था तथा तोपें तथा हथियार कुंए के पानी में डाल दिए गए थे। कुंए का पानी पीने के काम आता था। अत: पराजय की दशा में इस कुंए को अनुपयोगी बनाने का प्रयास किया गया था।[15]

गुराड़िया दीदा की कब्र – मन्दसौर से थोड़ी दूर एक छोटा सा गाँव है गुराड़िया दीदा वहाँ पर निर्मित एक कब्र पर उल्लेखित अभिलेख के अनुसार- 'एक धार्मिक की याद में, लियोनार्ड रेडमेन लेफ्टिनेन्ट एच.एम. 14 वीं लाईट ड्रेगुन यह मन्दसौर के पास लड़ाई में मारे गए थे 23 नवम्बर 1857 ई. में 23 वर्ष की आयु में।'

लेफ्टिनेन्ट रेडमेन, कॉरनेट 18 अक्टूबर 1852 में बने, लेफ्टिनेन्ट 23 अक्टूबर 1855 में बने, मन्दसौर में जब विद्रोह हुआ उसके बाद विद्रोहियों के साथ लड़े गए युद्ध में मारे गए। दुश्मन विद्रोही पुरी ताकत से लड़े। विद्रोहियों के साथ आमने-सामने की लड़ाई में रेडमेन अपनी टुकड़ी के साथ लड़ते समय विद्रोहियों से घिर गए तब विद्रोहियों ने उन्हें तलवार से काट दिया और वहीं उनकी मृत्यु हो गई। अंग्रेजों को उनका घोड़ा और अन्य सामान राहतगढ़ से प्राप्त हुआ।[16]

सन् 1857 ई. की क्रान्ति के साथ भारतीय इतिहास का एक युग समाप्त हो गया। विद्रोह के बाद यह सिद्ध हो गया कि बलपूर्वक अंग्रेजी शासन को भारत से समाप्त नहीं किया जा सकता। इस कारण शासन की नीतियों के प्रति अपनी प्रतिक्रिया प्रकट करने के लिए राष्ट्रीय संगठन एवं

उनके उद्देश्यों को निश्चित किया गया एवं भविष्य में अखिल भारतीय संगठनों पर कार्य करने वाली संस्थाओं का मार्ग प्रशस्त हुआ।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. ग्वालियर स्टेट गजेटियर, वी.आई.सी.ई. लुआर्ड, 1908, पृ. 180।
2. इनवर्ड वॉल्यूम 80 न्यूज रीपोर्ट फ्रॉम मन्दसौर, दि. 26 अगस्त 1857 फ्रॉम ऑफिस मिनिस्टर इन्दौर दरबार टू ऑफिस ए.जी.जी.।
3. जावरा का इतिहास दशपुर जनपद संस्कृति ग्रन्थ।
4. इम्पीरियल रीकॉर्ड्स, फॉरेन डीपार्टमेन्ट सेक्रेटरी कॉन्स. वाल्यूम 345, दि. 28 मई 1858
5. सी. एल. शावर्स ए मिसिंग चेप्टर ऑफ द इण्डियन म्यूटनी, पृ. 95–96
6. हॉम्स, हिस्ट्री ऑफ इण्डियन म्यूटिनी, पृ. 436
7. लेटर फ्रॉम एच.एम. ड्यूरेण्ड, नं. 887, दि. 25 नवम्बर 1857, कं. मन्दसौर टू जी.एफ. एड्मॉन्सटन, सेक्रेटरी गवर्नमेन्ट ऑफ इंडिया।
8. मध्यप्रदेश के पुरातत्व का संदर्भ ग्रन्थ, राजकुमार शर्मा, पृ. 34
9. डॉ. रघुवीर सिह–मालवा में युगान्तर , पृ. 360–361
10. ए कलेक्शन ऑफ ट्रिटिज, एंगेजमेण्ट्स एण्ड सनद, वॉल्यूम 4, पृ. 29
11. वही, पृ. 95–96
12. सी.एल. शॉवर्स– ए मिसिंग चेप्टर ऑफ दी इंडियन म्यूटेनी, पृ. 116।
13. श्री नटनागर शोध संस्थान के केशव अभिलेखागार के बस्ता क्र. 115 में संग्रहित मंदसौर से अंबा बक्श का पत्र, बुधवार, पौष वदि 30, 1914 वि. दि. दिसम्बर 16, 1857 ई. का पत्र।
14. ग्वालियर स्टेट गजेटियर, वॉल्यूम 1, पृ. 266
15. स्थानीय साक्षात्कार एवं जिला पुरातत्व विभाग द्वारा लगाए बोर्ड द्वारा प्राप्त जानकारी के अनुसार।
16. ओ.एस.क्रॉफ्टन–इन्डियन मोन्यूमेन्टल इन्सक्रिप्शन लिस्ट ऑफ इन्सक्रिप्शन राजपुताना एण्ड सेन्ट्रल इण्डिया, 1934, पृ. 130, 178।

****

भिण्ड अंचल के इतिहास का राजनैतिक स्वरूप- एक अध्ययन

डॉ. शालिनी गुप्ता *

शोध सारांश – भिण्ड जिले का नाम सुनते ही लोगों के मन में कुछ अजीव का दृश्य परिलक्षित होने लगता है, क्योंकि दीर्घकाल से यह क्षेत्र कलंकित क्षेत्र रहा है। यहॉ की चम्बल की बीहडें अत्यन्त दुरान्त डाकुओं की कर्मस्थली रही है। भारत के नक्शे पर आज भी डाकू समस्या की चर्चा आती है, तो चम्बल के बीहड़ों का परिदृश्य उभरने लगता है। इस समस्या के उन्मूलन के लिए पहल की आवश्यकता है। यहॉ की दहशत भरी जिन्दगी को भी अनदेखा नहीं किया जा सकता है किन्तु वर्तमान की आतंकवादी घटनाओं के सामने जिले की दहशत कुछ भी नहीं। यह गौरवमयी बात है 'इतिहास साक्षी है कि भिण्ड के लोगों में समस्याओं से लड़ना, दिलेरी से उनका सामना करना और आवश्यकता पड़ने पर देश के लिए प्राण न्यौछावर कर देने का गुण कूट-कूट कर भरा है।' भिण्ड निवासियों की जिन्दगी मार्गदर्शन के अभाव में trail and error में चलती रही। भिण्ड जिले की संस्कृति सभ्यता, इतिहास पुरा वैभव पर किसी अन्वेषक एवं खोजक की दृष्टि नहीं गयी। प्रस्तुत शोध का उद्देश्य भिण्ड जिले के राजनैतिक इतिहास के अनछुए तत्वों का विश्लेषण करना है और उसे मध्य भारत के राजनीतिक इतिहास की मुख्य धारा से जोड़कर एकीबद्ध करने का प्रयास किया गया है।

शब्द कुंजी – भदावर का इतिहास ।

प्रस्तावना – भदौरिया, राजपूतों की राजधानी होने के कारण भिण्ड-भदावर के नाम से प्रसिद्ध है, लेकिन भदौरिया नरेशों के इतिहास की जानकारी के अनुसार भिण्ड भदौरिया, राजपूतों की मुख्य राजधानी न होकर उपराजधानी परिलक्षित होती है। भदौरिया की मुख्य राजधानी तो अटेर थी लेकिन भिण्ड के साथ भदावर नाम जुड़ जाने के कारण सामान्य लोग यह अर्थ लगाने लगे कि भिण्ड-भदौरिया का सर्वाधिक महत्वपूर्ण स्थान रहा किन्तु वर्तमान समग्र भिण्ड जिले के भू-भाग पर दृष्टिपात करने से स्पष्ट होता है कि भदौरिया, राजपूतों का प्रभाव भिण्ड के थोडे ही भू-भाग पर रहा। भदौरियों की अपेक्षा कुशवाह क्षत्रियों का प्रभाव वर्तमान भिण्ड जिले के अधिक भू-भाग पर रहा। 'विक्रम संवत' 1212 में राजपूताना से आए कुशवाह राजा वीकलदेव के पुत्र इंद्रदेव ने इन्दुरखी दुर्ग का निर्माण करवाया। इन्द्रदेव की वंश परम्परा में अंतिम राजा राजसिंह तक सोलह सोलह राजा ही हुए जिन्होंने परसाला, अमायन नुन्हाटा, नाउली, गोपालपुरा (जालौन), केशवगढ, लहार, मछण्ड, निवसाई, रौरा, बौहारा, रोहानी, अजनार आदि गढ़ियों पर राज किया। कछवाहों का कार्यक्षेत्र अमायन से लहार तक रहा है। तत्पश्चात् वीर भगत सिंह गौर ने महाराजा भरतपुर की सहायता से इन्दुरखी पर आक्रमण कर राज सत्ता अपने हाथों में ले ली। भगवंत सिंह रायसा' में इन्दुरखी के गौर राजा भगवन्त सिंह तथा मुगल बादशाह औरगंजेब के नवाब पुरदलखॉ नाम के मुसलमान सूबेदार के मध्य युद्ध का वर्णन है।'[1]

आगे चलकर जब भदौरिया राजाओं ने अपनी सत्ता इस क्षेत्र में स्थापित की तो उन्होंने भिण्ड नगर को अपनी विशेष रक्षा चौकी के रूप में बदल दिया। भदौरिया वंश के रघुरावत, मुगलवंश के आक्रमण के कारण भदावर राज्य से अपनी राजधानी अटेर ले आए। भदावर प्रदेश में अटेर, भिण्ड, पट्टी, हुमेंत तथा वांह सम्मिलित माने जाते हैं।

'भदौरिया राजाओं का प्राचीनतम उल्लेख 1246 ई. का मिलता है। इसकी प्रमाणिकता के स्पष्ट सबूत नहीं है। सम्वत 1700 में महाराजा वदन सिंह ने अटेर का किला बनवाया जिसे, कोटि देवगिरि के नाम से भी जाना जाता है। भदौरिया राजाओं ने अपने 400 वर्ष के राज्यकाल में भिण्ड, पिनाहट, कचौरा, वटेश्वर, परा, अटेर, नौगांव, और कनेरा में किले बनवाए थे।'[2]

अधिकार लिप्सा मानव स्वभाव का एक अंग है। इस तृष्णा में न जाने कितने राज्यों की सीमाए कितना धन, बल, बाहुबल और पशुबल तिरोहित हो गया। स्वाभिमान की रक्षा हेतु सत्ता संघर्ष समय-समय पर अपना कौतूक दिखाते रहे हैं। इस प्रक्रिया में भिण्ड अंचल के गोहद के जाट शासकों का इतिहास अपने पराक्रम, रणकौशल और राज्य विस्तार की नीति का एक अच्छा उदाहरण है। बडी इच्छा शक्तियों के साथ-साथ गोहद के जाट शासकों ने अटेर के भदौरिया शासक और लहार के कछवाह शासकों से युद्ध कर अपने बाहुबल का प्रदर्शन किया।'[3]

क्षेत्रीय राजवंशों के राज्यों को अपने राज्य में मिलाने हेतु गोहद के जाटों ने कभी अंग्रेजों का साथ पकड़कर मराठों को परेशानी में डाला तो कभी मराठों की शरण में जाकर अंग्रेजों से दो-दो हाथ किए। किन्तु गोहद के पहले शक्तिशाली राजा राणा भीमसिंह को अटेर के भदौरिया शासक गोपाल सिंह भदौरिया ने गोहद के किले पर आक्रमण कर दर-दर भटका दिया। गोहद के राणा भीमसिंह के प्रारम्भिक काल के इतिहास को अटेर के भदौरिया शासकों ने इतिहास बनने नहीं दिया यदि मराठा शक्ति गोहद के राजा का साथ नहीं देती तो अटेर के भदौरिया शासक इस क्षेत्र का एक ताकतवर राजवंश हो जाता।

सन् 1707 से 1737 ई. तक राणा भीमसिंह ने तत्कालीन उभरते मराठों की शाक्ति की शरण ली। अटेर का भदौरिया राजा इन दौरान यहॉ का शासन तंत्र चलाता रहा।

जब मराठा पेशवा बाजीराव छत्रशाल बुन्देला के पुत्रों के साथ जैतपुर होते हुए आगरा की ओर प्रस्थान कर रहे थे, तो जैतपुर से यमुना के किनारे-किनारे मुगलों के सामंत भदावर के राजा अनुरूद्ध भदौरिया का राज्य पड़ता

* गल्ला मण्डी रोड़, लहार, भिण्ड (म.प्र.) भारत

था, उसी के पूर्वजों ने गोहद पर अधिकार जमा रखा था।'[4]

मराठों की फौज ने आगरे जाने का इरादा बदल दिया और भदौरिया की राजधानी अटेर की ओर प्रस्थान कर दिया। अनुरूद्ध सिंह ने अपनी सशक्त फौज को 'गोहद–बरहद' के रास्ते से अटेर की ओर भेजा। बरहद से चलकर 'पराहटा' ग्राम के पास ही राणा भीमसिंह और भदौरिया राजा अनिरूद्ध सिंह के मध्य घोर युद्ध हुआ। भदौरिया राजा अनिरूद्ध सिंह पराजित हुआ। राणा भीमसिंह ने हाथी और नगाड़ों के निशान बड़ी–बड़ी तोपें छीन ली। अन्तिम रूप से पराजित होने पर अनिरूद्ध सिंह ने पेशवा को 20 लाख रूपये और 10 हाथी भेंट किए। भदौरिया शासक को पराजित करने के उपरान्त सन् 1739 ई. में भीमसिंह की पेशवा के प्रति स्वामी भक्ति के बदले पेशवा ने गोहद पर राणाओं के अधिकार को स्वीकार कर लिया।'[5]

भदौरिया राजा वख्त सिंह के समय भिण्ड पर जाटों का कब्जा हो गया। 1767 में भरतपुर के जाट राजा सूरजमल के प्रतापी पुत्र जवाहर सिंह ने पचास हजार सेना और तोपखाने के साथ सिन्ध नदी को पारकर मराठा अधिकृत क्षेत्रों में लूटपाट प्रारंभ कर दी। उसने भिण्ड–अटेर सहित सम्पूर्ण भदावर पर कब्जा कर लिया। लेकिन जवाहर सिंह अधिक दिनों तक यहॉ नहीं टिक पाया। भावड़ा के युद्ध में उसकी पराजय होते ही भिण्ड–अटेर पर पुन: भदौरिया शासकों का कब्जा हो गया। चार वर्ष बाद 1771 में गोहद के जाट शासक छत्रसिंह ने भिण्ड पर आक्रमण कर दिया। भदौरिया राजा बख्त सिंह ने उसका मुकाबला नहीं किया। इस तरह भदावर पर पुन: जाटों का अधिकार हो गया। 25 फरवरी 1784 के बाद महादजी सिंधिया ने छत्रसिंह को मारकर गोहद से भिण्ड–अटेर तक अपना राज्य फैला लिया। अंग्रेजों के शासनकाल तक भदावर–नरेश मराठों को खण्डनी देते रहे।'[6]

महादजी सिंधिया ने अम्बाजी ईंगले को गोहद का इंचार्ज बना दिया था। महादजी की मृत्यु के बाद दौलतराव सिंधिया को ग्वालियर का शासक बनाया गया।'[7]

जब अंग्रेजों का अधिकार दिल्ली और उत्तर भारत पर हुआ तब 30 दिसम्बर 1803 को अम्बाजी ईंगले ने सिंधिया की सहमति के बिना अंग्रेजों से सुर्जी–अर्जुन गांव में एक संधि कर ली। इस संधि के अनुसार गोहद अंग्रेजों को सौंप दिया और अंग्रेजों ने चम्बल पर्यन्त तक के सम्पूर्ण भिण्ड जनपद पर मराठों का आधिपत्य स्वीकार कर लिया। परन्तु अम्बाजी ईंगले द्वारा संधि की अन्य शर्तें पूरी न करने पर अंग्रेजों ने हमलाकर दिया इस लड़ाई में सिंधिया हार गये। 1805 में लार्ड कार्नवालिस ने ग्वालियर, भिण्ड और गोहद पुन: सिंधिया को दे दिया। दौलतराव ग्वालियर के शासक बन गए। राणा धौलपुर चले गए। तब से भिण्ड सिंधिया के कब्जे में चला गया और सन् 1947 तक उनके ही कब्जे में रहा।'[8]

निष्कर्ष – उपर्युक्त वर्णन से स्पष्ट होता है कि भिण्ड की राजनैतिक व्यवस्था का काल उथल–पुथल का काल रहा है। कभी भदौरिया शासकों ने तो कभी जाट शासकों ने इस क्षेत्र पर अपना आधिपत्य स्थापित किया परन्तु अपने शासन को स्थायित्व प्रदान नहीं कर सके और अंतत: सिंधिया शासकों ने अंग्रेजों के मार्गदर्शन में इस क्षेत्र पर शासन किया।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. भिण्ड जिले के प्रमुख मंदिरों का ऐतिहासिक महत्व, डॉ. राजीव–2004, पृ.सं. 45
2. राजपूताना गजेटियर।
3. भिण्ड जनपद की युग युग यात्रा, कटारे, डॉ. शिवशंकर 1998, पृ.सं.15

****

सिक्कों की इतिहास यात्रा

डॉ. चित्रा तंवर *

प्रस्तावना – पुरातत्व का मोहपाश किसे नहीं बाँधता? सिक्के ऐतिहासिक अतीत की वे ताजा तस्वीरें हैं, जिनसे हम बीते कल को आज के रूप में आसानी से देख सकते हैं। इनमें भी सोने व चाँदी के सिक्कों की जानकारी प्राप्त करना सर्वाधिक मानवीय जिज्ञासा का विषय है।

सिक्कों की लिखावट, बनावट, सजावट, इन पर अंकित चिन्हों, भाषा आदि के अध्ययन से हमारे जीवन की सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक स्थितियों की जानकारी प्राप्त होती है। इसके साथ ही हम यह भी कह सकते हैं कि अधंकारयुगीन इतिहास को उजागर करने में राजस्थान से प्राप्त सिक्कें अपनी महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। क्योंकि सिक्कों में कई बार हमें ऐसे राजाओं के नाम व उनके बारे में जानकारी प्राप्त होती है, जिनके बारे में हमें ग्रंथों व अन्य जानकारी के स्त्रोतों से कोई जानकारी नहीं मिलती है।

पंचमार्क (आहत)सिक्कें – यह भारतीय मुद्रा इतिहास के सर्वाधिक प्राचीनतम सिक्के का समय 600 ई. पू. से 200 ई. पू. माना जाता है। यह सिक्के राजस्थान में रैढ़, विराटनगर, सांभर, ईस्माईलपुर, चित्तौड़, भरतपुर, गुरारा (सीकर) आदि स्थानों से प्राप्त होते हैं। इन सिक्कों को बनाने की विधि के कारण ही इन्हें पंचमार्क या आहत सिक्के कहा जाता था। इनको प्राचीन साहित्य में पर्ग, धरण, पुराण एवं कार्षापण भी कहा गया है। इनकी धातु चाँदी व ताँबा थी इनका वजन 24 व 32 रत्ती पाया जाता था। इन सिक्कों में एक ओर 4-5 चिन्ह बने होते थे वहीं दूसरी ओर हल्के छोटे चिन्ह होते थे। ये प्रमुखत: मछली, पर्वत के ऊपर वृक्ष, स्वास्तिक चिन्ह, चक्र, त्रिशूल, धनुष-बाण, तराजू, वृक्ष, शिवलिंग आदि का अंकन होता था।

उल्लेखनीय है कि भिन्न-भिन्न विद्धानों ने इनका अर्थ भिन्न-भिन्न निकाला है। किन्तु अभी तक इनकी कोई सर्वमान्य व्याख्या नहीं हो सकी है। कुछ विद्धान इनके चिन्हों को सिन्धु लिपि के अवशेष मानते हैं। हड़प्पा तथा मोहन जोदड़ों से प्राप्त ताँबे व मिट्टी की सीलों पर अंकित चिन्हों तथा गंगानगर जिले के कालीबंगा के उत्खनन से प्राप्त मिट्टी के बर्तनों पर अंकित रेखाचित्रों के लगभग 30 चिन्ह ऐसे है, जिनकी समानता पंचमार्क के सिक्कों से की जा सकती है। परन्तु हड़प्पा संस्कृति के बाद तथा पंचमार्क सिक्कों के प्रारम्भिक प्रचलन काल के मध्य की पुरासामग्री पर इन चिन्हों का अंकन न होना, ऐसा क्यों था। यह अभी तक ज्ञात नहीं हो पाया है।

उल्लेखनीय है कि गुरारा ग्राम, जिला सीकर से 2744 सिक्के हमें प्राप्त हुए हैं। पंचमार्क सिक्के भारतीय मुद्रा इतिहास के लगभग 2600 वर्ष प्राचीनतम सिक्के माने जाते हैं। गुरारा से प्राप्त 2744 सिक्कों में से 61 सिक्कों पर श्री मेन (तीन मानव आकृतियाँ) अंकित हैं। इन सिक्कों पर बायीं ओर क्रमश: देवी सीता, श्री राम व श्री लक्ष्मण का अंकन है। प्राचीन काल से चली आ रही हिन्दू धार्मिक मान्यता के अनुसार परम्परागत रूप से दो पुरूषों के साथ वामांग खड़ी महिला के अंकन को देवी सीता, श्री राम व श्री लक्ष्मण के रूप में देखा जाता रहा है। वृहत्तर भारत के विभिन्न स्थानों के उत्खनन के दौरान बहुत अधिक मात्रा में इस प्रकार के सिक्के प्राप्त हुए हैं।

जनपद सिक्कें – मौर्य साम्राज्य की समाप्ति पर अनेक जनपदों ने अपने सिक्के चलाए। राजस्थान में कई वीर जनजातियों, उत्तर पश्चिमी राजस्थान के यौछेय और मालवों ने सिकन्दर का सामना किया। यह बड़ी ही वीर जातियों थीं। इनके सिक्कों पर देव सेनापति स्कन्ध और देवी शष्ठी का अंकन मिलता है। इस जाति के दूसरे प्रकार के सिक्कों के अग्रभाग पर 'जय यौधेयाना ब्राह्मी लिपि में लिखा है। इसके हाथी का चित्र व सिक्के के पृष्ठभाग पर वृषभ' यूप की ओर उन्मुख बताया गया है। इसी प्रकार शिवि जनपद के सिक्के हमें बेड़च नदी के किनारे प्राप्त हुए हैं, जिन पर अग्रभाग पर 'मझिमिकाय शिवि जनपदस' लिखा है तथा पृष्ठभाग पर छ: टीलों से युक्त पहाड़ी, जिसके ऊपर चन्द्रमा व नीचे नदी का अंकन है।

क्षत्रप सिक्कें – यह सिक्के राजकीय केन्द्रीय संग्रहालय से स्थानान्तरित हो कर विभाग की मुद्राशाखा, जयपुर में संग्रहित किए गए हैं। राज्य के अन्य क्षेत्रीय संग्रहालयों में भी इनका संग्रहिकरण किया गया है। क्षत्रप शासक नहपान, जयदामन, जीवदामन, रूद्रदामन, सद्रसिंह, सिंहासन आदि के सिक्कें हमें पुष्कर से प्राप्त हुए हैं। इन सिक्कों के अग्रभाग पर शासक का ग्रीवा तक का भाग व पृष्ठभाग पर अर्ध चन्द्रमुख मेरू, वृषभ, गज, त्रिशूल, नदी, परशु, वज्र आदि का अंकन है। इन सिक्कों पर खरोष्ठी व ब्राली दोनों लिपियों से लेख हैं।

गुप्तकालीन सिक्कें – राजस्थान के रैढ़ (टोंक) मोरोली (जयपुर), सयाला सुखपुरा (टोंक), सांभर (जयपुर) आदि स्थानों से हमें इस काल के सिक्के प्राप्त होते हैं। यह भारतीय इतिहास का स्वर्णकाल माना जाता है। इसमें प्रारम्भिक काल में तो शुद्ध स्वर्ण मुद्राएं किन्तु स्कन्दगुप्त तक आते-आते सम्मिश्रित स्वर्ण मुद्राएँ प्राप्त होती हैं।

इनमें समुद्रगुप्त के समय के सिक्कों के अग्रभाग पर राजा सीधी मुद्रा में खड़ा होकर दायीनी ओर देखता हुआ जिसके बायें हाथ में ध्वज, दायीने हाथ से वह ध्वन वेदी में आहूति देता दर्शाया गया है। राजा के बायीने हाथ की ओर ब्राही लिपि में 'समर-शत-वित विजयो जित-रिपुरजितों-दिवं जयति' नामक लेख लिखा है जिसका अर्थ हैं। 'सर्वत्र विजयी राजा जिसने सैकड़ों युद्ध में विजय प्राप्त कर शत्रु को पराजित किया है स्वर्ग श्री की प्राप्ति करता है।' इसके पृष्ठ भाग पर देवी लक्ष्मी का सिंहासनाधीन चित्र है।

यद्यपि गुप्त वंशावली में कॉच नामक राजा का उल्लेख नहीं मिलता है किन्तु सिक्कों के आधार पर इसकी पुष्टि होती है। इस सम्राट के सिक्के पर चक्रध्वज बना हुआ है तथा पृष्ठभाग पर देवी लक्ष्मी को खड़ा दर्शाया गया

* व्याख्याता, जगत्गुरु रामानन्दाचार्य राजस्थान संस्कृत विश्वविद्यालय, जयपुर (राज.) भारत

है। इसके अलावा चन्द्रगुप्त द्वितीय ने सिंह निहन्ता प्रकार का सिक्का चलाया था,जिसके अग्रभाग में एक राजा को खड़े हुए जिसके समक्ष एक सिंह आक्रमण की मुद्रा में खड़ा है तथा राजा उस पर बाण चला रहा है। इसमें ब्राह्मी लिपि में एक लेख अंकित है कि 'राजाओं में चन्द्रमा के समान युद्ध कौशल के लिए प्रसिद्ध है, अजेय है, सिंह के समान शक्तिशाली है, युद्ध में विजयी है तथा पृष्ठभाग पर सिंहवाहिनी देवी के दायें हाथ में पाश है व बायें हाथ में कमल है तथा बायीं ओर ब्राह्मी लिपि में लेख 'श्री विक्रम' अंकित है।

इसी प्राकर चन्द्रगुप्त द्वितीय के सिक्कों पर अग्रभाग पर 'महाराजाधिराज श्री चन्द्रगुप्त' तथा पृष्ठभाग पर खड़ी हुई लक्ष्मीजी का चित्र अंकित है। कुमार गुप्त द्वारा चाँदी के सिक्के चलाए गए जिसके अग्रभाग पर राजा का गले तक का भाग दर्शाया गया है।

इण्डो–ससेनियन सिक्के – राजस्थान के नलियासर, सांभर, रैढ, विराटनगर, अहोर, अमरयसर, देत्ता, दौलतपुरा, खेजरोली, पंचालसा, सीबा का वास, साखुन, थलबांध, दयारामपुरा, चान्द्रमा, खिजूरिया, आदि गॉवों से इस युग के सिक्के प्राप्त हुए हैं। इनके अग्रभाग पर राजा के अर्ध्व भाग दायीं ओर देखते हुए तथा पृष्ठभाग पर अग्निवेदिका का अंकन है। यह उल्लेखनीय है कि प्रारम्भिक काल के इण्डो–ससेनियन सिक्के गोल आकार के पतले व चपटे थे जो बाद में छोटा व मोटा व राजा, अग्निवेदिका का चित्र भद्धा दिखाई देता है इन सिक्कों को 'गधैया' कहा जाने लगा। इस प्रकार के सिक्के बड़े घड़ों में 95000 कासिन्द्र (सिरोही) नामक स्थान से प्राप्त हुए हैं।

राजपूत काल के सिक्के – 9 से लेकर 12 वीं शताब्दी में राजस्थान में कानपुरा, ग्वालिनी, दयायमपुरा (जयपुर), टोड़ारायसिंह, सीकर, गनेड़ी आदि स्थानों से प्राप्त हुए हैं। इनमें प्रतिहार शासकों की आदिवराह मुद्रा भी शामिल है। इनमें एक ओर भगवान विष्णु के वराह अवतार का तथा दूसरी ओर श्री मदादिवराह का जागरी लिपि में अंकन है।

सलतनतकालीन सिक्के – मध्यकालीन हिन्दू राजाओं की आपसी फूट एवं अराष्ट्रीय भावना के कारण चौहान सम्राट पृथ्वीराज तृतीय मुहम्मद गोरी के हाथों पराजित हुए एवं धीरे–धीरे इस्लाम मतानुयायियों ने भारतवर्ष में अपना राज्य स्थापित किया। राजस्थान के गावली (जयपुर) से प्राप्त दफीने में 'वृषभ अश्वारोही' प्रकार के सिक्कों पर एक ओर वृषभ एवं नागरी लिपि में 'श्री मुहम्मदविन साम' व दूसरी ओर अश्वारोही के साथ 'श्री हमीर' का अंकन है। मुहम्मद गोरी की मृत्यु के बाद उसका सेनापति गुलाम कुतुबुद्दीन ऐबक दिल्ली का सुल्तान बना। अल्तमश, बलबन आदि के समय में चांदी–तांबा मिश्रित धातु के सिक्के प्रचलन में आए। से सिक्के राजस्थान में कुडेरा (सवाई माधोपुर), हर्ष (सीकर), फागी (टोंक), दयारामपुरा (जयपुर) आदि स्थानों से प्राप्त हुए है। गुलाम शासक बलबन के सिक्कों के अग्र भाग पर अस्सुल्तान आजम मियासुद्दीन वादीन, तथा दूसरी ओर घेरे में फारसी में 'बलवन' एवं चारों ओर सुलतान गयासुद्दीन' लेख है।

गुलाम वंश के अन्त के साथ उसका स्थान खिल्जी वंश ने ले लिया। इस वंश का शक्तिशाली राजा एवं योग्य शासक अलाउद्दीन खिल्जी (1296 ई. –1316 ई.) हुआ जिसने सोने चांदी तथा तांबा धातु में सिक्के चलाए। चांदी के सिक्कों के चित की ओर 'अस्सुल्तान अल आजम अलाउद्दीन वादीन अबू मुजफ्फर मुहम्मदशाह अस्सुल्तान' और पट की ओर 'सिकन्दर सानी अमीरूल मोमनीन' लिखा है। खिल्जी वंश के पतनोपरान्त राजस्थान में इसी प्रकार सांगरा पाटन से प्राप्त तुगलक के सिक्कों के अग्र भाग पर फारसी में हुस्नें रब्बी एवं पृष्ठ भाग में 'मुहम्मद बिन तुगलक' लिखा मिलता है। तुगलकों के बाद दिल्ली की गद्दी पर लोदी वंश की शासन प्रारंभ होता है। जयपुर क्षेत्र से 'इब्राहीम शाह अस्सुल्तान' तथा पृष्ठ भाग पर 'अलमोमनीन अमीर खलंदत खिलाफतह' अंकित है।

मुगल शासकों के सिक्के – राजस्थान के जोधुपरा, सांभर बैजूपाडा, बगरू, चाकसू, सीगवाडा (जयपुर), चांदसेन बघेडा (टोंक) छीपा बड़ोद (कोटा), सगरोडा (बांसवाड़ा), भांडासर (चूरू), पंचेरीकला (झूंझूंनू) वीर वाडा (सिरोही) आदि विभिन्न स्थानों से मुगल सम्राट अकबर, जहाँगीर, शाहजहां, औरंगजेब आदि शासकों के सोने, चांदी एवं तांबे के सिक्के मिले है। मुगल सिक्कों की विशेषता है कि उन पर बादशाह का नाम कलिमा के साथ साथ टकसाल का सुन्दर अंकन फारसी लिपि में मिलता है। राजस्थान में सिक्कों को टंकित करने के लिए बैराट, अजमेर, अलवर में टकसालों थीं। जोधपुर संग्रहालय में जहांगीर के राशियों वाले सिक्के सुरक्षित हैं। जिन पर एक ओर सिक्का 'मुबारक बादशाह गाजी' एवं दूसरी ओर 'मेमनत मानूस सनह जलूस' मुद्रा लेख एवं टकसाल का नाम अंकित मिलता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. जफर उल्लाह खाँ – राजस्थान के प्राचीन सिक्कें, जवाहर कला केन्द्र एवं साहित्यागार।
2. ब्रजमोहन सिंह परमार – युग–युगों में राजस्थान सिक्कों के माध्यम से।
3. डॉ. परमेश्वरी लाल गुप्त – भारत के पूर्व कालिक सिक्के।
4. जॉन एलन – ए केटलॉग ऑफ दि इण्डियन कॉइन्स इन दी ब्रिटिश म्यूजियम।
5. डॉ. हुकम चन्द जैन, नारायण माली – राजस्थान इतिहास एवं संस्कृति एन्साइक्लपीड़िया, जैन प्रकाशन मंदिर, जयपुर।

****

गुप्तकाल में पौराणिक मूर्ति निर्माण कला का विकास – एक अध्ययन

डॉ. पूर्णिमा शर्मा *

प्रस्तावना – गुप्तकाल में तक्षण कला का श्रेष्ठतम विकास हुआ। मूर्तिकला में विशिष्ट प्रगति हुई और यह कला नवीनता से ओतप्रोत हो गयी। प्रस्तुत शोध प्रबंध गुप्त काल में पौराणिक मूर्ति निर्माण कला पर प्रकाश डालता है।

गुप्तकाल के प्रारंभ में ब्राह्मण धर्म के विविध देवी देवताओं का उन आयुधों और वाहनों का स्वरूप पूर्ण रूप से निर्दिष्ट हो चुका था। वृहत्संहिता और विष्णुधर्मोत्तर पुराण में इनका विशद् विवेचन है। ब्रह्मा, विष्णु, शिव, सूर्य, कार्तिकेय, लक्ष्मी, पार्वती आदि की गुप्तकालीन मूर्तिया आज उपलब्ध है।

ब्रह्मा – गुप्तकाल में ब्रह्मा की मूर्ति अभी तक नगण्य सी प्राप्त हुई है। ब्रह्मा को चतुर्मुख माना गया है। मूर्ति में ब्रह्मा को दाढ़ी, जटाजूट युक्त चतुर्भुज और तुन्दिल रूप में बतलाया गया है।

विष्णु – राजस्थान में भरतपुर के समीप रूपवास में विष्णु की दो भुजाओं वाली प्रतिमा प्राप्त हुई है, इनमें एक हाथ में गदा है। राजस्थान में नांद से प्राप्त एक शिवलिंग के निचले भाग में दो भुजा वाले विष्णु की प्रतिमा का अंकन हुआ है। इसके एक हाथ में गदा और दूसरे हाथ में चक्र है। विदिशा में विष्णु की दो भुजा वाली प्रतिमा प्राप्त हुई है। इस मूर्ति में दाहिना हाथ अभय मुद्रा में ऊपर उठा हुआ है और बायां हाथ कटि विनयस्थ है। इस मूर्ति के पीछे प्रभामण्डल है। आजकल यह मूर्ति ग्वालियर के संग्रहालय में सुरक्षित है। आठ भुजा वाले विष्णु स्वरूप की कुछ खण्डित प्रतिमाएँ मथुरा क्षेत्र में प्राप्त हुई है। विष्णु के शेषशायी स्वरूप का मूर्तन उत्तरप्रदेश के झांसी जिले में देवगढ़ के दशावतार मंदिर में हुआ है। इस प्रतिमा में विष्णु के नाभिकमल पर ब्रह्मा के चरणों में लक्ष्मी देवी को और आकाश में शिव, पार्वती, कार्तिकेय, इन्द्र आदि देवताओं को दिखाया गया है। डॉ. वी.एस. अग्रवाल ने लिखा है –'गजेन्द्रमोक्ष, अनंत पर लेटे हुए विष्णु और हिमालय में निवास करते हुए नर और नारायण जिन्हें देवगढ़ के मंदिर में मूर्ति में ढ़ाला गया है। हिंदू मूर्तिकला के श्रेष्ठ नमूनों में स्थान रखते हैं।' विष्णु की ऐसी अन्य मूर्ति मध्यप्रदेश में विदिशा के समीप उदयगिरी की गुहा में उत्कीर्ण है। यह मूर्ति अत्यंत सुंदर है। इसमें वराह अवतार विष्णु अपने दाँतों से पृथ्वी को उठाय हुए हैं। इसके निकट ही गंगा और यमुना के जन्म प्रयाग में संगम और उनके सागर में विलिन होने के दो असाधारण दृश्य बनाये गए हैं। यही शेषशायी विष्णु की एक प्रतिमा में ऊपरी भाग में शिव, इंद्र आदि देवताओं की मूर्तियाँ बनी है। इस प्रतिमा में विशिष्ट आभूषण और वनमाला है। देवताओं और आयूध पुरूषों की आकृतियाँ भी उत्कीर्ण की गयी है।[1]

वराह अवतार का यह समस्त दृश्य त्रिभुवन के एक विराट पावन पर्व का द्योतक है।[2] और इसे सीमित गुफाभित्ति की परिधि पर सफलतापूर्वक उत्कीर्ण किया गया है। जब शकों का नाश कर शकारि चन्द्रगुप्त विक्रमादित्य उदयगिरी गया था, तब उसके संधिविग्रहिक मंत्री वीरसेन शाब ने वहाँ अभिलेख उत्कीर्ण करवाकर वराह अवतार का गुहा दीवार पर अद्धचित्रण भी करा दिया था, संदर्भ की उपयुक्तता भी असाधारण है।

वराह अवतार के दूसरे स्वरूप का अंकन पशु–वराह के रूप में हुआ है। इसमें वराह के मुँह में दाँत पर पृथ्वी रखी गयी है। इस प्रकार की एक मूर्ति पूर्वी मालवा के एरण से प्राप्त हुई है। इस पर हूण नरेश तोरमाण के प्रारंभिक वर्ष का अभिलेख अंकित है। मथुरा में गुप्तयुग में निर्मित विष्णु की अन्य प्रकार की मूर्तियाँ प्राप्त हुई है। कुछ मूर्तियों में तीन मुख है। ऐसी मूर्ति को नरसिंह–वराह–विष्णु की प्रतिमा कहा गया है। मथुरा में ही प्राप्त एक प्रतिमा में विष्णु के हाथों में आयुध है, उनके कंधों और सिर के पीछे से आकृतियाँ उद्भूत होती उत्कीर्ण की गयी है।

कृष्ण – गुप्त युग में विष्णु से स्वतंत्र रूप से भी कृष्ण की मूर्तियाँ निर्मित की गयी। बाँग्लादेश में राजशाही जिले के पहाड़पुर गाँव में मंदिर की दीवारों पर प्रस्तर की अनेक मूर्तियाँ पाई गई । काशी के निकट प्राप्त और सारनाथ के संग्रहालय में सुरक्षित कृष्ण की मूर्ति है, जिसमें कृष्ण गोवर्धन पर्वत को उठाए हुए हैं। उदयगिरि के निकट पधारी में कृष्ण के जन्म को मूर्ति द्वारा दिखाया गया है। काशी के निकट कला भवन में सुरक्षित मोर पर बैठे हुए कार्तिकेय की मूर्ति कोशामबी (इलाहाबाद) में प्राप्त सूर्य की मूर्ति बहुत सुंदर मानी गई है। पहाड़पुर में राधा–कृष्ण की मूर्तियों का सुंदर आकर्षक अंकन भी हुआ है। पर श्रीकृष्ण का अंकन प्राय: गोवर्धनधारी के रूप में हुआ है।[4]

विष्णु के वाहन गरूड़ की मूर्ति मानुषी रूप में बनाई गई है। एरण के सामंत शासक मातृविष्णु और धन्य विष्णु ने जो विष्णु ध्वजस्तंभ स्थापित किया था उसके शीर्ष पर गरूड़ की प्रतिमा मानवी रूप में बनाई गई है।

शिव –गुप्त युग में शिव की पूजा, उपासना लिंग रूप में और मानव के रूप में प्रचलित थी। गुप्तकाल के शिवलिंग एकमुखी, द्विमुखी, चतुर्मुखी और अष्टमुखी थे। खोह और भूमरा के शिवमंदिर के एक मुख लिंग के शिव की मूर्तियों प्रतिमाकरण की दृष्टि से बहुत सुंदर मानी जाती है। शिव मूर्ति की जटा में अर्द्धचन्द्र और गले में हार और सिर दिखाया गया है। एक मुखी शिवलिंग मथुरा में बहुसंख्या में बनाए गए हैं। बिहार में भी ये बड़ी संख्या में बनाए और पूजे जाते हैं।[5]

द्विमुखी शिवलिंग की एक प्रतिमा मथुरा के संग्रहालय में आज भी विद्यमान है। चार मुख वाले शिवलिंग भी बनाए जाते थे। अष्टमुखी शिवलिंग की एक विशाल प्रतिमा पश्चिमी मालवा में मंदसौर (दशपुर) में प्राप्त हुई। यह गुप्तकालीन है। आजकल यह मंदसौर में सिवना नदी के तट पर बने पशुपतिनाथ के मंदिर में है। ऐसे ही एक शिवलिंग की स्थापना कुमार गुप्त प्रथम के शासनकाल में उसके मंत्री पृथ्वीषेण ने करदण्डा में की थी। ऐसा

* सहायक प्राध्यापक (इतिहास) शासकीय महाविद्यालय, कन्नौद (म.प्र.) भारत

शिवलिंग आज लखनऊ के संग्रहालय में है। इसके निचले भाग में एक अभिलेख उत्कीर्ण है।[6]

गुप्तयुग में मानव के रूप में शिव की मूर्तियाँ बनाई गई। गणों के साथ खड़ी शिव की एक विशाल मूर्ति मंदसौर में प्राप्त हुई है। लकुलीश के रूप में शिव की प्रतिमा भी बनवाई गई। ऐसी प्रतिमा मथुरा के एक स्तंभ पर मिली है। इस स्तंभ पर चन्द्रगुप्त द्धितीय, विक्रमादित्य के पांचवे राज्य वर्ष में उत्कीर्ण लेख है। लकुलीश वेश में शिव की एक अन्य मूर्ति भी मथुरा से प्राप्त हुई है। इस मूर्ति में शिव घुटनों के सहारे बैठे हैं, कमर में योगपट्ट बंधा है और उनके दोनों हाथ प्रवचन की मुद्रा में है।

शिव और विष्णु दोनों को मिलाकर हरिहर की मूर्ति निर्मित की गई। इसमें दोनों की आकृति पुरूष की है परंतु दोनों में भेद स्पष्ट होता है, उनके जटाजूट मुकुट और हाथों में धारण किए गए आयुधों से। यह मूर्ति मध्यप्रदेश के विदिशा नगर से प्राप्त हुई है और आजकल यह दिल्ली के राष्ट्रीय संग्रहालय में है। ऐसी ही एक प्रतिमा प्रयाग और पटना के संग्रहालय में है।

शिव-पार्वती की दोनों मूर्तियाँ एक ही साथ बनाने की परंपरा प्रारंभ हो गई थी। कौशांबी से 138 की तिथि अंकित शिव-पार्वती की एक प्रतिमा मिली है। गुप्तकालीन शिव-पार्वती की बैठी दम्पत्ति की मूर्ति मध्यप्रदेश में ग्वालियर के संग्रहालय में है।

इस काल में 'अर्द्धनारीश्वर' शिव की प्रतिमा भी बनाई। मथुरा के संग्रहालय में गुप्त युग में निर्मित अर्द्धनारीश्वर की दो प्रतिमाऐं हैं। गुप्तकाल की चतुर्भुज अर्द्धनारीश्वर की एक प्रतिमा वाराणसी के समीप सारनाथ के संग्रहालय में भी है।

कार्तिकेय – गुप्तयुग में कार्तिकेय देवताओं के सेनापति माने गए। ये शिवपुत्र और इनका दूसरा नाम महासेना थी था। काशी में भारत कला भवन और पटना और मथुरा के संग्रहालय में कार्तिकेय की प्रतिमाऐं है। छ: मुख वाले कार्तिकेय का मूर्तन मध्यप्रदेश के ग्वालियर क्षेत्र में पवाया में एक पाषाण फलक पर हुआ था। यह मूर्तिफलक आजकल ग्वालियर के संग्रहालय में है। छ: मुखवाले कार्तिकेय की एक कांस्य प्रतिमा काश्मीर से प्राप्त हुई और इसे उत्तर गुप्त काल में निर्मित माना गया है।

गणेश – गणेश को शिवपार्वती का पुत्र माना गया है। संस्कृत साहित्य में गणेश के संदर्भ और उल्लेख आठवी सदी से अर्थात् गुप्तयुग के बाद से प्रारंभ होते हैं फिर भी कुछ विद्धानों की धारणा है कि गणेश का मूर्तन गुप्तयुग में प्रारंभ हो चुका था। भूमरा से प्राप्त एवं खंडित मूर्ति गणेश की बताई जाती है।

सूर्य – दशपुर में सूर्य मंदिर का निर्माण एवं जीर्णोद्धार किया गया था। इस मंदिर के अभिलेख में सूर्यपूजा का विवरण है।[7]

गुप्तकालीन एक सूर्य प्रतिमा वाराणसी में भारत कला भवन में सुरक्षित है। कौशाम्बी की सूर्य प्रतिमा भी बड़ी भव्य और सुंदर मानी गई है। गुप्तकाल में सूर्य की प्रतिमा का स्वरूप भारतीय हो गया। (सूर्य का कोट, पायजामा एवं लंबे जूते का स्वरूप शकों के साथ ईरान से आया था) इन मूतियों में सूर्य हार तथा अन्य आभूषण पहने हुए हैं। उनके दोनों ओर दो देवियाँ (उषा और संध्या) तथा दो परिचारक भी उत्कीर्ण किए गए।

अग्नि – प्राप्त प्रतिमाओं में अग्नि तोंद वाले, मस्तक पर जटाजूट, मुख पर दाढ़ी, शरीर पर यज्ञोपवित और दाहिने हाथ में अमृत घट लिए हुए है। ऐसी एक प्रतिमा पटना के संग्रहालय में है।

लक्ष्मी और दुर्गा – इस युग में देवियों की मूर्तियाँ कम बनाई गई। देवगढ़ मंदिर में शेषशायी विष्णु के चरणों के समीप लक्ष्मी बैठी हुई हैं। विदिशा के समीप उदयगिरी में गुहा की दीवार पर 'महिष मर्दिनी' दुर्गा की आकृति बनी हुई है। इसमें दुर्गा की आठ भुजाऐं बतलायी गयी है। दुर्गा की एक ऐसी ही प्रतिमा काशी के भारत कला भवन में सुरक्षित है।

गंगा-यमुना – गुप्त युग में गंगा और यमुना को देवी स्वरूप मान कर मंदिरों तथा गुफाओं के द्धारों पर इनकी प्रतिमाएँ इनके वाहनों क्रमश: मकर और कच्छप के साथ उत्कीर्ण की गई किंतु स्वतंत्र रूप से इनकी मूर्तियाँ नहीं बनाई गई।

सप्त मातृका – कभी-कभी सप्तमातृकाओं की एक साथ और कभी-कभी पृथक-पृथक प्रतिमाएँ बनाई गई थी। ये सप्तमातृकाएँ थी - माहेश्वरी, वैष्णवी, ब्रह्माणी, कौमारी, वराही, इंद्राणी, यमी। एक साथ ऐसी मूर्तियाँ सरायकलां से प्राप्त हुई और पटना के संग्रहालय में है। मथुरा के संग्रहालय में मातृका कौमारी की खण्डित प्रतिमा है और काशी के भारतीय कला भवन में इंद्राणी की एक प्रतिमा है।

निष्कर्ष – मूर्तिकला के क्षेत्र में गुप्तकाल के तक्षकों ने भारत के प्रतिमाकरण में एक नवीन युग को जन्म दिया। गुप्तों से पूर्व कुषाणकाल में भारत की मूर्तिकला ग्रीक कला से प्रभावित थी। अत: इसे भारतीय यूनानी या गांधार कला कहते थे। लेकिन गुप्तों के समय में भारतीय मूर्तिकला ग्रीक प्रभाव से मुक्त होकर संपूर्ण स्वदेशी अथवा राष्ट्रीय परिधान ग्रहण कर गयी। गुप्त मूर्तिकला भावपूर्ण ओजस्विता अथवा आध्यात्मिक प्रभावोत्पादकता, सहज स्वाभाविकता, अंग सौष्ठव, सौंदर्य व रचना कौषल की निपूणता के लिए प्रसिद्ध है। इस काल में सर्वाधिक मूर्तियाँ बौद्धधर्म की है, उसके पश्चात् पौराणिक धर्म की है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. पान्थरी प्रो. भगवती प्रसाद - महान गुप्त राजवंश, साहित्य केन्द्र वाराणसी।
2. गुप्त साम्राज्य का राजनीतिक एवं सांस्कृतिक इतिहास - लूणिया बी एन, कमल प्रकाशन, इंदौर - 1974
3. उपाध्याय भगवतशरण - गुप्तकाल का सांस्कृतिक इतिहास।
4. उपाध्याय वासुदेव - गुप्त साम्राज्य का इतिहास (प्रथम एवं द्धितीय खण्ड), इंडियन प्रेस इलाहाबाद।
5. स्मिथ व्ही.ए. - आर्ट इन इंडिया एंड सीलोन हिस्ट्री ऑफ फाइन आर्ट इन इंडिया एंड सीलोन
6. बनर्जी - 'एज ऑफ इंपीरियल गुप्ताज'।
7. डॉ.पं. गुप्त - गुप्त साम्राज्य।
8. बी. एन लूणिया - प्राचीन भारतीय संस्कृति।

****

अकबर राजपूत सम्बन्ध

डॉ. भूप सिंह बल्हारा *

प्रस्तावना – राजस्थान के राजपूत राजाओं के साथ मुगल गठबंधन अकबर और उसके उत्तराधिकारियों के अधीन मुगल साम्राज्य के विस्तार एवं सुदृढ़ीकरण में एक महत्वपूर्ण कारक माना जाता है। इसी प्रकार औरंगजेब के अधीन इस गठबंधन का विच्छेद साम्राज्य के कमजोर पड़ने और बाद में विघटित हो जाने का एक महत्वपूर्ण कारण समझा जाता है। अकबर का धार्मिक उदारवाद, जो इस विश्वास पर आधारित था कि सारे धर्म एक ही सत्य पर पहुँचने के विभिन्न मार्ग हैं और सभी धर्मों के अनुयायियों के साथ बिना किसी भेद–भाव के न्याय और समानता के आधार पर सलूक किया जाना चाहिए, उसकी राजपूत नीति का प्रेरक माना जाता है।

राणा संग्राम सिंह (राणा सांगा) का प्रभाव आगरा के समीप पीलिया नदी तक फैल गया था। प्रत्यक्षत इब्राहिम लोधी को यह नागवार था और पूर्वी राजस्थान तथा मालवा पर नियंत्रण के लिए लोधी और सांगा के बीच संघर्ष के आसार नजर आने लगे थे। उपर्युक्त पृष्ठभूमि में ही सांगा और बाबर के बीच इब्राहिम लोधी के विरूद्ध सांठ–गांठ के लिए वार्ताएँ शुरू हुई[1]। सांगा ने उसे लोधी पर आक्रमण करने के लिए आमंत्रित किया और आगरा को फतह कर लिया। सांगा ने गंगा घाटी में बाबर को एक उदीयमान आक्रामक शक्ति के संदर्भ में देखा। इसलिए पानीपत की लड़ाई के तुरन्त बाद उसने ऐसे सहयोगियों को इकट्ठा करने का प्रयास किया जो बाबर को भारत छोड़ने पर विवश करने अथवा यदि यह संभव न हो सके तो उसे पंजाब तक सीमित रखने में उसकी मदद कर सके। सिकंदर लोधी के छोटे पुत्र महमूद लोधी के साथ अनेक अफगान सांगा के साथ खड़े हो गए और उसे सुल्तान घोषित किया और सांगा ने चित्तौड़ में उसे पनाह दी। हसन खा मेवाती जो मेवात का शासक था और अफगाान सरदार खान–ए–जहाँ नोहानी भी सांगा के साथ जुट गए। सांगा के आह्वान पर चंदेरी के मेहीनी राय, ढुंढ़ाड के राजा पृथ्वीराज तथा आमेर के राव जगमल समेत हाडौटी जालौर, सिरोही, डुंगरपुर इत्यादि के अधिकांश राजओं ने सांगा के सामंती राजाओं के रूप में उसका साथ दिया। जोधपुर का राव गोगा स्वयं तो शामिल नहीं हुआ लेकिन मेड़ता[1] के रतन सिंह तथा रायमल को भेजा।

1527 की खानवा की लड़ाई हिन्दु और मुसलमानों के बीच की लड़ाई नहीं थी, हालांकि बाबर ने सांगा का साथ देने वाले मुसलमान सरदारों को काफिरों और मुलहिंदों की संज्ञा दी थी[3]। बाबर ने इस युद्ध में अपने सैनिकों में जोश पैदा करने के लिए इस युद्ध को जिहाद घोषित किया और बढ़िया गजनी शराब के बहुत सारे मटके तुड़वा दिए। इसलिए 16 मार्च 1527 को बाबर ने सांगा पर विजय पाने के बाद गाजी की उपाधि धारण की। बाबर और राजस्थान के शासकों के बीच कोई भावनात्मक सम्बन्ध तो स्थापित नहीं हो सके लेकिन बाबर ने पंजाब क्षेत्र के कुछ अग्रणी जमींदारों जैसे जंजुहा, चारी तथा कहलोर के शासकों को उनकी पुरानी जायदादों को उनके पास संपुष्ट करके अपने पक्ष में लाने का प्रयास किया। इनमें से अधिकतर सरदार बाबर के प्रति वफादार ही बने रहे। उनमें से संगुर जंजुहा नामक सरदार बाबर की तरफ से सांगा के विरूद्ध लड़ते हुए मारा गया[4]। अगर बाबर और अधिक दिनों तक जिन्दा रहा होता तो उसने शायद राजपुताना के शासकों के प्रति ऐसी ही सौहार्दयपूर्ण नीति अपनाई होती। हुमायुँ अपने जीवन काल में शेरशाह से संघर्ष करता रहा।

पूर्वी राजस्थान में आंबेर के छोटे से राज्य का शासक भारमल[5] 1557 में ही अकबर के दरबार में उपस्थित रहा था और एक उन्मत हाथी पर सवार अकबर को बचाने में अपने पूरे दस्ते के साथ बहादुरी के साथ डटा रहा था जबकि अन्य सारे लोग भाग खड़े हुए थे। इससे युवा अकबर के मन पर उसके सम्बन्ध में अनुकूल प्रभाव पड़ा, लेकिन 1560 ई. में अकबर पर बैरम खाँ के प्रभाव की समाप्ति के बाद ही मुगल राजपूत सम्बन्धों में और बेहतरी आई। नारनौल के जागीरदार मजनूखाँ ककशाल, जो हुमायूँ की मृत्यु के बाद हाजी खाँ की घेराबन्दी के कारण भारी मुसीबत में पड़ गया था, की तरफ से अपने भविष्य के लाभ पर नजर रखते हुए भारमल ने मध्यस्थता कर मुगलों को अनुगृहीत किया था[6]। भारमल ने किलो को शान्तिपूर्ण तरीके से खाली करवाने की व्यवस्था की और मजनूखाँ को दरबार में भेज दिया था। जब हाजी खाँ को मुगलों ने निकाल बाहर किया तो अकबर का बहनोई मिर्जा शरफुद्दीन मेवात का हाकिम बन गया था। वह भारमल और उसके बड़े भाई पूरनमल के सूजामल के बीच आंबेर के लिए संघर्ष का फायदा उठाना चाहता था। भारमल के समर्थकों की संख्या कम थी। अत: वह एक निश्चित् पेशकश के रूप में अपने पुत्र जगन्नाथ और अपने दो भतीजो जो राजसिहं और खंगार को बन्धक के रूप में देने पर सहमत हो गया। लेकिन मिर्जा शरफुद्दीन संतुष्ट नहीं हुआ। उसने भारमल को परिवार समेत नष्ट करने का संकल्प लिया। भारमल ने पहाड़ियों में शरण ली। इन्हीं परिस्थितियों में उसने अकबर के सामने समर्पण करने का निश्चय किया। उस समय अकबर मुईनुद्दीन चिश्ती की समाधि (दरगाह) के दर्शन हेतु आगरा से अजमेर जा रहा था। भारमल के मामले को चगताई खाँ ने अकबर के सामने रखा। यही अकबर की राजपूत नीति का प्रस्थान बिन्दू बना।

अकबर की नीति के दो पहलु रेखांकित किए जा सकते है। प्रथम : भारमल के समर्पण को स्वीकार करने के लिए आवश्यक है कि वह स्वयं आकर उसके समक्ष नतमस्तक होकर निष्ठा प्रकट करे। भारमल ने जब ऐसा कर लिया तो अकबर ने शरीफुद्दीन पर दबाव डाला कि वह बन्धनों को रिहा कर दे और शुजामल से अपना समर्थन वापिस ले ले। द्वितीय : अकबर ने अजमेर से वापसी के समय यात्रा में साँभर में राजा भारमल की पुत्री से शादी की[7]। किसी हद तक यह अकबर की उस नीति का विस्तार था। जिसके तहत उसकी अधीनता स्वीकार कर लेने वाले सरदारों के साथ वह व्यक्तिगत सम्बन्ध स्थापित करना चाहता था। भारमल की पुत्री से शादी के बाद लगभग छ: वर्षों तक अकबर के राजपूतों के बीच किसी विशेष सम्बन्ध का आभास नहीं मिलता, जहाँ राजपूत राजा व्यक्तिगत रूप से राजभवित प्रदर्शित करता, नतमस्तक होता और वफादारी की कसमें खाता था, उसे माफी दे दी जाती

* एसोसिएट प्रोफेसर (इतिहास) राजकीय स्नातकोत्तर नेहरू महाविद्यालय, झज्जर (हरियाणा) भारत

थी और उसके इलाकों का अधिकाँश भाड़ा उसे लौटा दिया जाता था। जैसे पना के राजा रामचन्द्र को शाही सेवा में शामिल किया गया और उसे जागीर प्रदान की गई।[8]

1562 से 1564 के बीच अकबर ने अनेक उद्धार नीतियां अपनाई, जैसे बागी तत्वों की औरतों और बच्चों को सैनिकों द्वारा गुलाम बनाए जाने पर रोक, करोड़ों की आय देने वाली तीर्थयात्रा करों की माफी और अन्ततः जजिया की सामाप्ति (1564)। इन उपायों में एक हद तक आम जनता में राज्य के प्रति सद्भावना फैली। अबुल फजल के अनुसार देश के कुछ भागों में विद्रोही तत्वों ने आज्ञाकारिता के कान में निष्ठा की बाली पहनाई और एक विश्वव्यापी साम्राज्य के निर्माण के साधन बन गए[9]। 1565 में अबकर ने आगरा में एक नए किले का निर्माण इस उद्देश्य से करवाया ताकि राजस्थान के मामलों पर ज्यादा निगरानी रखी जा सके। अकबर का यह भी मानना था कि प्रधान राजपूत शासक मेवाड़ के द्वारा मुगल प्रभुत्व की स्वीकृति दूसरे राजपूत शासकों को उसकी अधीनता स्वीकार कर लेने का मार्ग प्रशस्त करेगी। अकबर का विश्वासपात्र बन जाने के कारण मेवाड़ का राजा अहंकारी हो गया था और इसी कारण उसे अकबर का कोपभाजन बनना पड़ा।[10] फरवरी 1668 में अकबर ने आक्रमण करके चित्तौड़ के किले को जीत लिया और कत्लेआम के आदेश दिए जिसमें लगभग 30,000 लोग मारे गए और भारी संख्या में कैद कर लिए गए।[11] इसके बाद उसी प्रकार का पतहनामा लिखा गया जैसा फतहनामा बाबर ने राणा सांगा पर विजय प्राप्त करके जारी किया था।[12] अकबर ने इस विजय के लिए कृतज्ञता ज्ञापित करने हेतु अजमेंर में मुहनुद्दीन चिश्ती, जिनका वह भक्त था, की दरगाह तक पैदल यात्रा का निर्णय लेकर इसे धार्मिक रंग देने की भी कोशिश की। 1572 में जब अकबर ने गुजरात अभियान प्रारम्भ किया तो भारमल को अब्दुल्ला सुल्तानपुरी के साथ आगरा का प्रभारी नियुक्त करके वहाँ भेजा गया।[13]

अन्य राजपूत राजाओं के साथ भी सम्बन्ध और घनिष्ट बनाए गए। 1570 के अन्त तक अकबर नागौर में था, बीकानेर का राय कल्याणमल अपने पुत्र राय रायसिंह के साथ वहां उपस्थित हुआ और कल्याणमल के भाई काहन की बेटी का विवाह अकबर के साथ किया गया। जैसलमेर के रावल हरराम ने भी अधीनता स्वीकार कर ली और अपनी लड़की का विवाह अकबर के साथ किया। कल्याणमल और रायसिंह को शाही सेवा में लिया गया। रायसिंह को चार हजारी मनसबदार बनाया गया।[14] मारवाड़ के शासक चन्द्रसेन ने भी अकबर की अधीनता स्वीकार कर ली और अपनी लड़की का विवाह अकबर के साथ कर दिया। अकबर ने बीकोर के रामराय से भी सौहादर्यपूर्ण सम्बन्ध स्थापित किए।[15] अकबर के गुजरात अभियान के दौरान मानसिहं उसके हमजोली के रूप में उभरा। रायसिंह[16] को जोधपुर और सिरोही का प्रभारी नियुक्त किया गया ताकि मिर्जाओं के हमलों को रोका जा सके।[17] 1572 में महाराणा प्रताप शासक बना तो अकबर ने उसके पास अपने दूत भेजे लेकिन राणा प्रताप ने स्वयं अकबर के दरबार में उपस्थित न होकर 1573 में अपने पुत्र अमरसिहं को भेजा लेकिन अकबर चाहता था कि राणा प्रताप स्वयं उसके सामने नतमस्तक हो। ये तनाव इतना बढ़ गया कि 18 फरवरी 1576 को हल्दी घाटी की लड़ाई लड़ी गई। लड़ाई में राणा प्रताप को मुख्य रूप से उसके अधीन राज्यों से प्राप्त दस्तों से ही मदद मिली। ग्वालियर के शासक रामशाह और उसके बेटे ने भी इस युद्ध में राणा का साथ दिया।[18] कुछ समय संघर्ष करने के बाद राणा गोगुदा की पहाड़ियों में जाकर छिप गया।[19]

कछवाहा राजपूतों के साथ अकबर का सम्बन्ध 1584 में भगवंत दास की बेटी मानबाई के साथ सलीम के विवाह के साथ शुरू हुआ। विवाह के लिए डोला भेजने का तरीका नहीं अपनाया गया। बादशाह और बड़े-बड़े अमीर बारात की शक्ल में भगवतदास के घर सलीम के साथ गए और हिन्दु और मुस्लिम दोनों अनुष्ठान सम्पन्न किए गए।[20] जोधपुर के राजा का भाई मोटा राजा उदयसिंह जो लम्बे समय से शाही सेवा में था उसकी बेटी जगत गोसाइ की शादी सलीम से कर दी गई।[21] इसके अलावा सलीम ने बीकानेर के राजा राय कल्याण सिंह के पुत्र रायसिंह की पुत्री से भी विवाह किया।[22] साथ ही जेसलमेर के राजा रावल भीमसिहं की एक बेटी का सलीम[23] और राव मालदेव के पुत्र रायमल की बेटी का विवाह शहजादे दानियाल से हुआ।[24]

इस प्रकार 1585-86 तक अकबर की राजपूत नीति पूरी तरह परिपक्व हो चुकी थी और राजपूतों के साथ गठबन्धन दृढ़ और स्थायी हो गया था। राजपूत न सिर्फ सहयोगी और साथी बल्कि राज्य में साझेदार बन गए। मेवाड़ में राणा प्रताप के साथ अकबर का संघर्ष निश्चय ही जारी रहा। किन्तु उसका दूसरे राजपूतों के साथ सम्बन्धों पर कोई प्रभाव नहीं पड़ा। आगे चलकर राणा प्रताप के विरूद्ध कार्यवाही में भी ढील दे दी गई और दक्षिण मेवाड़ के चावड़ में जो उसकी शेष जिन्दगी के लिए राजधानी बनी तथा उससे छेड़छाड़ नहीं की गई।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. बाबरनामा, बेबरिज ii पेज 98
2. ओझा उदयपुर, पृष्ठ 373-74
3. बाबरनामा बेबरिज पृष्ठ 219
4. बाबरनाम पृष्ठ 548, ए.आर.खाँ
5. रामगढ़ शिलालेख मिति 5 सुदी फाल्गुन 1669 किक्रम संवत् शाके 1534/26 फरवरी 1612 में भरहमल का नाम दिया गया है जो भारामल का संस्कृत रूप है। बांकीदास का ख्यात जयपुर 1956, पृ. 123-24 तथा नैगसी ख्यात पृ. 290-301 में भारामल का ही नाम मिलता है।
6. अकबरनामा प. 20,454-56,66,131
7. अकबरनामा ii प. 155-56
8. अकबरनामा ii प. 193
9. अकबरनामा ii प. 159-60, 191, 203-4
10. अकबरनामा ii प. 302
11. अकबरनामा ii प. 303, 314-323
12. अकबरनामा ii प. 319-320
13. अकबरनामा ळळ प. 339, 373
14. आइन ए अकबरी, ब्लाकमैन, प. 384-386
15. राजपूत पालिटी, जी.डी. शर्मा, प. 15-16
16. अकबरनामा iii प. 31
17. अकबरनामा iii प. 51
18. अकबरनामा iii प. 173-176,
19. अकबरनामा iii प. 184, 194-96
20. तबकात अकबरी, ii बदायुनी, प. 341
21. तुजुक ए बाबरी, प. 5, 84
22. अकबरनामा, बदायुनी, प. 494
23. तुजुक ए बाबरी, प. 226-27
24. अकबरनामा iii प. 696

****

कोरकू जनजाति की उपलब्धियां

डॉ. मथुरा प्रसाद *

शोध सारांश – कोरकू समाज प्रारंभ से ही जागरूक है, प्रांरभ से ही चाहे वह मध्यकाल ही या फिर आजादी का संघर्ष इसमें इस समाज ने अपनी भूमिका का निर्वाह किया है तथा समाज को गौरान्वित किया है। एक ओर कोरकू समाज के नायक दुश्मनों से लडे तो दूसरी और ऐसे संत भी हुए जिन्होंने समाज को शिक्षित करने का भी कार्य किया। उन्होंने समाज की अंधविश्वासिता को तोडने के लिए अपनी प्रतिबद्धता से किया लेकिन उपलब्धियों के बावजूद समाज शिक्षित नहीं हो पाया। जिसके कारण आजादी के बाद अन्य समाजो की भाँति अपना विकास नही कर पाये इसके लिये यद्यपि अनेक कारण जिम्मेदार है लेकिन फिर भी विकास की दौड में वे काफी पीछे रह गयी। जब इनको बुनियादी विधायकों व अपने अधिकारो के बारे में पता चला तो यह समाज में पीछे नहीं रहा समाज में शिक्षा का स्तर अपेक्षा कृत कम है, लेकिन फिर भी अब इन्होने शिक्षा पाकर अनेक विद्याओं को प्राप्त किया है यह कोरकू समाज के लिए गौरव की बात है। इस प्रकार कोरूकू जनजाति को अनेक संवैधानिक अधिकार प्राप्त है। जिसका उद्देश्य इस समाज का सर्वांगीण विकास कर उसे मुख्यधारा में लाना है। अभी तक इस दिशा में अनेक प्रयास हए है। लेकिन कोरूकू समुदाय के विकास के लिए और प्रयास किया जाना होगा।

शब्द कुंजी – अनुसूचितजाति, अनुसूचितजनजाति, होशंगाबाद, कोरकू, बैतूल, विधायक, संरपंच, समाज, शिक्षा ।

प्रस्तावना – मध्यप्रदेश जनजतीय बहुल क्षेत्र है, यहां आदिकाल से ही विभिन्न जनजातियां सघन वनों में निवास करती है। म.प्र. के गठन के पूर्व ही इन जनजातियों के विकास की बुनियाद म.प्र. में रखी गयी। लेकिन इनके विकास का वास्तविक क्रम म.प्र. के गठन के बाद ही प्रारंभ हुआ। कोरकू जनजाति म.प्र. के प्रमुख रूप से होशंगाबाद संभाग में निवास करती हैं, चूँकि यह जनजाति आदिम जाति है। अत: स्वभाविक है कि अन्य जनजातियों की भॉति कोरकू जनजाति अत्यंत पिछड़ी जनजाति है। जिनका जीवन प्रकृति के इर्द गिर्द ही घूमता है।

वस्तुत: सरकारो ने अनुसूचित जातियों, अनुसूचित जनजातियों एवं अन्य पिछड़े वर्गो तक शासकीय योजनाओं के वास्तविक लाभ पहुॅचाने तथा योजनाओं के सही क्रियान्वयन को सुनिश्चित करने के लिए एक स्थाई आयोग का गठन अगस्त 1983 में किया गया है, इस आयोग का नाम म.प्र. अनुसूचित जाति अनुसूचित जनजातियों एवं पिछड़ा वर्ग आयोग है। यह आयोग इन वर्गो के हितों के संरक्षण के संबंध में सुधार के लिए शासन को सुझाव देता है। राष्ट्रीय स्तर पर अनुसुचित जाति, जनजाति आयोग का नाम बदलकर राष्ट्रीय अनुसूचित जाति और जनजाति आयोग कर दिया गया है। यह आयोग नीति संबधी महत्वपूर्ण मामलों और अनुसूचित जातियों और जनजातियों के विकास के स्तर के बारे में सलाहकार संस्था के रूप में कार्य कर रहा है। अनुसूचित जनजातियों के विकास के विभिन्न पहलुओं का अध्ययन करना ताकि इन वर्गो को समाज के हर क्षेत्र में मुख्य धारा में लाना है।

आयोग के प्रावधानों व मंशानुसार होशंगाबाद संभाग में निवास करने वाली कोरूकू जनजाति के जीवन स्तर में काफी हद तक परिर्वतन हुआ है।

कोरकू जनजाति का महत्व व उपलब्धियां – कोरकू जनजाति जनजाति म.प्र की प्रमुख जनजातियों में से एक है। प्रमुख रूप से होशंगाबाद, संभाग यथा बैतूल हरदा, में निवास करती हैं। इसके अलावा देवास, बुरहानपुर, छिन्दवाड़ा जिले में भी काफी संख्या में कोरकू रहते हैं। छिन्दवाड़ा एवं बैतूल जिले में अधिकांश पहाड़ी क्षेत्रों में निवास करने के कारण तथा उपजाऊ भूमि स्वामी नहीं होने तथा शिक्षा की कमी के कारण अत्यन्त ही पिछड़े हुए हैं। अधिकतर 99 प्रतिशत खेतिहर मजदूर/कृषक तथा 1 प्रतिशत से भी कम नौकरी में हैं। होशंगाबाद संभाग में ये जनजाति जंगलों में व उसके तटीय इलाकों में निवास करती है। अतएव इनके पास उपजाऊ कृषि भूमि की कमी है। जिसके कारण ये अधिकांश मोटे अनाज का उत्पादन करती है। दूसरी ओर शिक्षा की कमी तथा उच्च कृषि तकनीकि के अभाव के कारण इनमें कृषि प्राय: निम्न स्तर पर की जाती हैं। फलस्वरूप उत्पादन में कमी होती है। अत: इनका जीवन निर्वाह पूर्ण रूप से कृषि नहीं हो पाती जटिल कमी हद तक जंगलों पर निर्भर करती है। वनों से अनेक वस्तुओं का संग्रह कर अपना जीवन यापन करती है।

उत्तरदाताओं से प्राप्त जानकारी के अनुसार नियमित शिक्षा कार्यो के अलावा इन क्षेत्रों में प्रौढ़ शिक्षा कार्यक्रमों को भी हद तक चलाया गया। जिसका परिणाम यह हुआ कि प्रत्येक गांव में शिक्षा का माध्यम पहुंच गया है। उचित शिक्षा के प्रबधंन से कोरकू समाज की विकास की दिशा में आगे बढ़ा है। फलस्वरूप इन्होंने अनेक उपलब्धियों को भी प्राप्त किया है।

संभाग के कोरकु जनजाति ने अपने संवैधानिक अधिकारों का बखूबी इस्तेमाल कर राजनीतिक क्षेत्र में अनेक उपलब्धियों को प्राप्त किया है, संभाग की विधानसभाओं में संवैधानिक राजनीतिक अधिकार कोरकू जनजाति को प्राप्त है। अत: अनेक सदस्य विधायक बनकर विधानसभा में पहुंच रहे है। इन विधायकों के द्वारा भी समाज को विकास के पद पर ले जाने में सराहनीय कार्य किए जा रहे है, फलस्वरूप समाज विकास के पथ पर चल पडा है। कोरकू समाज ने विगत 50 वर्षो में बैतूल जिले के भैसदेही तथा घोडाडोंगरी एंव खण्डवा जिले के हरसूद एक मात्र विधानसभा से निम्न व्यक्ति विधायक चुने गये ।

क्रं. विधायक का नाम	जिला बैतूल विधान सभा क्षेत्र भैसादेही
01 स्व.दद्दू जी पटेल	01 बार विधायक

* प्राचार्य, शासकीय संजय गांधी स्मृति पी.जी. महाविद्यालय, गंजबासौदा (म.प्र.) भारत

02	स्व केशव सिंह चौहान	02 बार विधायक
03	स्व.कल्याण सिंह चौहान	02 बार विधायक
04	स्व.पतिराम लांडिलकर	01 बार विधायक
05	श्री सतीश कुमार चौहान	01 बार विधायक
06	श्री महेन्द्र सिंह चौहान	02 बार विधायक
07	श्री विश्राम सिंह मवासे	01 बार विधायक
जिला खण्डवा हरसूद क्षेत्र		
08	स्व.सुरजभल बालू	01 बार विधायक
09	श्री भोतिगभांग	01 बार विधायक
10	श्री आशाराम पटेल	01 बार विधायक
11	श्री हीरालाल पालवी	01 बार विधायक

उपरोक्त राजनीतिक उपलब्धियों के अलावा कोरकू समाज ने दूसरी उपलब्धियां आजादी के इन 68 सालों में प्राप्त की है। प्रारंभिक कोरकू समाज अशिक्षा के कारण अपने परम्परागत क्षेत्रों व गांवों में ही निवास करता था किन्तु जैसे जैसे इनमें शिक्षा का प्रसार प्रचार हुआ तो कोरकुओं ने शासन प्रशासन के महत्वपूर्ण पदों पर पहुँचकर राज्य व समाज की सेवा की है। साथ ही साथ अपने क्षेत्र के लिए प्रेरणा का स्त्रोत भी बने है जिसके करण आज हर कोरकु परिवार शिक्षा के महत्व को जानता व पहचानता है। कोरकू समाज के प्रमुख अधिकारी की सूची इस प्रकार है।

1. श्री श्याम लाल दापू आई.ए.एस. (सेवानिवृत्त)।
2. श्री दशरथ बढई (तहसीलदार)।
3. श्री मति विजय लक्ष्मी बारस्कर संयुक्त संचालक कोष एंव लेखा भोपाल।
4. इंजीनियर पी.सी.बारस्कर ,कार्यपालन यंत्री लो.नि.वि.सिहोर।
5. इंजीनियर बी.आर.दरशर्माकर कार्यपालन यंत्री लो.नि.वि.धमतरी।
6. इंजीनियर बलवीर सिंह धुर्वे कार्यपालन यंत्री जलसंसाधन विभाग दतिया।
7. इंजीनियर महेश्वर घोटे कार्यपालयंन यंत्री जलसंसाधन विभाग भोपाल।
8. इंजीनियर रामझाउ गायकवाड सहायक प्राध्यापक इंजीनियर कालेज उज्जैन।
9. इंजीनियर कुमर वर्मा सहायक यंत्री जलसंसाधन विभाग भोपाल।
10. इंजीनियर भज्जा सिंह सहायक यंत्री लोक स्वास्थय विभाग हरदा।
11. इंजीनियर आमसिंह बारस्कर उपयंत्री लो नि वि.इटारसी।
12. इंजीनियर शरद कुमार दादू उपयंत्री लो.नि.वि.भोपाल।
13. डॉ.संजय कुमार दादु एम.बी.बी.एस मेडीकल कॉलेज इन्दौर ।
14. डॉ.सुखदेव सिंह चौहान एम.बी.बी.एस मेडीकल कालेज भोपाल।
15. डॉ.प्रभाकर धाडसे बी.ए.एम.एस.भैसदेही ।
16. डॉ.राजू मौसिक एम.बी.बी.एस मेडिकल कालेज ग्वालियर।
17. श्री राम किशोर कास्दे संभागीय लेखा अधिकारी लो नि वि विदिशा।
18. श्री केशोराव अखंडे उपप्रबधंक सीहोर ग्रामीण बैंक शाजापुर ।
19. श्री कचनारे आयकर आयुक्त उज्जैन।
20. एल गौतम सहायक श्रम अधिकारी झाबुआ।
21. के आर सिवहे जिला शिक्षा अधिकारी बैतुल।
22. इंजी.बलदेव पान्से उपयंत्री लो.नि.वि.भैसदेही।
23. श्री जनक लाल मवासे कृषि अधिकारी बैतुल।
24. श्री बावू लाल काजले लो.नि.वि.झाबुआ

स्त्रोत – कोरकू समाज की पत्रिका ।

उपरोक्त जानकारी में तथ्यों से यह स्पष्ट हो जाता है कि कोरकू समाज अब विकास के पथ पर अग्रसर हो चुका है, इन्होंने कम ही सही लेकिन अपनी शक्षैणिक स्थिति को काफी हद तक आगे बढ़ाया है। अशिक्षा के फलस्वरूप दूरदराज एंव घने वनो में निवास करने बाला यह समाज अब शिक्षा के कारण आधुनिक एंव सभ्य समाज के संपर्क में आया है। सभ्य एंव शहरी समाज का इनके जीवन पर काफी प्रभाव पडा है व वे भी विकसित समाज की तरह ही यह समाज ,राज्य, देश में अपनी महत्वपूर्ण भागीदारी को सुनिश्चित करने हेतु आगे आया यह कोरकु समाज की महत्वपूर्ण उपलब्धि है। वर्तमान परिदृश्य की चर्चा की जाए तो कोरकू समाज की उपलब्धियों को कम नहीं आका जा सकता है। यह समाज प्रशासनिक पदो के सर्वोच्च स्तर पर भी पहुॅच चुका है। इन प्रशासनिक पदो पर पहुँचे व्यक्ति अपने समाज के लिए आदर्श के रूप में सामने आए जिसका परिणाम यह कि आज कोरकू ग्रामों में शिक्षा की स्थिति 50 वर्षो बाद काफी हद तक संतोषजनक पायी गयी। कोरकु समाज केवल प्रशासनिक स्तर तक ही सीमित नहीं रहा बल्कि इस समाज के लोग प्रदेश के विभिन्न महाविद्यालयों व चिकित्सीय महाविद्यालयों प्राध्यापक एंव सहायकप्राध्यापकों के पद की नियुक्त हैं । इससे यह प्रमाणित हो जाता है कि इस समाज को बुनियादी सुविधाए उपलब्ध हो जाए, तो यह समाज में भी अपने पिछड़ेपन को दूर कर सकता है।

कोरकू समाज ने आज इंजीनियरिंग व तकनीकी आगे में भी अनेक उपलब्धियों प्राप्त की है। उत्तरदाताओं द्वारा प्राप्त जानकारी के अनुसार प्राप्त कोरकू समान अपने बच्चों को बेहतर शिक्षा उपलब्ध करा रहा है। इन्होंने बताया कि समाज में आज कई छात्र इंजीनियरिग व तकनीकि शिक्षा महत्व कर रहे है। इस समाज के अनेक व्यक्तियों ने शिक्षा ग्रहण कर के इंजीनियरिंग व तकनीकि विभागों में अनेक उच्च पद प्राप्त किए है।

वस्तुत: कोरकू समाज ने राजनीतिक क्षेत्र में अनके उपलब्धियों को हासिल करते हुए अपने समाज से विधायकों को विधान सभा में होना, जैसा हमने उन विधायकों को उल्लेख किया है। जिन्होंने विधान सभा में अपने क्षेत्र का प्रतिनिधित्व किया है, तथा मूलभूत व वास्तविक समस्या को सदन में उठाया। इसके साथ ही अब यह समाज काफी जागरूक समाज अवस्था में पहुंच चुका है। समाज के कई लोगो ने स्ीानीय स्तर पर भी उपलब्धियों को प्राप्त किया है। इन्होंने स्थानीय क्षेत्र का प्रतिनिधित्व कर स्थानीय क्षेत्र की मूलभूत समस्याओं को समाप्त करने का प्रयास भी किया है।

वर्तमान परिदृश्य में कोरकू समाज के स्थानीय नेतृत्वकर्ता इस प्रकार है।

क्र.	ग्राम पंचायत का नाम	सरपंच का नाम
1	टोकरा	बदामी लाल, पन्ना लाल
2	बटलोर	रासमरी गजन कलमे
3	गवासेन	गीता धनसिंह काजले
4	कामठामालमुंशी	सोजीलाल
5	चिरापाटला फोटो	राम लाल चौहान
6	चुना हजूरी	मुन्ना लाल हरेसिंग
7	चुना गोसाई	स्कती सुक्कन
8	आलमपुर	पतिराम चेतराम
9	गेण्डुभंडई	झोबा कडकसिंह
10	गेधना	विमला कालू
11	असाडी	नदिया भान सिंह
12	बोरी	सना पति राजेन्द्र

13	जोगली	राधिका पति मुगीराम
14	बिधवा	मोहन लाल
15	निपारी	मुकेश गोरेलाल

जनपद पंचायत भैंसदेही जिला बैतूल में कुल 50 पंचायत में से 27 पंचायतों के सरपंच कोरकू समाज के लोग है। अत: ये कोरकू समाज की प्रमुख उपलब्धियां है। जिनके नाम इस प्रकार हैं–

क्र.	ग्राम पंचायत का नाम	सरपंच का नाम
1	चोपनी खुर्द	भूरी, डागस चौहान
2	माजरवानी	सफस, हिरा
3	कोडी	रामकरण, खेमाकासेदकर
4	दंडयानी	प्रमिला,बालाजी बारस्कर
5	कुकरन	बुधिया, खुशीलाल
6	खामला	सरवनी, साहेबलाल बारस्कर
7	बानुर	रामसु लाल
8	जमुलानी	रामकली , मन्नुभांवस्कर
9	थपोडा	फूलचन्द्र, हिराजी
10	पिपलना कला	राजेश, राजाराम
11	डेडवाकुण्ड	तुलसीराम, पन्नु
12	कोयलकुण्ड	उर्मिला, तुकाराम
13	धार	प्रतापसिंह, विक्रमसिंह
14	चिरकापर	धर्मराज महादेव
15	काटोल	मीरा, मुन्ना
16	कालडोंगरी	राजकुमार, हिरा जी
17	बरहापुर	विनय, मरोती
18	पारडी	सुनय, गुडडू मुसुमकर
19	बासनेर	भूता , तुकाराम
20	विजयग्राम	फुलवंती, सुरेश
21	बासनेरखुर्द	रामकली, कली
22	मालेगांव	कमला, मंसुराम
23	रावसी	संगीता, शिवलाल
24	गोरेगांव	सकरन दादू
25	बोथिया	दिनेश बाबू
26	टेमुसी	चेतराम ठाकुर , धाडसे
27	चिचोलीढरता	पार्वती, शिवराय भमस्कर

स्त्रोत – जनपद पंचायत से प्राप्त आकड़े चिचोली व भैंसदेही

उपरोक्त आंकडों से स्पष्ट है कि अब कोरकू समाज भी पीछे नहीं रहा। उन्होंने स्थानीय क्षेत्र में नेतृत्व की महत्वपूर्ण उपलब्धि को हासिल किया है। प्राय: पहले यह विकास केवल पुरूषों तक ही सीमित था, किन्तु अब महिलाएं भी पुरूषों के कंधे से कंधे मिलाकर आगे आ रही है। महिलाओं में भी कम ही सही लेकिन नेतृत्व के गुण विकसित हो रहे है। वस्तुत: वर्तमान में कोरकू समाज विकास के गति को प्राप्त करने हेतु आतुर है। यही कारण है कि अब इनमें भी अन्य सभ्य समाजों की भांति अपने समाज की संगठित करने और उन्हें विभिन्न संवैधानिक अधिकार दिलाने के लिए अनेक महासम्मेलनों का आयोजन किया जा रहा है। यह कोरकू समाज के लिए गौरव व महान उपलब्धि है।

इसी तरह का एक सम्मेलन सामाजिक समिति, दलाक, दमुआ जुन्नारदेव पंजी क्र. 13433 के तत्वाधान में मवासी कोरकू आदिवासी जनजागृति महासम्मेलन का आयोजन दिनांक 12.11.2014 को हुआ। इस महासम्मेलन में जो बातें रखी गयी थी, वह इस प्रकार हैं। समाज से जुडे व्यक्तियों को जनजागृत के माध्यम से धार्मिक, सामाजिक, आर्थिक एवं अंधविशसी रीतिरिवाजों, नियम पद्धति, विषम परिस्थितियों की समस्या का निराकरण कर समस्त त्रुटियों को दूर करने के उद्धेश्य से यह कार्यक्रम आयोजित किया गया था। इसके अलावा समाज को एक सूत्र में बांधकर शासन की मुख्यधारा में लाना था ताकि समाज आपने संवैधानिक अधिकारों को जानकर इसे प्राप्त कर अपने विकास को सुनिश्चित कर सके। कोरकू समाज में आजादी के बाद के वर्षो में शैक्षणिक, धार्मिक, सामाजिक, आर्थिक एवं सांस्कृतिक व अन्य कई उपलब्धियों भी प्राप्त की है। लेकिन आजादी के पूर्व भी इस समाज में ऐसे लोग हुए हैं। जिन्होंने समाज के कीर्तिमान को उंचाई पर पहंचाया है। जो इस पकार हैं–

1. **स्व. झलकारी बाई –** इन्होंने झांसी की रानी लक्ष्मीबाई के साथ कंधे से कंधे मिलाकर अंग्रजों के खिलाफ 1857 की क्रांति में लड़ाई लड़ी थी।
2. **स्व. गंजन सिंह शीलु –** राष्ट्रपिता महात्मागांधी के साथ सन 1942 में भारत छोड़ो अन्दोलन में भाग लिया था एवं अपने सम्मान का नाम रोशन किया।
3. **स्व. राजाभभूत सिंह रानगोपा –** पचमढ़ी जगीर के राजा मवासी कोरकू समाज के महान क्रांतकारी जिन्होंने मां गौरी के साथ युद्ध में भाग लिया व अपने सम्मान का नाम रोशन किया।
4. **स्व. बेच कोरकू –** वीर महान क्रांतिकारी थे जिनके नाम पर जिले का नाम बैतूल था। बूचा उर्फ बेचू क्रम बंजारी ढाल के निवासी थे। इन्होंने सन 1930 में सत्याग्रह अन्दोलन सभी आदिवासी समाज के साथ मिलकर अंग्रेजों से लड़ाई लड़ी थी।
5. **स्व श्री राभा कोरकू –** महान क्रांतिकारी भारत देश के मान सम्मान की रक्षा के लिये मुगलों से युद्ध करते हुए वीरगति को प्राप्त हुये।
6. **स्व श्री टन्टू कोरकू –** महान क्रांतिकारी जो अपनी भारत माता की रक्षा के लिए अंग्रेजों से लडते हुए अपने प्राणो का न्यौछावर कर दिया।
7. **स्व संत तुलाराम –** यह संत तुलाराम सतपुड़ा के वादी पचमढ़ी में अपना दिव्य संदेश समाज को प्रदान करते थे। अत: विदेशी धर्म संस्कृति के खिलाफ आंदोलन चालकर समाज के धरोहर को समाज में जनजागृति लाकर अपने मूल धर्म की रक्षा कि थी।
8. **स्व जाटव बाबा –** ये संत महाराष्ट्र के प्रसिद्ध भगत थे। इन्होंने पश्चिमी संस्कृति व धर्म के विरोध में आंदोलन चलाया।अपने समाज एंव जनजातियों में जागृत लाने में इनका विशेष योगदान था यही करण है कि आज ये महाराष्ट्र के अमरावती जिले में इन्हें पूजा जाता है।
9. **श्री जगराम कोरकू –** जगरम कोरकू बैतूल जिले के ग्राम बल्हौर के रहने वाले थे। इन्होंने 1857 की क्रांति में अंग्रेजों के विरूद्ध अंदोलन किया।
10. **स्व राना बलवंत सिह –** ये जिला छिदवाडा के ग्राम झीलकला के निवासी थे, मुगलों के विरूद्ध संघर्ष कर पचमढ़ी व चौरागढ़ की इन्होंने रक्षा की।
11. **स्व राजा कोमल सिंह राजदर्शया–** ये होशंगाबाद जिले के जागीरदार थे। इन्होंने अग्रेजों के खिलाफ संघर्ष कर अपनी जागीर की रक्षा की।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. व्यक्तिगत सर्वे एवं सवेक्षण।

श्रीमद्भगवतगीता में कर्म रहस्य का विवेचन

डॉ. अनामिका प्रजापति *

शोध सारांश – गीता में संपूर्ण वेदों का सार ग्रथित है। जो व्यक्ति इस सार को निष्ठा एवं समर्पण से आत्मसात् कर लेता है, उसके लिए गीता में निहित कर्मों का रहस्य अच्छी तरह से खुल जाता है। प्रत्येक व्यक्ति के शरीर निर्वहन के लिये नैसर्गिक कर्म करना आवश्यक है। इनको किए बिना जीवन धारण नहीं कर सकता है, उनका परित्याग संभव नहीं है। क्योंकि यह संपूर्ण संसार कर्म के बंधन में बंधा हुआ है। प्रत्येक व्यक्ति को अपने कर्म पर अधिकार है, किन्तु उसे फल से अनासक्त होकर कर्म करना चाहिए। ऐसे निष्काम कर्म नि:सन्देह मुक्ति पथ की ओर ले जाने वाले होते हैं। किन्तु जो व्यक्ति शास्त्र विहितानुसार कर्म नहीं करता है और कर्म करने में लगा रहता है उसे उनका फल नहीं मिलता है, जिसे 'विकर्म' कहा गया है तथा जो व्यक्ति कर्म करता ही नहीं है और फल की आकांक्षा रखता है, उसे 'अकर्म' कहा गया है इस अकर्मव्यता की गीता में निन्दा की गई है। गीता में निष्काम कर्म की उपदेश दिया गया है। कर्म में त्याग की भावना होना चाहिए यही गीता का उपदेश है। जो कर्म करे वे ईश्वर भवनाभवित होना चाहिए। भगवान को समर्पित करने वाला कर्म मुक्तिप्रद होता है। अनासक्त कर्म से पुरूष ब्रह्म तत्व को प्राप्त कर लेता है। अतएव वर्तमान में गीता के कर्मरहस्य को समझकर तदानुसार कर्म करें और ब्रह्म तत्व की प्राप्ति का प्रयास करे।

शब्द कुंजी – नैसर्गिक कर्म, निष्काम कर्म, सकाम भाव, इन्द्रिय तृप्ति, विकर्म, कर्मयोग।

प्रस्तावना – गीता एक परम रहस्यमय ग्रंथ है, इसके प्रत्येक पद में रहस्य भरा हुआ है। इसका उद्घाटन चिंतन, मनन और गंभीरता पूर्वक अध्ययन से होता है। इसका भली-भांति ज्ञान हो जाने से सभी शास्त्रों का तात्विक ज्ञान हो जाता है। इसलिए महाभारत में कहा गया है।1 'सर्वशास्त्रमयी गीता'।

व्यक्ति को तात्त्विक ज्ञान हो जाने पर उसका मुक्ति का मार्ग प्रशस्त हो जाता है। गीता के 18 अध्यायों में 700 श्लोक हैं। जो ज्ञान कर्म और भक्ति की त्रिवेणी है। ऐसी अगाध रहस्यमयी गीता का आशय एवं उसके यथार्थ भाव को समझना व्यक्ति के लिए कठिन है। जो व्यक्ति निष्ठा एवं समर्पण से उसे आत्मसात् कर लेता है, उसके लिए गीता में निहित कर्मों का रहस्य अच्छी तरह से खुल जाता है। क्योंकि गीता में ज्ञान और कर्म शब्दों का प्रयोग जिन-जिन अर्थों में हुआ है, वह विशेष रहस्यमय है। गीता में सकाम भाव की अपेक्षा निष्काम भाव से शास्त्र निहित नैसर्गिक कर्म करने की आवश्यकता बतलाई है। आत्यान्तिक निवृत्ति और परमानंद स्वरूप परमात्मा की प्राप्ति के लिए कर्म रहस्य को जानना एवं समझना परमावश्यक है।

प्रत्येक व्यक्ति के शरीर निर्वहन के लिए नैसर्गिक कर्म करना आवश्यक है। उनको किए बिना जीवन धारण नहीं कर सकता है। उनका परित्याग संभव नहीं है। क्योंकि यह संपूर्ण संसार कर्म के बंधन में बंधा हुआ है।

'लोकोऽयं कर्मबंधन:' – प्रत्येक प्राणी जन्म-जन्मांतर में किए गये शुभाशुभ कर्मों के संस्कारों से बंधा हुआ है। सारे जीव भौतिक जगत् में इन्द्रिय तृप्ति के लिए कर्म करते रहते हैं और माया के वशीभूत होकर अनेकानेक जन्मों तक इन्द्रिय तृप्ति जन्य मोहपाश में बंधे रहते हैं, किन्तु जो व्यक्ति भगवान की तुष्टि के लिए कर्म करता है, वह दिव्य आनन्द की प्राप्ति करता है और पूर्ण मुक्ति को प्राप्त कर लेता है। शास्त्र विहित उत्तम क्रिया का नाम कर्म तथा समभाव का नाम योग है।[2]

अत: ममता, आसक्ति, काम, क्रोध और लोभ, मोह आदि से रहित होकर जो समतापूर्वक अपने वर्ण आश्रम स्वभाव और परिस्थिति के अनुसार शास्त्र विहित कर्मों का आचरण करता है, इसे ही कर्मयोग कहते है। जो व्यक्ति सकामभाव से कर्म करता है, उससे उसकी मुक्ति नहीं होती है और जो व्यक्ति शास्त्र विहित कर्म समभाव से निष्काम कर्म करता है,उसका कल्याण सुनिश्चित है। भौतिक कर्म और उनके फल शरीर के साथ ही समाप्त हो जाते हैं, किन्तु जब मनुष्य भगवान की इच्छा पर पूर्णतया आश्रित होकर कर्म करता है, तो वह दिव्य अवस्था को प्राप्त कर लेता है। जो व्यक्ति वेदविहित काम्य कर्मों को लोक या परलोक के भोगों की प्राप्ति के लिए करते हैं और इस रहस्य को नहीं जानते हैं कि समस्त वेदों का वास्तविक अभिप्राय परमात्मा के स्वरूप का प्रतिपदन करना है और वेदों के द्वारा जानने योग्य एक परमेश्वर ही है।[3] ऐसे लोग वेदोक्त सकाम कर्म करते हुए उसके फल में आसक्त होते हैं और मुक्ति प्राप्त नहीं कर पाते है। जो व्यक्ति सत्यासत्य वस्तु का विवेचन करते हुए अपने कर्तव्यों का निश्चय करते हैं और इन्द्रियजनित भोगों में नहीं फंसते हैं, वे भगवत्प्राप्ति को कर लेते हैं।

प्रत्येक व्यक्ति को अपने कर्म पर अधिकार है, किन्तु उसे फल से अनासक्त होकर कर्म करना चाहिए। ऐसे निष्काम कर्म नि:सन्देह मुक्तिपथ की ओर ले जाने वाले होते हैं। गीता में कर्म 'कर्म' और 'अकर्म' की बात कही गयी है[4] तदनुसार व्यक्ति के जो स्वाभविक कर्म है उनका फल परित्यागपूर्वक निष्काम भाव से शास्त्र विहितानुसार करना चाहिए जिसे कर्म (नित्यकर्म) कहा गया है। किन्तु जो व्यक्ति शास्त्र विहितानुसार कर्म नहीं करता है और कर्म करने में लगा रहता है, उसे उनका फल नहीं मिलता है, जिसे विकर्म कहा गया है तथा जो व्यक्ति कर्म करता ही नहीं है और फल की आकांक्षा रखता है उसे अकर्म कहा गया है इस अकर्मव्यता की गीता में निन्दा की गई है।[5]

गीता में निष्काम कर्म का उपदेश दिया गया है। कर्म में त्याग की भावना होना चाहिए यही गीता का उपदेश है। जो कर्म करे वे ईष्वर भवनाभवित होना चाहिए। भगवान को समर्पित करने वाला कर्म मुक्तिप्रद होता है। अनासक्त कर्म से पुरूष ब्रह्म तत्व को प्राप्त कर लेता है।[6]

* सहायक प्राध्यापक (समाजशास्त्र) शासकीय सुभद्रा शर्मा कन्या महाविद्यालय, गंजबासौदा, जिला – विदिशा (म.प्र.) भारत

तस्मादसक्त: सततं कार्यं कर्म समाचर।
असक्तो ह्याचरन्कर्म परमाप्नोति पुरूष:।।

कोई भी मुनष्य किसी की काल में क्षणमात्र भी बिना कर्म किये नहीं रह सकता है।[7]

न हि कष्चित्क्षणमपि जातु तिष्ठत्यकर्मकृत्।

ऐसी स्थिति में उसे इन्द्रियों को वश में करके आसक्ति बिना समभाव पूर्वक कर्मयोग का आचरण करना है। कर्म न करने की अपेक्षा निष्काम भाव से कर्म करना श्रेष्ठ माना गया है।[8] कर्म न करने से व्यक्ति अधोगति को प्राप्त हो जाता है। आसक्ति रहित कर्मों द्वारा व्यक्ति का अन्त: करण शुद्ध हो जाता है।[9] तत्वज्ञानियों को ही परमात्मा की प्राप्ति होती है। जो व्यक्ति श्रेष्ठ कर्म करता है, वह महापुरूष कहलाता है। दूसरे मनुष्य उन श्रेष्ठ महापुरूषों का अनुसरण करते हैं, इसलिए श्रेष्ठ पुरूष को निष्काम भाव से कर्म करते रहना चाहिए। अत: विद्धज्जनों को चाहिए कि मनुष्यों को उचित पथ पर ले जाने के लिए अनासक्त भाव से कर्म करें। भक्ति भाव मय कर्म तथा सकाम कर्म के भेद को जानकर परम सत्य को जानने वाला इन्द्रिय तृप्ति के कर्म नहीं करता है। परमात्मा ने प्रत्येक जीव को जन्म मृत्यु रूप संसार बन्धन से मुक्त होने के लिए और दूसरों को हित करने के लिए मन, बुद्धि तथा इन्द्रिय सहित कर्म करने का अधिकार दिया है। अत: जो व्यक्ति इस अधिकार का सदुपयोग करता है, वह कर्मबंधन से हटकर परमपद को प्राप्त कर लेता है और जो दुर प्रयोग करता है, वह दण्ड का भागीदार होता है और जन्म मृत्यु के बन्धन में बंधकर सूकर-कूकारादि की योनियों को प्राप्त करता है। शास्त्र विहित कर्मों को नहीं करना भी न्याय संगत नहीं होता है क्योंकि शास्त्रविहित कर्मों का अनुष्ठान बिना किये मनुष्य कर्मयोग की सिद्धि को नही पा सकता है।[10] जो व्यक्ति समबुद्धि युक्त होता है, वह पाप एवं पुण्य कर्मों को त्यागकर नि:स्वार्थ भाव से लोकहितार्थ कर्म करता है, वह कर्मबन्धन से छूट जाता है।[11]अर्थात् कर्मबन्धन से छूटने का उपाय समतारूप योग है। जिसे कर्मों में कुशलता माना गया है।[12] योग: कर्मसु कौशलम्। बुद्धिमान व्यक्ति समतारूप योग के प्रभाव से जन्म जन्मान्तर में किए गए कर्मों के फल को त्यागकर मुक्त हो जाता है। क्योंकि सांसारिक पदार्थों में अतिरिक्त ही पुनर्जन्म का हेतु होता है।[13] जो व्यक्ति ईर्ष्या रहित होकर श्रद्धापूर्वक अपना कर्म करता है, वह ज्ञान प्राप्त कर लेता है और ज्ञान प्राप्त हो जाने पर सकाम कर्मों के बन्धन से मुक्त हो जाता है। राग-द्वेष आत्म साक्षात्कार के मार्ग में अवरोधक होते हैं। जो व्यक्ति न तो कर्मफल से घृणा करता है और न कर्मफल की इच्छा करता है ऐसा संन्यासी द्वन्द्व रहित होकर भवबन्धन को पार कर मुक्त हो जाता है।[14] जो व्यक्ति भक्तिभाव से कर्म करते हुए मन इन्द्रियादि को वश में कर लेता है, वह बन्धनों में नही बंधता है तथा आसक्ति रहित होकर इन्द्रियादि से शुद्धि के लिए कर्म करता है। वह शुद्धि बुद्धि युक्त कर्मफल भगवान को समर्पित होकर देता है तब भगवान उसकी इच्छा का फल तत्काल देकर मुक्त कर देता है- आपन सोची होत नहि: प्रभु सोची तत्काल। जो व्यक्ति कर्मठ है और अन्त:करण में सुखानुभूति करता है, जो दैतभाव से रहित समस्त जीवों के कल्याण में निरत: पापमुक्त होकर आत्म संयमी योगी होता है, वह पुरूष ब्रह्मा को प्राप्त करता है।[15] इसलिए जो पुरूष कर्मफल के प्रति अनासक्त और शास्त्र विहित कर्मों के पालन में निरत है, वही वास्तविक योगी। योगी से तात्पर्य पर ब्रह्मा से युक्त जुड़ने होने वाले व्यक्ति से है। अत: जीवात्मा अपनी स्वाभाविक स्थिति को जानकर तदनुसार कर्म करे। जो कर्म ब्रह्म प्राप्ति का मार्ग है, जो व्यक्ति इन्द्रिय तृप्ति के लिए विषयों के प्रति जितना आकर्षित होता है, वह उतना ही सांसारिक बन्धनों में फंसता जाता है। इसलिए सर्वोत्कृष्ट मार्ग यही है कि कर्म करते हुए निर्विषिय होकर मन को ब्रह्म प्राप्ति में लगाए। कहा भी गया है- [16]

'मन एवं मनुष्याणां कारणं बन्धमोक्षयो:।
बन्धाय विषयासंगो, मुक्त्यै निर्विषयं मन:।।'

भगवान को समर्पित कर्मफल का ज्ञान जब व्यक्ति को हो जाता है, तब ब्रह्म के प्रति आत्म समर्पण करने पर वह पूर्ण ज्ञान प्राप्त कर लेता है और अन्त में मुझे प्राप्त कर लेता है।[17]

'बहूनां जन्मनामन्ते ज्ञानवान्मां प्रपद्यते।'

ब्रह्मा अविनाशी अक्षर तथा नित्य है और इसका विधान कभी नहीं बदलता है। भौतिक प्रकृति निरन्तर परिवर्तित होती रहती है। सामान्यत: भौतिक शरीर छ: अवस्थाओं से निकलता है- 1.उत्पन्न होना 2. बढ़ना 3. कुछ काल तक रहना 4. गौण पदार्थ उत्पन्न करना 5. क्षीण होना और 6. अन्त में विलुप्त हो जाना। इसलिए व्यक्ति को जीवन रहते हुए विलुप्त होने से पहले निष्काम भाव से समत्वरूप में सुख-दु:ख जय-पराजय, हानि' लाभ आदि में समान भाव रखते हुए स्मरण करते हुए जो व्यक्ति अपना शरीर त्याग करता है, उसे परम ब्रह्म की प्राप्ति हो जाती है और सांसारिक चक्र से मुक्ति की मोक्ष मिल जाती है।[18]

'अन्तकाले च मामेव स्मरन्मुक्त्वा कलेवरम्।
य: प्रयाति स मद्भावं याति नास्त्यत्र संशय:।।'

अतएवं वर्तमान में गीता के कर्मरहस्य को समझकर तदानुसार कर्म करें और ब्रह्मत्व की प्राप्ति का प्रयास करे। गीता के कर्म रहस्य का ज्ञान वर्तमान में न केवल ग्राहय है बल्कि विश्वशान्ति और आत्मसुखानुभूति के लिए आवश्यक भी है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. महाभारत भीष्मपर्व -43/2
2. गीता -2/48
3. गीता -15/15
4. गीता -4/17
5. गीता -4/19-30
6. गीता -3/19
7. गीता -3/5
8. गीता -14/18
9. गीता -4/38
10. गीता -3/21
11. गीता -4/23
12. गीता -2/50
13. गीता -13/21
14. गीता -5/3
15. गीता -5/20-25
16. अमृतबिन्दु उपनिषद् - 2
17. गीता- 7/19
18. गीता 8/5

****

संचार माध्यम के बदलते परिदृश्य में मीडिया का महत्व

डॉ. रश्मि दुबे *

प्रस्तावना – संचार किसी भी समाज की आधार भूत आवश्यकता है। ये भी कहा जा सकता है कि संचार समाज के निर्माण की पहली शर्त है। पुराने समय से अलग–अलग समाजों ने संचार के लिए विशिष्ट माध्यमों को विकसित किया है। आदिम समाजो मे सामूहिक नृत्य–गायन और भोजन करना संचार का सशक्त माध्यम होते है। ये आज भी आदिवासी समाजों में ये परंपरा जीवित है तो इसके पीछे मजबूत आधार भी है। एक साथ नाचने–गाने और भोजन करने से आदिवासी समाज के बीच–बीच न केवल मध्य संवाद स्थापित होता है। बल्कि पूरा आयोजन अपने सदस्यों के बीच में संदेश भी छोड़ता है किये आपस में गहरे जुड़े हुए है। भले ही आयोजन और तरीके भिन्न हो लेकिन इससे साबित यही होता है कि संचार मनुष्य की पहली जरूरत है।

आदिमानव अपने सहयोगियों के साथ शिकार के दौरान संकेतो और ध्वनियो के रूप में संचार करता था। लेकिन ये संचार बहुत व्यवस्थित नही था। कुछ ध्वनियों और इशारों के सामूहिक रूप में विशेष अर्थ थे। जब मानव झुंड़ो मे रहने की बजाय कबीलो में व्यवस्थित जीवन व्यतीत करने लगा तो उसका संचार भी पहले से व्यावस्थित हुआ। सभ्यता के विकास से पहले ही मानव में संचार करना तस्वीरों और प्रतीकों से सीख लिया था। लेकिन व्यवस्थित भाषा का जन्म मनुष्य की 7000 ईसा पूर्व में हुई। यही समय है तो जब सभ्यता का जन्म हुआ। इसके पश्चात मध्य युगीन समाज में संचार के साधन लोक संस्कृति नाटक, गीत, नृत्य इत्यादि विकसित हुए ये सब एक तरफ सामाजिक रीति रिवाजों के रूप में समाज में विधमान रहे। वही ये मनोरंजन और संचार के साधन भी बने रहे। इसके अलावा सास्कृतिक गतिविधियॉ धर्म परंपराएँ, मनोरंजन सामाजिक मेलजोल इत्यादि। शामिल है। यह बहुत ही लचीला है। परंपरागत संचार माध्यमो का उपयोग कही भी–कभी भी किसी भी परिस्थिति में किया जा सकता है। जैसे कठपुतली कला और लोक संगीत कभी भी कम तैयारी में भी आसानी से आयोजित किया जा सकता है। परंपरागत संचार की सबसे बड़ी कमजोरी इसका परंपराओं में जकड़ा होना है। परंपराएँ नूतन परिवर्तनों को निरूत्साहित करती है। जिस कारण परंपरागत माध्यम बदलते समय के मुताबिक अपनी प्रासंगिकता बरकरार नहीं रख पाते।

संचार माध्यम, अंग्रेजी के 'मीडिया' (मीडियम का बहुवचन) से बना है। जिसका अभिप्राय होता है दो बिन्दुओं को जोड़ने वाला। संचार माध्यम ही संप्रेषक और श्रोता को परस्पर जोड़ते है। 'हेराल्ड लॉसवेल' के अनुसार संचार माध्यम के मुख्य कार्य सूचना संग्रह एवं प्रसार सूचना विश्लेषण सामाजिक मूल्य एवं ज्ञान का संप्रेषण तथा लोगों का मनोरंजन करना है। संचार माध्यम का प्रभाव समाज मे अनादिकाल से ही रहा है। परंपरागत एवं आधुनिक संचार माध्यम समाज की विकास प्रक्रिया से ही जुडे हुए है। संचार माध्यम का श्रोता अथवा लक्ष्य समूह बिखरा होता है। इसके संदेश भी अस्थिर स्वाभव वाले होते है। फिर संचार माध्यम ही संचार प्रक्रिया को अंजाम तक पहुँचाते है। जिस तरह से प्राणवायु के बिना मनुष्य जिंदा नहीं रह सकता ठीक उसी तरह संचार के बिना जीवन संभव नहीं है। मनुष्य कुछ सोचता है। वह भी संचार हैं। आदमी भोजन करना तभी पसंद करता है। जब उसे भूख की अनुभूति हैं। भूख की अनुभूति भी संचार है। दरअसल मनुष्य रात को सपना देखता है या कुछ अपने मे विचार करता है। उस दौरान वह व्यक्ति खुद से संचार करता है। संचार का सामान्य अर्थ किसी सूचना या संदेश को एक व्यक्ति से दूसरे व्यक्ति तक पहुँचाना या सम्प्रेषित करना है। शाब्दिक अर्थ की बात करे तो संचार अंग्रेजी के (Communication) शब्द का हिन्दी अनुवाद है।

संचार एक ऐसी कला है। जिससे एक व्यक्ति दूसरे व्यक्ति के विचारो, भावनाओं में सहभागी होता है। संचार को कई विशेषज्ञों ने परिभाषित करने की कोशिश की है, लेकिन किसी एक परिभाषा पर सर्व सम्मति नही बन सकी है। इस प्रकार जब दो या दो अधिक व्यक्ति आपस में कुछ सार्थक चिन्हों संकेतों या प्रतीकों के माध्यम से विचारों या भावनाओं का आदान प्रदान करते है तो उसे संचार कहते है। ऑक्सफोर्ड डिक्शनरी में विचारों, जानकारी वगैरह का विनिमय किसी और तक पहुचाना या बांटना चाहे वह लिखित, मौखिक या सांकेतिक को संचार कहा जाता है। संचार मानव की प्रगति के लिए अति महत्वपूर्ण है, यह विश्व के एक देश में बेठे लोगो को दूसरे देशों से जोड़ता है। आज मानव सभ्यता प्रगति को दूसरे देशो से जोड़ता है। इसका प्रमुख श्रेय संचार के आधुनिक साधनो को जाता है। तार की खोज के साथ ही संचार के क्षेत्र में क्रांति का प्रारंभ हो गया। इसके द्वारा विभिन्न स्थानों में एक जगह से दूसरी जगह 'इलेक्ट्रॉनिक' यंत्रो की सहायता से तार के माध्यम से संकेत प्रेषित किए जाने लगे। इसके पश्चात दूरभाष के अविष्कार ने तो संचार जगत मे हलचल ही मचा दी। इसके तहत अपने घर में बैठा व्यक्ति लाखों मील दूर अपने नातें–रिश्तेदार परिवार, मित्र बन्धुओं से बात कर सकता है। इसके साथ ही संचार को और अधिक सुचारू एवं सक्षम बनाने हेतु अनुसंधान प्रारंभ कर दिए गए। आज के युग मे संचार के क्षेत्र में आश्चर्य जनक सफलताएँ हासिल की है। जब से (Computer) का आविष्कार हुआ है। उसके बाद इस क्षेत्र में प्रतिदिन नए आयाम स्थापित हो रहे है। संचार जगत में ई–मेल की लोकप्रियता धीरे–धीरे बढ़ती जा रही है। ई–मेल या इससे होने वाले लाभ बहु आयामी है। इसके माध्यम (E-mail) के माध्यम से दुनिया के किसी भी जगह पर बैठे व्यक्ति से हम संपर्क स्थापित कर सकते है। और इसमे एक महत्वपूर्ण बात यह है कि दूसरा खर्च बहुत कम है। फोन द्वारा स्थानीय बात–चीन में जितना हम खर्च देते है। उतने ही खर्च में

* प्राध्यापक (समाजशास्त्र) शासकीय स्वशासी कन्या स्नातकोतर उत्कृष्टता महाविद्यालय, सागर (म.प्र.) भारत

विदेशों में बैठे व्यक्ति को हम ई–मेल से संदेश भेज सकते है। फेक्स मशीन के द्वारा कागज पर लिखे संदेशों को दूरभाष लाइनों की सहायता से दूर बैठे व्यक्ति को केवल कुछ ही सैकेन्ड़ में भेजा जा सकता है। ई–मेल को फैक्स का ही उत्तम रूप माना जा सकता है। संचार के क्षेत्र में वीडियो कान्फ्रेन्सिंग भी वैज्ञानिको की एक अनोखी और अत्याधिक अदभुत अपहार है। इसके माध्यम से दो या दो से अधिक व्यक्ति एक दूसरे से मीलो दूर रहकर भी आपस मे बातचीत कर सकते है तथा साथ ही परदे पर एक दूसरे को देख भी सकते है।

मीडिया एक सशक्त माध्यम है, जिसके द्वारा देश विदेश की जानकारी डाटा को एक साथ लाखो लोगों तक पहुँचाया जाता है। पहले लोग अपनी बात दूसरों तक पहुचाने के लिए नाच, गाने, नाटक का प्रयोग करते थे। जिससे वे बात दूसरों तक पहुँचा सके। समय के साथ इसमें बदलाव आया और इसकी जगह प्रिंट मीडिया फिर मॉस मीडिया और अब सोशल मीडिया के द्वारा लोग अपनी बात सबके सामने रखते है। मीडिया संचार की एक बहुत आसान और मजबूत तरीका है। आजकल मीडिया के सबसे आसान तरीके है। रेडियो, टीवी, न्यूजपेपर एवं इन्टरनेट। मीडिया का हमारी सोसाइटी में एक अहम स्थान है।

मीडिया ने जब पहली बार काम शुरू किया तो पहले प्रिंट मीडिया आया। समाचार पत्रों के द्वारा लोग अपनी बात या देश विदेश की जरूरी जानकारी उसमें छापने लगे। इसके द्वारा एक साथ बहुत से लोगों तक, बहुत कम समय में जानकारी जाने लगी। इसके बाद आया रेडियो, जिसके द्वारा हम गाने, विविध जानकारी तथा समाचार को सुन सकते थे। फिर टेलीविजन के माध्यम से समाचार का प्रसारण होने लगा। इसमें किसी भी कार्यक्रम को सुनने के साथ–साथ हम देख भी सकते थे।

इस प्रकार मीडिया के दो रूप सामने आए पहला मुद्रित माध्यम (पत्र पत्रिकायें) और दूसरा इलेक्ट्रानिक माध्यम (रेडियो, टेलीविजन आदि) दोनों ही माध्यमों से संचार को तेज और नई गति प्राप्त हुई है और निरन्तर जारी है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. मधुसूदन त्रिपाटी – मीडिया की आधुनिक चुनौतियां, ओमेगा पब्लिशिंग, नई दिल्ली2013
2. पॉल मार्टिन – सोशल मीडिया, ग्लोबल विजन पब्लिशिंग हाउस नई दिल्ली,2013
3. त्रिभुवन राय – संचार माध्यम चुनौतियां और दायित्व, यूनिवर्सिटी बुक हाउस, जयपूर, 2012
4. रमेश जैन – प्रिंट मीडिया, यूनिवर्सिटी बुक हाउस, जयपुर, 2011
5. के. पाठक – नया मीडिया नये आयाम, यूनिवर्सिटी पब्लिकेशन नई दिल्ली,2014

****

हिंसक घटनाओं का शिकार पुलिस प्रशासन – कारण तथा समाधान

डॉ. भंवरलाल चौधरी *

प्रस्तावना – एक संस्था के रूप में पुलिस की उत्पति और विकास मुख्य रूप से राज्य के प्रभुत्व वर्गो की सुरक्षा से सम्बद्ध है। राष्ट्र के चरित्र में बदलाव आने से पुलिस व्यवस्था के चरित्र में भी बदलाव आते है। 18 वीं–19 वीं सदी के दौर में जब आधुनिक राष्ट्र राज्य अस्तित्व में आ रहे थे। उस समय पुलिस व्यवस्था का मुख्य काम इस प्रक्रिया के मार्ग में आ रही बाधाओं को दूर करना था। एक राष्ट्र में एक समान पुलिस संगठन राष्ट्रीयता की भावना को प्रबल और सशक्त बनाने में महत्वपुर्ण भूमिका निभाता है। भारत में आधुनिक संस्था के रूप में पुलिस 1861 के पुलिस अधिनियम के आधार पर गठित की गयी।

स्वाभाविक ही था कि 1861 में ब्रिटिश हुकुमत ने भारतीय समाज की आवश्यकताओं और आंतरिक परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए एक पुलिस अधिनियम बनाया और उसके आधार पर ऐसे संगठन की नींव रखी जो काफी हद तक इतिहास में पहली बार भारत जैसे विशाल भू–भाग क्षेत्र को एक समान कानून व्यवस्था लागू करने वाली मशीनरी बन सके। देश मे हत्या, डकैती, लूट, बलात्कार तथा महिलाओं से छेड़–छाड़ जैसे आधी अपराधों की संख्या में निरतंर बढ़ोतरी एवं पुलिस द्वारा इन पर अकुंश रखने में असफलता, पुलिस का रौबदार व्यवहार तथा जनता में पुलिस व्यवस्था के प्रति अविश्वास एवं आक्रोश के परिणाम स्वरूप पुलिस प्रशासन प्रभावित हो रहा है और जब जनता का यह आक्रोश उग्र रूप धारण कर लेता है, तो पुलिस हिंसक घटनाओं का शिकार होती है।

उत्तर–प्रदेश के कुण्ड़ा क्षेत्र में पुलिस उप अधीक्षक की हत्या, दिल्ली में पुलिस निरीक्षक की हत्या, मध्य–प्रदेश में पुलिस अधीक्षक पर ट्रेक्टर ट्रोली चढ़ाकर हत्या, पंजाब में सहायक पुलिस निरीक्षक की हत्या तथा राजस्थान के सुखाल, गोपालगढ़ में पुलिस निरीक्षक को जिन्दा जलाया गया। इस तरह की हिंसक घटनाएँ प्रतिदिन अखबारों और मीड़िया की सुर्खियों में बन रहती है। ऐसे में हमारे सम्मुख प्रश्न यह उठता है, कि ऐसी कौनसी परिस्थितियॉ है हमारे समाज में, जिसके फलस्वरूप ये घटनाएँ दिन–प्रतिदिन घटित होती रहती है तथा सुरक्षा की जिम्मेदारी जिन पर है वे ही आज असहाय और असुरक्षित महसूस कर रहे है, ऐसे में आम जन की सुरक्षा का क्या होगा। प्रमुखतया: हमें यह देखना होगा की इन घटनाओं के घटित होने के पीछे कारण क्या है?

- **कानून का भय नहीं –** आज अपराधियों को कानून का भय नहीं रहा है, अधिकांश व्यक्ति मानते है कि यदि वे अपराध कर लेगें तो भी उनका कोई कुछ नहीं बिगड़ेगा क्योंकि जिस समय घटना घटित हुई उसके बहुत समय बाद में उनके विरूद्ध न्यायालय में वाद प्रस्तुत किया जावेगा। तब तक वह गवाहों को प्रभावित कर लेगें। जिससे उनके विरूद्ध कोई गवाही देने वाला नहीं होगा और ऐसे में वह सजा प्राप्त करने से बच जाएगें। पुलिस के द्वारा घटना के संदर्भ में जो भी ब्यौरा तैयार किया जाएगा जिसमें वकीलों के द्वारा कमिया उजागर करके अपराधियों को साफ बचा लिया जाएगा । ऐसी परिस्थितियों में अपराधी पुलिसकर्मियों को भी अपना शिकार बनाने से नहीं चुकते है।
- **कार्य का अत्यधिक दबाव –** जनसंख्या के अनुपात में थानों की संख्या में बढ़ोतरी नहीं हो रही है और न ही थानों में कार्यरत पुलिस कर्मियों की संख्या में बढ़ोतरी हो रही है। ऐसे में पुलिस का कार्य–भार अत्यधिक बढ़ रहा है। इस बढ़ते कार्य के परिणाम स्वरूप न तो उन्हें अवकाश मिलते है और न ही उनके कार्य करने का समय निश्चित होता है। अत्यधिक कार्य दबाव से उन्का व्यवहार आम जनता के साथ संयमित नहीं रह पाता है। ऐसे में व्यवहार की प्रतिक्रिया जनता भी अधिक उग्र कार्यवाही उनके विरूद्ध कर देती है, जो हिंसात्मक कार्यवाहियों के रूप में हमारे सामने आ रही है।
- **जनता की दृष्टि में पुलिस का भ्रष्ट स्वरूप –** हाल ही में पुलिस अधीक्षक के घर बिचौलिए सहित उन्हें रिश्वत लेते रंगे हाथ पकड़ लिया। बिचौलिए द्वारा रिश्वत की राशि का खुलासा करते हुए यह कहा गया की वह पुलिस अधीक्षक के लिए शहर में स्थित थानों से प्रतिमाह निश्चित राशि वसुल करके पहुचाता था। इसके अलावा विभिन्न फाइलों के फैसलों को प्रभावित करने के लिए अलग से राशि वसूल करता था। यह तो एक बानगी है, ऐसा सभी जगह होता है, इस तरह से पुलिस विभाग लोगों की नजर में सबसे अधिक भ्रष्ट तथा रिश्वत का केन्द्र माना जाता है तथा ऐसे में बदले की कार्यवाही के रूप में इन घटनाओं को देखा जाता है।
- **राजनैतिक हस्तक्षेप –** पुलिस प्रशासन के सदस्य आम जनता की नाराजगी का जब भी शिकार बनती है, उस घटना की जॉच के लिए न्यायिक जॉच, प्रशासनिक जॉच, सी.आई.ड़ी. जॉच, सी.बी.आई. द्वारा जॉच की घोषणा कर दी जाती है। अधिकारी के परिवार को पॉच से बीस लाख की आर्थिक सहायता राशि दे दी जाती है साथ ही पुत्र–पुत्री या पत्नी को सरकारी सेवा में नौकरी देने की बात कही जाती है तथा यह जॉच ठण्ड़े बस्ते में ड़ाल दी जाती है तथा धीरे–धीरे जनता भी घटना को भूल जाती है। सत्तारूढ दल विरोधी दलों पर तथा विरोधी दल सत्तारूढ दल जॉच सही तरीके से न होने का आरोप प्रत्यारोप लगाकर अपने कर्तव्यों की इतिश्री मान लेते है।
- **जनता में बढ़ता आक्रोश –** यह घटनाए ज्यादातर पुलिसयाँ कार्यवाही के विरोध स्वरूप देखी जा रही है, जब भी जन आन्दोलन होते है। पुलिस कार्यवाही की जाती है, उस कार्यवाही से नाराज होकर जनता पुलिस के खिलाफ हो जाती है और ऐसे समय में ऐसी घटनाए घटित हो जाती है। ऐसे समय यह आवश्यक है कि जब जन आन्दोलन संचालित होते है, तब उन्हें

* प्राध्यापक, आर्यन पी. जी. कॉलेज, दातारागमढ़, सीकर (राज.) भारत

रोकते समय पुलिस को संयम का परिचय देना चाहिए जिससें जन–आन्दोलन उग्र ना हो पाए। ऐसे अधिकारियों के नेतृत्व में उस समय पुलिस बल वह हो जो मनोवैज्ञानिक रूप से उन्हें प्रभावित कर सके तथा उन्हें उग्र होने से रोकने में सफल हो सके।

- **घटनाओं का मीड़िया ट्रायल–** समाचारो में इलेक्ट्रोनिक मीड़िया की भूमिका दिन–प्रतिदिन बढ़ती जा रही है। इसमें समाज विरोधी तत्व ऐसे प्रदर्शनों में बढ़ चढ़ कर भाग लेते है तथा समाज में अपना रूतबा बढ़ाकर चुनावों में टिकिट प्राप्त करके नेता के रूप में अपने आप को स्थापित करने के लिए ऐसी घटनाओं में भाग लेते है तथा हिंसक गतिविधियों के कारक बनते है। वे जन–संचार के साधनों के माध्यम से जनता के समक्ष अपना खौफ दिखाना चाहतें। जिससे समाज उनके नेतृत्व को डर के आधार पर कुछ समय के लिए मान्यता प्रदान कर देवे तथा उनके कार्यो की अनदेखी कर सके तथा विरोध करने की हिम्मत नहीं जुटा सके।
- **नेता अपराधियों तथा प्रशासन का गठजोड़ –** पूर्व में नेताओं के द्वारा अवैध कार्यो को करवाने के लिए अपराधी प्रवृति के लोगों को अपने पास रखा जाता था, उनसे जबरन काम करवा कर समाज और प्रशासन दोनों पर अपना नियंत्रण रखने में सफल होते थे। अपराधी अपराध के आधार पर कार्यो को अंजाम देते। यदि कोई उन्हें प्रशासन की और से परेशानी आती तो उसे दूर करने का कार्य नेता कर देते थे परन्तु अब इस प्रवृति में परिवर्तन दिखाई दे रहा है अब अपराधी प्रवृति के लोग जिन्हें बाहुबली कहां जाता है। वे स्वयं राजनीति में प्रवेश कर रहे है और प्रशासन को नियंत्रित करते है। ऐसे में पुलिस प्रशासन उन्हें सहयोग कर रहा है तथा कई बार वे बाहुबलियों के आपसी रंजिश के कारण मारे जा रहे है या दूसरे प्रतिद्धन्दी के अनायास ही शिकार बन रहे है।

इस तरह हम यह देख सकते है कि उग्रवाद अथवा नक्सलवाद का प्रभाव न होने के बावजूद भी पुलिस प्रशासन के अधिकारी हत्या के शिकार हो रहे है ऐसे में समाज और प्रशासनिक पदाधिकारियों को इन घटनाओं को सहजता से नही लेना चाहिए। इन घटनाओं की पुनरावृत्ति नहीं हो अथवा इन घटनाओं में कमी लाने के लिए कुछ सुझाव प्रस्तुत किये जा रहे है–

सुझाव –

- **पुलिस प्रशासन का उचित प्रशिक्षण –** पुलिस महकमें में भर्ती के बाद मनोवैज्ञानिक के आधार पर प्रशिक्षण दिया जाना चाहिए। जन–आन्दोलन के समय भीड़ को नियंत्रित कैसे किया जाए हिंसक भीड़ को नियंत्रित करते समय शक्ति का प्रयोग कैसे तथा कितना किया जाना चाहिए पुलिस कर्मियों को मानवाधिकार का ज्ञान, पर्यावरण सुधार आदि की जानकारी भी आवश्यक रूप से हो। आम–जन के प्रति उनका शिष्ट व्यवहार हो इससे ऐसी घटनाओं की आवयश्कता ही नहीं पड़े।
- **पुलिस प्रशासन की सेवा शर्तो में सुधार –** जनसंख्या के अनुपात में पुलिस कर्मी होने चाहिए थानों की संख्या अधिक हों, पुलिस कर्मियों की कार्य अवधि को निश्चित किया जावे, उचित आवास व्यवस्था अवकाश का प्रावधान आदि सुविधाओं में बढ़ोतरी की जानी चाहिए जिससे ये कार्मिक मनोवैज्ञानिक रूप से सन्तुष्ट हो सके। इसका प्रभाव उनके कार्य निष्पादन पर पड़ेगा तथा जनता को किसी तरह का कष्ट नहीं होगा इससे समाज में उनके प्रति विश्वास जगेगा तथा पुलिस के प्रति अपराधों को रोकने में सहायता मिल सकेगी।
- **स्वच्छ छवि के राजनेता –** राजनीति का अपराधीकरण होने से नेताओं का स्वरूप स्वच्छ छवि का नहीं रहा है और ऐसे में उनकी प्रशासन पर पकड़ नहीं होती है। यदि अच्छे चारित्रिक नेता राजनीति में हो तो वे प्रशासन में सुधार ला सकेगें तथा इस तरह की घटनाओं पर अंकुश लगाया जा सकेगा।
- **भ्रष्ट अधिकारियों की फील्ड पोस्टिंग न हो –** सरकार को इस बात का ध्यान रखना चाहिए की किसी भी अधिकारी जिस पर आरोप लगे हो उसे दण्ड दिया गया हों। उसे फील्ड पोंस्टिग नहीं दी जानी चाहिए। एक बार इसकी जानकारी प्राप्त हो चुकी है की उक्त अधिकारी अपने कार्यो को सम्पादित करने में असफल रह चुका है, उस पर भ्रष्ट्राचार के आरोप लग चुके है ऐसे अधिकारियों को सीधे जनता से जुड़े पदों पर नियुक्ति नही दी जानी चाहिए। जिससे ऐसी घटनाओं पर रोकथाम लगाई जा सके।
- **पुलिस ज्यादतियों की उचित जॉच –** यदि पुलिस कार्मिक अपने कर्त्तव्यों के निर्वहन करते समय किसी तरह की ज्यादती करता है तथा इसकी शिकायत होती है तो उसे बचाने के बजाए उसे उचित दण्ड किया जाना चाहिए। जिससे उसके साथी कार्मिको को भी संदेश मिलेगा की वे भी अपने कर्त्तव्यों का ठीक से निर्वहन करे तथा आम जनता में यह संदेश जाएगा की पुलिस निरंकुशतापूर्वक अपने कार्य नहीं कर सकते तथा वे भी विधि के शासन के अधीन है। विभागीय जॉच, प्रशासनिक जॉच, न्यायिक जॉच, मजिस्ट्रेट द्वारा जॉच, कमीशन अथवा आयोग द्वारा जॉच के सही निष्कर्ष आवें जिससे पुलिस व्यवस्था पर नियंत्रण रखा जा सके।
- **लोकायुक्त की नियुक्ति –** राज्यों में लोकायुक्त की नियुक्तियाँ होनी चाहिए तथा उन्हें समस्त अधिकार प्रदान किए जाने चाहिए। जिससे उनके पास जो भी शिकायतें आयी है, उनकी जॉच करके उनके विरूद्ध कार्यवाही का निर्देश जारी हो सकेगा। इस तरह की कार्यवाही संभव होने पर आम जनता को यह विश्वास हो सकेगा की कोई भी पदाधिकारी चाहे कितना भी बड़ा हो गलत कार्यो का दण्ड दिया जाएगा। ऐसे में जनता कानून को अपने हाथ में लेने का प्रयास नहीं करेगी तथा पुलिस प्रशासन के विरूद्ध इस तरह की घटनाएँ नहीं होगी।

निष्कर्ष रूप में यह कहा जा सकता है कि पुलिस प्रशासन जनता की सेवा के लिए है, उनका स्वरूप वैसा ही होना चाहिए तथा जन शिकायतों का समय पर उन्हे निस्तारण करना चाहिए जिससे जनता का विश्वास जितने में सफल हो सकें तथा जनता उनके विरूद्ध ऐसे आन्दोलन को चलाने का नहीं सोचे तथा विरोध यदि हो रहा है, तो वह शांतिपूर्ण संवैधानिक आधारों पर हो न की हिंसात्मक आधारों पर ऐसा मेरा विश्वास है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. मानवीय मूल्य, कर्त्तव्य एवं अधिकार : एन.के.जैन।
2. मानवाधिकार – दिलीप जाखड़।
3. Policing Freedom - Johan Elderson.
4. Police Violence - A changing Pattern. Devid Burnhan.
5. News Channel - IBN7, ABP News.

****

स्त्री वाद विमर्श और मानवाधिकार

डॉ. रंजना श्रीवास्तव *

प्रस्तावना – अधिकार मानव जीवन की शैली परिस्थितियॉ हैं जिनके आभाव में सामान्यता कोई व्यक्ति अपने व्यक्तित्व का पूर्ण विकास नहीं कर सकता। हैराल्ड लॉस्की मानव अधिकार से तात्पर्य उन अधिकार से है। जो प्रत्येक व्यक्ति को मानव होने के नाते स्वंय प्राप्त हो जाते हैं। मानव अधिकार के द्वारा ही किसी समाज में पुरूष एवं महिलाए अपने व्यक्तित्व का सर्वांगीण विकास कर पाते है मानवाधिकारों के लिए यह कहा जा सकता है कि 21वीं सदी मानवाधिकारों की सदी है। फिर क्यों महिलाओं को मानवाधिकारों से वंचित किया जाता है। हमारे समाज में महिलाए शिक्षित अधिकार से अनभिज्ञ हैं। भारतीय समाज का एक बड़ा वर्ग आज भी अपने कानूनी अधिकारो के प्रति जागरूक नहीं है। स्त्री वह किसी भी राष्ट्र की क्यों न हो किसी भी जाति, धर्म, समुदाय की क्यों न हो उसकी स्थिति में कोई विशेष परिवर्तन नहीं आता। यही कारण है कि स्त्री समाज पर निरन्तर, दमन, उत्पीड़न, अत्याचार, हत्याएं, आत्महत्याऐं सिद्ध करती हैं कि आज की पितृसत्तात्मक समाज का दृष्टिकोण उनके प्रति उत्पीड़ितों जैसा ही हैं।

पितृसत्तात्मक समाज ने उनके लिए ऐस ऐसे मूल नैतिक, सिद्धान्त सुनियोजित ढंग से गढे हैं, जिसमें आजीवन उनकी बेटियां, बहुऐं ढलती रहती हैं। सदियों से औरते इन रीति रिवाजों परम्पराओं के नाम पर पैतृक मूल्यों के सोचों में जकड़ दी गयी हैं। वस्तु स्थिति यह है कि पुरूष स्त्री से कुछ विशेष प्रकार के आदर्शो, मूल्यों, नैतिकताओं गुणों की अपेक्षाए रखता है जो कि पैतृक हैं जिनका लक्ष्य है स्त्री को नियंत्रित करना। यथास्थिति में जीने का एहसास कराना पुरूषों ने हमेशा से ही ऐसी पैतृक नैतिकताए उन पर थोपी हैं। पुरूषों ने उनके व्यक्तित्व के निर्माण के लिए कभी कोई सुविधा दी ही नहीं है। हकीकत यह है कि स्त्री की स्वतंत्रता का अर्थ पुरूष भले ही नकारात्मक अर्थो में लेता रहे लेकिन स्त्री की स्वतंत्रता का अर्थ माननीय सन्दर्भो में लेना चाहिए। समाज ने आज भी समुचे मूल्य पुरूषों द्वारा ही निर्मित हैं, स्त्रियों को दिए गए अधिकार संविधान की धाराओं में ही खनखनाते हैं। वास्तविक जीवन ने उन अधिकार को व्यवहार में लागू नहीं किया जाता। कानून और कानूनविद केवल कानून की धाराओं को रटते हैं। वास्तविक जीवन में स्त्री कैसे प्रताड़ित होती है, इसकी जिम्मेदारी कानून कहॉ आरक्षित हैं, सही अर्थो में नारी के अधिकार अछूते हैं, संविधन की धराओं में स्त्री पुरूषों में बराबरी हैं। लेकिन वास्तविक जीवन में परस्पर कितनी समानता हैं ?

वर्तमान में इस बात को महसूस किया जा रहा है कि नारी अपने अस्तित्व को स्थापित करने के लिए कितना भी प्रयास व संघर्ष क्यों न करें लेकिन व्यवहारिक स्तर पर उसे महत्व नहीं मिल पाता, शारीरिक दृष्टि से भी वह अपनी सुरक्षा के लिए पुरूष पर ही निर्भर है। इसलिए उसे मुक्त कर पुरूष की वर्चस्वता से समझौता करना पड़ता है। यही परिवार के हित में समाज उससे त्याग की अपेक्षा रखता है।

अत: परिवार के हित में अपनी उपेक्षा कर देना उससे मुख्य सरोकार व दायित्व बन जाता हैं और सम्पूर्ण जीवन चक्र में अपनी निम्न स्थिति स्वीकारना उसकी नियति बन जाती है।

वास्तविकता यही है कि जब तक संवैधानिक धाराओं, कानून की किताबों और वास्तविक जीवन के सामाजिक विरोधाभासों के बीच का अंतर नहीं मिटता तब तक स्त्राी और पुरूषों के बीच के फांसले समाप्त नहीं हो सकते। फिर जब तक सामाजिक संरचना स्त्री विरोधी है, तब संवैधानिक धारा में नारी पक्ष में बोलते कानून, नारी न्याय के दर्शन का अर्थ रखते है। सर्वप्रथम हमें समूची सामाजिक संरचना में बदलाव लाना होगा, जो स्त्री की बदतर हालत के लिए सबसे ज्यादा जिम्मेदार और दोषी है। फिर शायद संवैधानिक धाराओं, नारी न्याय की कानूनी बातें भी निराधार सिद्ध हो जाएगी।

मानव अधिकार के प्रश्न के साथ औरत का सन्दर्भ जुड़ जाना यही सिद्ध करता है कि वह मानव अधिकार से वंचित व उपेक्षित है। अभी भी दुनिया की आधी आबादी मानव अधिकार से वंचित है। दुनिया में यदि सबसे अधिक अन्याय हुआ है तो वह स्त्रियों के साथ।

आज भी पुरूष मानव अधिकार की बात करने वाली जागरूक संवेदनशील स्त्रियों से डरते, कांपते हैं। ऐसा क्यों हैं? महादेवी वर्मा जी ने इस प्रश्न पर विचार करते हुए सही कहा है कि बहुत पढ़ी लिखी या कूानन जानने वाली स्त्री में विवाह करते उन्हें भय लगता है। विद्या बुद्धि में जो समान होगी अधिकार के विषय में वह किसी भी दिन प्रश्न कर सकती है, संतोषजनक उत्तर न मिलने पर वह विद्रोह भी कर सकती हैं। पुरूष स्वत्वाधिकारों के प्रति जागरूक स्त्रियों से डरता है, इसमें छिपे हैं, उसके पितृसत्तात्मक नैतिक प्रतिमान, पैतृक राजनीति। इसलिए मानव अधिकार, कानून संविधान में स्त्री की बराबरी, सम्पत्ति के स्वामित्व, अधिकार पर लगभग सभी पुरूष खामोश रहते है। क्या यह यथास्थितिवाद को कायम रखने की साजिश नहीं है, स्त्री संसार के प्रति हमारा नकारात्मक दृष्टिकोण क्या दर्शाता हैं? आखिर क्यों नहीं स्त्री मुक्ति के लिए सामाजिक, आर्थिक न्याय के लिए समुचे सामाजिक विकास के लिये स्त्री विमर्श पर कोई संजीदा संवाद हुआ समाज में स्त्री की क्या स्थिति और भूमिका हो, उसके अधिकार की क्या रूपरेखा हो इसका निर्णय पुरूष ही करता आया है। इसलिए वह मानवीय अधिकार से वंचित है।

स्त्रियों पर उत्तरदायित्व का भार पुरूषों से कहीं अधिक है, परिवार में, समाज में, सार्वजनिक क्षेत्र में, अपने अस्तित्व, अस्मिता के लिए संघर्ष करने में उनकी समुचित ऊर्जा शक्ति बट जाती है। वह घर और बाहर की दोहरी

* प्राध्यापक (समाज शास्त्र) शासकीय एम.एल.बी. पी.जी. कॉलेज, भोपाल (म.प्र.) भारत

भूमिका निभाते हुए भी न केवल अपनी आवश्यकताओं को बल्कि परिवार की जरूरतों को भी पूरा करती हैं, लेकिन उन स्वावलंबी महिलाओं की स्थिति पर विचार करें तो हम पाते हैं कि ये महिलाए अन्य महिलाओं की तुलना में काम के बोझ से ज्यादा लदी रहती हैं और दोहरा बोझ ढोने के लिए विवश है।

खेद है कि समाज का कोई भी ऐसा क्षेत्र नहीं है, जहां महिलाओं को प्रताड़ित न किया जाता हो। सच तो यह है कि विश्व का कोई भी देश या मानव समाज अभी तक मानवाधिकारों को पूर्ण रूप से क्रियान्वयन व उपभोग का आदर्श प्रस्तुत नहीं कर सका है।

भारत में महिलाओं की राजनीतिक, सामाजिक, आर्थिक स्थिति सुधारने के लिए अनेक अधिनियम बनाए गए हैं, महिलाओं को राजनीति में 33 प्रतिशत आरक्षण दिया गया है। इसके बावजूद भी राष्ट्रीय स्तर पर महिला भागीदारी इतनी बढ़ी नहीं है।जितनी की आशा की जा रही है।

वास्तविकता यह है कि शिक्षित होने के बावजूद भी स्त्री की स्थिति दशा कोई बहुत अधिक परिवर्तित नहीं हुई है। अभी भी वह परांपरागत रूप से संस्कार जनित दोषों से मुक्त नहीं हो पा रही है। समाज भी उससे यही अपेक्षाएं रखता है कि उसके पारिवारिक कर्तव्य भी यथावत् रूप से बने रहे। आज हम 21वीं सदी में पहुॅचकर अपने को गौरान्वित महसूस कर रहे हैं परन्तु वास्तविकता में हमें यह अधिकार नहीं है अपने देश में कई महिला दशक मना लेने व अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर महिला सम्मेलनों के आयोजनों के बाद भी विश्व के 178 देशों में महिला शोषण व अत्याचारों में बेतहाशा वृद्धि हुई है। विडम्बना तो यह है कि समाज में साधन सम्पन्न शिक्षित, जागरूक महिलायें हैं वे भी स्त्री विमर्श, नारी न्याय के दर्शन संघर्ष नारी अस्मिता के प्रश्नों पर संजीगदी से विचार नहीं कर पा रही हैं। आज वह घर और बाहर दोहरा संघर्ष कर रही है।

अत: आज समूचा विश्व एकत्र हुआ है, मंथन प्रारम्भ करने को, कि कैसे लोकतांत्रिक और मानवीय मूल्यों के युग में सृष्टि की निर्मात्री महिला को उसको उसका उचित स्थान प्रदान किया जाए। और उसे समस्त अधिकार प्रदान किए जाए जिससे वह सदियों से वंचित है। महिलाओं को मानव अधिकार के हनन से बचाने के लिए राष्ट्रीय मानव आयोग द्वारा मानव अधिकार का अधिक व्यापक प्रचार प्रसार किया जाए मानवाधिकारों का ध्यान रखते हुए मानव अधिकार संरक्षण संकाय का गठन किया जाना चाहिए। जिससे उनके अधिकार के हनन पर अंकुश लगाया जा सके। भारत जैसे विकाशील देश में महिलाओं के मानवाधिकार का मुद्दा एक ऐसा मुद्दा है जिसके लिये दीर्घकालीन नीति और सरकारी गैर सरकारी दोनों स्तरों पर सहयोग की जरूरत है।

निष्कर्ष रूप में कहा जा सकता है कि देश का समग्र विकास महिलाओं की भागीदारी बिना संभव नहीं है, अत: उनके मानवाधिकारों के संरक्षण के पुख्ता प्रबन्ध किए जाए।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. डॉ. अग्रवाल एच.ओ. - मानव अधिकार।
2. डॉ. कश्यप आलोक कुमार - भारतीय समाज में नारी दशा दिशा।
3. कुमार राकेश - नारीवादी विमर्श।
4. वर्मा महादेवी - श्रृंखला की कड़िया पृष्ठ 23
5. बोहरा आशा रानी - कामकाजी महिला समस्याऐं और समाधन।
6. श्रीवास्तव सुध रानी - मानव अधिकार व महिला उत्पीड़न।
7. डॉ. गोयल सुनील - भारतीय समाज में नारी।

****

नगरीय परिप्रदेश में ग्रामीण जनसंख्या संकेन्द्रण का स्थिति विश्लेषण

डॉ. प्रभाकर मिश्र *

प्रस्तावना – स्थानिक वितरणों में जनसंख्या घनत्व स्थान के सापेक्ष व्यक्तियों के वितरण से संबंधित है। धरातल पर मनुष्यों के वितरण संबंधी विभिन्नताओं के विश्लेषण हेतु उपयोगी संक्षेपण के रूप में जनसंख्या घनत्व से विशेष सहायता प्राप्त होती है। सामान्यत: इसे प्रति वर्ग इकाई क्षेत्र में व्यक्तियों की संख्या के आधार पर निरूपित किया जाता है। जनसंख्या के वितरण की यह अधिक अर्थपूर्ण स्थिति होगी कि उसका जीवनोपयोगी संसाधनों के सापेक्ष आंकलन किया जाए।

जनसंख्या घनत्व से धरातल या अन्य संसाधन के सापेक्ष उसकी उपलब्धता की सघनता या विरलता सुनिश्चित होती है। जनसंख्या घनत्व को अनेक उद्देश्यों के लिए अनेक प्रकार से ज्ञात किया जाता है। यहां जन घनत्व को नगर से दूरी के सापेक्ष जनसंख्या की सघनता पर पड़ने वाले प्रभाव के कारण होने वाले परिवर्तन अध्ययन के संदर्भ में परिकलित किया गया है।

अध्ययन क्षेत्र – प्रस्तुत शोध अध्ययन के लिए उज्जैन नगर को केन्द्र प्रस्तुत शोध कार्य हेतु उज्जैन नगर एवं इसके परिप्रदेश को अध्ययन क्षेत्र के अन्तर्गत सम्मिलित किया गया है। यह क्षेत्र $23^0$04'44'' उत्तरी अक्षांश से $23^0$17'43'' उत्तरी अक्षांश तक तथा 75^0 37'42'' पूर्वी देशान्तर से 75^0 54'02'' पूर्वी देशान्तर तक विस्तृत है। इसके अन्तर्गत आने वाले केन्द्रीय नगर उज्जैन का क्षेत्रफल 111.32 वर्ग किमी. तथा इसके ग्रामीण परिप्रदेश का क्षेत्रफल 406.08 वर्ग किमी. है।

इस अध्ययन क्षेत्र के अन्तर्गत केन्द्रीय नगर उज्जैन से 15 किमी. तक की स्थानिक दूरी (Spatial Distance) के अन्तर्गत आने वाले 90 ग्राम सम्मिलित हैं, क्योंकि केन्द्रीय नगर से चारों ओर स्थानिक दूरी बढ़ने पर नगरीय प्रभाव की तीव्रता में कमी आती है तथा समीपवर्ती अन्य नगर या सेवाकेन्द्र का प्रभाव दिखायी देने लगता है, जो शोध अध्ययन की सटीकता को प्रभावित करता है। अत: अन्य समीपवर्ती सेवाकेन्द्र के प्रभाव की सीमा को नियंत्रित करने के लिए नगर से प्रभावी दूरी को अध्ययन का आधार बनाया गया है।

शोध के उद्देश्य – जनसंख्या वितरण के अध्ययन में जनघनत्व महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। अध्ययन क्षेत्र के गहन एवं विस्तृत क्षेत्र के प्रति इकाई क्षेत्रफल पर स्थित ग्रामों की जनसंख्या वितरण के घनत्व को आधार बनाकर नगरीय सामीप्य के कारण नगरीय केन्द्र के परिक्षेत्र में ग्रामीण जनसंख्या के वितरण प्रतिरूप की प्रवृत्ति में होने वाले परिवर्तन का विश्लेषण प्रस्तुत शोधपत्र का प्रमुख विषय है।

शोध प्रविधि – ग्रामीण बस्ती से नगर की दूरी को प्रमुख भौगोलिक तत्व के रूप में स्वीकार करके ग्रामीण बस्तियों को तुलनात्मक अध्ययन हेतु दो दूरी संवर्गों – गहन क्षेत्र और विस्तृत क्षेत्र में वर्गीकृत किया गया है। दोनों दूरी संवर्गों के चयनित ग्रामों से जनसंख्या संकेद्रण की प्रवृत्ति के अध्ययन के लिए प्राप्त प्राथमिक एवं द्वितीयक समंकों का सांख्यिकीय विश्लेषण करके ग्रामों के जनसंख्या आकार को प्रति वर्ग इकाई क्षेत्रफल पर विस्तृत जनधनत्व को आधार बनाते हुए अध्ययन क्षेत्र के मध्य स्थित नगरीय केन्द्र से दूरी के साथ होने वाले प्रभाव को मापने का प्रयास किया गया है।

शोध विश्लेषण – प्रस्तुत अग्रांकित तालिका से स्पष्ट है कि गहन क्षेत्र में 100 से 150 व्यक्ति प्रति वर्ग किमी जन घनत्व वाले ग्रामों की आवृत्ति सर्वाधिक 37.50 प्रतिशत है, वहीं 250–300 या 300 से अधिक व्यक्ति वाले जनघनत्व वाले वर्ग में सबसे कम आवृत्ति का प्रतिशत 8.33 है। इसकी तुलना विस्तृत क्षेत्र के समूहों से करने पर दोनों समूहों की आवृत्ति प्रतिशत में साम्य है। अत: स्पष्ट है कि दोनों संवर्गों में 100 से 150 वाले वर्ग में सर्वोच्च आवृत्ति है और सर्वोच्च सघनता वाले क्षेत्र दोनों वर्गों में अल्प मात्रा में अवस्थित हैं। विस्तृत क्षेत्र में तो जन घनत्व की विरलता 250 से 300 व्यक्ति / वर्ग किमी. वाले उच्च सघनता वाले वर्ग में ग्रामों की आवृत्ति का प्रतिशत निरंक होने से स्पष्ट है। वहीं 300 से अधिक व्यक्ति /वर्ग किमी. जैसे उच्च घनत्व वाले वर्ग में अवस्थित ग्रामों का प्रतिशत गहन क्षेत्र की तुलना में अत्यन्त कम हो जाता है। इस वर्ग में गहन क्षेत्र के ग्रामों का आवृत्ति प्रतिशत 08.33 है, वहीं विस्तृत क्षेत्र में इस वर्ग के अन्तर्गत ग्रामों का केवल 02.70 प्रतिशत भाग ही आता है।

उज्जैन और परिप्रदेश : जन घनत्व का वितरण (देखे)

गहन क्षेत्र में चयनित ग्रामों का औसत घनत्व 170 व्यक्ति प्रति वर्ग किमी. है तथा विस्तृत क्षेत्र में इसमें कुछ कमी आ जाती है। यहां का औसत घनत्व 141 व्यक्ति प्रति वर्ग किमी. है।

नगरीय क्षेत्र के गहन एवं विस्तृत क्षेत्र के ग्रामों के जनसंख्या घनत्व के लिए किए गए परीक्षण के अध्ययन से स्पष्ट है कि 5 प्रतिशत सार्थकता स्तर पर 5 स्वतंत्रता की मात्रा के लिए काई वर्ग का सारणी मान 11.00 है, जो परिकलित काई वर्ग मूल्य 05.23 से दूने से भी अधिक है। अत: कहा जा सकता है कि काई वर्ग सार्थक नहीं है। इसलिए शून्य परिकल्पना स्वीकार की जाती है। यहां गहन एवं विस्तृत क्षेत्रों में स्थित ग्रामों के जनसंख्या घनत्व तथा नगर से दूरी का प्रभाव एक दूसरे से सम्बंधित नहीं बल्कि स्वतंत्र तथ्य हैं।

निष्कर्ष – उपर्युक्त विश्लेषण से स्पष्ट है कि नगर से ग्रामीण अधिवास की स्थानिक दूरी ग्रामों में स्थित जनसंख्या के वितरण की सधनता या विरलता पर प्रभावी नहीं है। गहन एवं विस्तृत क्षेत्रों में स्थित ग्रामों के जनसंख्या वितरण की सधनता या विरलता तथा नगर की दूरी का प्रभाव एक दूसरे से

* सहायक प्राध्यापक (भूगोल)शासकीय महाविद्यालय, महिदपुर (म.प्र.) भारत

असंबद्ध तथ्य हैं। स्पष्ट है कि किसी नगरीय परिक्षेत्र में स्थित ग्रामीण जनसंख्या के वितरण में जनघनत्व को प्रभावित करने वाले अन्य भौगालिक कारणों की समीक्षा की जानी चाहिए।

वर्तमान में जहॉ तीव्रगामी परिवहन साधनों ने नगर एवं नगरीय सेवाओं को विस्तार दिया है। जिससे नगरीय सेवाओं तथा ग्रामीण जनसंख्या के बीच सांतत्य बढा है। वहीं पेयजल आपूर्ति, स्वच्छ पर्यावरण, प्राकृतिक शांत वातावरण तथा ग्रामीण रोजगार की स्थनीय उपलब्धता ग्रामीण जनसंख्या संकेन्द्रण को स्थिर रखने के लिए महत्वपूर्ण भूमिका में है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. G.J. Demko :Population Geography : A Reader; Mac Grow Hill Company, 1970
2. Bansal S.C.: Town – Country Relationship in Saharanpur City –Region: A Study in Rural – Urban Interdependence Problems, Sanjeev Pub. Saharanpur,1975
3. मिश्र प्रभाकर – ग्रामीण जनसंख्या संरचना पर नगरीय प्रभाव, अप्रकाशित शोध प्रबंध, विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन 2006, पृष्ठ क्र. 102
4. हीरालाल – जनसंख्या भूगोल, राधा पब्लिकेशन, नई दिल्ली, 2000

उज्जैन और परिप्रदेश – जन घनत्व का वितरण

दूरी संवर्ग	ग्रामों का जन घनत्व (व्यक्ति/वर्ग किमी.)						
	<100	100–150	150–200	200–250	250–300	<300	योग
गहन क्षेत्र (N=34)	3	9	6	2	2	2	24
	(12.50)	(37.50)	(25.0)	(8.33)	(8.33)	(8.33)	
विस्तृत क्षेत्र (N=84)	3	16	11	6	0	1	37
	(8.11)	(43.24)	(29.73)	(16.22)	(0.00)	(2.70)	

परिकलित काई – वर्ग (X^2) मूल्य = 05.23

स्रोत – व्यक्तिगत साक्षात्कार पर आधारित.

****

म.प्र. की भौगोलिक स्थिति का विस्तार व सापेक्षिक अध्ययन

डॉ. एस. एस. बघेल *

प्रस्तावना – किसी भू–भाग की स्थिति सापेक्षित स्थिति का उस क्षेत्र के विकास पर गहरा प्रभाव पड़ता है। प्रत्येक भू–भाग का वहां उपस्थित तत्वों में अंतर संबंधों तथा उस क्षैत्र का अन्य क्षेत्रों से स्थानिक (ग्रामीण क्षेत्रों) संबंधों का परिणाम होता हैं। वास्तव में स्थानिक संबंधों में ग्रामीण एवं शहरी क्षेत्रों का बाजार तंत्र की कड़ी है, जो कि एक–दूसरे जो जोड़ते है तथा संबधों का मूल आधार बाजार क्षेत्र की भौगोलिक स्थिति का प्रभाव पड़ता है।

यथार्थ स्थिति अक्षांश और देशान्तर के द्वारा व्यक्त की जाती है। अक्षांश भू–मध्य रेखा से दूरी होती है और तापमान–दिन की लम्बाई, मौसम व जलवायु आदि की दशा का बोध कराती है तथा देशान्तर से समय का बोध होता है। 0 डिग्री देशान्तर महाद्वीप यूरोप, इग्लैंड ग्रीन विच माध्य जी.एम.टी. तथा भारत में आय.एस.टी. इलाहाबाद (उ.प्र.) प्रमाणित रेखा स्थिति से की जाती है।

प्राकृतिक स्थिति का अभिप्राय महाद्वीप तथा समुद्वीप संबंधों से होता है, जो मौसम के माध्यम से जनजीवन (ग्रामीण संसाधन) को प्रभावित करता ही है तथा साथ ही पारगम्यता के द्वारा बाहरी क्षेत्रों से सम्पर्क की घनिष्ठता भी निश्चित करता है। विभिन्न क्षेत्रों आवागमन के मार्गो तथा प्रधानमंत्री सड़क योजना तथा गांव की कच्ची सड़क आदि के संदर्भ में व्यक्त की गई स्थित को सापेक्षिक स्थिति कहा जाता है जो क्षेत्रों के पारस्परिक संबंधों का निर्धारण करती है।

मध्यप्रदेश की स्थिति – भारत के मध्य में स्थित होने के कारण मध्यप्रदेश अपने नाम को चरितार्थ करता है, इसकी भौगोलिक स्थिति $21^0$6' उत्तरी अक्षांश से $26^0$30' उत्तरी अक्षांश तथा 74^0 पूर्वी देशान्तर से $82^0$47' पूर्वी देशान्तरों तक में इसका भौगोलिक क्षेत्रफल 308 हजार वर्ग कि.मी. है, जो देश के कुल भौगोलिक क्षेत्रफल का 9.38 प्रतिशत है। यह क्षेत्रफल की दृष्टि से देश का द्वितीय बड़ा राज्य है इसकी लम्बाई उत्तर से दक्षिण 605 कि.मी. तथा पूर्व से पश्चिम 870 कि.मी. है। मध्य कर्क रेखा राज्य के मध्य से गुजरती है। इसे राजस्थान, उत्तरप्रदेश, छत्तीसगढ़, महाराष्ट्र तथा गुजरात राज्यों की सीमांए स्पर्श करती है।

सेन्ट्रल इण्डिया – म.प्र. का वर्तमान स्वरूप स्वातंत्रोत्तर भारत की देन है, ब्रिटिश शासनकाल में सेन्ट्रल प्राविन्सेस व बरार नामक एक प्रांत अवश्य था जिसकी सीमाएं वर्तमान म.प्र. से भिन्न थी, महाकौशल व बरार के जिले इस प्रांत में सम्मिलित थे तथा बीच–बीच में बघेल खण्ड एवं छत्तीसगढ़ जैसी अन्य छोटी–2 रियायतें थी, जो सम्मिलित रूप से सेन्ट्रल इण्डिया जानी जाती थी। 1947 में सेन्ट्रल पाविन्स तथा बरार में बघेल खण्ड और छत्तीसगढ़ की रियासतों (पार्ट–ए) को मिलाकर मध्यप्रदेश राज्य बना जिसकी राजधानी नागपुर थी। इसी समय उत्तर में स्थिति रियासतों को मिलाकर विन्ध्यप्रदेश बनाया गया जिसकी राजधानी– रीवा थी जो पार्ट–बी के अन्तर्गत थी।

पश्चिम की रियासतों को मिलाकर मध्य भारत (पार्ट –सी) बनाया गया।जिसकी 6–6 माह के लिए दो राजधानियां क्रमश: ग्वालियर एवं इन्दौर थी। भोपाल अलग स्टेट थी जो पार्ट–सी थी इसकी राजधानी भोपाल थी।

1956 में राज्य पुनर्गठन आयोग द्वारा राज्य की सीमा में निम्नांकित परिवर्तन किए गए–

1. बुल्डाना, अकोला, अमरावती, यवतमाल, वर्धा, नागपुर, भण्डारा, चांद जिले तत्कालीन मुम्बई राज्य में मिला दिए गए। ये वर्तमान महाराष्ट्र के भाग है, इसके अतिरिक्त का प्रदेश म.प्र. में सम्मिलित कर दिया गया।
2. मन्दसौर जिले की भानपुरा तहसील सुनेल, (टम्पा नामक भाग को छोड़कर अतिरिक्त) पार्ट –सी का राज्य म.प्र. का भाग बन गया।
3. भोपाल स्टेट को भी म.प्र. में मिलाया गया।
4 विंध्य प्रदेश (पार्ट–सी) को भी म.प्र. में सम्मिलित किया गया।
5. राजस्थान के कोटा जिले की रिसोंज तहसील को वर्तमान मध्यप्रदेश के विदिशा जिले में मिलाया।

मध्यप्रदेश राज्य की अन्य महत्वपूर्ण बिन्दु –

1. मध्यप्रदेश की राजधानी भोपाल है।
2. मध्यप्रदेश कों 10 संभाग में बांटा गया है।
3. प्रदेश में पूर्व में 50 जिले थे, वर्तमान में 51 जिले है।
4. तहसीलों की संख्या 342 हो चुकी है।
5. आदिवासी विकास खण्ड 89 है।
6. वर्ष 2011 के अनुसार नगर व शहरों की संख्या 376 है।
7. वर्ष 2011 के अनुसार मध्यप्रदेश की जनसंख्या 7,25,97,565 है।
8. प्रदेश का कुल क्षेत्रफल 308313 कि.मी. है।
9. जनसंख्या घनत्व 236 प्रतिवर्ग कि.मी. है।
10. साक्षरता का प्रतिशत 70.63 प्रतिशत है।
11. एक नवम्बर 1956 को मध्यप्रदेश राज्य बना जिसकी राजधानी भोपाल थी। राज्य पुनर्गठन 01 नवम्बर 2000 के द्वारा म.प्र. की राजधानी भोपाल व छत्तीसगढ़ राज्य की राजधानी रायपुर को बनाया गया।
12. राज्य पुनर्गठन 2000 के आधार पर म.प्र. के 16 जिलों को अलग करके छत्तीसगढ़ राज्य बनाया, जो 01 नवम्बर 2000 को भारत का 26वां राज्य बना।

म.प्र. के पश्चिम भाग में स्थिति – धार जिला म.प्र. के पश्चिम भाग में स्थित धार जिला है। धार जिले का विस्तार $22^0$0' उत्तर से $23^0$10' उत्तरी

* विभागाध्यक्ष (भूगोल) महाराजा भोज शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, धार (म.प्र.) भारत

अक्षांश तथा 74°28' पूर्व से 75°42' पूर्वी देशान्तर के मध्य स्थित है। जिले का कुल क्षेत्रफल 8153 वर्ग कि.मी. तथा कुल जनसंख्या 21,84,672 है। पुरूषों की कुल संख्या 11,14,267 तथा महिलाओं की संख्या 10,70,405 है। वर्तमान कुल 8 तहसील है तथा 13 विकास खण्डों में विभाजित है।

भारत में राज्यों की प्रमुख भौगोलिक स्थिति –

1. शनिवार वाड़ा पुणे।
2. जोरबगला मंदिर विष्णुपुर।
3. मिश्रयन्त्र, जन्तरमंतर, नईदिल्ली।
4. अशोक स्तम्भ कोलहुआ।
5. प्रवेश द्धारा उत्खलन क्षेत्र रत्नागिरी।
6. राजा रानी मन्दिर, भुवनेश्वर।
7. विजय स्तम्भ चित्तौड़।
8. गोल गुम्बज बीजापुर।
9. बीबी का मकबरा, औरंगाबाद।
10. चार मीनार हैदराबाद।
11. केशव मन्दिर सोमनाथपुर।
12. धमेख स्तुप उत्खनन क्षैत्र सोमनाथ।
13. रंगपट मंडप, जयसागर।
14. मंदिर तीन नालंदा।
15. जहाज महल माण्डव।

निष्कर्ष – म.प्र. का वर्तमान स्वरूप स्वातंत्रोत्तर भारत की देन है, ब्रिटिश शासनकाल में सेन्ट्रल प्राविन्सेस व बरार नामक एक प्रांत अवश्य था। जिसकी सीमाएं वर्तमान म.प्र. से भिन्न थी महाकौशल व बरार के जिले इस प्रांत में सम्मिलित थे। मध्यप्रदेश का भौगोलिक क्षेत्रफल 308 हजार वर्ग कि.मी. है होकर देश का कुल क्षेत्रफल 9.38 प्रतिशत पर यह बसा हुआ है। जनसंख्या व क्षेत्रफल की दृष्टि से म.प्र. का विस्तार किया जाकर वर्ष 2000 में नवीन राज्य छत्तीगढ़ की स्थापना की गई।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. भारतीय पुरातत्व सर्वेक्षण।
2. म.प्र. का भूगोल डॉ. शिवानंद गौतम, रामप्रसाद एण्ड संस, भोपाल–आगरा।
3. म.प्र. का भूगोल , डॉ. प्रमीला कुमार।
4. भारत का भूगोल डॉ. सुरेशचन्द्र बंसल, मीनाक्षी प्रकाशन मेरठ, उ.प्र.
5. भारत का भूगोल डॉ. वी. एस. चौहान।
6. भारत का भूगोल डॉ. चतुरभुज मामोरिया।
7. भौगोलिक चिन्तन एवं विकास डॉ. एस.एम. जैन।
8. भौगोलिक विचारधारा का इतिहास डॉ. एस.डी. कौशिक।
9. म.प्र. का भूगोल डॉ. श्री कमल शर्मा म.प्र. हिन्दीग्रंथ अकादमी भोपाल।

****

Effect Of Family Type And Gender Difference On Security - Insecurity Feeling Of Adolescence

Dr. A. R. Lohia * Zainab Bohra **

Abstract - The present study was conducted to find the effect of gender difference and family type on security-insecurity among adolescents. The sample of 122 adolescents were selected, (61 males and 61 females). Security-Insecurity Scale by Dr. Beena Shah (1989) was administered to collect data.The collected data were analyzed by using statistical applications for the comparison of security- insecurity feeling of adolescent male and females from different family types. The results showed that there is a statistically significant difference in opinions about the security-insecurity between male and female adolescents. The results also revealed that adolescents belonged to joint family showed higher level of security feeling as compared to their counterparts.
Key words - Security-Insecurity, Gender, Family type and Adolescence.

Introduction - Every human being has problems and troubles in life but they react to them differently. Any problem which may disturb very much to an individual might be of no importance for others. This develops the feeling of insecurity and security among the people which influences very significantly in shaping and reshaping the personality of an individual. The security can be defined as "the condition of being in safety or free from threat of danger to life or in which power or conquest is attained without struggle. (Beena Shah,1989). A person who feels himself secured possesses qualities like, co-cooperativeness, kindness, sympathy for others and sociability. On the other hand, an insecured person always feels devastated due to various personality complexes.

Security-insecurity are the two factors which determine the personality of adolescents. Security produces boldness, and a sound mind, peace, joy etc. whereas, insecurity produces fear, worry and anxiety, restlessness, fatigue, insomnia, etc. It is a state of mind in which one is willing to accept the consequences of one's behavior. All the aspects of an individual's behavior in all areas of his life can be interpreted in terms of security (Blatz, 1967). The insecurity state of a person is an emotional problem, a state of being in disturbance due to the feeling of tension, strain, and conflict together with other consequences of tension. An insecure person perceives the world as a threatening jungle and most human beings as dangerous and selfish; feels a rejected and isolated person, anxious and hostile; is generally pessimistic and unhappy, tends to turn inward; is troubled by guilt-feelings, has one or another disturbance of self-esteem; tends to be neurotic; and is generally selfish and egocentric. (Maslow, 1942).A secure person feels free to express his feelings to others, doesn't feel restricted to other's opinion, can take own decisions, involves himself in society, is generally optimistic and happy, possesses cheerful and happy personality.

During adolescence, when a child enters transition period from his childhood to adulthood he gets confused by many factors- environmental, psychological, and physical, which develop stress and tensions in his life and brings conflicts in the behavioral manifestation of adolescent stage.

It is obvious that the level of feeling of security-insecurity varies from person to person and hence from other factors too. The family environment is needed to be congenial to develop the personality of the child. Only well-adjusted and developed personalities can become good members of the society.Home environment plays a vital role in developing feeling of security- insecurity in the child. An adolescent who feels secured, fulfil his proper responsibilities towards the society. On the other hand, an insecure person always feels disturbed and frustrated due to his instability.

Hence, the purpose of the study was to find out the gender differences and family type in response to the feeling of security-insecurity among adolescent boys and girls.

Objectives :-

1. To compare the level of feeling of security-insecurity of female and male adolescents.
2. To compare the level of feeling of security-insecurity of male adolescents belonging to joint and nuclear families.

* **Associate Professor (Psychology) Govt. Meera Girls College, Udaipur (Raj.) INDIA**
** **Research Scholar (Psychology) Govt. Meera Girls College, Udaipur (Raj.) INDIA**

3. To compare the level of feeling of security-insecurity of female adolescents belonging to joint and nuclear families.

Hypotheses -

1. There is no significant difference between adolescent girls and boys regarding security-insecurity.
2. There is no significant difference between males regarding family types.
3. There is no significant difference between females regarding family types.

Methodology :

Sample- The participants were 122 adolescents between age 13-15 years, selected randomly from a Co-education school in Udaipur region.

Variables - For the present study, gender and family type were taken as independent variables, whereas, security-insecurity feeling was considered as dependent variable. Standardized test was used to assess the relationship between the variables.

Scale Used - Security-Insecurity Scale by Dr.(Miss) Beena Shah (1989) was used to collect responses from the sample.

Result And Discussion -

Null Hypothesis 1: There is no significant difference between adolescent girls and boys in regards to security-insecurity

The collected sample was thoroughly analyzed using statistical applications like descriptive analysis and t-test for comparison of security- insecurity feeling of adolescent male and females. The results for the same are summarized in following table:

Table (1) (See the last page)

Since, t-value (2.998) is greater than t-critical (1.979) which falls in the rejection region, hence, the null hypothesis is rejected. Therefore, the result shows that there is a statistically significant difference in opinions about the security-insecurity between male and female adolescents. Female adolescents have higher mean (108.934) than male (98.574) which reveals that females have better opinion with regards to security feeling.

Table (2) - (See the last page)

From the above table, following observations can be noted:

- The table (2) displays five levels of Security-Insecurity Scale i.e. Highly insecure, Insecure, Average, Secure, and Highly secure, within which the 122 samples are distributed among two categories of female and male adolescents.
- The table shows that there is a significant difference between the number of male adolescents and female adolescents falling under different scales.
- The table clearly indicates that majority of female adolescents (52 out of 61) fall under secure and highly secure levels. Comparatively, lower number of male adolescents (43 out of 61) fall under secure or highly secure levels. It explains the argument that female adolescents feel higher security than male adolescents.
- The table also indicates that there are lower number of female adolescents (9 out of 61) fall under average or below average security levels as compared to male adolescents (18 out of 61).

The graphical representation of the above interpretation is presented with the help of the following bar diagram:

Figure (a) (See the last page) The number of male and female adolescents belonging to different levels on security-insecurity scale.

Further observation can be noted for the reflection of 8 different areas on the security-insecurity scores of male and female adolescents in the table mentionedbelow.

Table (3) - Number of male and female adolescents falling under different areas of the SIS scale -

Areas of SIS Scale	Average score	
	Female	Male
Family Security	17.6	16.4
School Security	18.0	15.8
Security Peer Group	17.8	15.9
Study Context Security	10.8	9.7
Prospective Context Security	11.4	10.5
Test Context Security	6.3	5.6
Self-Context Security	14.7	13.4
Existence Context Security	12.4	11.4

Graphical representation of the above table can be presented as follows -

Figure (b): (See the last page)

Observations can also be obtained by distributing the number of adolescents according to their family type (joint or nuclear) with respect to the different security levels as presented in below mentioned table -

Table (4): (See the last page)

Null Hypothesis 2 - There is no significant difference between adolescent students of family type joint or nuclear in regards to security-insecurity

By using the Security-Insecurity Scale by Dr. Beena Shah (1989) data were collected for comparison of security-insecurity feeling of adolescent falling under different family types. The results of the t-test analysis are summarized in following table:

Table (5) - (See the last page)

Since, t-value (1.040) is smaller than t-critical (1.980) which does not fall in the rejection region, hence, the null hypothesis is accepted. Also, the observed difference in the sample means (105.531 – 101.793) is not enough considerable. Therefore, the result shows that there is no statistically significant difference in opinions about the security-insecurity between adolescents belonging to different family type.

The table suggests that majority of adolescents who belongs to Joint family (53 out of 64) fall under secure and highly secure levels as compared to lower number of Nuclear family adolescents (42 out of 58) which fall under secure or highly secure levels. This asserts that Joint family adolescents feel higher security than adolescentsbelonging

to Nuclear family.

The graphical representation of the same is presented as below diagram:

Figure (c) - (See in the last page)

More interpretations are made by reflecting on eight different areas of SIS scale per the average score by family types as detailed in following table (6).

Area of SIS Scale	Average score by family	
	Joint	Nuclear
Family Security	17.3	16.7
School Security	17.0	16.7
Security Peer Group	16.8	16.8
Study Context Security	10.4	10.0
Prospective Context Security	11.1	10.8
Test Context Security	6.2	5.6
Self-Context Security	14.3	13.8
Existence Context Security	12.4	11.4

Table (6) - Average score by family type for different areas of SIS scale.

Apart from Security Peer Group's score, the average score of Joint family are higher in areas in comparison to Nuclear family.

The graphical representation of above interpretation is presented in following diagram.

Figure (d) - (See in the last page) Average score by family type for different areas of SIS scale

Conclusion - Results indicate that there exists statistically significant gender difference between the feeling of security-insecurity of adolescence.The security level is higher in females than males. It can be explained from the scores obtained for different areas of the scale, as for the school security context females feel more secured than males. Their responses were positive towards school management, teacher's responsibilities and the facilities provided by the school. They also feel secured in their peer-group than male adolescents on average.Results also revealed that the adolescents belonging to joint families are more secured than those belonging to nuclear families because in a joint family children may get better upbringing, support and security as compared to their counterparts.

References :-

1. Beg, M.A. & Beg, S.G. Adolescence. Global Encyclopedia of the Theoretical Psychology.2006;1:25-37.
2. Bhattacharjee A. & Bhattacharjee S. Security- Insecurity Feeling and Depression among Adolescents of Working and Non-Working Women. International Journal of Science and Research 2014; 3 (8).
3. Hurlock E.The Concept of Adolescence-Definition, Categorization and Characteristics.2001.nanda-nursing-care-plan.blogspot.com
4. Raina, S. & Sumbali Bhan, K. A Study of Security-Insecurity Feelings among Adolescents in Relation to Sex, Family System and Ordinal Position. International Journal of Educational Planning &Administration.2013. ISSN:2249-3093, 3(1):51-60. www.ripublication.com/ijepa.html
5. Shah, B. Manual for Security-Insecurity Scale. Ankur Psychological Agency.1989:3.
6. SinghM.Sharma P.&Shukla A. A comparative study of spirit of security insecurity of higher secondary school adolescents. Asian Science.2011;6(1&2): 9-11.

Table (1) Results of descriptive statistics and t-test for the effect of gender on security-insecurity of adolescences.

Total Sample (122)	Count	Mean	Standard Deviation	Standard Error	t-Value	Degree of Freedom	t Critical	Level of Significance 0.05
Male	61	98.574	16.696	2.522	2.998	120	1.979	Significant
Female	61	108.934	18.639	2.387				

Table (2) - The table below represents the distribution of the number of male and female adolescents falling different levels of security as per SIS scale.

Gender	SIS Scale					Grand Total
	Highly Insecure	Insecure	Average	Secure	Highly Secure	
Female	0	1	8	32	20	61
Male	0	1	17	36	7	61
Grand Total	0	2	25	68	27	122

Figure (a) - The number of male and female adolescents belonging to different levels on security-insecurity scale.

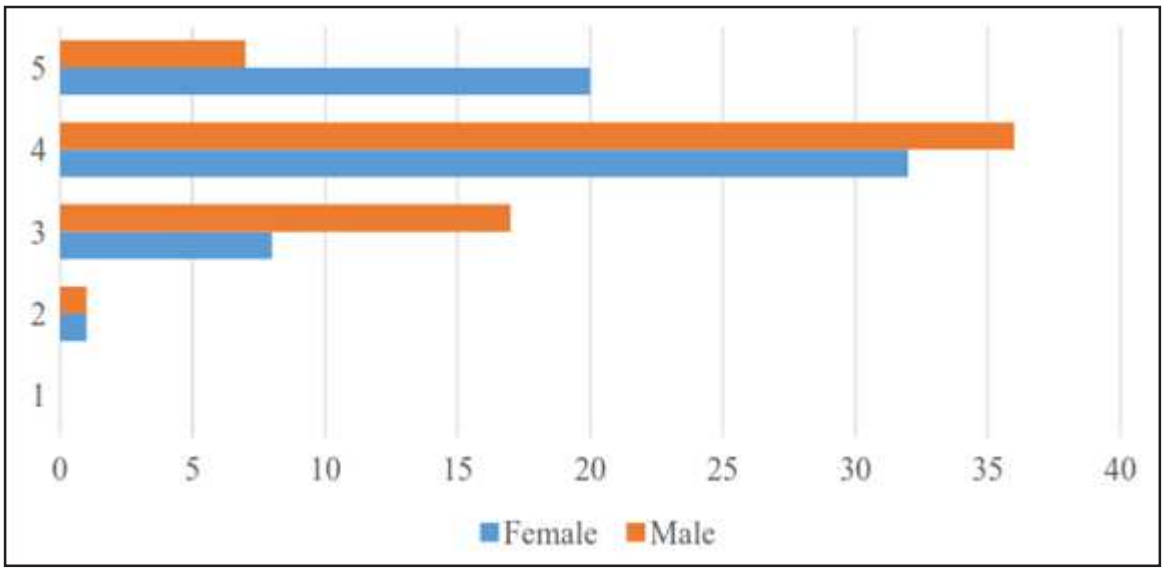

Figure (b) - Number of male and female adolescents falling under different areas of the SIS scale.

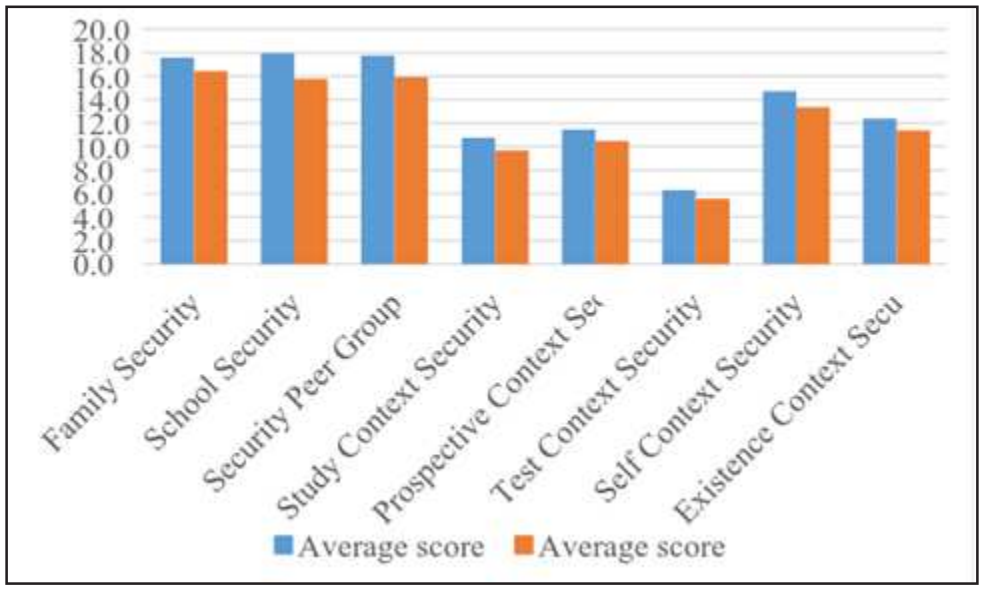

Table (4) - The number of adolescentsper family type and belonging to different security scale levels.

Family Type	SIS Scale					Grand Total
	Highly Insecure	Insecure	Average	Secure	Highly Secure	
Joint	0	1	10	36	17	64
Nuclear	0	1	15	32	10	58
Grand Total	0	2	25	68	27	122

Table (5) - T-test analysis for effect of family type on security-insecurity of adolescence

Total Sample = 122	Count	Mean	Standard Deviation	Standard Error	t-Value	Degree of Freedom	t Critical	Level of Significance 0.05
Joint	64	105.531	19.147	2.427	1.040	118	1.980	Non-Significant
Nuclear	58	101.793	20.183	2.650				

Figure (c) - Number of adolescents belongs to different family type falling under different security levels.

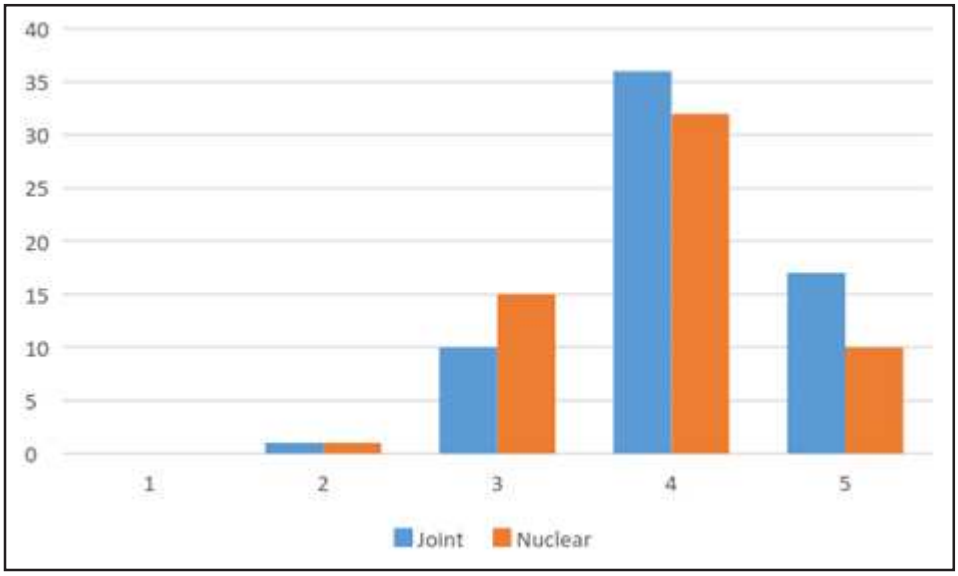

Figure (d) - Average score by family type for different areas of SIS scale

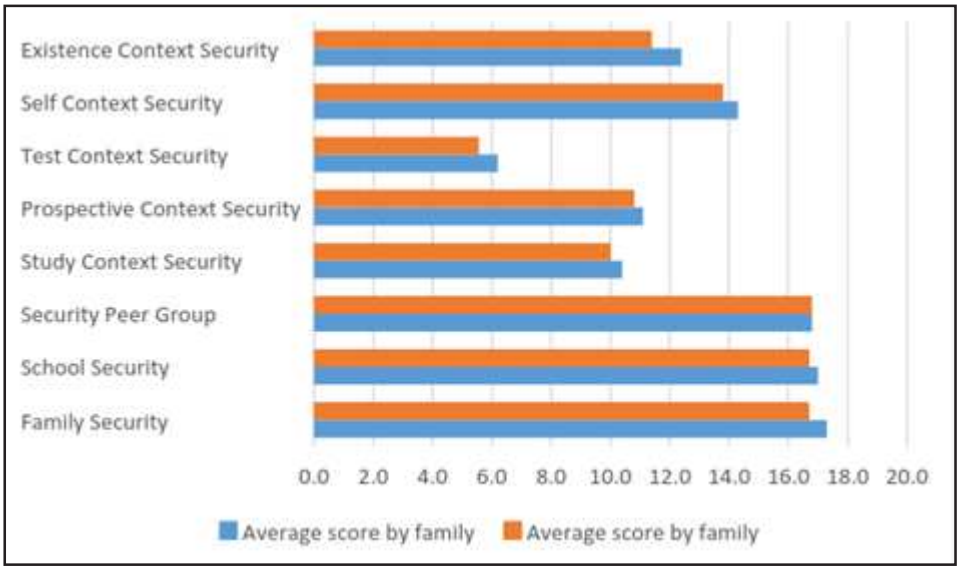

****

शिक्षा और शिक्षक में मानसिक स्वास्थ्य विज्ञान की आवश्यकता एवं महत्व

ज्योत्सना झारिया *

प्रस्तावना – मानसिक स्वास्थ्य– व्यक्ति मनोदैहिक तत्वों की एक समन्वित इकाई है। अत: मानव व्यवहार दैहिक एवं मानसिक दोनों तत्वों से निर्धारित होता है। इसलिए व्यक्ति के व्यवहार एवं विचार में संतुलन तभी हो सकता है, जबकि उसके शरीर व मन के बीच संवादिता हो। व्यक्ति के इसी मनोदैहिक संवादिता को मानसिक स्वास्थ्य कहते हैं।

मानसिक स्वास्थ्य को मानसिक रोग का विपरीत या प्रतिपक्ष समझा जाता है। ऐसा विश्वास किया जाता है कि मानसिक रूप से स्वस्थ्य उसे कहते हैं जो किसी तरह के मानसिक सरोग से पीड़ित न हो। लेकिन सही अर्थ में मानसिक स्वास्थ्य के लिए न केवल मानसिक रोग से मुक्त होना आवश्यक है, बल्कि यह अनिवार्य है कि संवेगात्मक समायोजन, व्यवहारात्मक समायोजन तथा अनुकूलन भी वर्तमान हो। इसके अलावा भावों, इच्छाओं, अभिलाषों, संवेगों तथा जीवन के आदर्शों में संतुलन होना भी आवश्यक है।

परिभाषाएँ –

स्ट्रेंज (1965) के अनुसार 'माानसिक स्वास्थ्य से तात्पर्य वैसे सीखे गए व्यवहार से होता है. जो सामाजिक रूप से अनुकूली होते हैं। जो व्यक्ति को अपनी जिंदगी के साथ पर्याप्त रूप से मुकाबला करने की अनुमति देता है।'

हारविज तथा स्कीड (1999) के अनुसार 'मानसिक स्वास्थ्य में कई आयाम सम्मिलित होते हैं– आत्म सम्मान, अपनी अन्त: शक्तियों का अनुभव, सार्थक एवं उत्तम संबंध बनाए रखने की क्षमता तथा मनोवैज्ञानिक श्रेष्ठता।'

कार्ल मेनिंगर (1945) के अनुसार 'मानसिक स्वास्थ्य अधिकतम खुशी तथा प्रभावशीलता के साथ वातावरण एव उसके प्रत्येक दूसरे व्यक्ति के साथ मानव समायोजन है– वह एक संतुलित मनोदशा, सातर्क बुद्धि, समाजिक रूप से मान्य व्यवहार तथा एक खुशमिजाज बनाए रखने की क्षमता है।'

चैपलिन (1975) के अनुसार 'मानसिक स्वास्थ्य का तात्पर्य कल्याण की आत्मगत अवस्था जीने के लिए उत्साह तथा अपनी क्षमताओं एवं योग्यताओं के व्यवहार के भाव के साथ उत्तम समायोजन से है।'

मानसिक स्वास्थ्य का उद्देश्य– माानसिक स्वास्थ्य का उद्देश्य ऐसे सिद्धांतों या नियमों को स्थापित करना है, जिन पर अमल करने से व्यक्ति मानसिक द्वन्द्वों से मुक्त रह सकता है, जीवन के प्रतिबलों से अपना बचाव कर सकता है। स्वास्थ्य व्यक्तिगत मूल्यों तथा व्यक्तिगत अभिरूचियों को अर्जित कर सकता है तथा अपने सीमित साधनों का सदुपयोग करके दूसरों को हानि पहुँचाए बिना सुखद जीवन जी सकता है।

पेज (1960) के अनुसार 'मानसिक स्वास्थ्य विज्ञान एक शिक्षा आन्दोलन है। जिसका सम्बन्ध स्नायुविक तथा मानसिक विकृतियों के निरोग और निराकरण तथा स्वास्थ्यकर व्यक्तित्व विकास से है, जिससे अधिक से अधिक कार्यक्षमता और सुख की प्राप्ति हो।'

वर्तमान शिक्षा का मूल उद्देश्य है, बालकों का सर्वांगीण विकास, इसका अभिप्राय: यह है कि शिक्षा बालकों की शारीरिक तथा मानसिक क्षमताओं को उचित दिशा में पूर्ण रूप से विकसित होने का अवसर देती है। शिक्षा के इस महान उद्देश्य की पूर्ति में मानसिक स्वास्थ्य विज्ञान से बड़ी सहायता मिलती है। कारण यह है कि जब तक शिक्षक, निरीक्षक तथा विद्यालय के अधिकारी मन से स्वस्थ्य नहीं होते, तब तक वे शिक्षिार्थियों के सर्वांगीण विकास के लिए उचित व्यवस्था करने में समर्थ नहीं हो सकते।

शिक्षक और उनका मानिसक स्वास्थ्य – शिक्षालय के पर्यावरण को स्वास्थ्कर बनाकर विद्यार्थियों को मानसिक रूप से स्वस्थ्य बनाने में शिक्षक का महत्वपूर्ण योगदान होता है। वास्तव में विद्यार्थियों के मानसिक रूप से स्वस्थ्य होने का उत्तरदायित्व भी काफी अंशों में शिक्षक पर ही होता है, अत: शिक्षा के उद्देश्य की पूर्ति करने तथा बालकों को मानसिक रूप से स्वास्थ्य बनाने के लिए सर्वप्रथम शिक्षक को मानसिक रूप से स्वास्थ्य होना जरूरी है।

मानसिक रूप से स्वस्थ्य शिक्षक की व्यक्तिगत विशेषताएँ – मानसिक रूप से स्वस्थ्य शिक्षक की व्यक्तिगत विशेषताएँ निम्नलिखित हैं –

1. **शिक्षण कार्य एवं शिक्षार्थी में रूचि –** मानसिक से रूप से स्वस्थ्य शिक्षक की सबसे महत्वपूर्ण विशेषता है कि मानसिक क्षमताओं के उचित विकास के लिए सदैव प्रयत्नशील रहता है।
2. **प्रजातन्त्रात्मक मनोवृत्ति –** मानसिक रूप से स्वस्थ्य शिक्षक अपने सहकर्मियों एवं शिक्षार्थिंयों के प्रति प्रजातन्त्रात्मक मनोवृत्तियों का प्रदर्शन करना है।
3. **मैत्री पूर्ण व्यवहार –** मानसिक रूप से स्वस्थ्य शिक्षक अपने सहयोगियों एवं छात्रों के प्रति सुशील एवं मैत्री पूर्ण व्यवहार रखता है और अनके हित के लिए हर संभव प्रयासरत रहता है।
4. **स्व–मूल्यांकन –** मानसिक रूप से स्वस्थ्य शिक्षक में स्व–मूल्यांकन की क्षमता भी पायी जाती है। वह अपने गुणों–अवगुणों की सीमाओं को अच्छी तरह समझता है। वह अपनी कमियों व गलतियों पर नजर रखता है, और किसी भी तरह की भूल हो जाने पर नि:संकोच उसे स्वीकार कर लेता है।
5. **भेदभाव रहित –** मानसिक रूप से स्वस्थ्य शिक्षक की एक महत्वपूर्ण विशेषता निष्पक्षता का गुण भी है। वह जातिवाद, साम्प्रदायिकता तथा क्षेत्रीयता आदि से परे, विद्यार्थियों के साथ किसी भी तरह का भेदभाव नहीं करता।

* सहायक प्राध्यापक (मनोविज्ञान) शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, नरसिंहपुर (म.प्र.) भारत

6. सहनशीलता – मानसिक रूप से स्वस्थ्य शिक्षक में सहनशीलता का गुण पाया जाता है। कक्षा में वैयक्तिक भिन्नताओं वाले छात्र होते हैं जिनमें कुछ समस्यात्मक एवं अनुशासनहीनता का प्रदर्शन करते हैं ऐसी स्थिति में मानसिक कठिनाईयों एवं समस्याओं को समझकर उनका समाधान करता है एवं उचित मार्गदर्शन करता है।

7. आकर्षक व्यक्तित्व – मानसिक रूप से स्वस्थ्य शिक्षक का व्यक्तित्व आकर्षक होता है। उसका पहनावा, चाल–ढाल, बातचीत का लहजा, रहन–सहन शारीरिक संरचना शिक्षण शैली एवं ज्ञान के माध्यम से वे एक प्रभावपूर्ण एवं आकर्षक व्यक्तित्व का प्रदर्शन करते है।

8. सकारात्मक मानसिकता एवं शीलगुणों से मुक्त – सकारात्मक सोच एवं शीलगुण श्रेष्ठ व्यक्तित्व एवं उत्तम मानसिक स्वास्थ्य के महत्वपूर्ण गुण हैं। ये स्वंय शिक्षक के साथ–साथ छात्रों के लिए भी कल्याणकारी होते हैं। उनका मन–मस्तिष्क एक सर्जनात्मक उर्जा से भरा होता है। वे सच्चे अर्थों में जीवन को जीते हैं और हर पल–क्षण का आनंद लेते हैं।

9. गलतियों को स्वीकारना – मानसिक रूप से स्वस्थ्य शिक्षक किसी भी तरह की गलती होने पर उसे नि:संकोच स्वीकार कर लेते हैं, वे पश्चाताप करते हैं एवं गलतियों को सुधारते भी हैं।

10. उत्तम चरित्र एवं शिष्टाचारी – शिक्षक छात्रों के लिए एक आदर्श होता है। मानसिक रूप से स्वस्थ्य शिक्षक उत्तम चरित्र वाला, मर्यादित शिष्टाचारी होता है तथा अपने छात्रों के लिए एक अच्छे आदर्श रूप में पहचाना जाता है।

11. मनोवनोदी – मानसिक रूप से स्वस्थ्य शिक्षक मनोविनोदी होते हैं। वे खुद भी खुश रहते हैं एवं छात्रों को खुश रखते हैं। इससे छात्रों का शिक्षक के प्रति डर एवं संकोच दूर होता है एवं पठन पाठन में रूचि बनी रहती है।

12. निरोगी – मानसिक रूप से स्वस्थ्य शिक्षक शारीरिक रूप से भी स्वस्थ्य रहता है, वह अपने स्वास्थ्य के प्रति सदैव सतर्क रहता है।

13. पाठ्येत्तर गतिविधियों में रूचि – मानसिक रूप से स्वस्थ्य शिक्षक की शिक्षण कार्य के अलावा पाठ्येत्तर गतिविधियों में भी रूचि रहती है। खेल कूद, एन.सी.सी., एन.एस.एस., साहित्यिक एवं सांस्कृतिक गतिविधियों के साथ–साथ वह अन्य मनोरंजक क्रिया–कलापों में भी भाग लेता है।

14. उत्तरदायित्व का निर्वहन – मानसिक रूप से स्वस्थ्य शिक्षक उसको सौंपे गए उत्तरदायित्वों से भागता नहीं बल्कि उनका भली–भाँति निर्वाहन करता है।

15. अनुशासन – मानसिक रूप से स्वस्थ्य शिक्षक को अपनी मार्यादा की सीमाओं का ज्ञान होता है, वह पूर्ण मर्यादित एवं अनुशासित व्यवहार का प्रदर्शन करता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. सुलेमान मोहम्मद (2002) उच्चतर शिक्षा मनोविज्ञान, प्रकाशक – मोतीलाल बनारसी दास दिल्ली, प्रथम संस्करण, पृ. क्र. 482–497.
2. सुलेमान मोहम्मद (2011) असामान्य मनोविज्ञान, प्रकाशक – मोतीलाल बनारसी दास दिल्ली, पृ. क्र. 580–579
3. सिंह अरूण कुमार (2005) उच्चत्तर नैदानिक मनोविज्ञान, प्रकाशक– मोतीलाल बनारसी दास, दिल्ली, तृतीय संशोधित संस्करण, पृ. क्र. 530–551
4. व्यक्तिगत शोध एवं सर्वेक्षण।

****

The Study Of Imperial Impact Of English On Indian Society

Mona Gupta * Dr. Asha Dubey **

Abstract - With the end of British rule in India, English language witnessed favours and frowns from different political groups. The nationalists on one hand were keen to shake off all traces of British dominion and tyranny. Accusing and viewing English as the language of imperialism, they favoured and advocated complete abandoning of English language. Those in support of English rationalised it as the window to the world. Sooner it was declared and designated as the official language of the Govt of India. Ever since the post colonial period, there has been a perceptible increase in the use of English language. English has permeated in Indian society to such an extent that branding it as imperialist language seems quite apt. The paper aims at studying various domains and social strata where it is widely used. It will also review outlooks and language competence of different social strata in the usage of English language. The study will comprehensively cover elite class, cosmopolitan, urban middle class, rural middle class and lower class of Indian society.

Key Words - language Imperialism, colonial rule, social strata.

Introduction - In Persian there is a saying which appropriately states language imperialism. It asserts that "the language of the ruler is the ruler of languages: Kalam-ul-Malik,Malik-ul Kalam."1 The term imperial here is used to connote exercising control though not through the military control, diplomacy or political interference but through dominance and extension. The saying befits Britain's colonies including India. English language, the language of British became the lingua franca in India with its long retention which was for two hundred years. Its root penetrated deep into all states and slowly gained widespread acceptance. The history is full of examples where the footprints of ruler's language overpowered the language of the ruled land. Roman conquers left the English shores about two millennia ago, but the relics of Latin are still to be found in English Language. This exemplifies how conquering country's language continues to impact a former colony even after the conqueror leaves. Before British dominance, India was invaded by Muslims. During Mugal period Urdu, the new entrant made its presence felt in an emphatic manner. Unfortunately, their language Urdu, failed to reach the southern most areas of India. Unlike Urdu, English gained roots in the entire country owing to the educational policy of Lord Macaulay. The Colonial subjects had no choice but to follow the policy. They half heartedly learnt the language imposed on them. Missionaries too played a vital role in promoting English to rear corners of India. Nationalists, however, strongly resisted English as they feared it would colonise Indian minds. Its advancement and long stay in states would endanger the progress and growth of native languages .The great leader like Gokhle, Gandhi also discouraged education through English language. Gandhiji has stated in *Young India* that "English today is studied because of its commercial and so called political values. Our boys and girls think that without English they cannot get govt services. Girls are taught girls English as a passport to marriage. I know husbands who are sorry that their wives cannot talk to them and their friends in English. I know families in which English is being made the mother –tongue. All these are for me signs of our slavery and degradation."2

Despite anti English sentiments, English earned a respectable status of the official language of India. The Indian constitution adopted in 1950 envisaged that Hindi would be gradually phased in to replace English over a fifteen –year period, but gave parliament the power to, by law, provide for the continued use of English even thereafter3. The designation of official language further strengthened English grip in Indian society. It continued as it has the capability of handling the technicalities of administration, justice, technology and science. It also acted as a link language in multilingual India.

Owing to the growing stature of English in various domains such as formal education, media, sports, trade and commerce science and technology, international relations and correspondence, the number of users of the language too has increased. In educational field the ever increasing demand for English resulted in mushrooming of

*Asst. Professor (English) Govt. Arts College, Panagar (M.P.) INDIA
**Asst. Professor (Economics) Govt. Arts College, Panagar (M.P.) INDIA

large number of English medium schools, coaching centres and private tuitions. The private schools with their names bearing colonial stamps attracted all social classes. The British convent school, St Mary's convent school, Scottish convent school and so on are lauded as the best centres of English education. Further, the desire of parents to make their child fluent in English is reflected in making their small wards learn nursery rhymes in English, memorise Roman months and Roman numbers. This has bred child's familiarity more with English alphabets rather than the alphabets in his or her native language. Hindi months namely Paush, Falgun …. chaitra Baisakh jesth aashard saavan ,bhado kunwar etc are not in the vocabulary of these learners. Today English has insinuated itself in the speech of the illiterate peasant as well the most sophisticated urbanite. None can carry on a conversation on any topic without a liberal profusion of English words. Favouring English language Khushwant Singh has very rightly remarked in one of his article *English Zindabad versus Angrezi Hatao* that "we got rid of our rulers; but must we foolishly give up the good with the bad? Must we throw out the baby with the bathwater?"

In literary circle, there are many a Hindi writers who take liberty in using English words in their writings. Usha Priyamvada ,Mridula Garg, Chitra Mudgal Malti Joshi and many more. Malti Joshi 's collection of short stories in the book entitled *Madyantar* bear number of conversation in English. The novel *Shesh Yatra* of Usha Priyamvada ,*Krishna kali* and *Atithi* of Shivani, *Shah aur Maat* by Rajendra Yadav , the story *Chief ki Dawat* by Bhishma Sahni have innumerable English words and conversational lines. ….The switch from Hindi words to English words and using long English sentences in their piece of writings reflect that even non English writers feel comfort in using English. Similarly, a number of Hindi magazines having English titles are in circulation in India. Outlook, India Today, Sports Star, Business Today, Economic Times Capital Market…are some such known examples of it. Besides this, the field of media be it the print media, air or electronic, are profusely using English. This quantum leap in usage of English words have gained acceptance in native languages to such an extent that they seem to overshadow the vocabulary of indigenous language. The launchers of well known "Make in India Policy" are pro Indians from the core of their heart but have deliberately framed their mission's title in English language feeling the pulse of contemporary times. Even in the world of entertainment i.e. Film industry full English paragraph amidst Hindi songs is in vogue.

The rural community and the lower class community are also familiar with many English words. They have picked these words from their surroundings. Electronic media and print media have played a pivotal role in exposing them to these words Repetitive exposure to these increases their passive vocabulary. The recent process of demonetization has made even a layman familiar with words like demonetization, cashless transaction currency, balance account etc

This language has influenced all social groups in Indian society. Each group has its own justification regarding the usage of this language. A small section of Indians belonging to elite class did welcome English language associating it with cultural prestige and considering it as the very breath and life for survival in upper circle. This group believes that those speaking English as first language are seen as privileged. Elites believe English speakers as polished refined and having a class.

The urban middle class and rural middle class are motivated by the impulse that English is key to economic prosperity and social advancement. It is lauded as the language of modernization and globalization. In big metropolis of India, it is difficult to come across any educated person who can speak any Indian language well without avoiding the use of English words. Command over English language gives a feeling of pride, confidence and satisfaction to the knower. A general believe among youth is that English language earns them respect and leadership respect from their colleagues.

The rural class and lower class emulate the model setting behaviour of the upper and middle classes. A survey carried out amongst illiterate peasants and workers around Delhi, asking them the option of what language they would like to learn, the majority opted for English. Zareer Masani's book on *Macaulay, pioneer of India's Modernization mention* how some dalit groups belonging to lower strata of society claim that Macaulay gave them a passport out of cast oppression via English language. These dalit groups celebrates Macaulay's birthday and worships English, the mother Goddess, who they hope will save the next generation from oppression. For them English is panacea of all ills. Similarly, the domestic maids at home are ready to part with one third of their salary on imparting English education to their children.

The rural community and the lower class community have picked many English words phrase and sentences from their surroundings. Electronic media and print media have played a pivotal role in exposing them to English language .Repetitive exposure to these increases their passive vocabulary. The recent process of demonetization has made even a layman familiar with words like demonetization, cashless transaction currency, balance account etc.

Undeniably ,the theories of cognitivists and behaviourists schools of learning that acquisition of a language depends more on exposure is proved through the English in air. which has significantly contributed to certain extent of language learning. The competence, fluency and correct English would need more of exposure to syntactical and grammatical improvement. The aspirants if sincerely make endeavour may get fluency in the language which at present is limited to some words and few broken constructions.

The search concludes that the push for English was

always there from colonial rule .Even without Macaulay , English language would have come and got percolated in Indian society. In a way it ensured political unity which otherwise would have been split along linguistic lines. The imperial impact of English language doesn't seem to fade away from Indian society in near future. In fact, it would gain strength with the passage of time. Khushwant singh has well foreseen the stay of English in India which he has expressed in a light manner in the following lines…. Make peace with English language. Drape her in a Banaras brocade sari as you would if your son brought home a foreign daughter-in law, …don't waste your energies fighting against her because she has come to stay "till death do part us"3

References :-

1. Dwivedi A.N. *A History of the English Language.* Bareilly :Prakash Book Depot Bara Bazar Reprint 2008,2011 p126
2. Gandhi Mahtama, (1919-22), Young India, p 482
3. Baugh Albert C . *A History of English Language.* New Delhi: AlliedPublishers Limited 1994 Reprint ISBN no 81-7023-037-3
4. Singh Khushwant *We Indians* New delhi: Orient Paper Back ISBN81-222-0015-X
5. Bhatia Sidharth article in - Times of India

✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻

Youth And Spiritual Education

Dr. Seema Sharma *

Introduction - It is often said that spiritual life education or the needs for spiritual values starts at old age. We say that when we get retired we will start reading religious books like, The Gita, The Ramanyan, The Mahaharat, The Bhagwat Puranas etc. This is a false myth because the need for spiritual education starts at an early age. The Sanskars become a part of our life if we are aware to give value based education since childhood.

Our ideals in life are based on the moral stories or fables which we listen from our mother and old people. These are full of religious characters or historical legends. Those stories mould our characters. We wish to become like these characters. If we the story of Shri Ram and his struggle, to our children, they went to become like him. His greatness and the qualities of being "Super human" inspire our children. We cannot ignore the fact that the spiritual education is not a look other than our life. It is a part and parcel of bar day today life.

The question arises, why spiritual education for "youth". To give moral education to our young generation, spiritual education is necessary.

Religion is not made for one person. It is for humanity. For us the does not teach to live for "one self" but to live for others". There are the famous sayings of the Ram Charitmanas -

'पर हित सरिस धरम नहीं भाई
पर पीड़ा सम नहीं अधमाई।'[1]

This means that the favour done for others and to understand the pain in others life is the real religion."

India is famous for its spiritual, moral values. We live in a country where our mother and motherland are given the utmost importance".

'अपि स्वर्णमयी लंका न मे लक्ष्मण रोचते।
जननी जन्मभूमिश्च स्वर्गादपि गरीयसी।'[2]

Ram says to Lakshman that for him the golden lanka is not a lovable as my mother or my motherland.

The spiritual values are not injected in any human being. He learns it from his society. The learnings of great ancient Vedas and the Gita have gone for away from our lives. Our young generation is not able to see values in our life. We do not respect our mother our parents, our motherland as we used to do in ancient times. We are unaware of the fact that what we present before our generation will be transferred to them.

We think that our day, today life and our ideals are two different things. Therefore we keep a distance from our ancient religious books.

The Aachar vichar or the ethics of our lives depends on how we inculcate Sanskars in our children. If we do not have time to give to our children, they will learn everything from whatever they see in the society. They will learn the ways to behave from whatever is available to them, be it mobiles, internet, media. We see that if a child is intelligent or good in his text books, like Maths or Science, he will became a good human being. He will became an intelligent person but it is not necessary that he will become a good human being.

Love, peace, non violence, mercy and brotherhood are the pillars of moral education. Moral values can be best understand in the "Gita".

कर्मव्येवाधिकारस्ते माफलेषु कदाचन[3]

This means that do not think about the result, concentrate only on work.

Now the question arises what is "Sanskar" and what is Sanskriti".

"Sanskar" means to do anything properly. "Sanskriti" is anything done. Properly, finish in a neat manner. In India there is a lot of emphasis on "Sanskar" and "Sanskriti". Both Sanskar and Sanskriti are for the purification of body, mind and soul.

वैदिकैः कर्मभिः पुण्यैर्निषेकादिर्द्विजन्मनाम्।
कार्यः शरीर संस्कारः पावनः प्रेत्य चेह च।।[4] (मनुस्मृति 2126)

This means that according to Manu Sanskar is for this life as well as beyond this birth. It is for the next birth also. Body and soul both need purification. There are physical as well as mental impurities. The purification means uSfrd or Ethical, moral, social, intelligence, ego related activities will be called as Sanskriti or "culture". To know a man how cultured he is a famous saying is -

"Speak so that I may know you"

As long as a person is silent, we cannot judge him. As soon as he speaks we can judge his culture, his family background, his education and his upbringing. "Words" and choice of words, your way of speaking, your reactions and

*Professor (English) Govt. Sanskrit College, Ujjain (M.P.) INDIA

actions and reactions, body language reflect your culture. Sanskriti or culture is inner element yet if is reflected in the form of Religion, Philosophy, Art, Thoughts, Spiritualism, society and morality. Therefore our life style our decision are based on our culture. In India youth has a good scope of development in the field of "moral values". Therefore "moral education" is included in the syllabus.

How we treat our environment, our relatives, our friends, our colleagues, shows our culture. In our country the earth on which we live, the pees, the rivers, the water, the air, the seas, the sky, everything is worshipped. We worship nature to pay our respect to the god who created everything for us.

We have come to know about the Sanskars after a long chain of experiences. Our ancestors said that what should be the result of knowledge or Vidya.

विद्या ददाति विनयं'

This means that knowledge makes us humble and honest. The more literacy we become the more soft hearted we should be. We should live for others. We pray for everyone's well being we should pray that everyone lives happily on the earth.

सर्वे भवन्तु सुखिनः सर्वे सन्तु निरामयाः।
सर्वे भद्राणि पश्यन्तु मा कश्चिदुःखभाग्भवेत्।।[5]

Brihadaranyanka Upnishad 1.4.14

This means -
May all be prosperous and happy.
May all be free from illness.
May all see what is spiritually
Uplifting
May none suffer
One peace, peace, peace

Moral values play a major role in a nation's development. The young generation builds the nation's future. The youth needs some guidance which can help to build a strong character. Respect for women is the main quality described in our great epics such as Ramayana and Mahabharat. In Chanakyavati respect for women is described as :

मातृवत्परदारेषु परद्रव्येषु लोष्ठवत्।
आत्मवत्सर्वभूतेषु यः पश्चति स पण्डितः।।

चाणक्य नीति ।2।14

This shows that moral values play a major role in a Nation's building. The youth of our country needs the inspiration from our culture and our tradition. The traditions change from time to time but the basic concepts of life do not change, the basic ideals do not change.

To save our environment to save our earth from moral pollution we must go back to our ancient culture. Where it is said."

सर्वतीर्थमयी माता सर्वदेवमयः पिता।
मातरं पितरं तस्मात् सर्वयत्नेन पूजयेत।।
मातरं पितरं चैव यस्तु कुयति प्रदक्षिणम्।
प्रदक्षिणीकृता सेन सप्तदीपा वसुन्धरा।।

(प. पु. सृष्टिखण्ड) 47/11–12

If these qualities are inculcated in our children, the future of our nation will be bright forever.

References :-

1. Ramcharitmanas Gitapress, Gorakhpur.
2. The Bhagwad Gita Gitapress, Gorakhpur
3. संस्कार अंक Sanskar Anka Kalyan, Gitapress, Gorakhpur, P.no.200, 2006

****

अज्ञेय के काव्य में प्रकृति के विविध रूप

डॉ. आईशा खान *

प्रस्तावना – अज्ञेय जी यायावरी वृत्ति के व्यक्तित्व थे, अत: प्रकृति के प्रति उनकी गहन निकटता स्वाभाविक ही थी। सृष्टि के प्रांरभ से प्रकृति, मनुष्य की सहचरी रही है। अंतर्मुखी व्यक्तित्व के स्वामी 'अज्ञेय की संवेदनाएँ प्रकृति के सान्निध्य में सघनता पाकर अनुभूति एवं अभिव्यक्ति पाती है। अध्यात्म हो, दर्शन हो, विज्ञान अथवा प्रेम हो– सभी अनुभूतियाँ प्रकृति के माध्यम से अभिव्यक्त हुई हैं। जहाँ एक ओर अज्ञेय जी ने अनेक कविताओं में प्रेमानुभूतियों को प्रकृति–चित्रों के माध्यम से अभिव्यक्त किया है, वहीं दूसरी ओर प्रकृति के संसर्ग में एक अनिवर्चनीय आनंद का मुक्त चित्रण भी किया है। प्रकृति के आलंबन और उद्दीपन के अतिरिक्त मनोविश्लेषणात्मक प्रतीकों के रूप में भी प्रयोग हुआ है। अनेक कविताओं में अज्ञेयजी ने प्रकृति के माध्यम से अपनी आत्म–चेतना को अभिव्यक्त किया है। प्रेम की व्याकुलता का यह प्रकृति–चित्र उल्लेखनीय है –

'पूर्णिमा की चाँदनी
सोने नहीं देती।
चेतना अन्तमुखी स्मृतलीन होती है, देय पर भी सजग है –
खोने नहीं देती' (पूर्वा)

प्रेम का यह चित्र केवल भौतिक नहीं, अपितु वह आत्मा के व्यापक धरातल में भी व्याप्त है। वह मनुष्य की चरम सृष्टि का अंग है –

' वे सब है
और मेरे प्यार तुम भी हो
चाँदनी भी है
मधु के गंध बहुविध–पल्लवों के
कारको के –
गन्धवह में बसे
वे भी हैं
चाँदनी भी है।'

प्रेम में प्रकृति का साथ उस संवेदना को अर्थवान बनाने में सहयोग देता है। अज्ञेय के काव्य में भी यह प्रेम प्रकृति और पुरूष के प्रेम तक जाता है। यचिन्ता काव्य–संग्रह' की सभी कविताएँ स्त्री–पुरूष के प्रेम तथा उससे आगे जाकर उनके जन्म जन्मांतर के प्रेम तथा प्रेम जनित संतुष्टि की कहानी कहती है।

कवि इच्छा करता है कि वह 'आदिमपुरूष' और उसकी प्रिया पहली 'मानववधूका' बनकर दोनों 'आदिम प्रेमांजलि' दे लें। दोनों का मिलन होता है –

'वधूके, उठो।
रात्रि के अवसान की घनघोर तमिस्रता में,
अनागता उषा की
प्रतीक्षा की अवसादपूर्ण थकान में हम जाग रहे हैं
मैं और तुम।।' (चिन्ता)

कभी अज्ञेय का प्रेमी कवि 'चिन्ता' में नारी को यतितली' तो कभी यछलना' कहकर प्रेम के उत्थान–पतन को चित्रित करता है, तो कभी इस प्रेम में केवल पीड़ा को देखता है। निराश प्रकृति विहाग गीत गाती है, लेकिन यह अनुभव कवि को पुन: संसार का निर्माण करने की साध देता है। अब उसके लिए प्रिया प्रेमरूपी प्रज्जवलित रूप की शिखा है और वह छाया, प्रियतमा क्षितिज की संधिरेखा का आकाश है और वह वहाँ पृथ्वी। अर्थात् वह प्रियतमा को पाकर भी नहीं पा सकता। वह कहता है –

'तुम चैत्र के वसंत की तरह हो, प्राप्ति से शून्य किन्तु आशा से परिपूरित।' (चिंता)

नारी की प्रणयानुभूति के विभिन्न रूप भी मिलते हैं। हास, उल्लास, अश्रु, रूदन भी है। कभी नदी और समुद्र के द्वारा अपनी और अपने प्रिय संबंधों की बात का वह संकेत करती है। कभी गा उठती है, कभी प्रणय की पीड़ा की निष्ठुरता का बोध अनुभव करती है।

'भग्नदूत', 'चिन्ता' और 'इत्यलम' संग्रहों की रचनाओं में यही छायावादी भावप्रवणता अधिक हैं।

यहिय हारिल' में कवि ने हृदय को हारिल पंछी की उपमा देकर अपने लिए यहारिल' को आदर्श के रूप में लिख है –

'उड़चल, हारिल लिए हाथ में
यही अकेला ओछा तिनका।
उषा जाग उठी प्राची में –
कैसी बाट, भरोसा किनका।'

वंचना के दुर्ग में अज्ञेयजी में यौन प्रतीकों के द्वारा सामाजिक वर्ग–चेतना पर व्यंग्य किया है –

'घिर गया नभ, उमड़ आए मेघ काले
भूमि के कंपित उरोजों पर झुका–सा
विशद, श्वासाहत, चिरातुर
छा गया इन्द्र का नील वक्ष
वज्र सा, यदि तडित् से झुलसा हुआ सा।'

'मिट्टी की ईहा' में मिट्टी साधारण जन की प्रतीक बनकर प्रस्तुत हुई है –

'बसंत के उस अलहड़ दिन में
एक भिदे हुए,फटे हुए लोंदे के बीच से बढ़कर अंकुर ने
तुनक कर कहा –
मिट्टी ही ईहा है।'

* सहायक प्राध्यापक (हिन्दी) महाराजा भोज शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, धार (म.प्र.) भारत

'ऋतुराज', शाली, 'पानी बरसा','माघ फागुन चैत्र', 'आषाढ़स्य प्रथम दिवस' आदि कविताओं में प्रकृति की तद्धत् सत्ता का निरूपण है, इनमें छायावादी मानवीय आरोप नहीं है। 'हरी घांस पर क्षण भर' संग्रह की कविताऐं प्रकृति और जीवन का रंगीन अलबम-सा है। इसमें भी प्रकृति है, प्रणय है, सामाजिक दाय का बोध है लेकिन ये सब रोमांटिक भावावेग से संवृत्त न होकर बौद्धिकता का संस्पर्श लिए हुए है। इनकी परिणिति यथार्थ के नये बोध में होती है -

'सबेरे-सबेरे
नहीं आती बुलबुल,
न श्यामा सुरीली
न फुदकी न दंहगल
सुनाती है बोली,
नहीं फुलसुंघनी
पतेना सहेली
लगाती है फेरे।।'

'नदी के द्वीप' में व्यक्ति और समाज के पारस्परिक संबंधों तथा व्यक्तिमत्ता से संयुक्त उनकी सामाजिकता का वर्णन है। 'नदी' समाज अथवा समष्टि की और 'द्वीप' व्यक्तित्व संपन्न व्यष्टि सत्ता की प्रतीक है -

'हम नदी के द्वीप हैं
हम नहीं कहते कि हमे छोड़कर
स्त्रोतस्विनी बह जाए।
वह हमें आकार देती है।'
हमारे कोण, गलियाँ, अन्तरीय, उभार, सैकत कूल,
सब गोलाइयाँ उसकी गढ़ी है।
माँ है वह। है, इसी से हम बने हैं।'

नदी के द्वीप कविता में व्यक्ति और समाज के संबंध की इस भूमिका पर स्वीकृति है। एक कविता 'कवि हुआ क्या फिर' में कवि भावनाओं का महत्व लोक-कल्याण के परिप्रेक्ष्य में ही करते हैं -

'सुनो कवि। भावनाएँ नहीं है सोता,
भावनाएँ खाद हैं केवल।
जरा उनको दबा रखो
जरा सां और पकने दो
ताने और तचने दो
अंधेरी तहों की पुट में पिघलने और पचने दो,
रिसने और रचने दो -
कि उनका सार बनकर चेतना की धरा को कुछ उर्वरा कर दें,
भावनाएँ तभी फलती हैं कि उनसे लोक के कल्याण का अंकुर कहीं फूटे।'

'पहला दोंगरा' कविता में गगन में मेघ के घिर आने के साथ प्रिया की याद घिर आने की बात हैं।

'हरी घास पर क्षण भर', 'बावरा अहेरी', और 'इन्द्रधनु रौंदे हुए ये', संग्रहों में अज्ञेय का कवि एक ओर प्राचीन परंपरा का निर्वहन करता दिखता है तो दूसरी ओर यथार्थ चित्रण की नवीन परंपरा की स्थापना करता भी। प्रकृति इन संग्रह की कविताओं में कई नए रूपों में आई है। वह कहीं उषा वधु के रूप में घूँघट काढ़ती है, तो कहीं वह यनिबिडाऽन्धकार को मूर्तरूप देने वाली, अकिंचन, अनाहूत, अज्ञात द्युति किरण बनकर भव्यशांति की भव्यता को झूठा सिद्ध करती है। 'पहाड़ी काक की हाँक' कविता में एक ही दृश्य को कवि ने विभिन्न रूपों में अवतरित किया है-

'भोर की प्रथम किरण फीकी ..... धीरे धीरे / उदित
रवि का। लाल-लाल गोला।
चौंक कहीं पर
छिपा मुदित। बन पांखी। बोला।'

और दूसरे रूप में यही दृश्य कुछ इस प्रकार हो गया -

'ओ तू पगली आलोक-किरण
सुअर की खोली के कर्दम पर बार-बार चमकी
पर साधक की कुटिया को वज्र-अछूता
अंधकार में छोड़ गयी।'

सूर्योदय के समान सूर्यास्त भी कवि में अनेक भाव जगाते हैं। - 'खुल गयी नाव', 'साँझ मोड़ पर विदा', 'सूर्यास्त, शरद की सांझ के पक्षी', 'संध्या तारा', 'सागर पर साँझ' आदि में सांयकालीन प्रकृति का भाव-वर्णन मिलता है-

'ऊगा तारा मैंने देखा नहीं कि कब बुझ गया।
लाल आलोक सूर्य का।
पर जब देखा, देखा यही,
कि पेड़ो-चट्टानों में उलझी हारी हुई
लालिमा में द्योतित है शुक्र
अकेला तारा।'

'शुक्र तारा' यहाँ आशा और उत्साह का नवीन प्रतीक बनकर चमक रहा है।

छायावाद में भी प्रकृति और प्रणय की रचनाओं का बाहुल्य है, लेकिन अज्ञेय की प्रकृति और प्रणय संबंधी रचनाओं में कवि का रूख गैर-रोमेन्टिक होते जाने तथा आधुनिक भावबोध के प्रति रहा है -

'भोर की
प्रथम किरण
फीकी।'

'बावरा अहेरी' में 'अहेरी' सूर्य का प्रतीक बनकर प्रस्तुत हुआ है'

'भोर का बावरा अहेरी
पहले बिछाता है आलोक की
लाल लाल कनियाँ'

इस अहेरी से कवि अपने मन-विवर की मलिनता साफ करने का अनुनय करता दिखता है -

'एक बस मेरे मन-विवर में दुबकी कलौंस को
दुबकी ही छोड़कर क्या तू चला जाएगा।'

'बसंतगीत', 'बसंत की बदली', 'हवाएँ चैत की', 'ये मेघ' साहसिक सैलानी, 'शरद की साझ के पंछी' आदि प्रकृति विषयक रचनाएँ हैं।

अज्ञेयजी ने 'नखशिख' जैसी रीतिकालीन परिपाटी की रचना में भी प्रकृति अंनूठा चित्रण किया है। 'नखशिख' में अंग सिर्फ नैन और ओंठ हैं -

'तुम्हारी देह
मुझको कनक चम्पे की कली है
दूर ही से
स्मरण में भी गंध देती है।'

'बावरा अहेरी' की तरह सामाजिक चेतना से अनुस्थूत रचना है, 'दीप अकेला'

'यह दीप अकेला स्नेह भरा
है गर्व भरा मदमाता, पर
इसको भी पंक्ति को दे दो।'

व्यक्ति को अपने अस्तित्व को सुदृढ़ बनाकर समाज को अपना दाय देना चाहिए यही कवि का दर्शन है।

दूसरी ओर 'हरी घास पर क्षण भर' कविता में अज्ञेयजी ने नगरीय जीवन की संवेदना चित्रित की हैं –

'सृष्टि के विस्तार का – ऐश्वर्य का
औदार्य का –
कहीं सच्चा, कहीं प्यारा
एक प्रतीक
बिछली घास है।'

'दूर्वाचल', 'कितनी शांति। कितनी शांति','सो रहा हैं झोंपय, 'क्वांर की बयार', 'शरद', केतकी पूनो आदि कविताएँ प्रकृति के झीने चित्रों और संवेदनाओं से भरी पड़ी हैं।

अज्ञेयजी की कविताओं में एक विशेष उल्लेखनीय उनके वे प्रकृति–चित्र हैं, जो आधुनिकीकरण की प्रक्रिया में दम तोड़ रही प्रकृति की वेदना प्रस्तुत करते हुए मानव–जाति के लिए खतरे का संकेत देती हैं–

'गाज, बाज, बिजली से घेर, इन्द्र ने जो रखी थी –
शारदा ने हस कर वो तारो की लुटा दी थाती।।'

'हवाई यात्रा' कविता में भी वैज्ञानिक युग की यांत्रिक घुटन उभर आई है –

'रासायनिक धुंध के इस चीकट संबल की
नई घुटन को
मानव का समूह–जीवन इस छिल्ली में ही
पनप रहा है।'

'अरी ओ करूणा प्रभामय, 'कितनी नावों में कितनी बार', 'आंगन के पार द्वार' में कवि प्रकृति को आध्यात्मिक संचेतना के रूप में चित्रित करता है।

'इशारे जिंदगी के' कविता की पंक्तियाँ देखिए –

'एक नीरव नदीं बहती जा रही थी,
बुलबुल उसमें उमड़ते थे रह : संकेत के :
हर उभड़ने पर हमें रोमांच होता था,
फूटना हर बुलबुले का हमें तीखा दर्द देता था।'

'अंत:सलिला', 'बना दे चितेरे', 'भीतर जागा दाता', 'साँस का पुतला', 'सूनी सी साँझ', अज्ञेयजी के आध्यात्मिक दर्शन की प्रतिनिधि कविताएँ है। आत्मा–परमात्मा के विवाह का यह चित्र भारतीय अद्वैत – चिन्तन की परिणति है –

'मिट्टी के भीतर
पत्थर था
पत्थर के भीतर
पानी था
पानी के भीतर
मेंढ़क था
मेंढ़क के भीतर
अस्थियाँ थी यानी मिट्टी पर था,
लहू की धार थी यानी पानी था
श्वास था यानी हवा थी
जीव था चानी मेंढ़क था।' (आंगन के पार द्वार) पृ. 41

'असाध्य वीणा' कविता भी सम्पूर्ण सृष्टि की चेतना को स्वयं में समेटती प्रतीत होती है –

'अरे रे तरू। ओ वन।
ओ स्वर –संभार।
नाद–मय संसृति।
ओ रस प्लावन।
मुझे क्षमा कर– अकिंचनता को मेरी –
मुझे ओट दे – ढंक ले– छा ले –
ओ शरण्य।
मेरे गूंगेपन को तेरे सोये स्वस्सागर का
ज्वार डुबा ले।'

'सागर मुद्रा' कविता में सागर के विविधोन्मुखी रूप उभर आए है –

'सागर की लहरों के बीच से वह
बाहें बढ़ाये हुए
मेरी ओर दौड़ती हुई आती हुई
पुकारती हुई बोली
तुम–तुम सागर क्यों नहीं हो?'

'सदानीरा' में कवि की प्रकृति के नाश के प्रति चिंता तथा आक्रोश दिखाई देता है।

'झटक कर सिर वह हिलाती है
और उग आता है
पटसन की बदली में
रंगा–पुता पन्ने का चांद।।'

'खुले में खड़ा पेड़' में आज के मनुष्य की स्थिति स्थावर पेड़ से भी कितनी गई बीती है – उसका संकेत है –

'क्यो मेरी अकल मारी गई थी कि मैं
देहात में देखने गया
खुले में खड़ा पेड़।'

'सो रहा है झोंप' कविता में कवि ने प्रकृति का यौन बिम्बात्मक चित्र प्रस्तुत किया है –

'सो रहा है झोंप अंधियाना नदी की जांघ पर।'

इसी तरह 'जब पपीहे ने पुकारा' में संयोग का चित्र देखिए –

'जब पपीहे ने पुकारा–मुझे दीखा .....
..... पिया से ऊपर झुके उस फूल को
ओंठ ज्यों ओठों तले।'

और भी अनेक प्रकृति–चित्र है, जिनमें कवि ने फ्रायडीय मनोविश्लेषणात्मक, काम वासना और संयोग क्रीड़ाओं का खुला चित्रण किया है। जैसे –

'मिलन हो, मुख चूम ले
ले विदा फिर राह अपनी'

दांपत्य चित्र भी देखने को मिलते हैं जैसे –

'पति–सेवारत साँझ
उझकता देख पराया चाँद
लजाकर ओट हो गयी।'

यायावरी वृति कवि की ये पंक्तियाँ देखिए –

पार्श्वगिरि का
नम्र चीड़ो में
डगर चढती मंगो सी
बिछी पैरो में नदी
ज्यो दर्द की रेखा
विहग-शिशु मौन नीड़ो में।
मैने आँख भर देखा।
दिया मन को दिलासा-पुन: आऊँगा
भले ही बरस-दिन-अनगिन युगों के बाद
क्षितिज ने पालक-सी खोली
तमककर दामिनी बोली -
अरे यायावर। रहेगा याद ?

अज्ञेय की कविताओं में आरंभ से अंत तक प्रकृति की संवेदना और चित्रांकन है। जहाँ एक ओर अज्ञेयजी ने प्रेम की सूक्ष्म अनुभूतियों को प्रकृति के चिर साहचर्यत्व के साथ अभिव्यक्ति दी है, वहीं दूसरी ओर समाज, अध्यात्म और मानवीयता तथा उसके अस्तित्व के लिए जिम्मेदार विज्ञान और यांत्रिकी के संकट पर भी चिंता व्यक्त की है। प्रकृति के साथ कवि ने विविध भाव बोधों को अभिव्यक्ति प्रदान की है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. चुनी हुई कविताएँ - अज्ञेय राजपाल प्रकाशन।
2. आँगन के पार द्वार - अज्ञेय, भारतीय ज्ञानपीठ प्रकाशन, नईदिल्ली।
3. सदानीरा - अज्ञेय
4. इन्द्रधनु रौंदे हुए ये - अज्ञेय।
5. अरी ओ करूणा प्रभामय - अज्ञेय।
6. अज्ञेय-विचार और कविता - डॉ. राजेन्द्र मिश्र, तक्षशिला प्रकाशन, नईदिल्ली।
7. अज्ञेय की शिखर अनुभूतियां - डॉ. ज्वालाप्रसाद, वि.वि. प्रकाशन, वाराणसी, उ.प्र.।
8. अज्ञेय के काव्य में बिम्ब - डॉ. टी. शांतकुमारी, जवाहर पुस्तकालय, मथुरा, उ.प्र.।
9. अज्ञेय साहित्य विमर्श- डॉ. सुरेशचंद्र पांडेय।
10. अज्ञेय - एक अध्ययन - भोलाभाई पटेल, गुजरात युनिवर्सिटी, अहमदाबाद।

****

भीली लोकागीतों का वर्गीकरण

डॉ. मीरा जामोद *

प्रस्तावना – लोक संगीत प्रकृति की विभिन्न देनों में एक देन है, जो मानव के लिए वरदान है। प्रकृति के समस्त घटकों यथा सूर्य, चन्द्र, आकाश, पृथ्वी, नदी, पहाड़, सागर, खेत – खलिहान, वर्षा, ठंड, गर्मी इत्यादि के दर्शन लोक संगीत में सहज है।

वास्तव में लोक संगीत अज्ञात रचनाकारों की शास्त्रविहीन वह कृति है, जिसमें जनमानस के सहज एवं सरल मनोभावों की साधारण संगीतात्मक तथा मौखिक अभिव्यक्ति है। यह वह स्वाभाविक अभिव्यंजना है, जो सिद्धांतपरक शैली से भिन्न होकर लोक संगीत एवं शास्त्रीय संगीत में अंतरनिर्मित करती है।

लोकगीत आदिमानव का उल्लासमय संगीत है। गुफाओं में पलते मानव में जब थोड़ी बहुत बुद्धि आई और उसके आधार पर उनमें भावनाओं के अंकुर फूटे तो उन्हें व्यक्त करने के लिए उन्होंने गीतों का सहारा लिया यही आदि संगीत के शब्दों में लोकगीत है। समस्त जन समाज में चेतना– अचेतना रूप में जो भावनाएँ गीतबद्ध होकर व्यक्त हुई उनके लिए **'लोकगीत'** उपयुक्त शब्द है।

'लोकगीत मनुष्य के सुख–दुख की अभिव्यक्ति के सशक्त माध्यम है इनमें मानव के हर्ष विषाद, उमंगों व पीड़ाओं का प्रतिबिम्ब होता है। प्रकृति के विस्तृत प्रांगण और विस्तीर्ण गगन की नीलिमा के तले स्वच्छन्द और अन्मुक्त जीवन जीने के कारण इनमें गीतों में कही कोयल की कूक होती है तो कहीं मयूर का मादक नृत्य।'

धार झाबुआ के ढोहा, बढ़वा और गीतों में लोकसंस्कृति का जीवंत रूप देखने को मिलता है। यहां के लोकगीत पीढ़ी–दर–पीढ़ी एक गांव से घोड़े पर सवार दुल्हे के साथ जाते है ओर दूसरे गांव से पालकी में बैठकर दुल्हन के साथ आते हैं, इन्हें विवाह गीत कहते हैं।

भीलों के लोकगीत साधारण, अकृत्रिम, संजीव होते हुए भी मर्मस्पर्शी है। ये गीत मनुष्य की मूल प्रवृत्तियों पर आधारित हैं, अत: आत्मीय है। इनके गीतों में इनका जीवन मुखरित हुआ है। साथ ही इनके लुप्त विकास रूपों को नई दिशा मिली है। भीली लोकगीतों में भीली साहित्य की झलक मिलती है। साथ ही साथ ये लोकगीत इनके अभावग्रस्त जीवन की गाथा है। अभावों के बावजूद ये लोग काफी प्रसन्न रहते है, यही भाव इनके गीतों में प्रकट हुआ है।

अत: कहा जा सकता है कि भीली लोक काव्य भीलों की संस्कृति के प्रतीक है। इतना ही नहीं, इनके लोक–गीतों में समयगत सत्य को पाने की बोधकथा निहित है। लोकगीतों के माध्यम से ही ये अपने कष्टप्रद जीवन से कुछ समय के लिए मुक्ति पा लेते है। वहां इन्हें न भूख लगती है और न प्यास, ये अपने अभावों की जिन्दगी को भूलकर प्रसन्न रहते है।

भील जनजाति एक ऐसी जनजाति है, जो आर्थिक एवं शैक्षणिक दृष्टि से पिछड़ी हुई है परन्तु ऐसा माना जाता है कि भील समुदाय की सांस्कृतिक धरोहर अत्यंत समृद्ध है। भीलों द्वारा गाए जाने वाले गीत साधारण है, जिन पर हिन्दु संस्कृति का प्रभाव नजर आता है तथा ये गीत सजीव और आत्मीय है।

इन गीतों के माध्यम से भीलों के सम्पूर्ण जीवन का आंकलन किया जा सकता है। भील जनजाति के लोक संगीत में अनेक गायन शैलियां प्रचलित है, जो किसी भी प्रचलित लोक परम्पराओं से कम नहीं है। भील समाज में मुख्यत: जन्म संस्कार पर जच्चा–बच्चा के गीत, मुडन संस्कार पर गीत, विवाह के अवसर पर बन्ना–बन्नी के गीत, मण्डप, हल्दी विदाई के गीत, मृत्यु होने पर गीत तथा विभिन्न पर्व व त्यौहार जैसे – होली, दशहारा डोहा तथा ऋतु – पर्व उत्सव से संबंधित गीत प्रचलित है। इन गीतों को गाए जाने पर इनसे सरसता, माधुर्य व रस की प्राप्ति होती है क्योंकि ये प्रकृति के उद्‌गार व तड़क–भड़क से दूर एवं पारदर्शी शीशे की तरह एकदम शुद्ध है।

भीलों द्वारा गाए जाने वाले गीतों को मुख्य रूप से विभिन्न निम्नानुसार विभावित किया गया है।

1. संस्कार गीत – भील समाज में मुख्य रूप से जन्म संस्कार, विवाह संस्कार व मृत्यु संस्कार को अधिक मान्यता दी गई है।

(1) जन्म संस्कार – भील समाज में जन्म संस्कार का बहुत महत्व है। भील जनजाति के लोग अत्यंत निर्धन होते है अत: इनकी महिलाएँ गर्भावस्था के दौरान भी कृषि एवं मजदुरी का काम करती है। प्रसव का कार्य गांव की दाई द्वारा कराया जाता है –

गीत – बांझा धर पालनों बंधाड्यों, भगवान बालो आप्यो।
बाला का दाजी आव परदा लगाइ दे, बाल के छिपाई दीजो।
भगवान बालो आप्यो।
बंझा पार बंधाड्या, भगवान बालो आप्यो।

अर्थ – भगवान ने बांझ के घर बालक को जन्म दिया और पालना बंधवाया। बालक के दादा आओ और परदे लगाकर बालक को छिपा दो ताकि किसी की नजर न लगे।

(2) विवाह संस्कार – सनातन धर्म में सोलह संस्कारों को बहुत महत्व दिया गया है। विवाह स्त्री–पुरूष का वह प्रांरभिक संबंध है, जो धर्म और नियम में आबद्ध होता है।

गीत – भईड्या न घर घणा ऊंचा मारी गुजरी।
भईड्या न घर घणा ऊंचा मारी गुजरी।
वेस्तों याय आगो आयो न पछो पड्यो, माडा फोड्यो मारी गुजरी।

* सहायक प्राध्यापक (हिन्दी) महाराजा भोज शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, धार (म.प्र.) भारत

भईड्या न घर घणा ऊंचा मारी गुजरी।
छगन्यो याय आगा आयो न पछो पड्यो, मांडा फोड्यो मारी गुजरी।

अर्थ – दुल्हन पक्ष में भीड़े अपनाम हो तो गाते है कि भीड़े का घर बहुत ऊंचा बना हुआ है, जिसमें सावंग्या बनकर आए हुए समधी आते समय गीत गया जिससे उसे घुटने में चोट आ गई। वह घर में ऊपर नहीं चड़ सका क्योंकि घर बहुत ऊंचा है।

(3) मेंहदी गीत –

गोरी बेनी वो तारा हात रंग्या पाय रंग्या।
जड़ी गुयो मंयदी नो बींज
मयंदी रंग चुवे।
गोरी बेनी वो तारा हात रंग्या पाय रंग्या।
जड़ी गुयो मंयदी नो बींज
मयंदी रंग चुवे।
काला लाड़ा रे तारा हाथ नी रंग्यापाय नी रंग्या।
नई जइयो मयंदी नो बींज
मयंदी रंग चुवे।

अर्थ – गौरी दुल्हन मेरे हाथ और पांव दोनों में मेंहदी का रंग अच्छा है। मेंहदी का बीज अच्छा मिल गया, इसलिए मेंहदी बहुत अच्छी रची। और दुल्हा काला है इसलिए उसके हाथ पाव में मेहंदी रची ही नहीं।

(4) कन्यादान गीत –

बेनी भाई आवें तिं, अड़ि् जाजी वो।
भाई पइस्या आले तिं, छुड़ि दे जी वो।
बेनी काको आवे तिं, अड़ि जाजी वो।
काको बुकड़ी आले तिं, छुड़ि देजी वो।

वधू पक्ष वाले कन्यादान करते है और दुल्हन से गीत में कहा गया है कि हे बनी। भाई कन्यादान के लिए आए तब उसे पकड़ लेना, जब रूपये दे तब छोड़ना। काका आए अब उन्हें पकड़ लेना, जब बकरी दे तब छोड़ना।

(2) पर्व एवं त्यौहार के गीत –

(1) राखी गीत –

हो म्हारा वीरा हामु परदेश,
मोर पपिहन की गूंज करे,
रोम की लाल धथरिया, चंदन को हार,
माथा की बिन्दी, पांय न पायजेब
हाथ नं कंगन, छपक जुनैय, भैंट नें वीरा,
धारे बिना कोई नैय।

अर्थ – भाई मैं परदेश में हूं तुम्हारे बिन भेंट कौन देगा, भाई मेरी चिंता करो और मुझसे राखी बंधवाओं।

राखी दिवासो आयो, लेबा म्हारा नीराजी
हाऊं कसां आऊं बयुण, नर्मदा नदी हुई पुर।

अर्थ – राखी दिवासा आया भैया मुझे लिवाने आयो। भाई उत्तर में कहता है कि मै कैसे आउं बहना वर्षा के कारण नर्मदा नदी पार नहीं कर सकता।

(2) दिपावली गीत –

वाउड़ चौप्यो तोर्‌यो गिलक्यो रे बालमा।
बाउड़ चोप्यो तोर्‌यो गिलक्यो रे बालमा।
चोपण वाली कला भवजाइ रे बालमा।
चोपण वाली कला भवजाइ रे बालमा।
तोड्न वाले देवसिंग भाई रे बालमा।
तोड़ने वालो देवसिंग भाई रे बालमा।

अर्थ – खेत में तुरई लगाई है। उगाने वाली कला भौजाई है। जब तुरई लग गई, तो देवसिं भाई तोड़ कर ले लाए। तुरई कोकला भौजाई ने बनाया और उसको खाने वाले देवसिंग भाई है।

(3) भगोरिया गीत –

ढ़िंगेरी–ढ़िंगेरी हामु गवेरी–गवेरी जी जुवानाई कहां पाली
उहेरनं जुवानाई, दारू नी पीताव ताड़ी नी पीता,
जी जुवानाई कहां पानी उहेरनं जवानाई,
बुकड़ा नी खाता, कुकेडा नी खाता,
जी जुवानाइ कहां वाली, उहेरूनं जुवानाई,
ढ़िंगेरी–ढ़िंगेरी हामु गवेरी गवेरी।

अर्थ – भगोरिया उत्सव हाट देखकर घर आते समय मार्ग में कन्याएँ स्वयं के बारे में गीतों द्वारा अपना परिचय देती है। हम शरीर से सुदृढ़ ना तो वह मोटी और छोटी है, और न काली हम गौर वर्ण की है। हम सखियां डहेर गांव की रहने वाली है। हमारे गांव में किसी प्रकार का मद्यपान नहीं किया जाता है और न ही मुर्गा, बकरे के मांस का सेवन करते। नर्मदा नदी के तट पर रहने वाले हम सखियां ब्राह्मण है।

(4) होली गीत – भील जनजाति में होली का त्यौहार बडे हर्ष और उल्लास से मानाया जाता है –

होली दिवाली दुईत बयुण कसवड़यो रंग लाइ वो।
होली दिवाली दुईत बयुण कसवड़यों रंग लाइ वो।
तु आई वो बयुण साले ययाले हांव आई भर उण्डाले वो।
तु लाई वो बयुण गोटी फटाका, न हांव लाई लाल गुलाब वो।

अर्थ – होली और दीपावली दोनों बहनें है। होली बहने दीपावली से कहती है कि – बहन। तू सर्दी के दिनों में आयी और मैं गरमी में आयी। तू गोट्या पटाखा लायी और में गुलाल लायी।

(5) डोहा गीत – दीपावली के बाद डोला खेलते है। एक मिट्टी के कलश या मटकी में कई छेद कर देते है। उसके अंदर घी या तेल भरकर एक दीपक रखते हैं, उसे डोहा कहते है।

रमण्यों डोहो मारो रमण्यो रे लोल।
रमण्यों डोहो मारो रमण्यो रे लोल।
दुइ–दुइ जोड़ी मारा तागल्या रे लोल।
दुइ–दुइ जोडी मारा तागल्या रे लोल।

(6) भेरूजी गीत –

भेरूजी गढ़ी पर नौबत वाजे।
वै जाणु बिजली चमके।
बिबजली चमके हटग गुंजे।
भेरूजी नी गढ़ी पर नव गंज वाजे।
हई आवे और भेरूजी तमारां सेलां।
अणु नी तमु भाल तो बांथो।
भेरूजी नी गढ़ी पर नोबत वाजे।
नेबत वाजे ने चार खुंज गुंजे।

अर्थ – प्रस्तुत गीत भीलों के सबसे प्रिय देव भेरूजी के संदर्भ में गाया गया है। गीत में भेरूजी की महिमा का गान किया गया है। भीलों के शरीर में जब भी कोई देव शक्ति आती है, तो उस शक्ति का नाम लिया जाता है तथा स्तुति की जाती है। उक्त गीत में भेरूजी की शक्ति का गान किया गया है। भेरूजी

का जो थानक है, वहां पर नवरंग गाजे–बाजे से सारा वातारण गूंज रहा है।

(7) धुजार गीत – भीलों के देवताओं में धुजार देव का विशेष महत्व है। कोई मर जाता है तो परिवार के किसी व्यक्ति के शरीर में प्रवेश करता है, जिसे अपना सगादेव मानते है।

धोलो घोड़ो न तारी धुजा हो धुजारजी।
माता थारीवरेजणा वरजे हो धुजारजी।
गोडलिया थारा वाट देखे तो धुजारजी।
थारी घोड़ा नी सवारियों आवी हो धुजारजी।

अर्थ – जब देव शरीर में आते है, तब व्यक्ति सिर हिलाता है और अपना पूरा पता बताता है। सफेद घोड़ा और लाल ध्वजा है, रामदेवजी। माता तेरी मनाही कर रही है रामदेवजी।

(8) रातीजोगा गीत – रातीजोगा अपने पूर्वज की आत्मशांति के लिए किया जाता है। पेड़ो की टहनियों पत्थरों या गालों को रातीजोग स्थल लाकर रात्रि जागरणकर गीतों का गायन किया जाता है।

कैसे हुता रे थारो रो दोरे ढ़ोलर माथे बानजयो
सेला रे फुल रे दीजो ढोरे ढ़ोलर बान्ज्यो।
इण्चे भारी खेड़ा नी भवानी ढोरे ढोलर बान्ज्यॉ।
बली को भवानी तेरी हांसि ये ढोरे ढोलर बान्ज्यॉ।

अर्थ – पूर्वज के स्वभाव अनुसार सुबह भोग लगाया जाता है। कैसे सोये हो, तुम अपने आंगन में झूला बांधता। उस झूले में हमारे खेड़े की भवानी मां झूलेगी।

(9) पिठोरा गीत – भील–भीलालों में पिठोरा एक अनुष्ठान करवाने जैसा है। गरीब आदमी पिठोरा नहीं करवा सकता –

यो कईनो दवे नोतेरिया।
कीड़ी कंजर नी नेवज करो रे।

(3) ऋतु एवं प्रकृति संबधी गीत – वर्षा नहीं होने से पानी का संकट हो जाता है, तो वर्षा हेतु सभी लोग कामना करते है। सभी लोग रात्री में प्रत्येक घर जाकर ढूडी गीत गाते हैं।

ऊड़ा कुआ मा पलोक पाणी, काई करि भरूँ रे मेघ बाबा, ढूडी वो–ढूडी वो।
ऊँडा कुवा मो पलोक पाणी, काइ करि भरूँ रे मेघ बाबा, ढूडी वो–ढूडी वो।
खुदेरा – खलया सुकाइ गुया, लावरया तितरया तीस्वा मरे।
गाय गोधा भुखा मरे, वरस रे मेघ बाब, ढूडी वो – ढूडी वो।

गीत में कहा गया है – कूप गहरा है, उसमें पाव भर पानी है, किस प्रकार पानी भरू बादल बाबा नाले सुख गए है, पक्षी प्यासे मर रहे है। मेघ बाबा बरसो।

ग्रीष्म ऋतु के गीत –

चाँद तपे, सूरज तपे, कोठारी जी साह को राज
मेला मे रान्या तपेजी, तपेजी गोया राजकुंवार।
कुसुभल के सरिया जी म्हांका राज
सायबाजी सावन वरसे म्हांका राज।

उक्त गीत में अत्यधिक गर्मी से व्याकुल नायिका को सूर्य के साथ चन्द्रमा भी तपाने लगा है। महलों में रहने वाली रानियाँ और राजकुमार भी भीषण गर्मी से व्याकुल हो उठे है तथा सभी सावन की प्रतीक्षा करने लगे है।

शीत ऋतु के गीत – पोस भइनो धणी कठिये ठंडी राम सतावे री,
व्याकुल हूँ दिन–रात नाथ हांव थारे दया नी आवे री।
पौष माह में अत्यधिक ठंड पड़ ही है। नायिका दिन–रात बैचेन रहती है।

निष्कर्ष – भीली समाज के लोकगीत वर्गीकरण की दृष्टि से संस्कार गीत, त्यौहार के गीत, ऋतु से संबंधित हैं। इन गीतों में भीलों की संस्कृति, इनका जीवन व मार्मिक भाव झलकता है।

भीली लोकगीत सहजानुभूति से उत्पन्न हुए है, जिनमें कल्पना लोक की बातें कम यथार्थ जगत का संसार निहित है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. शरीफ मोहम्मद – मध्यप्रदेश का लोक संगीत।
2. हजारी प्रसाद द्विवेदी – हिन्दी साहित्य की भूमिका।
3. गोविन्द गेहलोत, डॉ. महेशचन्द्र शांडिल्य – भीली जनजातिय गीत।
4. मंगला गरवाल – भीली गीत एवं लोकोक्तियाँ

****

डिंडौरी जिले के निवासियों की भाषाएं – एक अध्ययन

डॉ. अर्चना जायसवाल *

प्रस्तावना – डिण्डौरी जिले के आस पास उमरिया स्थिति पर दो तरह से विचार करेगें। एक जिले के आस पास के क्षेत्रो या जिलों में जो बोलियों बोली जाती है। जैसे– बघेली, बुन्देली आदि तथा द्वितीय इस जिले की मुख्य बोलियों। जैसे– गोड़ी बेगानी मिश्रित आदि। डिण्डौरी जिले के आस–पास उमरिया, जबलपुर, मण्डला, बिलासपुर, कवर्धा, अनूपपुर आदि जिलों की सीमाएं है। यहॉ पर मुख्य रूप से बघेली एवं बुन्देली बोलियॉ बोली जाती है।

मुख्य रूप से बघेली बोली बघेलखण्ड़ क्षेत्र में बोली जाती है। इसका मुख्य केन्द्र रीवा है। इस बोली को बघेलखण्ड क्षेत्र के नाम के अनुरूप बघेलखण्डी भी कहते है। इस बोली का क्षेत्र बघेलखण्ड के अतिरिक्त दमोह, जबलपुर, मण्डला, बालाघाट, बॉदा,फतेहपुर, हमीरपुर आदि जिलों की सीमाएं जबलपुर,मण्डला, उमारिया आदि जिले से लगी हुई है। अत: इस बोली का प्रभाव डिण्डौरी जिले के निवासियों पर भी है। दूसरों शब्दों में कहें तो डिण्डौरी जिले के अधिकांश लोग या तो बघेली बोली बोलते हैं या इस बोली का प्रभाव उन पर है। साथ ही बघेली बोली का मिश्रित रूप भी यहॉ के लोगो में देखा जा सकता है।

बघेली बोली के दो रूप प्रचलित हैं– शुद्ध और मिश्रित। शुद्ध बघेली रीवा में बोली जाती है। जैसे– जैसे रीवा से अन्य क्षेत्रों की ओर बढ़ते हैं तो यह बोली मिश्रित होती चली जाती है। अत: डिण्डौरी के आस– पास सीमावर्ता बघेली बोली मिश्रित बोली के रूप में दिखाई देती है।

प्रमुख रूप से बघेली बोली की कुछ विशेषताओं को हम यहॉ देख सकते हैं–

1. बघेली बोली में प्राय: आदि स्वर का उच्चारण नही होता। जैसे– त्वारे (तुमरे), म्वार (मोर) आदि।
2. बघेली बोली में 'व' का उच्चाण नहीं होता। जैसे– आबा, पाबा, अबाज आदि।
3. बघली बोली के सर्वनाम में कुछ विशिष्टता है– म्वा, त्वा, वहि, यहि।
4. बघेली बोली में विशेषण बनानेके लिए यहाँ प्रत्यय का प्रयोग किया जाता है। जैसे–निकहा, स्कूलिहा, पुरविहा आदि।
5. बघेली बोली में कारकीय परसर्गो में कर्म– सम्प्रदान में क–का कहा, करण– अपदान में ते– तार मुख्य है।
6. बघेली बोली में भूतकालीन क्रियापद के लिए यतेय एवं यतै का अधिक प्रयोग होता है जैसे– मरिगा तै (वह मर गया), देत रहा तै दे रहा था)
7. बघेली बोली में संज्ञार्थक क्रियापदों में वै तथा मै प्रत्ययों का प्रयोग होता है। जैसे–चरावे, चरामै आदि।
8. बघेली बोली में भविष्य काल में 'ह' की प्रधानता पाई जाती है। जैसे– जइहौ, कहिहौ, पढ़िहौ, देखिहौ, मारिहौ।
9. बघेली बोली में भूतकाल ममें रहा, रहेन आदि का विशेष प्रयोग देखने को मिलता है।

बुन्देली बोली का क्षेत्र बुन्देलखण्ड़ है। बुन्देले राजपूतो के नाम पर उत्तरप्रदेश का झॉसी, जालौन, हमीरपुर तथा बॉदा जिलो का भू–भाग बुन्दनखण्ड कहलाता है।बुन्दलों अथवा बुन्देली बोली के कई रूप देखने को मिलते है। पंवारी, खरोला, बनाफरी आदि। बुन्देलखण्ड के अतिरिक्त बुन्देली बोली ग्वालियर के कुछ भाग, पन्ना, दतिया, सागर, दमोह, टीकमगढ़, नरसिंहपुर, सिवनी, छिन्दवाड़ा, होशंगाबाद, मण्ड़ला, बालाघाट आदि जिलों में भी बोली जाती है। मूल रूप से बुन्देली बोली के क्षेत्र के विषय में कहा गया है–

'यमुना उत्तर और नर्मदा दक्षिण अंचल।
पूर्व ओर है रोस, पश्चिमांचल मे चंचल'

बुन्देली बोली के क्षेत्र का कुछ हिस्सा मण्डला तथा नर्मदा के आास–पास के क्षेत्र का है इस क्षेत्र की सीमा डिण्डौरी जिले को छुती है। इस कारण बुन्देली बोली का प्रभाव डिण्डौरी जिले के निवासियों पर भी देखा जा सकता है।

बुन्देली बोली की विशेषताएं –

बुन्देली बोली की कुछ विशेषताएं यहॉ दृष्टव्य है–

1. बुन्देली एवं बृजभाषा में घनिष्ठ संबंध है। इस पर कन्नौजी का भी बहुत प्रभाव है। विशेष रूप से संज्ञा, विशेषण क्रियापदों पर। इसकी प्रकृति प्राय: ओकारान्त है। जैसे– घोरो, कारो, मारो, लया आदि।
2. बुन्देली बोली की सहायक क्रियाओं में यह का लोप पाया जाता है। जैसे– अऊँ (हूँ) ऑय (है, है,), औ– आव (हो)।
3. बुन्देली बोली में क्रिया के साथ सहायक क्रिया आने पर उसका विभिन्न रूप हो जाता है। जैसे– बड़ी अच्छो भयौ। इसमें औकारन्त ध्वनि न होकर औ और के बीच की ध्वनि है।
4. बुन्देली बोली में क्रियार्थक संज्ञा के लिए वौ एवं का प्रयोग किया है। जैसे–मारबौ, मारने आदि।
5. बुन्देली बोली में महाप्राण ध्वनियॉ प्रया: अल्पप्राण हो जैसे– हाथ हॉत, जीभ जीब आदि।
6. बुन्देली बोली में बहुत से ओकारान्त शब्द वाकारान्त तथा इकारान्त याकारान्त हो जाते है। जैसें– घोरी–घुरवा, बेटी– बिटिया आदि।

भाषा शास्त्र की दृष्टि से गोड़ी बोली बहुत ही प्राचीन मानी जाती है। गोड़ी बोली सर्वत्र एक सी है, इसमें स्थान भेद के कारण अधिक परिवर्तन नहीं होता। दूसरे शब्दो में कहें तो गोड़ी बोली जहॉ भी बोली जाती है वहॉ एक जैसी दिखाई देती गोड़ी बोली में छत्तीसगढ़ी, मराठी, बुन्देलखण्ड़ी, बघेली, गुजराती, तेलगू, पंजाबी, उड़िया आदि कई भाषाओंके शब्दों का

* वार्ड नं. 10 बीच बस्ती ग्राम काटमा, जिला – शहडोल (म.प्र.) भारत

समावेश देखने को मिलता है।

'गोड़ी बोली में पुल्लिंग एवं नपुंसकलिंग होते है। पुल्लिंग देवताओं और पुरूषो के संदर्भ में एवं नपुंसकलिंग को शेष विश्व के पदार्थो या जीवों के संदर्भ में प्रयोग में लाया जाता है। मध्यप्रदेश एवं सीमावर्ती राज्यों की 1917 की जनगणना के अनुसार कुल 15,48,070 गोड़ी भाषा को बोलने वाले है।'

गोड़ी भाषा में 7 अंक सबसे बड़ा माना जाता है। गोड़ी बाली में 7 तक गिनती है। आठ नौ, दस के कोई शब्द नहीं है। दो तीन चार, पांच, छ: सात को क्रमश रण्ड,मूंद, लालु,साईया, सारो, ऐरो कहते है। इनके कुछ शब्दों में संस्कृत भाषा के शब्दों का प्रभाव परिनक्षित होता है। गोड़ी में तेलगू कर प्रभाव अधिक है। गोड़ी की बोल-चाल एवं रहन-सहन में बंगला भाषा को प्रभाव झलकता है। जैसे- गोड़ पत्नी की छोटी बहिन को साली के स्थान पर सारिन कहते है। गोड़ लोग दारू खाता कहते है।

गोड़ी भाषा में स्त्रीलिंग को बहुवचन बनाकर बोलते है। गोड़ी में दादी शब्द पुरूष के लिए आदर्श सूचक शब्द होता है।दो को ठो कहते है। मैं नहीं कर सकता को में न सह हौं बोलते है।

गोड़ी भाषा में संस्कृत के कुछ शब्दों की साम्यता देखने को मिलती है। जैसे-मछली- मीन मन्ध (मधु) गठठर मोरि मौकि आदि।

गोड़ी भाषा समय का अनुमान अलग तरीके से लगाया जाता है। जैसे- एक बॉस दिन चढ़े अर्थात दिन कि 9 बजे। तीन मील को एक मीलको कोस। एक चिलम तम्बाकू पीने का समय अर्थात ढ़ाई-तीन घन्टे आदि माना जाता है।

गोंड़ी भाषा के लिए शब्दों का शब्द कोष उपलब्ध नहीं है फिर भी इनके प्रचलित शब्द असीमित है। कुछ शबद उदाहरण स्वरूप दृष्टव्य है-

गोड़ी	हिन्दी		
	य दाजी, दादाजी		पिताजी
	लुगाई, डोकरी		औरत
सेना	पति		
	स्नी		पत्नी
छोकरी, टूरा	लड़का		
	छोकरी, टूरी	-	लड़की
	सेनो	-	बुढ़िया
	तेठन, तरकारी	-	साग सब्जी
	गेहक	-	गेहूँ
	सर्री	-	रास्ता
	गोदरी	-	प्याज
	सोबर	-	नमक
	कीड़ा	-	पुड़ी
	भल्ली	-	चूल्हा
	आदमीर	-	आदमी
	सवासा	-	जीजा

उपर्युक्त शब्दों अतिक्ति कुछ वाक्यों के रूप भी यहॉ देखे जा सकते है-

गोड़ी	हिन्दी भा
अपना कहॉ से आयन	आप कहॉ से आये है।
मैं का रे जाथो	तुम क्या करते हो।
मैं जाथों	मैं जाता हूँ।
तै का करथो	तुम क्या करते हो।
वे आवत हवै	वह आता है।
तू कितना दिन से रहथां	आप कितने दिनों से रह रहे है।
अपना का करथन	आप क्या करते है।
लकड़ी लेहैक जाथो	लकड़ी लेने जा रहे है।
खाये बनाथों	खाना बना रहे है।

आधुनिक शिक्षा के प्रचार-प्रसार एवं सभ्य लोगों के सम्पर्क में आने के कारण लोग (गोड़ जनजाति) गोड़ भाषा को भूलते जा रहे हैं, आजकल गोड़ नवयुवक गोड़ भाषा बोलने में लज्जा का अनुभव करते है। गोड़ हिन्दी भाषा को अपनाने लगे है। गोड़ी भाषा उनके दैनिक व्यवहारिक जीवन से दूर हटती जा रही है।

बैगा जातियों में प्रचलित बोली की संज्ञा दी गई है। इस जाति के लोग जिले में सर्वाधिक पिछड़े हुए है व आज भी जंगलो के मध्य निवास करते है। इनकी बोली में हिन्दी का प्राचीन रूप दिखाई देता है तथा यह बोली विदेशी शब्दों की दृष्टि से अमिश्रित है।

कणो मनसे के संग मां अकठी बेंदड़ा कड़ दोसाएं मय गय। बेंवड़ा आड़-तांड चंट रहय। अकझार दुनो मितान उनके दे गिंजड़े की गहन। ता गज्जब दुरिहा गये ले मनसे लट गय तो सोय डाइस तो होउवे नींद लग डाइस, बेंदड़ा होउवे रखावे तो लकठी माछी घरिंनघरी कौ डौका कड़ उप्पर बैसय। बेंदड़ा हाउवे घुचाय देय। अतक में बेदड़ा गुसाय गें।तो अकठी तलवारें उठाय डाइस अर मनसे पर वैसे माछीय मारिस। माछी उड्ड गे मणसे दुइ डांगा हे गे।'

डिण्डौरी जिले में गोंड़ी, बैगानी, बघेली, बुन्देली आदि बोली के अलावा मिश्रित बोलियॉ भी यहां के लोगो द्वारा बोली जाती है। जिनमें प्रमुख रूप से छत्तीसगढ़ी मिश्रित गोंड़ी एवं डिण्डौरी, शहपुरा तहसील की बोली प्रमुख है जिनका संक्षेप में वर्णन यहां प्रस्तुत हैं-

यह जिलें की सर्वाधिक प्रचलित बोली है। इसका संबंध मुख्य रूप से गोड़ जातियों से होने के कारण इसे गोंड़ी की संज्ञा दी गई है। इसमें छत्तीसगढ़ बोली का प्रभाव देखा गया है, जिसका प्रमुख कारण छत्तीसगढ़ बोली क्षेत्र की सन्निकटता है। जिले में इस बोली के तीन रूप ठ वर्हृत होते हैं-

1. **पूर्वी -** यह छत्तीसगढ़ी बोली का निकटवर्ती क्षेत्र है, इस कारण यहां की बोली में छत्तीसगढ़ का अधिक प्रभाव पाया जाता है। यह डिण्डौरी जिले के करंजिया एवं बजाग विकासखण्डोंमें बोली जाती है
2. **मध्यक्षेत्रीय-** यह गोंड़ी का सामान्य रूप है। विवेच्य प्रकरण में इसी रूप का विवेचन प्रस्तुत किया है। डिण्डौरी जिले के समनापुर एवं मेंहदवानी विकासखण्ड में बोली जाती है।
3. **पश्चिमी -** इस बोली में बुंदेली का प्रभाव परिलक्षित होता है। यह डिण्डौरी जिले के ग्रामीण अंचलो में बोली जाती है।

ध्यान देने की बात यह है कि इस बोली का संबंध जातिगत अधिक है, क्षेत्रगत कम। इस कारण एक ही क्षेत्र में एकाधिक बोली का रूप देखने को मिलता है। स्थान नामों को प्रभावित करने वाली उल्लिखित बोली की भाषा संबंधी कतिपय विशेषताए निम्नवत्र हैं-

1. य एवं व श्रुतिया शबदांत में प्रयुक्त होने पर स्वरों में बदल जाती है- यह - अह -इह, वह-ओह
2. महाप्राणीकरण की प्रवृतित्त पाई जाती ह- सकारे - सखारे, उनका - हुनका।
3. कहीं-कहीं ल ध्वनि र में परिवर्तित हो जाती है- चावल - चांउर।
4. औ के बाद आने वाला आ अनुनासिक हो जाता है- कौआ- कौवा।

1. किसी विषय पर बल देने के लिए शब्दांत में च जोडने की प्रवृत्ति पाई जाती है– रामेन (राम ने ही), ओहिच (उसी ने ही)।
2. संख्यावाची विशेषण के साथ ठन शब्दांश के संयुक्त कर दिया जाता है– एक ठन आदमी ।
3. भूतकालिक क्रियापद का रूप में घटित होता है– ले गया – लैजिस, हुआ – हईस।
4. अनुसर्गो का प्रयोग निम्नवत्र उपलब्ध है–

कर्ता	–	आय, हर (पु0), हरी) स्त्री0)
कर्म सम्प्रदान	–	ला, खा, हिन, खो, खें
करण आपादान	–	सें ले
सम्बंध	–	खर
अधिकरण	–	मां, ऊपरे पै
सम्बोधन	–	नय

जिले की पूर्ववर्ती सीमा बघेली बोली क्षेत्र से जुड़ी हुई है, इस कारण जिले का एक बहुत बड़ा भाग बघेली प्रभावित बोली क्षेत्र के अंतर्गतआता है। इस क्षेत्र के अंतर्गत डिण्डौरी एवं शहपुर विकासखण्ड़ आते हैं साथ ही निवास का कुछ भाग भी इस क्षेत्र सीमा के अंतर्गत आता है। स्थान नामों को प्रभावित करने संबंधित उल्लिखित बोली की कतिपय भाषा संबंधी विशेषताएं इस प्रकार हैं–

1. 'ध्वनि परिवर्तन की प्रकृति निम्न रूपों में सर्वाधिक घटित हुई है – ण –न, ड़ – र, ल – न, य – ज, ल –र।
2. य एवं व श्रुतियोंका प्रयोग कम पाया जाता है – छुवत – छुअत, सौवन – सौमन।
3. इकरान्त के लोप की प्रवृत्ति मिलती है –जाति – जात।'
1. विशेषण पदों का रूप परिवर्तित कर वचन परिवर्तन कर लिया जाता है – पचास गायें पचासन गैया ।
   बहुवचन विशेष शब्द का प्रयोग कभी– कभी एक वचन के लिए किया जाता है– एक जन–एक जने। प्राय: एक वचन बनाने के लिए, अन, हनि, प्रत्ययों को जोड़ने की प्रवृत्ति पाई जातीहै – कुत्ता, आदमी – आदमिन।
2. पदों नर बल देने के लिए शब्दांत में च संयुक्त कर दिया जाता है
3. अनुसर्गोका प्रयोग निम्नवत्र होता हैं –

कर्ता	–	ने, आ
कर्म सम्प्रदान	–	का के लाने खो खा, खें
करण अपादान	–	से, सैं
सम्बंध	–	का, के, की
अधिकरण	–	में, पै'

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. शोधार्थी द्वारा निवासरत लोगों से साक्षात्कार।
2. गोंड जाति का सामाजिक अध्ययन– राम भरोसे अग्रवाल।
3. म.प्र. का पूर्वांचल– प्रो. अमर सिंह उद्दे।
4. म.प्र.के जनजातियों – डॉ शिवकुमार तिवारी।
5. सामान्य भाषा विज्ञान– बाबूराम सक्सेना।
6. शब्दों का अध्ययन– डॉ भोलानाथ तिवारी।

****

साहित्येतिहास की विकास-प्रक्रिया के सिद्धांत

डॉ. रेखा *

शोध सारांश – साहित्य के इतिहास का अध्ययन करने के लिए इतिहासकार किसी न किसी दृष्टिकोण, विचार या सिद्धांत प्रयुक्त करता है, जिसे हम उस इतिहासकार का इतिहास लेखन संबंधी दृष्टिकोण या सिद्धांत कहते है। पिछली शती ने साहित्य का इतिहास लिखते समय ऐसे सिद्धांतों का विवेचन नहीं किया जाता था किन्तु विगत कुछ समय से इस पर बल दिया जाने लगा है।

प्रस्तावना – प्रथम प्रश्न यह उठता है कि साहित्य का इतिहास क्या है? इसे कला में स्थान दें या विज्ञान में? इस बात को लेकर पर्याप्त मतभेद है किन्तु सामान्य रुप से स्वीकार किया जा सकता है कि यदि इतिहास का प्रयोजन घटनाओं एवं परिस्थितियों की विवेचना किसी वार्किक दृष्टि एवं वैज्ञानिक पद्धति से किया जाता है, तो उसे स्थिति में इतिहास विज्ञान की श्रेणी में आता है। जहाँ साहित्य में भावना अनुभूति एवं शैली के वैशिष्ट्य की प्रधानता रहती है, वहाँ विज्ञान में तथ्य, तर्क एवं प्रमाण का आश्रय ग्रहण किया जाता है। इतिहास किसी देश का लिखा जाए, जाति का लिखा जाए या साहित्य का लिखा जाए, उसमें भावना, अनुभूति व शैली की अपेक्षा तथ्य, विचार तर्क और प्रमाण का प्रयोग किया जाता है। इससे स्पष्ट होता है कि साहित्य का इतिहास भी अन्य प्रकार के इतिहास की भांति विज्ञान की श्रेणी में आता है।

इतिहास का अर्थ – वैज्ञानिक दृष्टि से इतिहास में घटनाओं, परिस्थितियों क्रियाकलापों और रचनाओं की व्याख्या कालक्रमानुसार होती है, किन्तु इसका अर्थ यह नहीं है कि यदि हम किसी भी विषय की घटनाओं या रचनाओं का विवरण कालक्रमानुसार प्रस्तुत कर दे तो वह 'इतिहास' की संज्ञा का अधिकारी हो जाएगा। प्रस्तुत: इतिहास का लक्ष्य घटनाओं या रचनाओं का विवरण प्रस्तुत करना मात्र नहीं होता अपितु वह उसमें घटित था, रचित होने के कारणों एवं आधारभूत तथ्यों की खोज करता है। अर्थात् वह ऐतिहासिक घटनाओं या रचनाओं के उद्गम स्त्रोतों की व्याख्या तर्क सम्मत ढंग से करता है। विज्ञान के शब्दों में कहा जा सकता है कि वह विवेच्य विषय के विकासक्रम की व्याख्या करता है, इससे इतिहास का अर्थ विकास भी किया जा सकता है। उपर्युक्त तथ्यों को स्थान में रखते हुए यह भी कहा गया है कि साहित्य के इतिहास में भी सम्यक् व्याख्या करने के लिए वैज्ञानिक दृष्टि एवं पद्धति को आधार बनाया जाना चाहिए। इसके लिए साहित्य के क्षेत्र में विकसित विभिन्न काव्य परंपराओं, साहित्यिक आंदोलनो एवं साहित्यिक प्रवृत्तियों की व्याख्या विकासवादी सिद्धांत के आधार पर की जानी चाहिए।

साहित्य का विकासवादी सिद्धांत – विभिन्न क्षेत्रों में विकास के विभिन्न सिद्धांत प्रचलित है। जैसे डार्विन का सिद्धांत प्राणियों के विकास पर लागू होता है; स्पेन्सर का सिद्धांत भौतिक पिण्डों के संघटन एवं विघटन की प्रक्रियाओं के आधार पर, मार्क्स का सिद्धांत अर्थव्यवस्था पर, बार्गसाँ का सिद्धांत मानसिक विकास पर, स्पेंग्लर व ट्यावनषी का मानव सभ्यता के विकास पर लागू होता है। इस प्रकार हर प्रकार के क्षेत्र के विकास के सिद्धांत अलग-अलग है। इन सभी के तुलनात्मक अध्ययन के आधार पर साहित्य के विकास का सिद्धांत प्रतिपादित किया गया है; जो 5 सूत्रों में विभक्त है-

1. नैसर्गिक सृजन शान्ति
2. परम्परा
3. वातावरण
4. द्धन्द्ध
5. संतुलन

इनकी विस्तृत व्याख्या

1. नैसर्गिक सृजन शक्ति – प्रकृति के प्रत्येक क्षेत्र में विकास का आधार यही शक्ति है। इसी प्रकार साहित्य के क्षेत्र में भी यदि सृजन शक्ति से युक्त प्रतिभाशाली साहित्यकार न होते तो साहित्य का विकास संभव न था। सृजन शक्ति को ही काव्यशास्त्र में प्रतिभा, कल्पना, रचना-शक्ति आदि की संज्ञाएँ दी गयी है। मेरे विचार से सृजन-शक्ति के अंतर्गत न केवल साहित्यकार की प्रतिभा का समावेश होता है; अपितु उसके व्यक्तित्व से संबंधित उन सारी क्षमताओं का समाहार होता है, जो उसके साहित्य सृजन में योग देती है। दूसरे शब्दों में इतिहास की व्याख्या में सर्वप्रथम साहित्यकारों के व्यक्तित्व के उन पक्षों का अध्ययन होना चाहिए जिनका उनकी सर्जना से संबंध है। जैसे एक ही समय के साहित्यकारों की रचना व विचार में अंतर होता है। जैसे प्रसाद और प्रेमचंद दोनों का ही जीवन उस युग में व्यतीत हुआ है, जिसे हम राष्ट्रीय आंदोलन का युग कहते है या गांधीवादी युग भी कहा जा सकता है। प्रसाद के समस्त काव्य एवं साहित्य में गांधी युग की झलक प्रत्यक्ष रुप से देखने को नहीं मिलती जबकि प्रेमचंद के साहित्य में सर्वत्र ही गांधी युग मुखरित है। गांधी का सत्याग्रह, हरिजन उद्धार, हिन्दू-मुस्लिम एकता, स्वराज्य आंदोलन, नारी शिक्षा आदि के कार्यक्रम किसी न किसी रुप में प्रेमचंद के इतिहास में अंकित है। इसका उत्तर केवल इतना ही है कि दोनों एक युग, एक ही शहर के व्यक्ति थे परन्तु दोनों का व्यक्तित्व भिन्न था प्रसाद अन्तर्मुखी और प्रेमचन्द बर्हिमुखी थे। इसलिए प्रसाद ने अपने युग की चेतना को अतीत के परिप्रेक्ष्य में देखा और प्रेमचन्द ने वर्तमान परिप्रेक्ष्य में देखा है।

2. परंपरा – जिस प्रकार जीवों की उत्पत्ति एवं विकास में उनकी पूर्व वंश-परम्परा का आधार होता है, उसी प्रकार साहित्य की रचनाओं, धाराओं एवं कृत्तियों के विकास में साहित्य की पूर्ववर्ती परंपराओं का योगदान रहता है। कुछ इतिहासकार पूर्ववर्ती परंपराओं को भूलकर केवल युगीन परिस्थितियों के आधार पर ही साहित्य के इतिहास की व्याख्या करने की चेष्टा करते है;

* सहायक प्राध्यापक , हिन्दू महाविद्यालय, रोहतक (हरियाणा) भारत

किंतु वे सफल नहीं हो पाते। जैसे–आ. शुक्ल ने हिन्दी में भक्ति आंदोलन के प्रवर्त्तन का कारण उस युग के मुस्लिम प्रभाव को माना। उनके अनुसार मुस्लिम राज्य स्थापित होने के कारण हिन्दू जाति निराश होकर भगवान की शरण में चली गयी उसी का परिणाम भक्ति–आंदोलन है। आ. शुक्ल की इस बात का खण्डन आ. हजारी प्रसाद द्विवेदी ने स्पष्ट किया कि यदि मुस्लिम भारत में न आते तो भी भक्ति आंदोलन अवश्यम्भावी था, क्योंकि भारत में भान्ति की परंपरा 7–8वीं शती से ही चलती आ रही थी, जबकि इस्लाम धर्म का भारत में प्रवेश भी नहीं हुआ था। वस्तुत: इस्लाम उत्तर से दक्षिण की ओर आया, जबकि भक्ति आंदोलन की परंपरा दक्षिण के आलवार भक्तों से महाराष्ट्र में होती हुई उत्तर में आयी इससे यह सिद्ध हो गया कि भक्ति आंदोलन के प्रवर्त्तन में मुस्लिम साम्राज्य की अपेक्षा पूर्ववर्ती परम्पराओं का योगदान अधिक है।

वातावरण – वातावरण से अभिप्राय: है युग–विशेष की राजनीतिक, सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक परिस्थितियाँ जो कि साहित्यकार के प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रुप में प्रभावित करती रहती है। इसके अंतर्गत साहित्यकार की व्यक्तिगत एवं पारिवारिक परिस्थितियाँ भी आ जाती है। जिनसे वह प्रभावित होता है। जैसे छायावाद में प्रणय की प्रमुखता, भूषण में राष्ट्रप्रेम की प्रमुखता, बिहारी में श्रृंगार की प्रमुखता, प्रगतिवाद में संघर्ष की प्रमुखता; इन सबके पीछे वातावरण की भूमिका ही प्रमुख है। कुछ साहित्यकार इतिहास की रचना करते समय केवल वातावरण पर ही ध्यान देते है, तो कुछ केवल परंपरा को ध्यान में रखते हुए वातावरण की उपेक्षा कर देते है। जैसे आ. शुक्ल व आ. द्विवेदी इन स्थितियों के द्योतक है। आ. हजारी प्रसाद द्विवेदी जहाँ सर्वत्र परंपरा को महत्व देते है, वहीं आ. शुक्ल ने वातावरण या युगीन परिस्थितियों को महत्व दिया है। दोनों का ही दृष्टिकोण एकांगी हो जाता है। इससे बचने के लिए इतिहासकार को अपने निष्कर्षो को सर्वथा प्रमाणिक और वैज्ञानिक रुप में देने के लिए परंपरा व वातावरण दोनों को ध्यान में रखकर कार्य करना चाहिए।

द्वन्द्व – साहित्य के विकास सिद्धांत का चौथा तत्व या सूत्र द्वन्द्व है। द्वन्द्व से हमारा तात्पर्य दो स्थितियों के पारस्परिक संघर्ष या वैषम्य से है। व्यक्ति, परिवार, समाज एवं राष्ट्र के जीवन में अनेक बार ऐसी द्वन्द्वात्मक स्थितियाँ उत्पन्न हो जाती है, जो कि उनका सारा ध्यान आकर्षित कर लेती है। वस्तुत: इस द्वन्द्व से प्रेरित होकर ही व्यक्ति कई प्रकार के कार्यों में प्रवृत्त होता है। जैसे–मानसिक, आर्थिक, पारिवारिक, सामाजिक व राष्ट्रीय द्वन्द्व आदि। किसी भी काव्यधारा या साहित्य की प्रवृत्ति समझने के लिए इस बातर को जानना आवश्यक है कि वह किस प्रकार के द्वन्द्व से प्रेरित या प्रभावित है। जैसे कबीर के समग्र साहित्य में उस युग का हिन्दू–मुस्लिम द्वन्द्व कार्य करता है, दृष्टिगोचर होता है। और यह बात सभी संतों पर लागू होती है। भक्ति आंदोलनों की तात्कालिक प्रेरणा का स्त्रोत तद्युगीन धार्मिक द्वन्द्व को माना जा सकता है। स्वतन्त्रता प्राप्ति से पूर्व देशभक्ति एवं राष्ट्रप्रेम की जो कविताएं लिखी गयी, उनके मूल में भी राजनीतिक द्वन्द्व कार्य कर रहा था।

संतुलन – संतुलन या सामंजस्य विकास सिद्धांत का अंतिम सूत्र है। कोई भी परंपरा जिस द्वन्द्व से प्रेरित होकर विकसित होती है, वही उस द्वन्द्व के शांत हो जाने पर समाप्त हो जाती है। अर्थात् प्रत्येक द्वन्द्व की परिणति अंत में संतुलन या सामंजस्य में होती है। द्वन्द्व जहाँ दो स्थितियों या दो वस्तुओं के पारस्परिक विरोध का सूचक है, वहीं संतुलन उनके सामंजस्य का सूचक है। कई बार किसी द्वन्द्वात्मक स्थिति में सामंजस्य स्थापित हो जाने के बाद भी पुरानी परंपरा चलती रहती है, किन्तु उस स्थिति में वह प्रभाव–शून्य होकर रूढ़ि मात्र बन जाती है। उसक आकर्षण समाप्त हो जाता है। जैसे स्वतंत्रता आंदोलन के समय देशप्रेम व स्वतंत्रता संबंधी रचनाएँ प्रचूर मात्रा में लिखी गई। लेकिन आंदोलन समाप्ति के बाद ओजस्वी कविताएँ लगभग न्यूनतम हो गई।

साहित्य की प्रवृत्तियों का विकास – साहित्य की विभिन्न प्रवृत्तियों का विवेचन–विश्लेषण करने के लिए एक अन्य सिद्धान्त का भी उपयोग किया जा सकता है, जो मानव मनोविज्ञान पर आधारित है। मनोविज्ञान के अनुसार हमारी सभी मानसिक प्रक्रियाएँ तीन तत्वों में विभक्त की जा सकती है– ज्ञान, भावना और क्रिया। सभी व्यक्तियों में ये तीनों प्रक्रियाएँ निरंतर सक्रिय रहती है, किन्तु फिर भी सूक्ष्म दृष्टि से विभिन्न व्यक्तियों की प्रकृति में परस्पर थोड़ा अन्तर रहता है। कुछ में ज्ञान की प्रवृत्ति अधिक होती है, तो कुछ में भावना व ज्ञान प्रमुख होता है। इसलिए तीन प्रकार के व्यक्तित्व होते हैं– ज्ञान प्रधान, भावना प्रधान और कर्म प्रधान यह भेद विभिन्न साहित्यकारों के व्यक्तित्व पर भी लागू होता है और उसी के अनुरूप उनके साहित्य में भी किसी एक तत्व की प्रमुखता रहती है। ज्ञान प्रधान साहित्यकार प्रमुखत: आदर्शवादी होता है और वह महापुरुषों के जीवन को लेकर या विश्व की महान् घटनाओं को आधार बनाकर अपने साहित्य की रचना करते है। दूसरे वर्ग के साहित्यकार वे है, जिनमें भावना की प्रधानता होती है और वे सत्य की अपेक्षा सौन्दर्य को और ज्ञान की अपेक्षा भावना को तथा नीति की अपेक्षा श्रृंगार को अधिक महत्व देते है।

तीसरे वर्ग में ऐसे साहित्यकार आते हैं, जिसमें ज्ञान, भावना की अपेक्षा क्रिया की प्रधानता होती है। इस वर्ग के कवियों में अपेक्षाकृत क्रिया या कर्म की अधिकता रहती है। इसलिए इनका लक्ष्य न तो ज्ञान प्रधान आदर्शवादी कवियों की भाँति महान् पुरुषों का जीवन चित्रण होता है और न ही भावना प्रधान स्वच्छन्दतावादियों की भाँति अपने सुख–दु:ख को लेकर आँसू नहीं बहाते अपितु वे वर्तमान जीवन को लेकर सामान्य व्यक्तियों के क्रिया–कलापों का चित्रण करते हैं। साहित्य में इन्हें यथार्थवादी कहा जाता है।

निष्कर्षत ज्ञान, भावना व क्रिया के आधार पर साहित्यकारों के भी तीन वर्ग आदर्शवादी, स्वच्छन्दतावादी, यथार्थवादी स्थापित हो जाते हैं। उसी के अनुसार उनकी साहित्य की मूल प्रवृत्ति, उनका विषय क्षेत्र और उनकी अभिव्यंजना शक्ति अपना रुप ग्रहण करती है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. द्रष्टव्य – हिन्दी साहित्य का इतिहास।
2. हिन्दी साहित्य का इतिहास : प्रथम खण्ड।

****

वर्तमान भारतीय समाज के संदर्भ में कबीर साहित्य की प्रासंगिकता

डॉ. रंजना मिश्रा *

शोध सारांश – **'साखी आँखी ज्ञान की, समुझ देखि मन माहिं।**
बिनु साखी संसार का, झगरा छूटत नाहिं।।'

भक्तिकालीन समाज की उर्वर भूमि में प्रगतिशील चेतना से युक्त निर्गुणोपासक संत और विद्रोही कवि कबीरदास का जन्म ऐसे समय में हुआ, जब समाज अनेक बुराइयों से ग्रस्त था। छुआछूत, अंधविश्वास, रुढ़िवादिता का बोलबाला था। धार्मिक पाखण्ड अपनी चरम सीमा पर था। इसका डटकर विरोध किया और सभी क्षेत्रों में फैली हुई सामाजिक बुराइयों को दूर करने का भरपूर प्रयास किया। समाज सुधार की यह भावना ही उन के समाज दर्शन को अभिव्यक्त करती है।

प्रस्तावना – कबीर स्वच्छन्द विचारक थे। वे मानवतावादी आस्था से समाज में सुधार लाना चाहते थे। उन्होंने धार्मिक तथा सामाजिक क्षेत्र में जहां भी कहीं प्रगति को रोकने वाली रूढ़ियां देखीं, वहीं उनका डटकर खण्डन किया तथा बाहरी आडम्बरों को बढ़ावा देने वाले सभी धर्मों की खुलकर आलोचना की। धर्म के ठेकेदार बनने का दम्भ करने वाले पण्डे–पुजारियों, ढ़ोंगी साधु–फकीरों तथा मुल्लाओं को कबीर ने खूब फटकारा। कबीर ने हिन्दू–मुसलमानों दोनों के पाखण्डों का खण्डन किया तथा उन्हें सच्चे मानव–धर्म को अपनाने के लिए प्रेरित किया।

'हिन्दू अपनी करें बढ़ाई, गागरि छुअन न देई।
वेश्या के पायन तर सोवें यह देखो हिन्दुआई।।'

कबीर ने मुसलमानों के पाखण्ड का भी खण्डन जोरदार शब्दों में करते हुए कहा –

बकरी पाती खात है, ताकि काढ़ी खाल।
जै नर बकरी खात हैं, तिनकौ कौन हवाल।।

उन्होंने हिन्दू ही नहीं, मुसलमानों द्वारा मस्जिद में चिल्ला–चिल्लाकर खुदा को पुकारने का विरोध किया उन्होंने सच्ची बात यही बताई कि –

मोको, कहां ढूंढै, बन्दे, मै तो तेरे पास में।
ना मैं मन्दिर, ना मैं मस्जिद, ना कावे कैलास में।।

कबीर ने मूर्ति–पूजा का खण्डन किया और मन मन्दिर में ही ईश्वर का निवास बताया। उन्होंने मूर्ति–पूजा तथा उसके आडम्बरों को स्पष्ट रूप से नकारा तथा कहा –

ना हम पूजें देवी–देवता, न हम फूल चढ़ाई।
ना हम मूरत धरें सिंहासन ना हम घण्ट बजाई।।

कबीर रूढ़ियों एवं आडम्बरों के सतत् विरोधी रहे। उन्होंने रोजा, नमाज, छापा, तिलक, माला, गंगास्नान, तीर्थाटन आदि का मुख्य विरोध किया। वे कहते हैं

माला फेरत जुग गया गया न मन का फेर।
करका मनका डारि कै मन का मनका फेर।।

हिन्दू अपने देवताओं को पूज–पूज कर मर गए, मुसलमान हज यात्रा कर–करके मर गए, योगी जटाएं बांधकर मर गए, परन्तु इनमें से राम किसी को नहीं मिला –

देव पूजि हिन्दू मुये तुरक मुये हज जाई।
जटा बांधि योगी मुए, राम किनहू नहिं पाई।।

लोग बाह्याचारों को ही धर्म समझकर आन्तरिक शुद्धता पर बल नहीं देते यह बात कबीर को पता थी। इसलिए उन्होंने जनता को सचेत करते हुए कहा कि जटा होना, कैशलुंचन, मौन व्रत, सिर मुण्डन, तिलक मुद्रा, हज यात्रा से कोई साधक नहीं हो जाता।

कबीर ने अपने समय में फैली छुआछूत की भावना का तीखा विरोध किया है। जाति–प्रथा के वे कट्टर निन्दक थे।

कबीर का युग सामाजिक विश्रृंखला का युग था। ब्राम्हण वर्ग जाति अभिमान से ग्रस्त था। शूद्रों को नीचा मानकर उन्होंने समाज में जो छुआछूत की प्रथा चला रखी थी, उसका कबीर ने तीव्र विरोध किया।

ऊंचे कुल का जनमिया जे करनी ऊंच न होय।

कबीर ने हिंसा का विरोध हर स्तर पर किया चाहे वह जीभ के स्वाद के लिए की गई हो, या धर्म के नाम पर की जा रही हो।

कबीर ने कंचन और कामिनी को साधना के मार्ग में बाधक बताया है। उनका विश्वास रहा है कि नारी के प्रति आकर्षण मनुष्य की अध्यात्म या सुधार के मार्ग पर चलने से रोकता है। समाज–सुधार की दृष्टि से कबीर ने कुसंगति, कपट और द्वेष की निन्दा की है।

मूरख संग न कीजिए, लोहा जल न तिराइ।
कदली सीप भुजंग मुख, एक बूंद तिहूं भाइ।।

और –

कबीरा वहां न जाइए, जहाँ कपट का हेत।
जानूं कली कनेर की तन रातौ मन सेत।।

कबीर ने सदाचरण पर बल दिया है। कबीर अपने युग के प्रति पूर्ण सचेत थे। सत्य पर वे विशेष बल देते हुए कहते हैं –

सांच बराबर तप नहीं झूठ बराबर पाप।
जाके हिरदय सांच है ताके हिरदय आप।।

* (हिन्दी) शासकीय कला वाणिज्य महाविद्यालय, जिला– सागर (म.प्र.) भारत

कबीर ने राम–रहीम, केशव, महादेव और मोहम्मद की एकता पर बल दिया। उन्होंने सम्पूर्ण समाज को एकता के सूत्र में बांधने का प्रयास किया।

कबीर एक महान् समाज–सुधारक, सत्य धर्म के प्रतिपादक, समन्वयवादी तथा क्रांतिदर्शी थे। वे समाज में प्रचलित प्रत्येक प्रकार की असमानता, बाह्याडम्बर और ढोंग को समाप्त कर देना चाहते थे। यह काम स्पष्टवक्ता, दृढ़–विवेकी और निर्भीक व्यक्ति ही कर सकता है।

कबीर का व्यक्तित्व क्रांतिकारी चेतना से युक्त था। उन्होंने अपने समय में निर्भीकतापूर्वक समाज सुधार का जो प्रयास किया वह अद्धितीय है। वर्तमान युग के तथाकथित समाज सुधारक भी ऐसा साहस नहीं दिखा सकते जो कबीर ने धार्मिक उन्माद से ग्रस्त तत्कालीन युग में दिखाया था।

उत्तर भारत की हिन्दी भाषी जनता में तुलसी के उपरान्त यदि किसी अन्य कवि का काव्य लोगों की जबान पर चढ़ा हुआ है, तो वह कबीर ही हैं।

भले ही कबीर का जन्म आज से लगभग 600 वर्ष पूर्व हुआ हो किन्तु उनकी शिक्षाएं आज भी प्रासंगिक हैं। यह कहना अधिक उपयुक्त होगा कि आज उनकी शिक्षाओं की आवश्यकता तत्कालीन युग की अपेक्षा अधिक है।

मन्दिर–मस्जिद के नाम पर साम्प्रदायिक दंगे तब भी होते थे और अब भी हो रहे हैं निश्चय ही कबीर की शिक्षाएं आज के इस माहौल में अधिक प्रासंगिक हैं। कि 600 वर्षों में मानव सभ्यता ने रंचमात्र भी प्रगति नहीं की है। वैज्ञानिक उपकरणों एवं सुख–सुविधा के साधनों को जुटाकर भले ही हम प्रगति का दावा करें किन्तु मानवता के मोर्चे पर हम रंचमात्र भी प्रगति नहीं कर सके हैं। जाति प्रथा ने अपनी जड़ों को मजबूत किया है, समाज में विषमता बढ़ी है, समरसता कहीं दिखाई नहीं देती। ऊंच–नीच की भावना, खान–पान के स्तर पर चाहे समाप्त हो रही है। विवाह सम्बन्धों में अभी तक जाति–वर्ण ही प्रमुख समाज में पाखण्ड अब भी व्याप्त है, दुराचरण, छल–कपट, हिंसा, अज्ञान और विद्वेष ने समाज को खोखला कर दिया है, कबीर की प्रासंगिकता वर्तमान संदर्भो में और भी बढ़ गई है। मानव–समाज से पाखंड, अन्ध–विश्वास, रुढ़ियां आदि समाप्त नहीं हुए। हिंसा, असत्य, अज्ञान एवं भ्रम में पड़ी मानव जाति आज भी भटक रही है।

आज हमारे समाज में जो विश्रृंखलता दिखाई दे रही है, जिस धार्मिक विद्वेष के माहौल में जीवन–यापन कर रहे हैं। उसमें कबीर की शिक्षाएं अधिक प्रभावी भूमिका का निर्वाह कर सकती हैं। नैतिक मूल्यों का क्षरण मानवीय मूल्यों का जो विघटन समाज में दिखाई दे रहा है। उसके विषाक्त प्रभाव को कम करने के लिए कबीर की अमृतवाणी की आवश्यकता बराबर अनुभव की जा रही है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. प्राचीन काव्य – डॉ. संजीव जैन।
2. कबीर ग्रंथावली – डॉ. श्यामसुन्दर दास।
3. भारतीय साहित्य – डॉ. राम छबीला त्रिपाठी।
4. हिन्दी साहित्य का इतिहास – डॉ. रामचन्द्र शुक्ल।
5. कबीर – डॉ. राजेन्द्र मोहन भटनागर।
6. कबीर वचनाममृत – सम्पादक – डॉ. विजयेन्द्र स्नातक।

****

भारत की प्रथम शिक्षिका श्रीमती सावित्री बाई फुले के व्यक्तित्व का विवेचनात्मक अध्ययन

सुशीला देवी परमार * डॉ. पी. एस. परमार **

प्रस्तावना – दलित शब्द का अर्थ है – पीड़ित, शोषित, दबा हुआ, खिन्न, उदास, टुकड़ा, खंडित, कुचला हुआ[1], दला हुआ, पीसा हुआ, मसला हुआ, रौंदा हुआ और विनष्ट किया हुआ।

आचार्य रामचन्द्र वर्मा के अनुसार – 'दलित समाज का वह वर्ग है जो सबसे नीचा माना गया हो या दु:खी और दरिद्र हो और जिसे उच्च वर्ग के लोग उठने न देते हों, जैसे भारत की छोटी या अछूत मानी जाने वाली जातियों का वर्ग (डिप्रेस्ड क्लास)।'[2]

दलित वे है, जो हजारों वर्षों तक अस्पृश्य या अछूत समझे जाने वाली जातियाँ है, जो हिन्दू धर्म में वर्ण व्यवस्था में सबसे निचले पायदान पर आती है। डॉ. भीमराव अम्बेडकर के अनुसार संवैधानिक भाषा में जिसे अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति कहा जाता है।

हमारे भारत देश में दलित उत्थान या दलित चेतना के अनेकों प्रेरणा स्त्रोत ऋषि-मुनि, संत, महात्मा और महापुरुष हुए है। जिनमें संस्कृत के आदिकवि वाल्मीकि, महात्मा गौतम बुद्ध, महात्मा बसवेश्वर, संत कबीरदास, संत रविदास, संत तुकाराम, संत नामदेव, रामस्वामी पेरियार, छत्रपति शाहू जी महाराज, अछूतानंद, महात्मा ज्योतिबा फुले, श्रीमती सावित्री बाई फुले, बिरसा मुण्डा, संत घासीदास, गुरुनानक देव, और भारत रत्न बाबा साहेब डॉ. भीमराव अम्बेडकर रहे हैं।[3] जिन्होंने अपने-अपने समय में अपने सामर्थ्य और आत्मबल पर दलित चेतना के कार्य किए है। जिनमें महिलाओं की संख्या नगण्य रही है।

श्रीमती सावित्री बाई फुले का नाम ही मुख्य रूप से हमारे सामने आता है – श्रीमती सावित्री बाई फुले का जन्म 3 जनवरी 1831 ई. में नायगाँव जिला सतारा महाराष्ट्र में खण्डूजी पाटिल के यहाँ हुआ। सन् 1840 ई. में 9 वर्ष की अल्पायु में सावित्री बाई का विवाह महात्मा ज्योतिराव फुले से हुआ। उस समय महात्मा ज्योतिराव फुले 13 वर्ष के थे।[4] परवर्ती काल के भारतीय समाज में जाति-भेद, अस्पृश्यता, बाल-विवाह, सती प्रथा, छुआ-छूत आदि कुप्रथाएँ प्रचलित थी। विधवा होने पर महिलाओं के सिर के बाल काट दिए जाते थे। यह स्थिति सभी (चाहे दलित हो या फलित हो) वर्ग की महिलाओं की थी। और उन्हें शिक्षा नहीं दी जाती थी। उन्हें मात्र घर का काम करने वाली और संतान उत्पत्ति की मशीन समझा जाता था। श्रीमती सावित्री बाई फूले और उनके पति महात्मा ज्योति बा फुले इस बात को समझते थे कि शिक्षा के बिना महिलाओं में जागृति नहीं आ सकती। इसलिए श्रीमती सावित्री बाई ने अपने पति ज्योति बा फुले से शिक्षा घर पर ही अर्जित कर शीघ्र ही लड़कियों को पढ़ाने का यशस्वी कार्य करने लगी। वही उनके पति महात्मा ज्योति बा फुले भी दलित उत्थान के कार्य करते रहे। महात्मा ज्योति बा फुले ने दलितों-शोषितों-श्रमिकों को जो मंत्र दिया था। वह मंत्र है –

ज्ञान के अभाव में बुद्धि गई।
बुद्धि के अभाव में नीति गई।
नीति के अभाव में गति गई।
गति के अभाव में सम्पत्ति गई।
सम्पत्ति के अभाव में शूद्र बरबाद हो गए।
केवल ज्ञान के अभाव में इतना अनर्थ हो गया।[5]

श्रीमती सावित्री बाई फुले पर अपने पति महात्मा ज्योति बा फुले का दलित चेतना या दलित उत्थान का इतना अधिक प्रभाव रहा है कि – 1 जनवरी 1848 ई. को पुणे में भिड़े परिवार के मकान के आँगन में दलित लड़कियों का प्रथम विद्यालय सावित्री बाई द्वारा खोला गया। सन् 1851 में ही पुणे में ही पिछड़ी और वंचित जाति के बच्चों के लिए विद्यालय प्रारम्भ किया गया। सावित्री बाई ने इन दोनों विद्यालयों में पढ़ाने का कार्य किया। इस प्रकार वे भारत की प्रथम शिक्षिका बनी।[6] इनके अलावा 3 जुलाई 1851 को चिपलून नगर वादा में, 17 नवम्बर 1851 रास्तापेड में और 15 मार्च 1852 को वेडलपेड में भी विद्यालय खोले गए। जिसमें प्रधानाध्यापिका का कार्य किया।

महिलाओं का शिक्षित होना पुरुष प्रधान समाज के उच्च वर्गीय लोगों को रास नहीं आया। उन्होंने श्रीमती सावित्री बाई फुले को परेशान और तंग करने के लिए उन पर ईटें, पत्थर, गोबर, विष्टा (मल-मूत्र), कीचड़ आदि गन्दगी उनके ऊपर फेंकने के साथ ही अपशब्द कहे। (जिसे आज हम महिलाओं पर कमेण्ट्स करना कहते है) पर श्रीमती सावित्री बाई फुले दलित और अन्य वर्गों की लड़कियों को पढ़ाने का कार्य सतत् करती रही। वे उन लोगों के कृत्य का जबाव तो नहीं दे पाई। लेकिन वे अपने साथ झोले में एक अन्य साड़ी साथ ले जाकर गंदी साड़ी को विद्यालय में जाकर प्रतिदिन बदल लेती थी।

28 जनवरी 1853 को सावित्री बाई फुले ने **'बाल हत्या प्रतिबन्धक गृह'** खोला और यह घोषणा करा दी कि – विधवा, बलात्कार की शिकार या स्वयं ही गलत रास्ते पर जाकर माँ बनने वाली महिलाओं की सन्तानों की यहाँ देख-भाल की जाएगी। इस साहसिक कदम से महिलाओं में जागृति आई। इस कार्य में उनके पति पग-पग पर उनके साथ खड़े रहें। श्रीमती सावित्री बाई ने अनाथ बालकों को ममता दी। वह स्वयं भी नि:सन्तान थी। उन्होंने एक ब्राह्मण विधवा महिला काशीबाई के पुत्र यशवन्त को स्वयं गोद लिया। यशवन्त को पढ़ा-लिखा कर डॉक्टर बनाया जो बाद में उनका उत्तराधिकारी बना।

* शोधार्थी (हिन्दी) हिन्दी अध्ययनशाला, विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत
** सहायक प्राध्यापक (हिन्दी) शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, शाजापुर (म.प्र.) भारत

24 दिसम्बर 1873 ई. को **सत्यशोधक समाज की स्थापना** की गई। जिसमें बिना दहेज और बिना पण्डे-पुजारियों के पंजीकृत विवाह की तरह दलित और वंचित लोगों का विवाह बिना खर्चे पर करवाया जाता था। जिसमें अपने दत्तक पुत्र यशवन्त राव का विवाह भी 4 फरवरी 1889 ई. को करवाया जो आधुनिक भारत का पहला अन्तरजातीय विवाह था।

भारत में सन् 1897 ई. को प्लेग महामारी की बीमारी फैली हुई थी। प्लेग महामारी में श्रीमती सावित्री बाई फुले प्लेग के मरीजों की सेवा करती थी जबकि सभी लोग बीमारी से बहुत डरते थे। एक प्लेग के संक्रमित बीमारी से प्रभावित बच्चे को जो महार जाति का था अपनी पीठ पर लादकर उसे हास्पिटल ले जाकर उसकी सेवा करने के कारण श्रीमती सावित्री बाई फुले को प्लेग महामारी का रोग लग गया। जिसके कारण 10 मार्च 1897 ई. में उनकी मृत्यु हो गई।

19वीं सदी की भारत की ऐसी महानायिका, कवयित्री एवं समाज सुधारक श्रीमती सावित्री बाई फुले ने बाल-विवाह की प्रथा बन्द कराने का अथक प्रयास किया, सती प्रथा को बन्द कराने का प्रयास किया, विधवा विवाह को प्रोत्साहन दिया। वंचित और पिछड़ी जाति वालों तथा महिलाओं को शिक्षित कर उनके अधिकारों के प्रति जागरूक किया। साथ ही दलितों की आर्थिक स्थिति सुधारने के लिए घरेलू उद्योगों पर भी जोर दिया।

श्रीमती सावित्री बाई फुले और महात्मा ज्योतिबा फुले दम्पत्ति ने मिलकर मुम्बई और पुणे के नाइयों का एक जुलूस निकाला जिसमें सम्पूर्ण नाई जाति ने शपथ ली कि वे विधवाओं के बाल नहीं काटेंगें और इस प्रकार यह लज्जाजनक परम्परा बन्द करवाई।

12 फरवरी 1853 ई. में अंग्रेज सरकार ने शिक्षा के क्षेत्र में श्रीमती सावित्री बाई फुले के योगदान को देखते हुए उनका सम्मान किया। यह पहला अवसर था जब अंग्रेज शासकों ने किसी भारतीय (खासकर दलित महिला) का अभिनन्दन किया।[7]

इस प्रकार श्रीमती सावित्री बाई फुले ने दलित चेतना में नींव के पत्थर की तरह जो कंचनमय योगदान दिया है वह सराहनीय है।

श्रीमती सावित्री बाई फुले की कविता -

जाओ जाकर पढ़ो लिखों।
बनो आत्म निर्भर।
बनो मेहनती।
काम करो - ज्ञान और धन इकट्ठा करो।
ज्ञान के बिना सब खो जाता है।
ज्ञान बिना हम जानवर बन जाते है।
इसलिए खाली ना बैठो, जाओ जाकर शिक्षा लो।
तुम्हारे पास सीखने का सुनहरा मौका है।
इसलिए सीखो और जाति के बंधन-तोड़ दो।
जाओ जाकर पढ़ो लिखो।

फूट-नोट -

1. हिन्दी शब्द कोश - डॉ. हरदेव बाहरी, पृ. क्र. 386.
2. प्रामाणिक हिन्दी कोश - आचार्य रामचन्द्र वर्मा, पृ. क्र. 391.
3. पत्रकारिता के युग निर्माता भीमराव अम्बेडकर - सूर्यनारायण रणसुभे, पृ. क्र. 16.
4. गूगल डॉट कॉम इन हिन्दी.
5. पत्रकारिता के युग निर्माता भीमराव अम्बेड़कर - सूर्यनारायण रणसुभे, पृ. क्र. 19.
6. दैनिक भास्कर (वुमन भास्कर) 08.03.2017 - सं. रमेशचन्द अग्रवाल, (अन्तर राष्ट्रीय महिला दिवस) विशेषांक, उज्जैन - कार्यकारी संपादक नरेन्द्र सिंह अकेला (प्रथम पृष्ठ).
7. भारत की प्रथम महिलाएँ - विकास खत्री, पृ. क्र. 32.

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. हिन्दी शब्द कोश डॉ. हरदेव बाहरी।
2. प्रामाणिक हिन्दी कोश आचार्य रामचन्द्र वर्मा।
3. स्त्रीत्ववादी विमर्श, समाज और साहित्य क्षमा शर्मा।
4. दलित साहित्य एक मूल्यांकनप्रो. चमनलाल।
5. गूगल डॉट कॉम इन हिन्दी।
6. सावित्री बाई फूले (यांची समग्र कविता) संपादिका डॉ. शोभा हनवते
6. पत्रकारिता के युग निर्माता भीमराव अम्बेडकर सूर्यनारायण रणसुभे।
7. दैनिक भास्कर (वुमन भास्कर) सं. रमेशचन्द्र अग्रवाल।
8. भारत की प्रथम महिलाएँ विकास खत्री।
9. दलित-दुनिया डॉ. कालीचरण 'स्नेही'।

****

मालवी की उपबोलियों में संजा का स्वरूप एवं मान्यताएँ

डॉ. मेघा निशान्त शर्मा *

प्रस्तावना – मालवी, मालवा क्षेत्र मे बोली जाने वाली बोली है, जो कि यहाँ के जनसाधारण द्वारा प्रयोग में लाई जाती है। मालवी बोली के उपभेद भी है जैसे सौधवाड़ी, उमठवाड़ी रांगड़ी (रजवाड़ी) आदि। पर्वो और उत्सवों की जहॉ बात करे तो मालवा पर्व और उत्सवो के क्षेत्र में अग्रणीय है और यही प्रभाव सौधवाड उमठवाड और रजवाडी क्षेत्रों मे भी देखने को मिलता है।

उमठवाड़ क्षेत्र की बात करे तो जीरापुर , माचलपुर नरसिंहगढ़, राजगढ़ आदि इसी क्षेत्र में आते है। यहाँ उमठवाड़ी (मालवी) प्रभाव है। मालवा की तरह यहाँ पर भी संजा पर्व मनाया जाता है लेकिन गीत और प्रतिदिन बनने वाली आकृति मालवा से भिन्न होती है।

1. **उमठवाड़ी उपबोली में संझा पर्व** – यहाँ पर भी संजा पर्व श्राद्ध पक्ष में मनाया जाता है बालिकाएँ सुबह उठकर गोबर एकत्रित कर लेती है और शाम के समय दीवारो पर संजा बनाती है और उन आकृतियों को फूलों से सजाती है।

(i) **प्रतिदिन बनने वाली आकृतियाँ** ।

प्रथम दिन	–	पाँच तारे बनाए जाते है अंतिम तारे को आरती के समय निकाल दिया जाता है।
दूसरे दिन	–	चाँद सूरज व पाँच तारे बनाए जाते है।
तीसरे दिन	–	खजुर का पेड़ बनाया जाता हैं।
चतुर्थ दिन	–	गुलबासना बनाया जाता हैं।
पांचवें दिन	–	क्वारा पांचे बनाए जाते हैं।
छठे दिन	–	छाबड़ी बनायी जाती हैं।
सातवें दिन	–	सात्या बनाया जाता हैं।
आठवें दिन	–	हाथी या आठ पंखुडी का फूल बनाया जाता हैं।
नवमें दिन	–	नौ डोकरी–डोकरा बनाते हैं।
दशमी के दिन	–	तुलसी बेवड़ा बनाते हैं।
ग्यारस के दिन	–	केल, जनेऊ बनाए जातें हैं। बारस के दिन – दुकान, कोट, निसन्नी बनाए जाते हैं।
तेरस के दिन	–	किलाकोट बनाया जाता हैं ।

इसमें प्रतिदिन की आकृति के साथ राजा दानी, गाडी बाहर ढोली भंगी – भंगन आदि भी बनते है और यह किलाकोट अमावस तक बना रहता है।

2. उमठवाडी संजा के गीत – संजा पर्व के दौरान गली मोहल्ले में धूम सी मची रहती है। सबसे पहले संजा की आरती की जाती है।

'आरती मे आधो मेलो
पान पराग को पान मेलो
वृंदावन की कोयल मेलो
लो संजा बई आरती' – (2)

सुबह सुबह संजा को जिमाया जाता है उस समय लड़कियां संजा से कहती है

'संजा बाई जीमले चुट ले
दरतन–मनजन कर लो
तमे चुटाऊ सारी रात
फूल बरी है बरात
एक तारो चटक गयो
म्हारी संजाबाई रूठ गयी।
क्यों रूठी बई क्यों रूठी
तमे आर लगावा, तमे पार लगावा।। (3)

लडकियाँ कहती है, संजा मंजन कर लो मैं तुम्हें सारी रात खिलांऊगी। फूल से भरी परात है, एक तारा टूट जाता है, तो संजा बाई रूठ जाती है। लडकियां संजा से कहती है रूठो मत।

संजा का एक और गीत है इसमें संजा समस्त आभूषणों का वर्णन है। और ऐसा भी गीत है जिसमें संजा भी होली खेल रही है – '

होडेला से उड़े रे गुलाल, कीजो रे संजाबाई से
म्हारी है संजा बाई चूढ़ी वाली
चूडेला पे उड़े रे गुलाल
कीजो रे संजाबाई से
म्हारी है संजाबाई हरवा वाली
टीका पे उडे रे गुलाल
कीजो रे संजा बाई से
म्हारी है संजाबाई झुमकी वाली
नथनी पे उड़े रे गुलाल
कीजो रे संजाबाई से। –' (4)

संजा का हास्यप्रद गीत की झलक भी हमें देखने को मिलती है–

'संजाबाई का लाड़ाजी –' लाड़ाजी
लुगड़ो लाया जाड़ाजी, जाड़ाजी
असी कई लाया दारी को (कई क्या)
लाता गोट किनारी को।
संजाबाई तो ओल पोल। ओल पोल।।
लुगड़ो लाय झोल पोल। झोल पोल ।। (5)

एक और गीत संजा की सहेलियां गाती है –

नींबु के पेड़ के नीचे खोया मेरा बटुवा
अन्नी ले ले पन्नी ले ले, दे दे मेरा बटुवा

* सहायक प्राध्यापक (हिन्दी) भारतीय महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत

संजाबाई की भाभी ने चुराया मेरा बटुवा
नींबु के पेड़ के नीचे खोया मेरा बटुवा
सोना ले ले, चांदी ले ले, दे दे मेरा बटुवा
संजाबाई की काकी ने चुराया मेरा बटुवा

इस तरह सभी रिश्तेदारों का नाम लेकर इस गीत को आगे बढ़ाया जाता है।

संजा की सांस का संजा के प्रति व्यवहार अच्छा नहीं है। वह इस गीत से प्रतीत होता है।

'संजा बाई को सासरे जावागा
खाटो रोटी खावागा
और मेलो बियान्जी खाटो रोटी
असी दुआ दारी के चमचा की
चार गुलाटी खावे की
मै बैठूवा गद्दी पे
तोये बिठाउवा खुटि पे।' (7)

बहुत से ऐसे गीत है, जो मालवा, राजस्थान में गाए जाते है। उमठवाड क्षेत्र में भी इसी तरह के गीत गाए जाते है, लेकिन बोली मे अंतर रहता है।

संजाबाई को नजर न लगे उसे काजल लगाना है ऐसा इस गीत से प्रतीत होता है।

'काजल टीकी लो बाई काजल टीकी लो
एक काजल टीकी म्हारी संजाबाई ए दो
संजाबाई को सासरो सागर में
पदम् पधारिया गडियन मे
रामथारी चाकरी गुलाम थारो देस।
छोडो म्हारी चाकरी पधारो अपना देश।' (8)

इसी तरह एक और गीत है, जब संजाबाई खेलने जाती है, अंधेरा होने लगता है तब सखियाँ संजाबाई से कहती है –

'संजा तु थारा घरे जा
कि थारी बाई मारेगी, कूटेगी
डेली मे दचकारेगी
चॉद गयो गुजरात, हिरनी का बड़ा बड़ा दॉत
छोरा छोरी डरपेगा, काँपेगा। (8)

संजा की सखियाँ जब संजा से खेलने का बोलती है, तब संजा उन्हें खेलने से मना करती है, और कहती है –

'चलो संजाबाई अपन खेलन चाला
कई चला बई कई चला।
मैने लिपन घोल्यो
लिपेगी थारी काक्यॉ भाभ्यॉ
काम करे भोजाई
संजा सेर होई रे
मटका बेर होई रे।'(9)

जब संजाबाई ससुराल जाती है, तब सजी संवरी संजा गाड़ी में बैठती है उस समय संजा की सखियाँ ये गीत गाती है–

'छोटी सी गाड़ी गड़कती जाए
जेमे बैठी संजा बाई।
घाघरो धमकाती जा।
चुड़लो चमकाती जा।
बिछियाँ बजाती जा
नाक की नथनी झोला खाय।
बधाई दो बधाई दो पिया घर जाए। –' (10)

निष्कर्ष – इस तरह हमने देखा की संजा के इन गीतों में कही संजा के बचपन का भोला जीवन अभिव्यक्त है। इन गीतों में कही संजा को अबोध बालिका के रूप में चित्रित किया गया है तो कही बालिका वधु के रूप मे।

पुरानी और नई पीढ़ियों में गीतों मे अंतर देखा जा सकता है। संजा विषयक गीतो में बाल विज्ञान, मनोविज्ञान, सामाजिक परिवेश और लोक जीवन की स्वच्छंद प्रवृत्ति विद्यमान है। सखी सहेलियां सोलह दिन इसी तरह गीत गाती है और आखरी दिन ढोल ढमाको के साथ संजा को नदी तालाब में विसर्जित कर देती है। किशोरियों के मन में यही भावना छिपी होती है कि जिस तरह संजा की घर गृहस्थी है, वैसी ही उन्हें भी मिले।उन्हे भी भोलनाथ जैसा वर मिले इस तरह कौमार्य से जुड़ी यह पर्व मालवा के साथ साथ उमठवाड़, सौन्धवाड़, रजवाड़ी आदि क्षेत्रों में मनाया जाता है। पर्व मनाने का उद्धेश्य सभी जगह एक ही लेकिन आकृतियों तथा गीतों में अंतर देखा जा सकता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. कु. मिनाक्षी शर्मा नरसिंहगढ के साक्षात्कार से दिनांक 09/03/2016 को प्राप्त।
2. श्रीमती संगीता पाण्डेय 134 विद्यापति नगर नानाखेड़ा उज्जैन से दिनांक 16/03/9 को प्राप्त गीत।
3. श्रीमती लीना देवी (नरसिंहगढ) से प्राप्त गीत।
4. मधु शर्मा नरसिंहगढ से दिनांक 16/03/9 को प्राप्त गीत।
5. घर की मौखिक परंपरा से प्राप्त।

****

रामदरश मिश्र के कथा-साहित्य में सामाजिक अवचेतना

डॉ. प्रतिमा यादव * निशा सिंह रघुवंशी **

प्रस्तावना – रामदरश मिश्र के कथा-साहित्य में सामाजिक जीवन का यथार्थ चित्रण किया गया है। रामदरश जी के साहित्य में स्वतंत्रता के पूर्व से लेकर वर्तमान समय तक के गाँवों के सामाजिक जीवन का चित्रण किया गया है। मिश्र जी ने स्वयं ग्रामीण समाज की समस्याओं और विसंगतियों को अनुभव किया है। जिसकी छाप हमें उनके साहित्य में दिखाई देती है।

मिश्र जी के साहित्य में सामाजिक मूल्यों का विघटन, पारिवारिक जीवन तथा पारिवारिक जीवन की समस्याएं एवं सामाजिक जीवन की समस्याओं का वास्तविक चित्रण किया गया है।

मिश्र जी ने अपने कथा-साहित्य में एक बेहतर सामाजिक जीवन के निर्माण की परिकल्पना भी की है।

'पानी के प्राचीन' में चित्रित सामाजिक अवचेतना – इस उपन्यास में आजादी से पहले के ग्रामीण जीवन का वर्णन है, जिसमें बताया गया है कि स्वतंत्रता से पहले भी किस तरह सामाजिक जीवन में मूल्यों का विघटन प्रारंभ हो गया था, परस्पर प्रेम, भाईचारा और सद्भाव समाप्त होता जा रहा था। परस्पर स्वार्थ की भावना बलवती हो रही थी। उपन्यास में वर्णित निम्न वक्तव्य इस तथ्य को स्पष्ट करता है।

'पट्टीदारी, पट्टीदारी ने मेरा घर फूँका पट्टीदारी ने मेरा खेत काट लिया, पट्टीदारी ने मेरे खेत रख लिए है, पट्टीदारी का अगुवा, मुखिया मेरे परिवार की जिंदगी के साथ खिलवाड़ करना चाहता है, अभी पट्टीदारी लगी हुई है। ये बेवकूफ अपनी बेवकूफी से लड़ाई शुरू कर देंगे और पट्टीदारी का जोष उभार कर पूरे गांव को आग में झोंक देंगे।'[1]

ग्रामीण समाज में स्वार्थ अपनी जड़े इतनी जमा चुका है कि लोग एक दूसरे के घरों में आग लगा देते है, घरों में सेध लगाते हैं फसले उजाड़ देते हैं।

इस संबंध में इस उपन्यास में कहा गया है 'गांव का कोई गरीब से गरीब कमजोर से कमजोर आदमी भी यदि उसे भला-बुरा कहता , गाली, गुफ्तार देता यहां तक कि एकाध चपत भी मार देता तो वह वहाँ कुछ न कहता, उसके चेहरे पर उद्वेग ही नहीं, किन्तु बाद में वह उसके घर में सेंध लगा देता, घर फूंक देता, खलिहान में या हारों में आग लगा देता, बैल चुरा लेता, कच्चे-पक्के खेत काट लेता ।' [2]

स्वतंत्रता के बाद भी गांव के वातावरण में जहाँ सुधार की अपेक्षा थी। वह और भी धीरे-धीरे विकृत होने लगा और गांव से सामाजिक एकता धीरे-धीरे कमजोर पड़ने लगी।

'रामदरश मिश्र के शब्दों में 'कभी उसकी चोरी, कभी उसकी, गृहदाह, कभी उसका। ऐसा मालूम हो रहा था कि गांव में कुछ खून होकर रहेगा।'[3]

मिश्र जी ने सामाजिक जीवन की विकृतियों का चित्रण मिश्र जी ने बड़ी सटीकता से किया है। 'पानी के प्राचीर' उपन्यास में संध्या नामक पात्रा के माध्यम से समाज में फैली विकृतियों के बारे में बताया है । सामाजिक विद्रुपताओं को प्रकट करते हुए इस उपन्यास में संध्या के माध्यम से कहा गया है कि 'गांव में क्या रखा है नीरू । देखो न, सखियों के नाम पर गेंदा, चमेली जैसी आवारा छोकरियां है । गाँव के लौंडे है, जो बिंदिया चिमारन के पीछे पड़े रहते है। गांव के लोग चोरी करते है, खेत उखाड़ते है, घर फूँकते है, चुगली करते है- ऐसे गाँव में क्या रखा है?'[4]

मिश्र जी ने उपन्यासों के माध्यम से विकृत सामाजिक जीवन की स्थितियाँ, व्यक्ति की आशाओं, इच्छाओं एवं आकांक्षाओं को कहीं न कहीं तोड़ रही है तथा जिन उच्च मूल्यों को लेकर वह समाज में जीना चाहता है वह उन मूल्यों के साथ नहीं जी पा रहा है। इस उपन्यास में नीरू कहता है-

'इस जिंदगी में कोई भी तो काम मेरा मनचाहा हो। कोई भी तो, कोई भी- मगर नहीं होने का। लगता है, यह समूची जिंदगी निमित्त मात्र बनकर एक दिन टूट जाएगी। जिंदगी में कहीं भी एक क्षण के लिए विराम या तृप्ति नहीं दिखाई पड़ी।'[5]

नीरू इस उपन्यास में समूल्यों को लेकर जीवन जीता है, परन्तु परिवार की आर्थिक मजबूरी के कारण उसे गजेन्द्र सिंह जैसे क्रूर जमींदार के यहाँ नौकरी करनी पड़ती है। नीरू जो अपने जीवन के आदर्श और यथार्थ के द्वंद्व से लगातार गुजरना पड़ता है किन्तु अंत में उसके आदर्श की ही जीत होती है।

नीरू अपने भाई से कहता है- 'हाँ, केसु, रो रहा है, तुमने आँखों के आगे से परदा हटा दिया तो इस अंधकार में किसानों के अनेक तड़पते चेहरे, आँसू से भीगी हुई खोह-सी शून्य आँखे, धूप में तपती हुई रक्त से चिपचिपी पीठे, क्षमा-याचना करते जुड़े हुए हाथ, खाली झोंपड़ियाँ बिलखते हुए बच्चे,, अटकती हुई नारियाँ, नजर आ रही है। मेरे कानों में दबीलें स्वर टकरा रहे है। विश्वास मान केसू, अब तेरी पढ़ाई के रूपये में किसानों के रक्त की गंध नहीं आयेगी।'[6]

इस उपन्यास में पिता और पुत्र के संबंधों को भी रेखांकित करने का कार्य मिश्र जी द्वारा हुआ है । उपन्यास में प्राय: नीरू और उसके पिता सुमेश पांडे में विवाद होता रहता है। नीरू अपनी गरीबी से लड़ता है और परिवार को एक मजबूत आर्थिक स्थिति प्रदान करने के लिए निरंतर संघर्षशील है। साथ ही, वह अपने पिता के आलसी स्वभाव से अत्यधिक ऊब चुका हैं। वह अपने पिता पर किसी भी प्रकार की जिम्मेदारी देता है, तो उसके पिता काम करने की जगह घूमने निकल जाते और यदि नीरू काम का जबाव तलब करता तो वे झल्लाकर खड़े हो जाते।

* विभागाध्यक्ष (हिन्दी) एम.एल.बी. कॉलेज, भोपाल (म.प्र.) भारत
** सहायक प्राध्यापक (हिन्दी) कैरियर कॉलेज, भोपाल (म.प्र.) भारत

नीरू के पिता इतना तक ही नहीं करते बल्कि वे तो खेत में बोये जाने वाले बीज में से बचाकर बनिया के यहाँ बेच देते और प्राप्त रूपये को बारात, मेला, हाट, गाने बजाने में लगा देते थे। नीरू मन-मसोस कर रह जाता था- 'हाय यह तो नीचता की हद हो गयी। अपनी ही औलाद के साथ धोखा धड़ी।'[17]

इस प्रकार विभिन्न प्रकार से मिश्र जी ने सामाजिक अवचेतना की दर्शाया है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. 'पानी के प्राचीर', रामदरश मिश्र, रचनावली खण्ड-5,
2. उपरिवत्, पृष्ठ- 35
3. उपरिवत्, पृष्ठ- 188
4. उपरिवत्, पृष्ठ- 108
5. उपरिवत्, पृष्ठ- 176
6. उपरिवत्, पृष्ठ- 182
7. उपरिवत्, पृष्ठ- 189

****

राजस्थान की समसामयिक कला में इंस्टालेशन कला

अमिता देवी *

प्रस्तावना – राजस्थान कला की दृष्टि से सदा ही सम्पन्न रहा है। इतिहास इस बात का साक्षी है कि प्रत्येक देश एवं प्रांत की कला में उतार-चढ़ाव निरंतर आते रहे हैं। सन् 1965 के बाद का समय राजस्थानी कला के उत्थान का सूचक रहा है।

राजस्थान की मरूभूमि का एक-एक कण कला और संस्कृति के सर्वमान्य गुणों से सम्पन्न रहा है।[1] वर्तमान समय में राजस्थान की समसामयिक कला प्रयोगवादी दृष्टिगोचर होती है। राजस्थानी कला में आश्चर्यजनक विविधता के दर्शन होते है। प्रत्येक कलाकार अपनी व्यक्तिगत शैली, माध्यम एवं नवीन तकनीकी पद्धतियाँ अपनाता हुआ नजर आता है। आज सौंदर्यबोध और प्रयोगधार्मिता के प्रति कलाकार काफी सजग है, जिसके अन्तर्गत वह किसी शैली मात्र का अनुसरण न करके अपनी प्रयोगधर्मी नवीन तकनीकों द्वारा कला को नए आयाम देने में प्रयासरत है।

समकालीन कला में इन दिनों जितने तरह के प्रयोग हो रहे हैं, इससे पहले शायद ही कभी हुए होंगे। इन प्रयोगों के पीछे जहाँ कलाकार का प्रारंभिक कला अनुभव रहा है, वहीं दूसरी ओर नए-नए कला माध्यमों का दृश्य में आना भी महत्वपूर्ण रहा है।

कलाकार की कल्पनाशक्ति कलाकृति के सृजन में सदैव प्रयत्नशील रहती है। कलाकृति निर्मित करने में कलाकार की मानसिक सृजनात्मक योजना कल्पना के माध्यम से कला सृजन को सफल बनाती है।

कलाकार के मस्तिष्क में सौंदर्य के विभिन्न आयाम कल्पनाशील रहते हैं, जो विभिन्न अवधियों में कलाकार के मन एवं मस्तिष्क में कला सौंदर्य का चिंतन विचरण करते हैं।'[2] जो विभिन्न माध्यमों एवं तकनीकों द्वारा कला में अभिव्यक्ति होते हैं।

आज के युग में तकनीक ही शैली है, उसी में नवीनता लाना कलाकार का मुख्य उद्देश्य बन गया है। नवीनता के लिए वह विविध साधनों का प्रयोग करते हुए अपनी इच्छानुसार विविध माध्यमों एवं विधियों का प्रयोग करता है।[3] इसी परिणामस्वरूप नवीन माध्यमों के साथ-साथ नई-नई तकनीकों का जन्म हुआ और नवीन रूपों के साथ नवीन कला तकनीकों ने कला जगत में नए आयाम स्थापित किए।

आज परम्परागत कला शैलियाँ व तकनीकों का स्थान नवीन प्रयोगों व यंत्रों ने ले लिया है, जिनके प्रयोग से कलाकार, कला में अपनी संवेदनाओं को विभिन्न विधियों द्वारा प्रस्तुत करने में स्वयं को सक्षम महसूस करता हुआ दृष्टिगोचर होता है। वर्तमान समय में कलाकार ने अपनी कला में गतिशीलता बनाए रखने एवं उसे नवीनता के गुणों से परिपूर्ण करने हेतु विभिन्न नवीन माध्यमों एवं तकनीकों का प्रयोग कर कला को नए आयाम देने का प्रयास किया है। जिनमें इंस्टालेशन, डिजिटल आर्ट, फोटोग्राफी, कोलाज, एवं मिश्रित माध्यम आदि कला की नवीन महत्वपूर्ण तकनीकों में से हैं। नवीन प्रयोग व परिवर्तन ही कला की प्रगति के परिचायक हैं।

इंस्टालेशन आर्ट – यह कला विद्या विविध सामग्रियों द्वारा अपनी भावनाओं, कलात्मक सोच और संवेदनाओं को प्रदर्शित करने का एक नवीन माध्यम है। इस कला प्रस्तुतीकरण में भिन्न-भिन्न प्रकार की सामग्रियों को संयोजित करके प्रदर्शित किया जाता है और प्रस्तुत विचारों के अनुरूप आकर्षक शीर्षक दिया जाता है। इस कला की मुख्य विशेषता यही है कि इसमें प्रयुक्त माध्यम, तकनीक एवं सामग्री महत्वपूर्ण नहीं है बल्कि कलाकार की कलात्मक सोच महत्वपूर्ण है, जो इस कला को अन्य कलाओं से पृथक बनाती है।

समसामयिक कलाकारों ने परम्परागत कलाओं से प्रेरणा और अनुभवों को आधार बनाकर कलाकारों द्वारा नवीनता का प्रस्फुटन इंस्टालेशन आर्ट में भी देखने को मिलता है। नवीन कलात्मक प्रयोग दर्शकों को प्रभावित करते हुए आकर्षित भी करते हैं।

'इंस्टालेशन की शुरूआत यदि कहा जाए तो **मार्शल हुसैम्प** (1887-1968) की **फाउन्टेन** (1917) नामक कृति से हुआ। हुसैम्प ने बनी - बनायी वस्तुओं का प्रदर्शन आरम्भ किया। सामाजिक सरोकारों को नये ढ़ग से प्रस्तुत किया। यद्यपि यह प्रयास इतना सौन्दर्य मूलक नहीं रहा, परन्तु कला के विस्तार को एक नया आयाम अवश्य मिला।'[4]

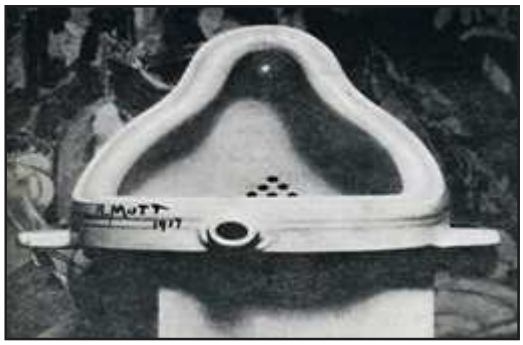

फाउन्टेन

वर्तमान समय में कलाकार कैनवास और रंगों से बाहर निकल कर अपनी प्रयोगधर्मी नवीनतापूर्ण कला में जीवन, सामाजिक संदर्भो और आस-पास की घटनाओं को नवीन शांतिपूर्ण कलाविचारों द्वारा प्रस्तुत कर रहा है।

कला में इंस्टालेशन, भारतीय परम्परओं में पहले से ही दृष्टिपात होती है, जैसे मेले, अनुष्ठान, जन्माष्टमी और दुर्गा पूजन-विसर्जन, सब इसी के

* शोधार्थी (विजुअल आर्ट) वनस्थली विद्यापीठ (राज.) भारत

अंतर्गत आता है। परन्तु वर्तमान समय में इसका एक नवीन स्वरूप सामने आया है, जिसमें धार्मिक विषय सामग्री गौंण है और कलात्मक विचार मुख्य हैं।

इंस्टालेशन में एक कलात्मक रंग और विभिन्न आकृतियों रूपी वस्तुओं का सौदंर्यपूर्ण विस्तार है, जो ऐन्द्रियों को विशुद्ध आनंद की प्राप्ति देता है। इस कला में कलाकार की समझ का विस्तार दृष्टिपात होता है। यहाँ कला विचार मौन होकर भी एक अलग अंदाज में उद्घटित होते हैं। यहाँ कलाकार की संवेदनाओं का ताना-बाना बुने अनेक विचार हैं, जो बहुत कुछ कहते हुए प्रतीत होते हैं और बहुत कुछ कहने की कोशिश में। यह कला स्थाई और अस्थाई दोनों रूपों में महत्वपूर्ण है।

इस कला में इंस्टालेशन का अब तक का सबसे अच्छा एवं स्थाई उदाहरण चण्डीगढ़ में **नेकचंद** द्वारा निर्मित **रॉक गार्डन** है। यह अति विस्तृत क्षेत्र में स्थाई इंस्टालेशन कला का रूप है, जिसमें नेकचंद की भावनाओं के कल्पनामय संसार की झलक है। इस कलाकर्म को पूर्ण करने में नेकचंद द्वारा व्यर्थ सामान, रंगीन चूड़ियाँ, संगमरमर पत्थर आदि अनेक वस्तुओं का प्रयोग किया गया।

यह अद्भुत एवं आश्चर्यजनक कला विद्या है। 'भारत के सबसे चर्चित और पुराने इंस्टालेशन कलाकर **विवान सुन्दरम्** की इस कला के विद्या के बारे में टिप्पणी अर्थपूर्ण और मार्मिक दोनों ही हैं। उन्होंने एक इंटरव्यू में कहा था 'मैं जानता हूँ कि मेरी इंस्टालेशन आर्ट के विभिन्न रूप, जब वे किसी अटारी में पड़े होते हैं, तो उदास और जर्जर नज़र आते हैं, यानि जब वे डिस्पले में नहीं होते हैं। जबकि बुरी तरह से धूल-धूसरित पेंटिग को भी तुरंत साफ करके एक नई चमक दी जा सकती है। इस बात की कोई सम्भावना नहीं है कि अटारी में पड़ा कोई इंस्टालेशन मास्टरपीस कलाकृति कहलाएगा।'[5]

भारतीय कला में इंस्टालेशन कला विधा अपनी पहचान बनाने में सफल रही और विवान सुन्दम्, रूमाना हुसैन, अर्पणा कौर और सुबोध गुप्ता आदि कलाकारों ने इस विधा को स्थाईत्व बनाने में अपना महत्वपूर्ण योगदान दिया। इस गतिमय कला यात्रा में राजस्थान के समसामयिक कलाकारों ने भी इस विद्या में अपने कलात्मक संवेदनाओं और विचारों को प्रस्तुत किया। जिसमें सुरेन्द्रपाल जोशी, हंसराज कुमावत, चितंन उपाध्याय, विनय शर्मा और हेमा उपाध्याय आदि के नाम विशेष हैं।

समकालीन कला में नित नए प्रयोग परिवर्तनशीलता के साथ आगे बढ़ रहे हैं, जिसमें इंस्टालेशन से भारतीय कला अवधारणा का स्वरूप ही बदल गया है। कलाकारों का मानना है कि तकनीकी संयोजन पर आधारित इस विद्या क्षेत्र में अत्यंत प्रबल सम्भावनाएं हैं। सरल शब्दों में कहा जाए तो इस विद्या ने चाक्षुष अभिव्यक्ति के पारम्परिक रूप को मुक्त कर नवीन अभिव्यक्ति के द्वार खोले हैं।

आज के वैज्ञानिक युग का प्रभाव कला क्षेत्र में भी अपना महत्वपूर्ण स्थान बनाए हुए है। विज्ञान की प्रगति कम्प्यूटर का कला जगत में पदार्पण, संचार माध्यमों का विकास, डिजिटल फोटोग्राफी आदि दृश्य कलाओं में प्रयोगधर्मिता के क्षेत्र में कलाकारों को नई-नई चुनौतियाँ दे रहे हैं। केवल तीन अक्षर के छोटे से शब्द प्रयोग में न जाने कलाकारों के लिए कितनी संभावनाएं छिपी हैं।

उपरोक्त पंक्तियाँ कलाकार हंसराज कुमावत के प्रयोगधर्मी व्यक्तित्व पर सटीक बैठती हुई नजर आती हैं। ये प्रयोगधर्मी प्रवृत्ति के कलाकार हैं, जिन्होंने विभिन्न कला माध्यमों में अपने भावों की अभिव्यक्ति करते हुए, नवीन तकनीकों का प्रयोग कर अपनी कला से कला जगत को नवीनता प्रदान की है। अपनी प्रयोगधर्मी एवं खोजी प्रवृत्ति हेतु नवीन कला आयामों के दर्शन इनकी कला में दृश्यमान होते हैं। आविष्कारी एवं खोजी प्रवृत्ति हमें आदिमकला से वर्तमान कला तक के समस्त कलाकारों में दृष्टिगोचर होती है।

हंसराज कुमावत – सरल स्वाभावी एवं मृदुभाषी कलाकार हंसराज कुमावत समसामयिक कला के गिने-चुने बहुमुखी कला प्रतिभाओं में से एक हैं। समकालीन परिदृश्य में इन्होंने बहुत ही कम समय में अपने भावपूर्ण संयोजन एवं अद्भुत प्रयोगवादी कलाकौशलता से इंस्टॉलेशन कला में अपनी पृथक पहचान बनाई है। इंस्टॉलेशन कला में हस्तसिद्ध होने के साथ-साथ ये एक शिल्पकार के रूप में भी जाने जाते हैं।

हंसराज कुमावत का जन्म मध्यवर्गीय परिवार में 1 जनवरी 1980 को राजस्थान के बोराज नामक ग्राम में हुआ। कला के गुण इन्हें विरासत में मिले। बचपन में ही अपने चित्रकार पिता और बड़े भाई की प्रेरणा से इन्होंने भी कलम ब्रश एवं रंगों से रिश्ता जोड़ा। तत्पश्चात् किशोर अवस्था में इन्होंने जयपुर के विख्यात मिनिएचर कलाकार एवं गुरू नाथूलाल वर्मा के सानिध्य में रेखाओं की बारीकियों को समझने हेतु जाने लगे और बहुत ही कम समय में इन्होंने अपने गुरू द्वारा दिए गए कला के मूल मंत्रों को आत्मसात कर लिया।

इनके बड़े भाई के प्रोत्साहन से ही ये कला क्षेत्र में आए तथा हर क्षण उन्होंने इनका मार्गदर्शन भी किया। तब से लेकर वर्तमान समय तक इन्होंने इंस्टॉलेशन कला में अपनी पृथक पहचान बनाने हेतु अनेक कृतियों का निर्माण किया।

हंसराज कुमावत, मूर्तिकार रामकिंकर बैज और यूरोपीयन कलाकार साल्वडॉर डाली की कला से प्रभावित रहे हैं। इनका मानना है कि इनकी कला को देखने से इनके अंदर महत्वपूर्ण कलात्मक ऊर्जा का जन्म होता है। हंसराज कुमावत स्पेस के गणित एवं व्याकरणों से भली-भाँति परिचित हैं, उसकी शब्दावरी को अत्यंत सजकता से साधते हैं। विशेषकर इंस्टॉलेशन कला की यह सबसे बड़ी आवश्यकता है। जिसे वे अभिव्यक्ति का बड़ा माध्यम मानते हैं। वर्तमान समय में इंस्टॉलेशन कला और हंसराज कुमावत कलाजगत में एक दूसरे के पर्याय बन चुके हैं।

अत: यह कहना अतिश्योक्ति नहीं होगी कि संसाधनों की तकनीक एवं चित्र संयोजन के विकास क्रम में युग-युगान्तर में कितने अनुभव व ज्ञान संचित किए हैं, फिर भी नए-नए आविष्कार एवं नूतन प्रयोग की लालसा और संभावनाओं के लिए कलाकार की छटपटाहट कम नहीं होती।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. स्वर सरिता वर्ष - 5, अंक - 10, अप्रैल 2013, पृ.सं. 16।
2. मावड़ी, डॉ. मोहन सिंह, भारतीय कला सौंदर्य, 2002, पृ.सं. 17।
3. प्रदीप, किरण, कलागत तत्व, सिद्धांत, माध्यम प्रविधियाँ, 2009, पृ.सं. 130।
4. डॉ. राम विरंजन, भारत में इंस्टालेशन आर्ट का विकास, कला दीर्घा, अक्टूबर 2007, वर्ष 8, अंक 15, पृं.सं. 33
5. विनोद भारद्वाज, बृहद आधुनिक कला कोश, द्वितीय संस्करण-2009, पृं.सं. 249

इंस्टॉलेशन कला में कलाकार हंसराज कुमावत के भावों की अभिव्यक्ति

****

टैगोर की चित्रात्मक अभिरूचि

डॉ. शालिनी रानी *

प्रस्तावना – **'मेरा प्रभात गीतों और कविताओं से आरंभ हुआ, अब मेरे जीवन की संध्या में मेरा मन रूप और रंगों से संतृप्त हो गया है।'**

यूं तो ये वाक्य रवीन्द्रनाथ के द्वारा रोमां रोला के लिए कहे गए हैं। लेकिन इन्हीं वाक्यों में स्वयं रवीन्द्रनाथ के जीवन का सार है। टैगोर का संपूर्ण अद्भुत रचना संसार उनकी बहुमुखी प्रतिभा के रस से भरा हुआ है। जीवन के आरंभिक काल में विशिष्ट शब्द व स्वर रचनाओं की ओर समर्पित रहे और जीवन की संध्या में रवीन्द्रनाथ के भावों की अभिव्यक्ति शाब्दिक रूप से न होकर रंगों व सरल, सहज आकारों के रूप में अभिव्यक्त होने लगी। इसी संध्या को उन्होंने अपनी जीवनी की पुस्तक का उपसंहार कहा है। उसमें सब कुछ समा जाता है। ऐसा लगता है कि वे और भी कुछ कहना चाहते हैं, किन्तु शब्दों की भाषा में वह समा नहीं पा रहा था। उसे रूप की भाषा चाहिए थी और एक समय आया जब वह भण्डार झरने की तरह फूट पड़ा और जो कुछ कहने को बाकी था–पिछले सत्तर वर्षो मे जमा हुआ–चित्रात्मक रूप जगत बन कर बाहर आ पड़ा। इस प्रकार उनके जीवन की सुबह उनके गीतों से भरी हुई है और संध्या रंगों से भरी।

किंतु ऐसा भी नहीं है कि उनके जीवन की सुबह बेला रंगों व रूपो से पूर्ण भूमिका हीन रही हो। टैगोर की चित्रात्मक अभिरूचि का परिचय सामान्य: अधिकतर विद्धान उनके **'बुढ़ापे की कला'** या **'जीवन के अंतिम दशकों की कला रूचि'** कह कर देते हैं। लेकिन हमें टैगोर की चित्रात्मक अभिरूचि के साक्ष्य उनके मित्रों व संबंधियों को लिखे गए पत्रों से व उनके संस्मरणों में प्राप्त कर पाते हैं। यहाँ हमें ज्ञात होता है कि उन्होंने केवल बच्चों के जैसे कला को सिखा ही नहीं बल्कि अपने जीवन के आरम्भिक चार दशक तक चित्रात्मक कला से स्वयं को तृप्त करने के जैसे सुस्पष्ट सजग व सूचारू रूप से रेखांकन भी किया हैं। चित्र विधा की देवी हमेशा से ही उन्हें अपनी ओर आकर्षित करती थी। ऐसे बहुत से प्रमाण यहाँ उपस्थित है, जो हमें उनके स्मरणों व पत्रों में प्राप्त हुए हैं–

बाल्यावस्था – बचपन में टैगोर ने चित्रों व रंग चित्रों की प्रारंभिक शिक्षा एक कला अध्यापक से प्राप्त की। टैगोर ने अपने संस्मरणों में इस बात का जिक्र किया है कि ' ...बड़ी सुबह उठकर लंगोट पहिन, एक अँधे पहलवान के साथ हमें कुश्ती की एक–दो पकड़ भी सीखनी पड़ती थी। उसके बाद मिट्टी सने शरीर पर ही कपड़े पहिन कर भाषा, गणित, भूगोल और इतिहास पढ़ने में जुटना पड़ता था। शाला से घर वापिस आने पर हमें ड्राईंग और कसरत सिखाने वाले शिक्षक तैयार मिलते थे।' इस प्रकार बचपन में उन्होंने कुछ कला अभ्यास अवश्य किया होगा।

टैगोर की सबसे पहली रेखाओं का अविर्भाव **'मालती पोथी'(1878)** नामक पाण्डुलिपियों में प्राप्त होता है, जो उन्होंने किशोर अवस्था में लिखी जहाँ, रेखाचित्र, मुखाकृतियाँ, टेढ़े–मेढे अक्षरों की रूप रेखाएँ आदि बनाने में रूचि प्राप्त होती हुई। ' मालती पोथी (डै231) के 7। पृष्ट पर तीन क्लांत सी मुखाकृतियों को क्रमश: एक के नीचे दूसरे को बहुत कम स्थान में दिखाया है। ये तीनों मुखाकृतियाँ ऐसी जान पड़ती है कि किसी एक चेहरे को ही इन्होंने यहाँ छापने का प्रयास किया है, जिनकी क्लांता उनके माथे, नाक, होठों और गाल पर स्पष्ट: दृष्टव्य हैं। ये चित्राकृतियाँ उक्त पृष्ठ की काव्य विषयवस्तु से संबंधित भी नहीं हैं। स्पष्टत: ये केवल उनके टूट्डल और केवल उनकी अंगुलियों की एक चलायमान सक्रियता है, जब वे शाब्दिक विषयवस्तु के बारे मे विचारमग्न रहेते थे। इस समय रवींद्रनाथ 17 वर्ष के थे और ये चित्रकारी उनकी कोई विशेष प्रतिभा व मौलिक शैली को भी नहीं दर्शाती हैं।' **(देखिए चित्र सं.–1,2)** यहाँ उनकी यह चीज व्यापक रूप में नहीं दिखाई पड़ती है किंतु जीवन के अन्तिम समय की चित्र–रचना की यही सूचना उनकी **'पूरबी'** रचनाकाल **(1924)** में सुस्पष्ट द्रष्टव्य हैं। **(देखिए चित्र सं.–3)** यह बात सभी जानते हैं कि लिखावट में हुई गलतियों को लयात्मक रूप में कॉट–छॉट कर पाण्डुलिपि के पृष्ठों को विचित्र आकारों से भर देना कवि–चित्रकार का एक विचित्र ख्याल था एवं क्रमश: ऐसे ही विचित्र रूपों की सृष्टि में वे परिणत भी होते गए। यही प्रवणता उनकी परवर्ती चित्र–साधना की प्रेरणा और पाथेय हो गयी और आगे पूरबी के रचनाकाल अर्थात् 1924 से इस अभ्यास में प्रबलता आयी।

चित्र सं–1 चित्र सं–2चित्र सं–3चित्र सं–4 (देखे अन्तिम पृष्ठ पर)

1880–89 ई. इस समय टैगोर ने कुछ चित्र एवं पक्षियों के रेखा चित्र बनाए थे। इनमें से एक व्यक्ति चित्र पर उन्होंने **'प्रथम उद्भव'** लिखकर अपने हस्ताक्षर किए हैं। यह रेखाचित्र इतना स्पष्ट एवं सधा हुआ है कि किसी शिल्प कुशल चित्रकार द्वारा बनाया जान पड़ता है। **(देखिए चित्र सं.–4)** अत: यह विचारणीय है कि संभवत: **'ज्योतिन्द्रनाथ ने उसमें कुछ परिवर्तन किया हो, क्योंकि रवीन्द्रनाथ ज्योतिन्द्र के अधिक निकट थे और सदैव उनसे उन्हें प्रेरणा मिलती रही है। यह सन् 1880 का बना है जब वे 19वर्ष के थे।'**

1890 ई.–जैसा कि डब्ल्यू जी. आर्चर द्वारा उल्लेख किया गया है **'1890 में एक युवक के रूप में जोड़ासांको स्थित पारिवारिक गृह के सुनसान कमरे में बैठे हुए उन्होंने रेखा चित्रों से एक कापी बुक भर दी थी।'** यह उल्लेख हम टैगोर के संस्मरण में पाते है जहाँ वह अपने युवाकाल की आदत को स्मरण कर रहे है **'याद आता है दोपहर के समय जाजिम बिछे कोने के घर में एक चित्र बनाने का खाता लेकर चित्र बना रहा हूँ।'–वर्षा ओ शरत्' जीवनस्मृति'**

1893 ई–रवीन्द्रनाथ और उनके भाई ज्योतिरिन्द्रनाथ पत्रों के माध्यम से पहेली चित्रों के आदान–प्रदान के लिए शिमला में उनके भतीजे सुरेन्द्रनाथ और कलकत्ता में अवनीन्द्रनाथ के साथ शामिल हो गए थे। परिणामत: टैगोर द्वारा पेंसिल से बनाए गए अवशिष्ट रेखा चित्रों की कलात्मकता की परिशुद्धता हमें यहाँ प्राप्त होती है। **'यह पुस्तक आज भी रवींद्रभवन**

* कला शिक्षिका (टी.जी.टी.) केन्द्रीय विद्यालय, औरंगाबाद, पटना (बिहार) भारत

शान्तिनकेतन में सुरक्षित संग्रहित है यह पुस्तक 'छोबिर हेयलि खाता' (chhobir heyali khato) के रूप में जानी जाती है अर्थात सचित्र पहेली की अभ्यास पुस्तक।'

यह शिमला यात्रा असल में टैगोर के **सिलायदा काल (1890–1900)** की अवकाशिय छुट्टियाँ थी। यहीं सियलायदा काल उनका पद्मावास काल कहा जाता है और टैगोर के अद्भुत रचना संसार के विशेष प्रेरक तत्वों में हमें उनके इसी काल का प्रभाव सदैव आकर्षित करता हैं। इसी समय 1893 ई. का उनका एक पत्र देखिए जो उन्होंने **अपनी भतीजी इन्द्रिरा** को लिखा जहाँ उनके चित्रकला में रूचि लेने का स्पष्ट उल्लेख मिलता हैं। जिसमें वे कहते हैं–**'मैं तुमसे ईमानदारी से सच कहता हूँ कि मैं यह बिल्कुल नहीं जानता हूँ कि मेरा वास्तविक व्यवसाय क्या है या क्या होना चाहिए। .... मुझमें विभिन्न कलाओं की किसी भी देवी को निराश करने का साहस नहीं है... यदि मैं बिना किसी डर अथवा लज्जा के सच्चाई स्वीकार कर लूं, तो मैं तुमसे यह भी कह देता हूँ कि मैं एक निराश प्रेमी की तरह कला की देवी की ओर ललचाई हुई दृष्टि से देखता हूँ। लेकिन आह! उसे पाना कठिन है, क्योंकि मेरी उम्र अब वह नहीं रही जब मैं उससे प्रणय निवेदन कर सकता था।'**

1900 ई. 17 सितम्बर, 1900 को टैगोर ने अपने वैज्ञानिक मित्र **जे.सी. बोस** को भी एक पत्र पद्मा बोट सिलायदा से लिखा था कि वे एक रेखाचित्र पुस्तिका के चित्रों में रंग भर रहे हैं। टैगोर ने लिखा कि **'आपको यह सुनकर कुछ आश्चर्य होगा कि मैं एक स्केच बुक में चित्र बनाता रहा हूँ। यह कहना अनावश्यक है कि मेरे चित्र पेरिस की किसी प्रदर्शनी के लिए नहीं है, न ही मुझे इस बात की किंचित आशा है कि देश का राष्ट्रीय संग्रहालय कर दाताओ से वसूल की गई धनराशि से एकाएक इन चित्रों को खरीदने का विचार करेगा।...कठिनाई यह है कि जो कुछ भी चित्र मैं बनाता हूँ उससे अधिक को काटना व मिटना जरूरी हो पाता है। जिससे मेरी प्रगति मंदित हो जाती है, इसके परिणामस्वरूप मैं पेंसिल से अधिक रबर का इस्तेमाल करने में निपुण हो गया हूँ। इसलिए, मृत रैफेल अपनी कब्र में शांति से रह सकता है क्योंकि उनके कीर्तिमानों को नीचा करने के लिए कम से कम मैं उनका प्रतिद्धन्दी नहीं बन सकूंगा।'**

1903–05 ई. टैगोर की शब्द रचना **शिशु (1903)** व **खेया (1905)** की पाण्डुलिपि के पृष्ठों पर कुछ (कववकसमे) प्राप्त होते हैं। टैगोर की प्रारम्भिक अवधि की डुडल्स (शिशु और खेया में) ऐसे दिखाई पड़ती है मानों वे अपने काव्यात्मक गीतिविधि से कुछ पल भर का आराम कर रहें हो। यहाँ उपस्थित (doodle) को देखिए **(चित्र सं.–5,6)** जो शिशु से प्राप्त हुई जो एक सरल सहज डिजाइन के रूप में है और जो **खेया (1905)** से प्राप्त हुए है।**(देखिए चित्र सं.–7)** वह लयात्मक रूप में एक सरस लता की सुन्दर नाजुक पत्तियों के जैसे डिजाइन में प्रतीत होती हैं। डिजाइन पूर्णत संतुलन–सामंजस्य के साथ प्रवाह के नियम की सन्तुष्टि करता हैं।

चित्र सं–5 चित्र सं–6 चित्र सं–7 चित्र सं–8 (देखे अन्तिम पृष्ठ पर)

1909 ई. मुकुल डे ने यह बताया कि किस प्रकार अप्रैल, 1909 के दिन दोपहर बाद कवि ने अपने होठों पर रहस्यात्मक मुस्कान बिखेरते हुए उन्हें अपने पीछे शांति निकेतन में ऊपर की मंजिल में एक कमरे में आने के लिए कहा। वहाँ उन्होंने एक दराज खोली और काले चमड़े की जिल्द लगी एक शानदार चित्र पुस्तक बाहर निकाली, जिस में सिर और प्राणियों की आकृतियों के प्रांरभिक अभ्यास चित्र थे, और उक्त पुस्तक उन्हें दे दी।

1913 ई. मुकुल डे ठाकुर के साथ रामगढ़ पहाड़ियों में गए और इस यात्रा के दौरान ठाकुर ने **एक रेखाचित्र अपनी पुत्रवधु का और दो रेखाचित्र मुकुल डे के बनाए।** यहाँ उपस्थित रेखाचित्र मे एक नवयुवक के पोट्रेट को देखिए **(देखिए चित्र सं.–8)** यहाँ टैगोर की लिखावट में तीन बंगाली अभिलेख उपस्थित है **–प्रथम 'मुकुल डे'** और दूसरा नीचे बॉय कोने में **रवींद्रनाथ ठाकुर के बंगाली हस्ताक्षर** और विपरीत दूसरे कोने में अंग्रेजी **भाषा में रामगढ़ लिखा** हैं। संभवत यह व्यक्ति चित्र नवयुवक मुकुल डे का है, जो टैगोर ने रामगढ़ की पहाडी यात्रा के दौरन उकेरा था।

1920 ई. मुकुल डे यह बताते हैं कि रवीन्द्रनाथ ठाकुर ने **'कला भवन विश्वभारती में एक चित्रकला प्रतियोगिता का उद्घाटन किया और प्रतियोगिता का एक निर्णायक होते हुए प्रतियोगिता में शामिल किए जाने के लिए स्वयं चित्र दिए।'**

1923 ई. रवीन्द्रनाथ टैगोर के नाटक '**रक्तकरबी'** की पाण्डुलिपि के पृष्ठों पर कुछ जटिल प्रतीकात्मक कलाकृति हमें इस समय प्राप्त होती है। **'1920–23** के मध्य का समय वह है ,जब वे अपनी पाण्डुलिपि में आकस्मिक उपस्थित विभिन्न दृश्यात्मक आकारें से भेंट करने में दिलचस्पी ले रहे थे। ये आकार लोक कला के विभिन्न प्रतीकों व प्रागैतिहासिक कला के समान प्रतीत होते है और साथ ही साथ उन पश्चिमी कलाकारों के जैसे भी जिन्होंने नकलपूर्ण यथार्थवादी कसौटी को त्याग दिया व सहजता के महत्व से भर गए।'

लेकिन हैरत की बात यह है कि इस अविध के पत्रों में टैगोर संबंधित विषय पर मौन हैं। किंतु फिर भी उनकी रक्तकरबी पाण्डुलिपि में उन्हें ऐसा अवसर अवश्य मिलता हैं। जहाँ एक नवीन छवि उभर कर आती हैं। यह एक विचित्र रूप है जो एक काल्पनिक डायनासोर के जैसा प्रतीत होता है व साथ ही मानव चेतना को ही उलट कर रख देता हैं।'**(देखिए चित्र सं.–9)**

चित्र सं–9 चित्र सं–10 (देखे अन्तिम पृष्ठ पर)

1924 ई. पूरबी की पाण्डुलिपियों व पहले की पाण्डुलिपियों की पंक्तियों में हुई काट–छाट में मुख्य अंतर यह है कि पहले की पाण्डुलिपियों में उन स्थानों को सुन्दर फुल–पत्तियों का रूप दिया गया है या लताओं के जैसे नमूनों को बनाया गया है, लेकिन पूरबी में उग्र आकृतियों अथवा अद्भुत चित्रों व प्राचीन एवं विचित्र आकारों का अतिरेक है, जो अधिकांशत: काटे हुए शब्दों और पक्तियों से मेल भी नहीं खाते हैं।**(देखिए चित्र सं.–10, 3)** पूरबी का प्रकाशन सन् 1925 ई. में हुआ था और यह रचना विक्टोरिया ओकम्पो को समर्पित थी। टैगोर जब इस से पहले वर्ष पैरू यात्रा पर आकस्मात् बिमार हो गये तब वे अर्जेटिना में विक्टोरिया ओकम्पो के घर कुछ समय तक स्वास्थ्य लाभ के लिए ठहरे थे। सान इसीड्रो स्थित शहरी मकान में (ओकम्पो के निवास स्थान) रहते समय टैगोर ने अनेक कवितायें लिखी व साथ ही टेढ़े–मेढ़े चित्र भी बनाए। ओकम्पो ने स्वयं इस बात का वर्णन किया कि उन्होंने देखा **'कैसे कवि कविता व अपमार्जन का कार्य एक साथ करते थे। रेखाओं को बनाते हुए अचानक वे एक नाटकीय जीवन में कूद पड़ते थे जहाँ प्रागैतिहासिक कलीन राक्षसिय कृतियाँ, विचित्र पक्षी व चेहरे स्वयं उपस्थित होने लगते थे।'** इस तरह विक्टोरिया ओकाम्पो ने कविचित्रकार द्धारा अनायास बनाये गए टेढ़े–मेढे अक्षरों अथवा आकृतियों में से एक चित्र खोज निकाला और पाया कि वह वास्तव में एक कलाकृति है। टैगोर ने इस घटना का वर्णन अपनी पुत्रवधु, प्रतिमा को लिखे गए एक पत्र में किया हैं–

'यहाँ जब हमारी मेजबान (विक्टोरिया ओकाम्पो) ने आज सुबह (दिसम्बर, 1924) उक्त कला की मेरी साधना का परिणाम (चित्र) देखा, जैसा कि वह मेरी मेज पर पड़ा था, तो उसके लिए यह उसके जीवन की आवश्चर्यजनक घटना थी। वही पर कलाकृति मोड़ने से

खराब न हो जाए, इसलिए उसे सुरक्षित रखने के लिए उसने एक बड़े साइज के लिफाफे की व्यवस्था की है।'

यहीं उन्हें एक चित्रकार के रूप में पहली बार मान्यता प्राप्त हुई और वह भी एक ऐसे व्यक्ति से जो अपनी कुशाग्र बुद्धि, निर्णयकारिता और दूरदर्शिता के लिए, एक कलाकार के रूप में ठाकुर के सभी प्रशंसकों की अत्यधिक कृतज्ञता की पात्र है। पूरबी में कवि चित्रकार द्वारा जो डुडल्स उकेरे गए है वह पृष्ट पर छिन्न-भिन्न रूप में नहीं, बल्कि पूर्ण फलग पर एक सुव्यवस्थित ढंग से कला तत्वो व सिद्धान्तों का पालन करते हुए उपस्थित हुए हैं। अत: यही कारण है कि इन आकारों को हम पूर्ण चित्राकृति व रेखांकन कह सकते है न कि केवल एक ख्यालिक अनायास प्रयोग। इस प्रकार 'पूरबी' पाडुलिपि टैगोर की चित्रात्मक अभिव्यक्ति 1924 ई. में गम्भीरता के साथ अभिव्यक्त होने लगी थी। लेकिन यहाँ भी एक बात की ओर ध्यान देना आवश्यक है कि अभी भी टैगोर पाण्डुलिपियों में ही चित्रण कर रहे थे, स्वतन्त्र चित्रकार के रूप में नहीं।

1928 ई. टैगोर की चित्रात्मक रूपसंपदा में अपना एक विशेष महत्व रखता हैं क्योंकि सभी विद्धान यह मानते है कि टैगोर ने एक चित्रकार के रूप में 1928 ई. में ही कार्य करना आरम्भ किया। अब वे अपने रेखिय अपमार्जन को छोड़कर उन्हें एक पूर्ण डिजाइन का रूप देने का सफल प्रयास करते थे। इस समय टैगोर अपने लिए पेन्टिग भी बनाने लगे थे। उन्होंने **7 नवम्बर 1928 को एक पत्र रानी महालनोबिस** को लिखा जहाँ उन्होंने बताया कि **'मेरी खबरों के बुलेटिन में सबसे महत्वपूर्ण मद चित्रकला है। मुझे चित्र रचना के मोह और जादू ने पूरी तरह अपने वश में कर लिया है... एक समय था जब मैं कविता करता था लेकिन अब मैं इसे तकरीबन भूल चुका हूँ। कविता का विषय दिमाग से सोच कर वापस पाया जा सकता हैं। जबकि मेरे द्वारा अपनायी गयी चित्रण तकनीक कुछ उल्टी सी है। पहले एक रेखा जन्म लेती है, फिर रेखा रूप बन जाती है। अधिक स्पष्टता से कहूं तो ये रूप मेरे विचार की तस्वीर बन जाते हैं। रूप की यह बनावट एक अंतहीन आश्चर्य हैं। यदि मैं एक चित्रकार होता, मैं एक चित्राकृति बनाने के लिए पहले से सोचे गए विचार का अनुकरण करता...। लेकिन मुझे यह अधिक रोमांचक लगता है कि मन मे उपस्थित बहारी विचार, आश्चर्यजनक तत्वों के साथ मिलकर एक सामंजस्यपूर्ण एवं विचित्र रूप को जन्म देती हैं।'**

अंतत: टैगोर अब चित्रात्मक जगत में सूचारू रूप से कार्य करने लगे। यहाँ उपरोक्त साक्ष्यों के आधार पर यह तथ्य तो स्पष्ट है कि भले ही टैगोर ने 1928 से चित्रकला को गम्भीरता से लिया हो लेकिन उनकी चित्रात्मक अभिरूचि हमें उनके बाल्याकाल से ही प्राप्त होती है। स्पष्टत: उनकी यही चित्रात्मक अभिरूचि जीवन के अंतिम दशकों में उनकी नटखट, नखरीली छोटी बहू के रूप में प्रकट हुई।

इस तरह हम यहाँ टैगोर के अद्भुत रचना संसार में उनकी सुबह गीतो व कविताओं से व संध्या रूप व रंगों से सुसज्जित पाते हैं।

चित्र सं-1 चित्र सं-2चित्र सं-3चित्र सं-4

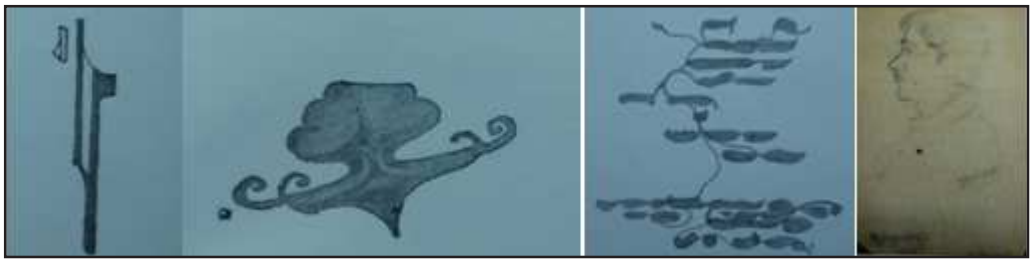

चित्र सं-5 चित्र सं-6 चित्र सं-7 चित्र सं-8

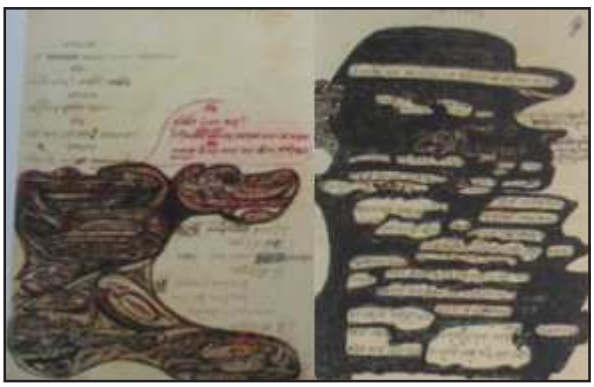

चित्र सं-9 चित्र सं-10

टोंक के नमदा हस्तशिल्प और बौद्धिक सम्पदा अधिकार

शर्मिला गुर्जर * प्रो. हिमाद्री घोष **

प्रस्तावना – राजस्थान का एक अनूठा हस्तशिल्प जो 'नमदा' नाम से जाना जाता है और वर्तमान में देश–विदेश में अपनी सुदंरता और विशिष्ट उपयोगिता के लिए प्रसिद्ध है। वैश्विक बाजार में यह अपनी पहचान बना चुका है और विदेशी मुद्रा प्राप्ति का साधन भी बन चुका है। भारत में राजस्थान में जयपुर से 98 किमी. दूरी पर टोंक शहर बसा हुआ है। वर्तमान में इसे नमदा नगरी कहा जाता है। राजस्थान में टोंक के अलावा मालपुरा, बीकानेर और कश्मीर तथा हिमालचप्रदेश में कुछ जगह यह बनाया जाता है। परन्तु 'नमदा' टोंक और कश्मीर के नाम से अधिक प्रसिद्ध है। अपितु दोनों के सामग्री अलंकरण और बनावट में अन्तर है। 'नमदा' मूलत: वह हस्तशिल्प है जिसे जमीन पर कालीन के रूप में बिछाने के लिए ऊनी रेशों पर फेल्टिंग की क्रिया करके बनाया जाता है। परम्परागत पद्धति में इसमें मानवी श्रम और कौशल का भरपूर उपयोग होता है। ताप और दाब से नमीयुक्त अवस्था में ऊनी रेशों को जमाकर तथा हाथ और कोहनियों से पूरी ताकत से रगड़ते हुए इसे सपाट वस्त्र का रूप दिया जाता है। वांछित मोटाई का वस्त्र बनने के बाद इस पर रंगाई करने के पश्चात् कटाई, सिलाई, एप्लिक, पैचवर्क, कशीदाकारी आदि क्रियाओं से सुन्दर अलंकृत, वैविध्यपूर्ण तथा उपयोगी या सजावटी वस्तुएं बनाई जाती है। स्त्री और पुरुष हस्तशिल्पियों द्वारा यह सारे कार्य होते हैं और खुद के द्वारा या बड़े व्यापारियों द्वारा इन्हें ग्राहकों को बेचा जाता है। नमदा ऊनी होने के कारण भारत में इसके उपयोग की सीमाएं हैं। परन्तु ठण्डे प्रदशों में इनकी आवश्यकता और मांग अधिक है। हाथ से निर्मित इन नमदा हस्तशिल्पों में कालीन के अलावा छोटे–बड़े आकार और प्रकारों के बैग, पर्स, खिलौने, पायदान, आसन, मोबाईल आदि के कवर, वाल हैगिंग बनाये जाते हैं। अपितु इन व्यवसाय को वर्तमान में मशीन से निर्मित 'इण्डस्ट्रीयल फेल्ट' से स्पर्धा करनी पड़ती है। अलंकरण, उत्पाद एवं तकनीक का मशीनीकरण होने से हस्तशिल्पी कमरतोड़ मेहनत के पश्चात् भी स्पर्धा में टिक नहीं पाता। साथ ही नये अलंकरण और उत्पादों की अनुकरण प्रवृत्ति और नकल की आदत से इस व्यवसाय से जुड़े लोगों में हताशा है। उत्पादों की गुणवत्ता, अलंकरण, सृजनता, नयापन, आदि में लगातार गिरावट के कारण विदेशों में भी इनकी मांग कम हुई है। MSME के सर्वे के अनुसार लगभग सभी व्यापारियों, स्वयं सहायता समूह और हस्तशिल्पियों के सामने एक ही समस्या है कि **'सभी लोग एक जैसे उत्पाद बनाते है और नकल का प्रमाण बढ़ता जा रहा है।'**[1]

नमदा हस्तशिल्प प्राचीन है व उनकी परम्परा है। वह हाथ से हस्तशिल्पियों द्वारा बनाए और अलंकृत किए जाते हैं। परम्परागत नमदों के उत्पादों में कालीन यह मुख्य प्रकार है और उस पर फारसी अलंकरण का प्रभाव है, जो हस्तशिल्प की सूझ बूझ को प्रमाणित करता है। समय के साथ नमदे से कालीन के अलावा कई अन्य सजावटी और उपयोगी उत्पाद बनाए जाते हैं। अर्थात् नमदे से बने उत्पादों में सौन्दर्यात्मक, कार्यात्मक, सृजनात्मक, सजावटी, उपयोगी, परम्परा आदि विशेषताएं दिखाई देती है। यह उत्पाद हाथ से बनते हैं। इस कारण इनमें उत्पादन की क्षमता तथा संख्या पर कोई भी प्रतिबन्ध नहीं होता। यह सम्पूर्णत: हस्तशिल्पियों की क्षमता पर निर्भर होता है।

यूनेस्को, आय.टी.सी. और जागतिक व्यापरिक संगठन द्वारा प्रमाणित हस्तशिल्प की परिभाषा 'शिल्पात्मक उत्पाद जो शिल्पी या कारीगरों द्वारा निर्माण किए गए हो, सम्पूर्णता हाथों से या हस्त औजारों की मदद से या यांत्रिकी साधनों से क्यों न हो, शिल्पकारों के प्रत्यक्ष हस्तचलित सहयोग से उसकी दीर्घकालीनता बनी रहती है। हस्तनिर्मित उत्पादों में उपयोगिता, सौन्दर्यात्मक, सृजनात्मकता, सांस्कृतिक सम्बन्ध, सजावटी, क्रियात्मक, पारम्परिक, धार्मिक एवं सामाजिक अर्थपूर्ण व सार्थकता यह विशेष लक्षण होते हैं,[2] के अनुसार टोंक के नमदा हस्तशिल्प खरे उतरते है। इन हस्तशिल्पों और हस्तशिल्पियों के ज्ञान, हुनर, सृजनता को लुप्त होने से बचाने और नकल की समस्या से बचने तथा इस उद्योग से जुड़े उद्योगजक व्यापारी और हस्तशिल्पियों की हताशा को दूर करके नई पीढ़ी को इस तरफ आकर्षित करने के लिए इन सभी को संगठित प्रयास करने होंगे और अनिवार्य रूप से बौद्धिक सम्पदा अधिकार के प्रावधानों का पर्याय स्वीकारना होगा। उसके प्रति जागरुकता लाना, उसका सम्पूर्ण ज्ञान लेना और उससे होने वाले लाभों पर दृष्टि केन्द्रित करके अपने परम्परागत हस्तशिल्प को लुप्त होने से बचाना तथा संस्कृति और विरासत को आगे बढ़ाने की तरफ पहल करना अति आवश्यक होगा।

'बौद्धिक सम्पदा' वह है, जो मानव मस्तिष्क की उपज है। जिसे हम प्रतिभा, सृजनता, आविष्कार के नामों से जानते हैं। बौद्धिक सम्पदा अधिकार वह है जो मानव की इस प्रतिभा, सृजनता या खोज को संरक्षित करता हैं।सामान्यत: बौद्धिक सम्पदा अधिकार के कॉपीराइट, ट्रेडमार्क, पेटेंट, भौगोलिक संकेतन (जीआय), औद्योगिक डिजाइन अधिकार और व्यापारिक–रहस्य के अधिकार यह प्रकार है। सन् 1967 में विश्व बौद्धिक सम्पदा संगठन अर्थात् विपो (WIPO), की स्थापना हुई, जिसका मुख्यालय जिनेवा, स्विजरलैण्ड में हैं।[3]

हस्तशिल्प सम्बन्धी व्यवसाय में अलंकरण, उत्पाद, मूल स्थान, तकनीक, मार्केटिंग की खुबियाँ आदि सभी के प्रकार ट्रेडमार्क, जीआय, कॉपीराइट, पेटंट आदि का उपयोग करके बौद्धिक सम्पदा अधिकार के

* एसोसिएट प्रोफेसर, वनस्थली इंस्टीट्यूट ऑफ डिजाइन वनस्थली विद्यापीठ (राज.) भारत
** निदेशक, वनस्थली इंस्टीट्यूट ऑफ डिजाइन वनस्थली विद्यापीठ (राज.) भारत

अन्तर्गत हस्तशिल्पियों के विविध गतिविधियों को, कला को और पर्यायी भारतीय विरासत को संरक्षण देने का जागरुकता लाने का एवं समर्थन देने का कार्य विपो करती है।

बौद्धिक सम्पदा अधिकार का उपयोग करके नमदा हस्तशिल्पियों को कौन से स्तर पर बचाया जा सकता है या वह कौनसे घटक है, जो बौद्धिक सम्पदा अधिकार के अन्तर्गत आते हैं और हस्तशिल्पों को सुरक्षा प्रदान कर सकते हैं। इसकी चर्चा प्रस्तुत शोध-पत्र में करने का प्रयास किया है।

विपो के अनुसार किसी हस्तशिल्प की प्रसिद्धि, उद्गम, गुणवत्ता एवं विशेषता को बौद्धिक सम्पदा अधिकार के अन्तर्गत अलग-अलग प्रावधानों द्वारा बचाया जा सकता है।[4] भारतीय ट्रेडमार्क्स अधिनियम 1999 के अनुसार **ट्रेड मार्क कोई चिह्न या प्रतीक होता है,** जो किसी व्यापार के उत्पादों या सेवाओं को दूसरे समकक्ष अर्थात् स्पर्धात्मक व्यापार के उत्पादों या सेवाओं से अलग करता है। यह ट्रेडमार्क विशिष्ट शब्द, अक्षर, संख्या, आरेख, चित्र, आकार, पैकजिंग, रंग योजना, ध्वनि, गंध, लोगों या इनका कोई संयोजन हो सकता है। वस्तुओं के लिए ट्रेडमार्क (TM) के अलावा सेवा चिन्ह (SM) के पंजीयन (R) की स्वीकृति आवश्यक होती है।[5]

प्रथम दस साल के लिए ट्रेड मार्क स्वीकृत होता है व पश्चात् अनिश्चित काल के लिए इसका नवीनीकरण हो सकता है। ट्रेडमार्क एकल व्यापार के मालिकाना अधिकार के लिए या संगठित व्यापार के लिए दिया जाता है। यह क्रमश: प्रमाणीकरण चिह्न (सर्टिफिकेशन मार्क) और सामूहिक चिह्न (कलेक्टिव मार्क) के रूप में दिया जाता है। ट्रेडमार्क की नकल करने पर दण्ड होता है। यह ट्रेडमार्क ग्राहक तथा उपभोक्ता तक पहुँचने के लिए व्यापक रूप से उपयोग में लाया जाता है। जिसे उपभोक्ता सही उत्पाद को पहचान सके और नकली उत्पादों से बच सकें। पंजीकरण, प्रमाणीकरण या समूहिक चिह्न से हस्तशिल्पी अपने शिल्पों को दूसरों से अलग दिखाने और अधिक उत्पादन करने के लिए प्रोत्साहित होते हैं। इसमें उन्हें अपनी आर्थिक स्थिति को सुधारने में मदद मिलती है और वह अपने लाभ के प्रति निश्चिन्त होकर काम पर ध्यान केन्द्रित कर सकते है। इन चिह्नों से लोगों में जागरुकता आ जाती है और ट्रेडमार्क से वस्तु या उत्पाद या सेवाओं की सत्यता और विश्वसनीयता बढ़ती है। अपितु ट्रेडमार्क मिलने से दूसरे नकली उत्पाद बेचने वालों पर रोक नहीं लगती पर विश्वसनीय उत्पादों की विशेषता, गुणवत्ता से वह हातेत्साहित हो जाते है।

भौगोलिक संकेतन (GI) वस्तुओं के लिए प्रयुक्त ऐसा प्रतीक है जिसकी विशिष्ट भौगोलिक उत्पत्ति होती है तथा जिनकी उत्पत्ति स्थान के कारण विशेषता एवं पहचान या प्रसिद्धि होती है। भौगोलिक संकेतन केवल स्थान नाम नहीं, बल्कि उत्पाद को बताने वाले दूसरे नाम, और संकेतन हो सकते हैं। यह उत्पाद पारम्परिक पद्धति से और पीढ़ी दर पीढ़ी एक ही उत्पत्ति स्थल पर बनाये जाते हैं। जिसमें भौगोलिक संकेत भी होते हैं। ऐसे हस्तशिल्प या उत्पाद जो उत्पत्ति स्थान के भौगोलिक परिवेश में से ही प्राकृतिक संसाधनों का उपयोग करके बनाए जाते हैं। अपितु भौगोलिक संकेतन से उस विशिष्ट ज्ञान को सुरक्षित नहीं किया जा सकता हैं, जो उस उत्पाद या हस्तशिल्प से सम्बन्धित है।

अत: नाम के आधार पर 'टोंक के नमदा हस्तशिल्प' को भौगोलिक संकेतन मिलने में कोई कठिनाई नहीं होनी चाहिए। क्योंकि विविध प्रकार के आकार के सौन्दर्यात्मक, अलंकृत नमदे और उनसे बनी वस्तुएं टोंक में ही बनाई जाती है। जयपुर आदि जगह बड़े व्यापारियों ने इसे अपने स्तर पर अपने लाभ के लिए व्यापार के तौर पर प्रारम्भ किया है। इस कारण मूल टोंक के व्यापारी व स्त्री-पुरुष हस्तशिल्पी जो इस नमदा उद्योग के कई वर्षों और पीढ़ियों से जुड़े हुए है, उन पर आर्थिक संकट मंडरा रहा है। अत: इनको सम्मिलित रूप से औद्योगिक संकेतन के लिए प्रयास करना आवश्यक है। किसी हस्तशिल्प में बाह्य आकार, रंग, या दोनों का संयोजन होता है तथा कारीगर या हस्तशिल्पी की सृजनता की अभिव्यक्ति होती है। नमदे या उससे बने अन्य उत्पादों में यह सभी दिखाई देता है। नमदे से निर्मित कलाकृति या हस्तशिल्प को **कॉपीराइट** के द्वारा सुरक्षित रखा जा सकता है। कॉपीराईट के शर्तों के अनुसार नमदा हस्तशिल्प मौलिक तथा सौन्दर्यात्मक गुणों से भरपूर होने आवश्यक है।

हस्तशिल्पों को उनके विशिष्ट आकार, विन्यास, ढांचा, सजावट या रेखाओं व रंगों के संयोजन को डिजाइन अधिकार के अन्तर्गत सुरक्षित किया जा सकता हैं। **डिजाइन पंजीकरण** से निर्माणकर्ता को, डिजाइन पंजीकरण की श्रेणी के वस्तु पर डिजाइन प्रयोग का विशेष अधिकार देता है। इसमें भी मौलिकता, नयापन और विशेषता (दूसरों से अलग तत्व) होना आवश्यक है। हस्तशिल्पी इनके द्वारा दूसरों से नकल किए गए उत्पादों को बनाने, बेचने, निर्यात करने और वितरित करने से रोक लगा सकता है। अत: कुछ देशों में हस्तशिल्पों को डिजाइन सुरक्षा अधिकार में नहीं रखा गया है। केवल उन्हीं उत्पादों को रखा गया है जो औद्योगिक क्षेत्र से सम्बन्धित है।

पेटेंट मुख्यतया किसी आविष्कार या खोज को सम्पदा सुरक्षा प्रदान करता हैं। कोई ऐसा आविष्कार जिसका तकनीकी क्षेत्रों के उत्पादों या प्रक्रिया सम्बन्धी समस्याओं को विशेष समाधान करता है। पेटेंट धारक को अपने आविष्कार को किसी दूसरे के द्वारा व्यापारिक उपयोग न करने के सुरक्षा अधिकार प्रदान करता है। हस्तशिल्पों के संदर्भ में पेटेंट उन औजारों के प्रयोग तथा हस्तशिल्पियों द्वारा वर्तमान प्रक्रिया में कुछ नये तथ्य जोड़ने या उसे औद्योगिक क्षेत्र में प्रयोग के लिए खोजने की सम्पदा को सुरक्षित रखने के अधिकार प्रदान करता हैं। नमदा हस्तशिल्प के संदर्भ में यदि कोई हस्तशिल्पी फेल्टिंग की वर्तमान क्रिया से ऐसे उत्पाद बनाएँ जो औद्योगिक क्षेत्र में वर्तमान उपयोग से भिन्न हो या फेल्टिंग की अर्थात् नमदा बनाने की क्रिया में कुछ अन्य तत्व जोड़कर एक नया उत्पाद बनाएँ तब संभवता वह क्रिया और उत्पाद पेटंट करने योग्य होगा।

किसी भी हस्तशिल्प के व्यापारिक-रहस्य उससे उत्पादों की निर्माण प्रक्रिया, उनकी प्रयोज्य सामग्री, या उसके अन्तिम स्वरूप के लिए की गयी रासायनिक या यांत्रिकी प्रक्रिया हो सकती है, जिनका व्यापारिक मूल्य होता है। **व्यापार-रहस्य या व्यापार-भेद एक बौद्धिक सम्पदा अधिकार है,** जो धारक के पास अनिश्चित काल के लिए होता है, तब तक वह उसे गुप्त रख सकता हैं। धारक अपने व्यापार-भेदों को सुरक्षित रखने के लिए कर्मचारियों के साथ भी गोपनीयता समझौता सुनिश्चित कर सकता है। अत: ऐसे व्यापारिक-रहस्य सम्पदा के रूप में मान्य करके धारक कों उससे अधिकार प्राप्त होने से वह अपने प्रतिस्पर्धी को उसके अवैध प्रयोग करने से रोकने का सामर्थ्य रखता है। अत: व्यापारिक-रहस्य का कानून अन्य लोगों को उस ज्ञान को वैध्य तरीकों से प्राप्त करने व उसका उपयोग तर्क संगत करने से नहीं रोकता। नमदा हस्तशिल्प और उसे बनाने वाले व व्यापार करने वाले यदि अपनी पहचान राष्ट्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय बाजार में बनाना चाहते हैं, तो उसमें पारम्परिक अलंकरण, सौन्दर्य, शुद्धता, गुणवत्ता, आकार, प्रमाण, तकनीक तथा कीमतों पर नियंत्रण होना आवश्यक है। बौद्धिक सम्पदा अधिकारों का अधिक से अधिक लाभ लेकर इस हस्तशिल्प का स्थायीकरण हो सकता हैं।[6]

वर्तमान में जागृतिकीकरण के कारण अन्तर्राष्ट्रीय बाजार में हाथ से बनी हुई वस्तुओं की मांग बढ गई है। हमारे देश की विविध हस्तशिल्प सम्पदा को हर स्तर पर हर संभव प्रयत्नों से बचाना यह हमारा कर्तव्य है। बौद्धिक सम्पदा अधिकार, कानून का सहारा लेते हुए नमदा हस्तशिल्पी की सृजनता, डिजाइन, कार्य क्षेत्र उद्गम, तकनीक, प्रक्रिया व व्यापारिक–रहस्यों का अभ्यास करके किस स्तर पर बौद्धिक सम्पदा अधिकार के कौनसे घटक उपयुक्त है। इसकी जानकारी लेते हुए नमदा हस्तशिल्पी, ग्राहक, उपभोक्ता, इस उद्योग से जुडे हुए सभी लोगों में जागृकता निर्माण करके इसे नष्ट होने से बचाने व इसे अगली पीढ़ी तक ले जाने के लिए निरन्तर प्रयास करना होगा। आवश्यकता होने पर वर्तमान कानून में बदलाव करके नमदा हस्तशिल्पी और हस्तशिल्प को न्याय देना होगा।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. www.academica.edu/.....definition_of_ handicraft_ by_unesco....october6-8,1997
2. Bansal G.D. , Advocate Rajsthan High Court, jaipur, Lecturer on "Practical Aspect of infellectual Property Rights", *A National workshop on intellectual property Rights : Emergining Issues,* 23rd & 24th Jan 2017, University of Law College, Jaipur
3. www.wipo.inr/edocs/pubdocs/en/wipo-pub-tk-5.pdf"Intellecutal Property & Tradition Handicrafts.
4. wtocentre.lift.ac.in/faq/hindi/TRIPS%20hindi.pdf
5. J.Sai.Deepak(2008) "Protection of Traditional Handicrafts Under Indian Intellectual Property Laws" nopp.niscaim,pesin bitstream/123456789/1380/1/ JIPR%2013(3)%20(2008)%20197-207.pdf
6. J.Sai.Deepak(2008) "GIs Tradittional Handicrafts & Incentives for indivdiual Innovations." http://spciyip. com/2008/02/gis/tradtional handicrafts.and. html
7. NS Goapalkrishan (2007) "Exploring the relationship butween GIS & TK" https://www.iprsonline.org/ictsd/ docs/gopaletal%20-%20GIS& TK.pdf

****

भारतीय संगीत का इतिहास

डॉ. वर्षा करनदेकर * शाश्वती श्रीवास्तव **

प्रस्तावना – संगीत कि उत्पत्ति को लेकर कई विद्धानों का मत है एवं विचारो से मत–भेद पाए जाते है। कुछ विद्धानों का मानना है कि संगीत कि उत्पत्ति वेदो के निर्माता ब्रम्हा द्धारा हुआ है।

1. पाश्चात्य विद्धान फ्रायड – के अुनसार शिशु से संगीत कि उत्पत्ति हुई है।
2. अरब के सुप्रसिद्ध इतिहासकार ओलासीनिज्म ने अपनी पुस्तक 'विश्व का संगीत' में संगीत कि उत्पत्ति बुलबुल नाम कि चिड़ियॉ से माना है।
3. जैम्स लोग के अनुसार 'पहले मनुष्य ने चलना, बोलना आदि क्रियाएँ सीखी और तत्पश्चात् उसमें भाव जागृत हुए उनके भावों को व्यक्त करने के लिए संगीत की उत्पत्ति हुई।'
4. पण्डित अहोबल – का कहना है कि ब्रम्हा ने भरत को संगीत की शिक्षा दी तथा पण्डित दामोदर ने भी संगीत का आरम्भ ब्रम्हा से ही माना है।
5. पण्डित दमोदर के अनुसार संगीत की उत्पत्ति सात स्वरो की सात पशु–पक्षियों से हुई है। मोर से षडज (स), चातक से ऋषभ (रे), बकरा से गंधार (ग), क्रौच से पक्षी मध्यम (म), कोयल से पंचम (प), मेढ़क से धैवत (ध), हाथी से निषाद (नि)।

इसी प्रकार संगीत की उत्पत्ति पर विभिन्न विचार प्रस्तुत किए गए है। प्राचीन इतिहासकार संगीत का प्रारम्भ प्रागैतिहासिक युग से माना जाता है। इस युग के बारे में गिने–चुने देशों से जानकारी प्राप्त होती है।

संगीत का विकास सिंधु घाटी की सभ्यता से माना जाता है, क्योंकि इस युग के अवशेष प्राप्त होते है, जैसे नृत्य करती कॉस्य की मूर्ति, गुफाओं में नृत्य का चित्रण एवं शिव की आराधना करते अवशेष प्राप्त होते है। जिससे यह ज्ञात होता है कि इस युग में संगीत का प्रचलन था एवं सभी नगरवासी संगीत से मनोरजंन किया करते थे।

1. वैदिक काल – वैदिक काल तक आते–आते संगीत के प्रति रूचि एवं विकास शीघ्रता से होने लगा। इस युग में घर–घर में प्रात: काल भजन कीर्तन हुआ करते थे एवं स्त्री एवं पुरूष दोनों ही गाया एवं बजाया करते थे।

इस युग में दो महा काव्य लिखे गए रामायण एवं महाभारत। रामायण में तीनों ही विद्याओं का प्रचलन था। इस काल में भेरी, दुंदभि, वीणा, मृदंग व घड़ा आदि यंत्रो की जानकारी मिलती है। महाभारत काल में तो श्री कृष्ण की बाँसूरी एवं स्त्रियों का संगीत के प्रति रूचि अधिक हुआ करती थी।

2. पौराणिक युग में संगीत – वैदिक काल के पश्चात् पैराणिक तथा महाकाव्य काल में प्राप्त होते है। अत एवं इस युग में संगीत की स्थिति को जानने के लिए हमें पुराणों, उपनिषदों, शिक्षा, ग्रन्थों का सहारा लेना पडेगा। इस युग में साहित्यिक विकास अधिक हुआ था एवं शास्त्रीय स्वरूप का स्तर गिर गया था, परन्तु लोकगीत एवं लोकनृत्यों के माध्यम से जनजीवन में संगीत का प्रचार बढ़ गया था।

3. बौद्ध काल में संगीत – बौद्ध साहित्य के अंतर्गत पाली त्रिपिटको का महत्वपूर्ण स्थान है। पाली त्रिपिटको में संगीत के लिए 'गान्धर्व एवं संगीत' व 'शिल्प' संज्ञा प्राप्त होती है। इस युग में संगीत के अंतर्गत गीत, वादित (वादन), नच्च (नृत्य) तथा अख्यानम (गाथाओं) आदि का उल्लेख मिलता है। वादन में विशेष रूप से वीणाओं का प्रचलन था, जैसे वल्लकी वीणा, विपंची, महती, भ्रमरिका एवं एकादश वीणाएँ आदि का उल्लेख प्राप्त होता है।

4. मौर्य कालीन संगीत – मौर्य काल तक संगीत की स्थिती एवं विकास का प्रारूप विस्तृत हुआ। इस युग में चन्द्रगुप्त मौर्य, मौर्यवंशी राजा हुए जो कि स्वयं संगीत प्रेमी के। संगीत जीवन का एक अंग बन गया था। राजाओं के दरबार में संगीत प्रतिदिन बजाया जाता था। इस समय राजनीति एवं सामाजिक रूप में संगीत व्यापक रूप ले चुका था। आध्यात्मिकता से परे संगीत में विलासितता अधिक दृष्टव्य होती थी, संगीत में भाव पक्ष की अपेक्षा कला पक्ष एवं शास्त्रीय संगीत में कमी और लोक संगीत अधिक प्रचलित हुआ करते थे। संगीत सामूहिक व एकल नृत्य में स्त्री एवं पुरूष स्वतन्त्र रूप से भाग लेते थे, इस युग में प्रमुख रूप से ठफ, मृदंग, ढोलक, वीणा, आदि वाद्यों का प्रयोग चित्रों द्धारा अधिक परिवर्तित होता है।

5. गुप्तकाल में संगीत – इस युग में संगीत में एक सजीवता, प्रभावपूर्ण चेतना और एक प्रेरणात्मक रूप की स्थापना हुई थी। हिन्दु संस्कृति के जागरण का युग था। वीणा का प्रचलन इस युग में अधिक था। गुप्तकाल में चन्द्रगुप्त के बाद समुंद्रगुप्त राजा बने जो कि स्वयं संगीतज्ञ थे। उन्हे संगीत में बहुत रूचि थी और चन्द्रगुप्त एक कुशल वीणा वादक थे। अत: इस युग में शास्त्रीय संगीत का प्रचलन बहुत अधिक था। इस काल को नाट्य युग या स्वर्णयुग भी कहा जाता है, क्योंकि इस युग में महान कवि कालिदास जी थे, जिन्होंने कुमार सम्भव, मेघदूत, मालविकाग्निमित्र, रघुवंश, शकुंतलम इत्यादि गीत काव्य लिखे। इस युग के दूसरे महान नाटककार भास भी हुए। भास संस्कृत साहित्य के सर्वश्रेष्ठ नाटककार माने गए है।

6. मुगलकाल में संगीत – संगीत व संस्कृति दोनों का प्रचलन इस युग में था। इस युग में संगीत का बहुत अधिक विकास एवं संगीत में नए–नए रागो, गायकी एवं संगीत पर कई नई पुस्तकें लिखी गयी।

मुगल काल का प्रारम्भ बाबर से होता है, जो स्वयं संगीत प्रेमी था। इनके दरबार में अनेक गायक वादक हुआ करते थे। बाबर के पुत्र हुमायूँ भी संगीत प्रेमी थे। वे संगीत का आध्यात्मिक रूप पसंद करते थे एवं इनके दरबार में बैजूबावरा हुआ करते थे, जो कि गायक थे, इनकी गायकी को सुन

* विभागाध्यक्ष (संगीत) शासकीय कन्या महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.) भारत
** शोधार्थी (संगीत) शासकीय कन्या महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.) भारत

कर हुमायूँ ने युद्ध रूकवा दिया था, बाद में बैजूबावरा फिर बहादुरशाह जफर की सेवा में चले गए थे।

हुमायूँ के पुत्र अकबर के दरबार में नवरत्नों में तानसेन ने संगीत के प्रभाव से संगीत जगत में क्रान्ति उपस्थित की थी। तानसेन ने अपनी गायकी से चमत्कारिक घटनाएँ भी की थी। जैसे संगीत द्वारा पानी बरसना, दीप प्रज्जवलित करना, जंगली पशु-पक्षियों को बुलाना, रोगी को स्वस्थ करना आदि। इसके अलावा भी तानसेन ने नए रागों का निर्माण किया था, जैसे मियां की सारंग, मियां की तोड़ी, दरबारी कानडा आदि रागों का निर्माण भी किया था।

इस युग में गायन शैलियों का भी विकास हुआ था, जैसे ध्रुपद, धमार, तिरवट, तराना, चतुरंग आदि का आविष्कार हुआ था। तानसेन के अलावा सूरदास, ने सूरसागर तथा भ्रमर गीत द्वारा संगीत की सेवा की। मानसिंह तोमर ने ध्रुपद शैली का विकास किया एवं गुर्जरी तोड़ी तथा मंगल गुर्जरी राग बनाए। पं. पुण्डरीक विट्ठल हुए जिन्होंने चंद्रागचन्द्रोदय, रागमाला, रागमंजरी तथा नर्तन निर्माण नामक ग्रंथ लिखे। औरंगजेब (1658-1707) तक संगीत की दशा बिगड़ने लगी। परन्तु इस काल में महत्वपूर्ण पुस्तके लिखी गयी थी। अहोबल द्वारा संगीत पारिजात 1650 सर्वप्रथम वीणा के तार पर लम्बाई नापकर स्वरो को स्थापित किया।

दक्षिण में प्रसिद्ध विद्वान पं. व्यंकटमुखी भी हुए जिन्होंने चर्तुदण्डी प्रकाशिका नामक ग्रंथ लिखा। इन्होंने गणित के आधार पर मेलो तथा रागो का निर्माण किया।

इस काल में 'कल्वकोवा' नामक नृत्य का निर्माण हुआ। स्त्रियों के लिए यह नृत्य था एवं इस काल में लावणी, परिजात, नाटक, भागवत मेला, यक्षगान आदि प्रसिद्ध हुए था।

7. आधुनिक काल तक आते-आते संगीत में बहुत सा विकास हो चुका था एवम् संगीत को स्थापित करने का प्रयास 19वीं शताब्दीं में पं. भातखंण्डे एवं प.वि.द. पालुस्कर ने किया।

इस काल में प. विष्णु नारायण भातखंण्डे हुए जिन्होंने भारतीय संगीत को एक नई दिशा दी। आपने थाट राग वर्गीकरण किया, एक नई स्वर लिपि पद्धति बनाई। संस्कृत में दो ग्रन्थ (1) श्री मल्लक्ष्य संगीत तथा अभिनव राग मंजरी लिखी। इसके अतिरिक्त क्रमिक पुस्तक मालिका-6 भाग आदि पुस्तके लिखी।

लखनऊ विद्यालय मैरिस म्यूजिक कालेज, ग्वालियर में माधव संगीत विद्यालय, बड़ोदा में म्यूजिक कॉलेज खोले तथा संगीत को जन साधारण में प्रचलित किया। आपका उपनाम चतुर, हररंग आदि है।

विष्णु दिगम्बर पलुस्कर जी ने लगभग 250 पुस्तके लिखी, जिनमें संगीत बाल बोध, राग प्रवेश, भजनामृत लहरी आदि प्रमुख है। आपके गुरू बालकृष्ण बुवा इचलकरंजीकर थे। आपने लाहौर मे 5 मई 1901 मे गांधर्व महाविद्यालय की स्थापना की तथा सबसे पहले गीतो में अश्लील शब्दो को हटा कर भक्ति रस के शब्द डाले।

19वीं शताब्दी के महान संगीतकारों के योगदान से ही संगीत में निरंतरता संभव हो पाई है। जैसे ओमकारनाथ ठाकुर, भीमसेन जोशी, सवई गंधर्व, गंगूबाई हंगल, प्रभा अत्रे, अल्लारखा, बिस्मिल्ला खाँ, हरिप्रसाद चौरसिया आदि।

हमारी संगीत कि इस अमूल्य परम्परा को अक्षुण्य बनाए रखने के लिए हम भावी पीड़ी की यह जिम्मेदारी है कि हम संगीत के क्षेत्र में नये कार्य करते रहे जिससे हमारी यह अमूल्य धरोहर भावी पीढ़ी के लिए संरक्षित हो सके।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. यमन अशोक कुमार - संगीत रत्नावली।
2. डॉ. सिन्हा ज्योति - संगीत सारांश।
3. यु.जी.सी. नेट जे.आर.एफ. - अरिहंत पब्लिकेशन।
4. Wikipedia - भारतीय संगीत का इतिहास।

****

Plea-Bargaining - An Analytical Study

Dr. Rajat Kumar Satapathy * Lok Narayan Mishra **

Abstract - Plea – bargaining in criminal jurisprudence is discussed vividly here. Why there is plea – bargaining system, what it is, types of plea – bargaining is discussed. The American and Indian developments of law also depicted. It is examined with its advantages and criticisms.

Introduction - Malimath committee report has recommended for implementation of the law commission report. The law commission in its 142nd report (1991) has discussed regarding plea – bargaining in Indian social conditions and it also discussed to promote speedy disposal of cases with this system of plea- bargaining. The law commission is of opinion that the system should be introduced with adequate safeguards and with in a limited sphere without disturbing the crime control function of the state. The parliament enacted a scheme of plea – bargaining basing on law commission report incorporated it as chapter xxi-A sections 265-A to 265 -L. This amendment is effected on 5th july 2006.

Why plea – bargaining - To avoid delay and enabling speedy settlement in criminal justice system plea – bargaining method is adopted. In a case Supreme court has said in 1980 that, 'It is a sad reflection on the legal and judicial system that the trial of an accused should not even commence for a long number of years. Even a delay of one year on the commencement of trial is bad enough, how much worse could it be when the delay is as long as 3 or 5 or 7 even 10 year. Speedy trial is of the essence of criminal justice and there can be no doubt that delay in trial by itself constitutes denial of justice.' *1 So justice delayed, justice denied. For this problem plea – bargaining is the solution.

What it is - According to Black's law Dictionary plea – bargaining means "process whereby the accused and the prosecutor in a criminal case workout a mutually satisfactory disposition of the case subject to court's approval. It usually involves the defendant's pleading guilty to a lesser offence or to only one or some of the counts of a multi – count dictment in return for a lighter sentence than that possible for the graver charge" *2. It is a deal offered by a prosecutor as an incentive for the accused to plead guilty in exchange for long, expensive and tortuous process of undergoing trial where he may be convicted. *3.

Types of plea – bargaining - In the western countries there are three types of plea – bargaining are practised. The 1st type is that the accused pleads guilty to reduced charges. The 2nd types is that reduced punishment is offered by the prosecution to the accused in case the accused pleads guilty. The 3rd types is that the accused accepts certain facts which needs no proof. Normally, it allows the parties to agree or the outcome and settle the pending charge. In India, it is interduced by Criminal Procedure Code, in 2006.

The American Supreme Courts View - The court has said in several cases that the accused who is pleading guilty must be informed about his constitutional and legal right. The plea – bargaining must be voluntary and with full knowledge. Plea must be free from inducement. If it is based on inducement, it must be so recorded in the document of negotiation. *4 In the case of Bordenkircher Vs. Hayes *5. The fact is that Hayes was charged with the offence punishable with imprisonment for a period of two to ten years. The prosecution side had offered him to settle the case with five year imprisonment. Along with it the prosecution had stated that in case he went for trial process, it might involve the habitual criminals Act. Under this Act the punishment could be life imprisonment to him. Hayes preferred trial rather than pleading guilty. After the trial sentence of life imprisonment was imposed on his for his habitual criminal conduct. He argued in appeal in the Supreme Court that the prosecution had threatened him at the time of plea – bargaining with chances of imposing higher punishment. This argument of Hayes was rejected by the Supreme Court and stated that the conviction is on admitted evidences. It is also stated by the supreme court that he could have avoided the risk of life imprisonment by pleading guilty having five year imprisonment. This judgement is criticized on the ground that it lacks real choice on the part of the accused person. *6.

The Indian situation - In India the practice of plea – bargaining is not in a formal manner. It is seen in petty cases. The cases where the offence is punishable with fine not exceeding Rs 1000, U/S 206 of Cr.P.C. Magistrate may mention in the summons the fine which the accused should pay if he pleads guilty. The accused may send the amount with his reply to the court. This procedure is simple and need not to engage advocate in the case or need not to appear before the court. In other cases such practice with an expectation of lenient punishment is risky but it was

*Principal, Pt. Motilal Nehru P. G. Law College, Chhatarpur (M.P.) INDIA
**Research Scholar (Law) Barkatullah University, Bhopal (M.P.) INDIA

practised with disadvantages. In Muralidhar Meghraj the court suspected about collusion between the prosecuting agency and the accused *7. In Hussainara Khatoon (iii) V. State of Bihar*8. P.N. Bhagwati, J has told regarding judicial delay in disposal of criminal cases by which indefinite confinement of accused persons in judicial custody has adverse effect and violated human raights. So the system of plea –bargaining will be a answer to this problem. But in the absence of a streamlined legal procedure the court was not agreeable to recognize the concept of plea – bargaining. In Kasam bhai V. State of Gujrat, the court observed:

"It is to our mind contrary to public policy to allow a conviction to be recorded against an accused by inducing him to confess to a plea of guilty on an allurement being held out to him that if enters a plea of guilty, he will be let off very lightly, such a procedure would be clearly unreasonable, unfair and unjust and would be violative of the new activist dimension of article 21 of the constitution unfolded in Maneka Gandhi case. It would have the effect of polluting the pure fount of justice, because it might induce an innocent accused to plead guilty to suffer a light and inconsequential punishment rather than go through a long and arduous criminal trial which, having regard to our cumbrous and unsatisfactory system of administration of justice, is not only long drawn out and ruinous in terms of time and money, but also uncertain and unpredictable in its result and the judge also might likely to be deflected from the path of duty to do justice and he might either convict an innocent accused by accepting the plea of guilty or let off a guilty accused with a light sentence, thus, subverting the process of law and frustrating the social objective and purpose of the anti adulteration statute. This practice would also tend to encourage corruption and collusion and as a direct consequence, contribute to the lowering of the standard of justice"*9.

In the case of state of U.P. V.Chandrika*10 the court continued not to allow plea – bargaining in serious matters of offence under IPC.

Advantages of plea – bargaining :- The followings are advantages of plea – bargaining :-

1. It avoids the uncertainty of trial of a criminal case.
2. It minimizes the risk of unwanted result of both the side.
3. The prosecuters opt for lesser charge in case the accused admits the guilt. So no need of establishing evidences for many charges that might be framed for the prosecutor have wide discretion regarding the charges they frame against the accused.
4. It reduces the load of case.
5. It is a good method for speedy disposal.
6. The right to speedy trial is a fundamental right which is protected.
7. The human right of the parties are protected.
8. It avoids repeated attendance and waiting in the courts.
9. The process of rehabilitation and reformation will be earlier on adopting plea – bargaining method.

Criticisms an plea bargaining -

1. When the accused knows that he had not committed the crime the plea- bargaining method puts pressure on the occused to plead guilty.
2. The result of plea – bargaining depends on the skill of negotiation only between the parties.
3. Because of such a system in the criminal jurisprudence the prosecutor is encouraged to overcharge the accused.
4. The purpose of law is to get a particular penalty for a particular action. But in case of plea-bargaining is contrary to this purpose of law.
5. In plea – bargaining the settled judicial process for criminal case avoided and the rights of the parties are disturbed.
6. Most of people in India are illiterate. So this system in not justified.
7. There are every chance of the escape of real culprit and the innocent will be convicted. So the rate of crime may increase by this system.
8. Plea – bargaining is like a contract. It does not follow the rules of contract. Because of load of charges the accused remain under pressure and accused has no free willingness in the deal.
9. The plea – bargaining is between the unequals. It does not follow the principle of equality.

Conclusion - It is not applicable to offences those have punishment of death or of imprisonment for life or of imprisonment for a term exceeding seven years. It shall be the duty of the court to ensure that the process is completed voluntarily by the parties. The judgement rendered is final and there is no appleal provision for it. The period of detention of the accused will be set off against the sentence the accused has already under gone. The statements of the accused are not be used in any other cases. This practice should be made with caution in a country like India where illiteracy is more and legal awareness is lacking.

References :-

1. Hussainara Khatoon (iii) V. State of Bihar (1980) 1 SCC 93.
2. Bryan A. Garner and Henry Campbell, Black's Law Dictionary (6th Edn, West Publishing Company Co. New York 1990 at page 1173)
3. Atreyee Majumdar, "Plea – bargaining-guilty, But of lesser offence?"(2006) British council e-Newsletter cited by justice A.k.sikri op at page 45.
4. Moore V. Michigan, (1957) 355 US 155,
5. 434 US 357 (1978)
6. Timathy Lynch, The case Against Plea – bargaining, Regulations (2003) Regulation Fall at P. 24.
7. Murlidhar Meghraj Loya V. State of Maharashtra (1976) 3 SCC 684.
8. Hussainara Khatoon (iii) V. State of Bihar (1980) 1 SCC 1993.
9. Kasambhai V. State of Gujrat (1980) 3 SCC 120.
10. (1999) 8 SCC 638.

The Doctrine Of Frustration Challenges The Validity Of The Fundamental Principle Of Pacta Sunt Servanda

Chirag Banthiya *

Abstract - The principle of pacta sunt servanda emphasizes on parties to be bound by the contract and on the other the doctrine of frustration provides for circumstances under which the parties shall not be bound by the contract. To understand the contradiction clearly it is important to discuss the limitations to pacta sunt servanda and the theories that have been developed to justify frustration. Pacta sunt servanda means that the parties have the legal obligation to fulfill the promise made and to this extent the agreement shall be binding on them.

Introduction - The principles of law of contracts find their very origin from the theories of "offer and acceptance". Thus the very scope of agreement that is to be is determined by the offer, its acceptance and the promise to fulfill the obligations of such an offer. In English law it is a well settled principle that "to create a contract there must be a common intention of the parties to enter into legal obligations". Thus if we analyze both parties to contract should have the intention to fulfill the legal obligations to be imposed, thereby giving effect to the principle of Pacta sunt servanda which "means agreements must be kept." But it poses a serious contradiction when we compare this point of law with the principle of frustration of contract which implies that the intention of the parties when they entered into the contract cannot be materialized. This essay intends to compare and contrast the two principles of the law of contract and how they contradict.

Concept Of Pacta Sunt Servanda And Doctrine Of Frustration - The leading authority, the case of **Balfour v. Balfour[1919] 2 KB 571** established that not all agreements can be concluded as a contract . Thus to conclude that any agreement shall have the force of law, the parties to the agreement shall agree to perform certain legal obligations. This same reasoning is embedded in the principle of Pacta sunt servanda which means the parties have the legal obligation to fulfill the promise made and to this extent the agreement shall be binding on them.

Development Of Pacta Sunt Servanda - The sacred principle of the classical law of obligations was the idea of pacta sunt servanda (sanctity of contracts), which means that contracts are binding on any conditions. It was developed in the East by the Chaldeans, the Egyptians and the Chinese in a noteworthy way. According to the classical theory of contracts, each reasonable person has the freedom to enter into a contract upon terms determined by that person and to be certain that a contract concluded voluntarily will be subject to judicial enforcement and binding on the parties. Thus, unilateral denunciation of a contract was, therefore, in general, excluded. It was a general rule of the law of contract before 1863 that a person was bound to perform the obligation undertaken by him without claiming excuse of subsequently impossibility of performance of the obligation.

Development Of Doctrine Of Frustration - Under the doctrine of Frustration, a contract may be discharged if after its formation events occur making its performance impossible. This doctrine comes into play in two types of situation -

1. Where physical performance becomes impossible
2. Where the centre object of the contract fails.

In the well known judgment of **Krell v. Henry [1903] 2 KB 740** it was held that the object of the contract was frustrated by non happening of a specific event.

Explaining the concept of "frustration of contract" Lord Wright stated "the word frustration is here used in a technical legal sense. It is a sort of shorthand: it means that a contract has ceased to bind the parties because the common basis on which by mutual understanding it was based has failed. It would be more accurate to say, not that the contract has been frustrated but that there has been a failure of what in the contemplation of both parties would be essential condition or purpose of the performance. The above mentioned definition can said to be the most convincing definition so as to understand the concept of frustration.

Frustration of a contract is either affected by destruction of subject matter or non existence of it, death or incapacity of a party to perform the obligation, non-occurrence of events in cases of contingent contracts, and finally if the performance is rendered illegal by any legislation. The legal effect is that the contract is discharged automatically and totally.

Challenging The Validity - As already discussed both the principles have stood the test of time in the law of contracts but if the concepts of these two doctrines are compared, it

*Advocate, Ujjain (M.P.) INDIA

can be comprehended that the fundamentals of the two contradict. On one hand, the principle of pacta sunt servanda emphasizes on parties to be bound by the contract and on the other the doctrine of frustration provides for circumstances under which the parties shall not be bound by the contract. To understand the contradiction clearly it is important to discuss the limitations to pacta sunt servanda and the theories that have been developed to justify frustration.

Limitations Of Pacta Sunt Servanda - The principle of pacta sunt servanda has always had its limits. Even if it is logically understood if the basis or the subject matter is destroyed, the legal effect renders nullified. Even the Roman law provides that, no contract was absolutely binding or binding under all circumstances. Unilateral dissolution of the contract was permissible if a party failed to perform its contractual obligations (e.g. in the case of leases, mandates or contracts of sale). Such an exception has to considered to bring the principle to its logistic effect. Historically, the principle of pacta sunt servanda has been prejudiced by the principle known as the doctrine of clausula rebus sic stantibus.

According to that doctrine, a contract is binding only in so far as the circumstances remain the same as at the time of the conclusion of the contract. In modern theory, the fundamental views have change. For some authors, the modern contract law cannot be based on the positions of classical contract law any more, since those positions have inevitably become inappropriate in the light of the developments as also provided for in the theory of Radical change which substantially puts forth the same argument. The others argue that since the scope of contract law does not limit itself to sale of goods etc its principles have to be modified according to the length and breadth of its dimensions. In other words taking into consideration the economic, social and fundamental problems, the rigidity of the principle of pacta sunt servanda cannot be maintained. Regardless of different approaches to the binding nature of contracts, the study of legal grounds for exemption from contractual duties has become very important in modern times.

Theories Of Doctrine Of Frustration - Before the enactment of the Law Reform (Frustrated Contracts) Act, 1943, the principles of this doctrine were guided by the judgment laid down in the case of Krell v. Henry. Various theories were laid down to justify this principle that a contract would come to end by impossibility of event.

First theory being the Theory of Implied Term explained by Lord Loreburn in F.A. Tamplin Steamship Co. Ltd. v. Anglo- Mexican Petroleum Products Co. Ltd. in these words "the court can and ought to examine the contract and the circumstances in which it is made not of course to vary, but to explain it, in order to see whether or not from the nature of it the parties must have made their bargain on the footing that a particular thing or state of things would continue to exist. And if they have done so, then a term to that effect will be implied, though it be not expressed in the contract" This means that the parties have implicitly agreed on certain conditions and if such conditions cease to exist the contract can be frustrated. But this has been criticized at several instances.

Second, Theory of Just and Reasonable Solution, was an attempt to explain this doctrine through a different perspective by Denning LJ . He explained that court has inherent jurisdiction and power to do what is just and reasonable in a given situation. He justified it by saying "the day is done when we can excuse an unforeseen injustice by saying to the sufferer -it is your own folly".

Third, Thoery of Disappearence of The Foundation of Contract answers the question in a very logistic manner with the support of general principles of contract. The basis of this theory is that the contract cannot have the force of law if the subject matter on which the parties consented to contract itself has disappeared or destructed.

Lastly, Theory of Radical Change in Obligation recognizes that law should provide for a situation when the contract can be incapable of performance without the fault of either of parties. The juristic basis of the doctrine has evolved over number of years.

The English courts have over time rejected the notions of "just solution", "foundation of the contract," "failure of consideration" and "implied term", and instead adopted the test of a radical change in the obligation, which is currently regarded by leading commentators as the preferred approach. The Law Reform (Frustrated Contracts) Act, 1943 enacted by the British Parliament now provides that all sums paid or payable to any party in pursuance of the contract before the time when parties were so discharged shall, in case of sums paid so paid, be recoverable from him as money received by him for the use of the party by whom the sums were paid, and, in the case of sum so payable, cease to be payable.

Conclusion - Though prima facie it may seem that the fundamentals of the principle of pacta sunt servanda challenged by the doctrine of frustration, a detailed analysis of it brings out the shortcomings of binding parties into legal obligation. Further, doctrine of frustration inter alia acts as an exception to pacta sunt servanda.

References :-

1. R. Zimmermann, The Law of Obligations : Roman Foundations of the Civilian Tradition. Deventer, Boston: Kluwer Law and Taxation Publishers.
2. S.S. Ujjannavar, Cases and Materials on Contract, 1983
3. Cheshire, Fifoot & Furmston's Law of Contract, 15th edn, (ed M.P. Furmston), Oxford University Press, New Delhi, 2007
4. Chitty on Contracts, 29th edn, (ed Hugh Beale) 2004, Sweet & Maxwell Ltd., London.
5. Indian Contract & Specific Relief Act – Avtar Singh

Women And Law

Deeksha Dubey *

Introduction - Legal-Judicial system will be made more responsible and gender sensitive to women's needs, especially in cases of domestic violence and personal assault.

The Constitution grants the fundamental right to equality to women article 39(d) asks the government to ensure that there is equal pay for equal work for both men & women. Article 15 says that the state shall not be discriminate against any citizen on ground only for sex.

Article 14 says that the state shall not deny to any person equality before law. Article 16 guarantees equality of opportunity in employment under the Government.

The state to make provision for securing just and humane conditions of work and for maternity relief (Article 42)

Municipality to be reserved for women and such seats to be allotted by rotation to different constituencies in a municipality (article 243 T(3)).

The state to promote with special care the educational and economic interests of the weaker section of the people and protect them from social injustice and all form of exploitation (Article 46) –

The total number seats to be sited by direct election in every panchayat to be reserved for women and such seats to be allotted by rotation to different constituencies in Panchayat (Article 243 D (3))

The crime, which are directed specifically against women are characterized as "Crime against Women" some important are following–

1. The protection of women from domestic violence act, 1986
2. Torture, both mental and physical (sec. 354 IPC)
3. Sexual Harassment (Sec. 509 IPC)
4. Kidnapping and abduction for different purpose (Sec 363-373)
5. Dowry prohibition Act, 1961
6. The prohibition of child marriage Act, 2006.
7. The equal remuneration Act, 1976.

Constitutional Provisions in support of Women -

1. Article 14- Men and women to have equal rights and opportunities in the political economic and social spheres.
2. Article 15(1) prohibits discrimination against any citizen on the grounds of religion, race, caste, sex etc.
3. Article 15(3) – Special provision enabling the state to make affirmative discriminations in favor of women.
4. Article 16- Equality of opportunities in matter of public appointment for all citizens.
5. Article 39(d) – Equal pay for equal work both men and women.
6. Article 42– The state to make provision for ensuring just and humane conditions of work and maternity relief.
7. Article 51 {(A)(C)} – To renounce the practices derogatory to the dignity of women. In pursuance of the constitutional provision the governments had upgrade their status.
8. The Special Marriage Act 1954- provides right to women on par with men for inter–caste marriage, love marriage and marriage. The act has also fixed the minimum age of marriage at 21 for males and 18 for females.
9. The Hindu Marriage Act. 1955-prohibits polygamy, polyandry and child marriage and concedes equal right to women to divorce and to remarry.
10. The Hindu Succession Act, 1956 – Provides for women the right of parental property.
11. The Suppression of Immoral Traffic of Women and Girls Act, 1956- provides protection to women from being kidnapped and being compelled to become prostitutes.
12. The Hindu Adoption & Maintenance act 1956- provides child less women the right to adopt child maintenance from the husband if she is divorced by him.
13. The Dowry prohibition Act 1961- the act declares the taking of dowry an unlawful activity and thereby prevents the exploitation of women.
14. The medical termination of pregnancy Act, 1971- the act legalizes abortion conceding the right of a women get a women to go for abortion on the ground of physical and mental health.
15. Equal Remuneration Act, 1976- provides payment of remuneration equal with men for work of equal value.
16. The Criminal Law Amendment Act, 1983 the act seeks to stop various types of crimes against women.
17. The Family Court Act, 1984 – seeks to provides justice to women who get involved in family disputes.

* **B.A. , L.L.B. (VIII Semester) Global Jindal Law University, Sonipat (Hariyana) INDIA**

18. The Indecent Representation of Women (Prohibition) Act, 1986 prohibits the vulgar presentation of women in the media such as- newspaper, cinema, T.V. etc.
19. The 73rd & 74th Constitution Amendment Acts, 1993- empowers women and seek to ensure greater participation of women at all the levels of the Panchayat System.
20. The Pre-natal Diagnostic Techniques (Regulation & Prevention of Misuse) Act, 1944- regulates investigation for sex determination of foetus.
21. The protection of women from Domestic Violence Act, 2005 provides for more effective protection of the rights of women.

Special Steps for Women -

1. Reservation for women in Local Self-Government- The 73rd and 74th Constitutional Amendment Act passed in 1992 by Parliament ensure one-third of the total seats for women in all elected officers in local bodies whether in rural areas or urban areas.
2. The National Plan of Action for the Girls Child (1991-2000) the Department of Women and Child Development in the Ministry of Human Resource Development has prepared a 'National Policy for the Empowerment of Women' in the year 2001, The goal of this policy is to bring about the advancement, development and empowerment of women.
3. National Commission for Women-in January 1992 the Government set-up this statutory body with a specific mandate to study and monitor all matters relating to the constitutional and legal safeguards provided for women, review the existing legislation to suggest amendments wherever necessary, etc.

The 73rd and 74th constitutional amendment act passed in 1992 by parliament ensure one-third of the total seats for women in all elected officer in local bodies weather in rural areas or urban areas.

The MHRD has prepared a national policy for the empowerment of women in the year 2001. The goal of this policy is to bring about the advancement, development and empowerment of women.

With growing literacy and financial independence women have to be more empowered to assert. Their right to a life of dignity and wort, so it is a call for women to awake from their deep slumber and understand the true meaning of their empowerment.

Women should stand up for their freedom rights and dignity and prove their caliber. Gender relationship needs to change to one of mutual caring and sharing. Dignity and equal opportunity must be provided to both men and women. Women have to be considered as equal participants in shaping the future society in India.

References :-

1. Smith, P. 2005 four themes in feminist legal theory. Philosophy of Law & Legal Theory, oxford: blackwell publishing PP 90-104
2. Stark, B. B. 2004 "Women Globalization & Law" pace international Law Review, 16: 333-356
3. Bartlett, K, 1990 "feminist legal methods" Harvard Law Review, 1039(4) : 829-888
4. Sen, A. 1995 "Gender Inequality & Theories of Justice" in M. Nussbaum and J. Glover (eds.) 1995, PP 259-273.
5. Frug, M.J. 1992 "Sexual Equality and Sexual Difference in American Law" New England Law Review 26: 665-682
6. "Annette abbot adams" sacraments lawyer April 1998, P.11

****

बाल अपराध

निशा कंठालिया *

प्रस्तावना – एक निश्चित आयु सीमा के बालक द्वारा समाज की रीति-नीतियों प्रथाओं एवं मान्यताओं का उल्लघंन ही बाल अपराध हैं। खास आयु के बालक द्वारा कानून का उल्लघंन करना विधि विरूद्ध कार्य करना या अपने सरंक्षकों की आज्ञा की अवहेलना करना या जो दुसरों की नैतिकता स्वास्थ्य या कल्याण को खतरा पहुँचाए बाल अपराधी कहलाता है।

बाल अपराध का स्वरूप प्राय: किसी वस्तु या इच्छा की पूर्ति माना गया है। यदि वह वस्तु या इच्छा आसानी से पूरी नहीं हो पाती है, तो वह बैचेनी में बदल जाती है और अपराध के रूप में उभरती है। प्यासे की प्यास पानी को देखकर अथवा भूखें की भूख भोजन देखकर बैचेनी में बदल जाती है और उसे प्राप्त करने की तीव्र इच्छा उसे व्याकुल कर देती है और इच्छाओं को कभी दबाया नहीं जा सकता।

हॉलार्किं बाल-अपराध शब्द की सार्वभौमिक परिभाषा नहीं दी जा सकती है। फिर भी कुछ विद्धानों ने बाल-अपराध को परिभाषित किया हैं।

सेठना – बाल अपराध के अन्तर्गत किसी बालक या ऐसे तरूण व्यक्ति के गलत कार्य आते है, जो कि संबंधित स्थान के कानून द्वारा निर्दिष्ट आयु सीमा के अन्दर आते है।

बाल अपराधी – सामान्यतया: बाल -अपराधी वे बालक है, जिन्हें सक्षम न्यायालय ने बाल-अपराधी ठहराया है। यह एक संकुचित धारण है क्योंकि इस बात की क्या गारण्टी है कि बाल-अपराध के लिए उत्तरदायी प्रत्येक बालक को न्यायालय के समक्ष प्रस्तुत ही किया जाए। बहुत से मामले ऐसे है, जो न्यायालय के संज्ञान में ही न आते हो। ऐसी दशा में बाल-अपराध हुआ है, तो उसके लिए दोषी बालक बाल-अपराधी ही कहा जाएगा।

न्यू मैक्सिको विधि – कबिन महोदय के अनुसार, गलत आचरण करने वाला निश्चित आयु का बालक बाल-अपराधी है ये आचरण निम्न है।-

- किसी विधि या अध्यादेश की अवहेलना करना
- अनैतिक या अश्लील आचरण
- स्कूल के आसपास अनैतिक आचरण
- अवैधानिक व्यवसाय करना
- जानबूझकर अनैतिक एवं चरित्रहीन लोगों की संगति करना
- प्रमाद अथवा आपराधिक प्रवृत्ति में वृद्धि करना
- जानबूझकर बदनाम स्थान में जाना
- जुआघर अथवा वैश्याघर को सरंक्षण देना अथवा मदद देना
- मदिरा बिक्री केन्दों को सरंक्षण या प्रोत्साहन देना
- बिना न्यायोचित कार्य के रात को सड़को या गलियों में घूमना
- आदतन रेलवें यार्ड या ट्रक के पास घूमना
- बिना अधिकार पत्र के रेलों कारों या इंजनों पर चढ़ना या प्रवेश करना
- सुधारातीत होना
- सार्वजनिक स्थानों में गन्दी भद्दी अथवा अश्लील भाषा का प्रयोग
- घर से बिना आज्ञा अनुपस्थित रहना
- गलियों में सोना अथवा मटरगश्ती करना
- सार्वजनिक स्थानों के आसपास धुम्रपान करना
- भीख मॉगना खैरात लेना या इस उद्देश्य से गलियों में घूमना

भारत में बाल अपराधों की धारणा – भारतीय संस्कृति, चारित्रिक, दर्शनात्मक व धार्मिक होने के कारण यहॉ बाल-अपराधियों की समस्या उग्र या विकराल रूप में नहीं थी तथापि हम यह नहीं कर सकते कि यहॉ बाल-अपराध नहीं थे।

बालकों की सामाजिक स्थिति – प्राचीन दण्ड व्यवस्था में अपराधियों को दण्ड देते वक्त उसकी आयु, लिंग अथवा परिस्थितियों पर विचार किए बिना उन्हें समान दण्ड दिए जाने की व्यवस्था रही है। यही वजह है कि अल्पवयस्कों को आपराधिक विधि में कोई छूट नहीं दी जाती थी।

कुछ राज्यों में दास-प्रथा के अन्तर्गत बालकों की बिक्री भी की जाती थी। बच्चों को कम वेतन देकर उनसे कस कर काम लिया जाना एक सामान्य बात थी।

समाज ने परिवर्तन का रूख किया क्योंकि समय सदैव एक सा नहीं रहता व परिवर्तन ही संसार का नियम हैं। समाज में औद्यौगिकरण का उद्भव हुआ फलत: बडी-बड़ी मशीनों से कारखानों में कार्य किया जाने लगा। इस मशीनी युग ने 10 आदमियों का काम एक आदमी के द्वारा संचालित करने की सुविधा बहुत की कम समय में दी। फलत: कई श्रमिक बेरोजगार हो गए और मजबूरन उन्हें अपने नौनिहालों को काम पर लगाना पड़ा। देश के भावी कर्णधार इन नियोजकों की स्वार्थ पिपासा का शिकार बनने लगे। इन्हें खरीद फरोख्त की वस्तु मानकर आयात निर्यात तो किया ही जाता रहा देश में भी नियोजकों द्वारा वस्तु मानकर शोषण किया गया। बालकों के साथ अत्याचार शोषण अमानवीयता का व्यवहार भी औद्योगिकरण व लाभ आकांक्षा के साथ-साथ बढ़ता गया और इन मासूमों के साथ इतना अत्याचार किया जाने लगा कि सिर्फ पढकर ही दिल दहल जाए और समय की विडंबना रही कि इस सामाजिक कुरीति पर समाज का अकुंश नगण्य था ? फलत: अत्याचार के खिलाफ कुछ बाल श्रमिक स्वयं अपना बचाव करते जिसमें वे बिना मानसिक दुराशय के अपराध कर बैठते थे जब ये मासूम भूख सहन नहीं कर सकते तो खाना चुराकर भाग जाना या पैसे मॉगना और मार पड़ने पर इकट्ठा होकर क्रूर नियोजक के खिलाफ कभी-कभी हमला बोल देते और अपने शोषण से बचाव की कवायद अनजाने में ही उन्हें बाल अपराधी बनने पर विवश कर देती।

*शोधार्थी (कानून) पेसिफिक यूनिवर्सिटी, उदयपुर (राज.) भारत

कुछ बालक भूख काटने के लिए मादक द्रव्यों का सेवन करने लगते कुछ कुंठित मानसिकता का शिकार होकर नाना प्रकार के अपराध की ओर प्रवृत्त होते।

बहरहाल बदलते समय के साथ समाज का ध्यान इन भावी कर्णधारों के शोषण की ओर गया व विधि में इन्हें संरक्षित व महफूज रखने की धारणा बलवती और प्रगाढ़ होने लगी। कई कानून नियम कायदे उपनियम बनाए गए जो इन बालकों को उनका छीना हुआ बचपन वापस देने में कारगर साबित हो सके। प्राय: भारत में पारिवारिक एवं सामाजिक मान्यताओं या उपेक्षा के कारण बहुत से बाल अपराधों की रिपोर्ट ही नहीं की जाती जिससे हमें बहुत ही कम मामलो में जानकारी मिल पाती है और ग्रामीण अचंल में यह समस्या और भी कम गम्भीर है। जहाँ बालक अपेक्षाकृत अधिक आज्ञाकारी एवं नियंत्रित है। पर इसका आशय यह नहीं है कि भारत में बाल अपराधों में वृद्धि नहीं हो रही है। विभिन्न कानूनों के अन्तर्गत प्राप्त बाल अपराधों के ऑकडे यह प्रदर्शित करते है कि भारत में निरन्तर बाल अपराधों में वृद्धि हो रही है। सन् 1966 से 1976 तक इण्डियन पेनल कोड (आई.पी.सी.) के अंतर्गत बाल अपराधों की सांख्यिकी यह दर्शाती है कि यद्यपि 1975 की अपेक्षा 1976 में बाल अपराधों में 7.2 प्रतिशत की कमी आई है, तो भी 1966 की तुलना में 1976 में बाल अपराध बढे हैं।

सन 1975 की तुलना में 1976 में यद्यपि बाल अपराध एवं प्रति लाख जनसख्या पर बाल अपराध की सख्या में कमी आई है, परन्तु कुल अपराधों में बाल अपराधों के प्रतिशत में कोई कमी नहीं आई हैं।

बाल अपराधो में सर्वाधिक सख्या चोरियों की 14444 एवं नकबजनी की 5720 थी। यह दोनों मिलकर कुल अपराधों का 54.5 प्रतिशत थे। दंगो के 2871 हत्या के 586 एवं लूट के 514 मामले दर्ज किए गए। सन् 1975 की अपेक्षा 1976 में बाल अपराधों में केवल अपहरण 6.8 प्रतिशत एवं लूट 3.0 प्रतिशत के अपराधों में वृद्धि हुई हैं।

सन 1978 से 1988 तक के ऑकडे निम्न प्रकार है। **(सारणी देखे आगे पृष्ठ पर)**

प्रदेशों व केन्द्र-शासित क्षेत्रों में बाल आपराधिकता – सन् 1991 में आई.पी.सी. के अन्तर्गत बाल अपराध प्रदेशों में सर्वाधिक महाराष्ट्र में 27 प्रतिशत व मध्यप्रदेश में 22.3 प्रतिशत दर्ज किए गए जो कुल प्रदेशों के 50 प्रतिशत के लगभग है जबकि सर्वाधिक जनसंख्या वाले उत्तरप्रदेश में केवल 0.3 प्रतिशत अपराध दर्ज किये गये।

केन्द्र शासित क्षेत्रों में सर्वाधिक मामले दिल्ली में अंकित किए गए जो कुल सातों केन्द्र शासित क्षेत्रो में हुए बाल अपराधों के 77.7 प्रतिशत थे। सन् 1994 में आई.पी.सी.के अन्तर्गत सर्वाधिक अपराध मध्यप्रदेश में 23.7 प्रतिशत महाराष्ट्र 22.9. प्रतिशत बिहार 10.6 प्रतिशत दर्ज किये गये। इन्हीं तीन राज्यों का योग कुल भारत के योग का 58.5 प्रतिशत था। चोरी तथा सेंधमारी मिलकर कुल अपराधों का 42.5 प्रतिशत थे। ये अपराध महाराष्ट्र में सर्वाधिक थे। जब हत्या का प्रयास, बलात्कार मध्यप्रदेश में सर्वाधिक थे। अपहरण के अपराध बिहार में अधिक थे।

आयु के अनुसार बाल अपराधियों को 4 वर्गो में विभक्त किया है:

प्रथम वर्ग	7 से 12 वर्ष
द्वितीय वर्ग	12 से 16 वर्ष
तृतीय वर्ग	16 से 18 वर्ष
चतुर्थ वर्ग	18 से 21 वर्ष

पिछले आठ वर्षो के आंकडे यह प्रदर्शित करते है कि 16 से 21 वर्ष के वर्ग के बाल अपराधियों की संख्या 40 प्रतिशत से भी अधिक रही है। इस वर्ग के बाल अपराधियों की संख्या में 1974 तक निरन्तर वृद्धि होती रही जो 1974 में सर्वाधिक 78.7 प्रतिशत हो गई। वर्ष 1976 में वर्ष 1975 की अपेक्षा वर्ग 16 से 18 वर्ष तक बाल अपराधों में 15.5 प्रतिशत की कमी आई, जबकि वर्ग 7 से 12 वर्ष के वर्ग के अपराधों में 4.1 प्रतिशत की। स्पष्टत: आयु बढने के साथ साथ ही बालकों में आपराधिक प्रवत्ति भी बढ़ती हैं। टीन एज के बालकों में आपराधिकता अत्यधिक बढ़ रही है तथा 16 वर्ष के बाद यह आपराधिकता कम होने लगती है। संभवत: मानसिक परिपक्वता के कारण।

बाल-अपराधों के कारण – जिस तरह बाल-अपराधों के सही आंकडे उपलब्ध होने में कठिनाई है। उसी प्रकार बाल-अपराधों के सही-सही कारण बताना असंभव तो नहीं, हॉ मुश्किल है।

अ. पारिवारिक कारण –

1. नष्ट घर या विघटित घर
2. अर्द्ध-विघटित परिवार
3. परिवार में मनोरंजन के साधनों की कमी
4. अनैतिक परिवार
5. अवैध पितृता एवं अनचाही सन्तानें
6. माता-पिता द्वारा उपेक्षा
7. मिश्रित संस्कृति
8. परिवार में आपराधिकता
9. परिवार की आर्थिक दशा
10. भीड़-भाड़ वाले परिवार

ब. शारीरिक कारण –

स. मनोवैज्ञानिक कारण –

1. मानसिक हीनता
2. सवेंगात्मक संघर्ष और अस्थिरता

द. सामुदायिक,सांस्कृतिक कारण –

1. मनोरंजन
2. व्यावसायिक मनोरंजन
3. नृत्य घर
4. अश्लील साहित्य
5. रेडियो-टेलीविजन
6. समाचार पत्र
7. शिक्षा
8. सांस्कृतिक संघर्ष

य. व्यक्तित्व संबंधी कारक –

र. संगति

ल. सघन अपराध

व. आर्थिक कारण –

1. अप्रत्यक्ष सम्बन्ध
2. प्रत्यक्ष सम्बन्ध
3. निर्धनता एक अभिशाप है
4. सम्पन्नता

स. राजनैतिक कारण –

श. भौतिकवादी दृष्टिकोण

बाल अपराधों के नियंत्रण एवं बाल-अपराधियों के सुधार हेतु किए

गए प्रयत्न – विश्व के सभी राष्ट्र सैद्धान्तिक रूप से यह स्वीकार करते है कि बाल अपराधियों को अन्य अपराधियों से पृथक रखा जाना बाल अपराधियों के सुधार एवं बाल अपराधों के नियंत्रण हेतु आवश्यक है। बाल अपराधी सहानुभूति एवं विशेष निर्देशन के पात्र है न कि अभ्यस्त अपराधियों के समान कठोर दण्ड के। समाज एवं परिवार की प्रतिकूल परिस्थितियों एवं शोषण के कारण जो बच्चे अपराधी प्रवृत्ति की ओर अग्रसर हो जाते है। उन्हें उचित उपचार द्वारा सहजता और शीघ्रता से समाज के लिए उपयोगी नागरिक बनाया जा सकता है।

इस दिशा में प्राचीन परिवेश से ही प्रयास किए जाते रहे जो अग्रप्रेषित है –

- रिफार्मेटरी स्कूल्स एक्ट 1987
- जेल अधिनियम 1894
- दि द्विपिगं एक्ट 1900
- दि मरचेन्ट्स शिपिंग एक्ट 1923
- दि चिल्ड्रेन (प्लेजिंग लेबर)एक्ट 1933
- दि फैक्टरीज एक्ट 1948
- दि प्लाटेंशन लेबर एक्ट 1951
- दि माइन्स एक्ट 1952
- दि एम्प्लायमेन्ट आफॅ चिल्ड्रेन एक्ट 1958
- दि संप्रेशन आफॅ इम्मारल ट्रेफिंक इन वीमेन एण्ड गर्ल्स एक्ट 1959
- दि चाइल्ड मैरिज रेस्ट्रेड एक्ट 1929
- दि यंग परसन्स(हार्मफुल पब्लिकेशन्स) एक्ट 1956 विभिन्न प्रान्तीय अधिनियम
- प्रेवेन्शन आफॅ वेगिंग एण्ड वैगरेन्सी एक्ट्स
- प्रेवेन्शन आफॅ जुवेनाइल स्मोकिंग एक्ट्स

3. प्रवेन्शन ऑफ जुवेनाइल टेकिंग इनटॉक्सीकेण्ट्स एक्टस, भारतीय जेल समिति(1919–20) की संस्तुतियों के आधार पर विभिन्न प्रदेशों में किशोर एवं बाल अपराधियों के निरोध हेतु अधिनियम बनाकर बोर्स्टल स्कूल्स खोले गए–

- दि मद्रास बोर्स्टल स्कूल्स एक्ट 1926
- दि पंजाब बोर्स्टल स्कूल्स एक्ट 1926
- दि बंगाल बोर्स्टल स्कूल्स एक्ट 1928 (दि वेस्ट बंगाल चिल्ड्रन एक्ट 1959 द्वारा निरसित)
- दि सेन्द्रल प्राविन्सेज बोर्स्टल स्कूल्स एक्ट 1928
- दि बॉम्बे बोर्स्टल स्कूल एक्ट 1929
- दि यूनाइटैड प्रॉविन्सेज बोर्स्टल स्कूल्स एक्ट 1938
- दि मैसूर बोर्स्टल स्कूल्स एक्ट 1943
- दि द्रावनकोर बोर्स्टल स्कूल्स एक्ट 1945
- दि केरल बोर्स्टल स्कूल्स एक्ट 1961

सन 1978 से 1988 तक के ऑकडे निम्न प्रकार है।

वर्ष	कुल प्रसंज्ञेय अपराध	कुल बाल अपराध	कुल अपराधों पर बाल अपराधन का प्रतिशत	प्रत्येक लाख जनसख्ंया पर बाल अपराध
1978	1344968	44248	3.3	6.9
1979	1336168	46351	3.5	7.1
1980	1368529	55129	4.0	8.3
1981	1385751	61019	4.4	8.8
1982	1353904	59345	4.4	8.4
1983	1349866	55473	4.1	7.7
1984	1358660	42803	3.2	5.8
1985	1384731	49317	3.6	6.6
1986	1405835	55887	4.0	7.3
1987	1406992	52610	3.7	6.7
1988	1440356	24.827	1.7	3.1

वर्ष	कुल प्रसंज्ञेय अपराध	कुल बाल अपराध	कुल अपराधों पर बाल अपराधों का प्रतिशत	प्रत्येक लाख जनसख्ंया पर बाल अपराध
1989	1529844	18457	1.2	2.3
1990	1604449	15230	0.9	1.8
1991	1678375	12588	0.8	1.5
1992	1689341	11100	0.7	1.3
1993	1629936	9465	0.6	1.1
1994	1635251	8561	0.5	1.0

****

जनजातीय समुदाय के रिवाजी विधि विधान (गोंड़ जनजाति के विशेष संदर्भ में)

सुदामा प्रधान *

प्रस्तावना – इस धरती पर मूल निवासी एवं आदिवासी गोंड़ का इतिहास उतना ही पुराना है, जितना इस धरती पर मनुष्य का इतिहास किन्तु प्राचीन लिखित इतिहास अथवा दस्तावेज एवं शिक्षा के अभाव में बहुसंख्यक मूलनिवासी अन्य नस्ल के लोगों के द्वारा शोषण के शिकार हो रहे हैं तथा समाज में उन्हें पिछड़े आदिवासी अल्पसंख्यक, निम्न करार दे दिया जाता है तथा अन्य नस्ल के लोगों के रीति–रिवाज जबरन उन पर थोप दिया जाता है। बहुसंख्यक मूल निवासी आदिवासी शिक्षा एवं ज्ञान के अभाव में अपनी मूल संस्कृति को प्रथा एवं परम्परा के रूप में साबित नहीं कर पाते, इसलिए उन्हें कानूनी कार्यवाहियों में हिन्दू कानूनों का सामना करना पड़ता है। जबकी वास्तविक सामाजिक जीवन में उनकी प्रथा एवं परम्परा ही मान्य होती है। भारतीय संवैधानिक व्यवस्था में मूल निवासियों की प्रथा एवं परम्परा को संवैधानिक संरक्षण प्रदान किया गया है। अत: प्रत्येक मूल निवासी के धार्मिक सामाजिक एवं संवैधानिक अधिकार के संरक्षण हेतु स्वयं मूल निवासी को उनकी प्रथा एवं परम्परा तथा संस्कृति का ज्ञान आवश्यक है, जो उनकी जाति वर्ग में सदियों से चली आ रही है। वर्तमान भारतीय प्रजातांत्रिक व्यवस्था में विधायिका एवं न्यायपालिका का दृष्टिकोण स्पष्ट है कि मूल निवासी गोंड़ जो स्वयं के रूढ़िगत प्रथा एवं परम्परा से शासित होते हैं, उन पर हिन्दू कानून लागू नहीं होंगे।

आदिवासियों के पक्ष में न्यायालयों के निर्णय भाग–1 26

1. गोंड़ जनजाति के लोग हिन्दू नहीं हैं। वे रूढ़िगत विधि (COSTOMARY LAW) जो उनकी जाति में प्रचलित है, उनसे शासित होते है। जो पक्षकार यह दावा करें कि गोंड़ जाति के लोग हिन्दू विधि से शासित होते हैं, उन पर यह सिद्ध करने का प्रमाण भार है। यदि किसी मामले में यह सिद्ध हो जाए या स्वीकृत अभिवंचन हो कि गोंड़ जाति हिन्दू विधि की मिताक्षरा शाखा से प्रतिपादित (शासित) होते हैं, तो गोंड़ जाति के लोग ब्राम्हण, क्षत्रिय जाति के लोग नहीं माने जा सकते हैं। उन्हें शूद्र जाति का माना जायेगा। देखें –1971 मध्यप्रदेश लॉ जरनल। नोट क्र. 21 त्रिलोक सिंह बनाम गुलबसिया।

2. हिन्दू विवाह अधिनियम 1955. हिन्दू दत्तक तथा भरण पोषण अधिनियम 1956, हिन्दू उत्तराधिकार अधिनियम 1956 की धारा 2 (2) तथा हिन्दू अप्राप्तवयता और संरक्षकता अधिनियम 1956 की धारा 3 (2) में यह स्पष्ट रूप से अधिनियमित किया गया है कि उपधारा (1) में अंतर्विष्ट किसी बात के होते हुए भी इस अधिनियम में अंतर्विष्ट कोई भी बात किसी ऐसी जनजाति के सदस्यों को जो कि संविधान के अनुच्छेद 366 के खण्ड (25) के अर्थ के अंतर्गत अनुसूचित जनजाति हों, लागू न होगी। जब तक कि केन्द्रीय सरकार शासकीय राजपत्र में अधिसूचना द्वारा अन्यथा निर्दिष्ट न कर दे। विस्तृत जानकारी हेतु देखें – चंद्रनाथ झा द्वारा लिखित हिन्दू विधि।

3. बहेलिया आदिवासी जनजाति के लोगों पर हिन्दू उत्तराधिकार अधिनियम 1956 हिन्दू विवाह अधिनियम 1955. लागू नहीं होती है। उन पर जाति विशेष की रूढ़ि मान्य होगी। देखें – रामगुलाम बनाम नारायण 1990 म0प्र0 रेवेन्यु निर्णय 100 (उच्च न्यायालय)

4. राज गोंड़ गोंड़ जनजाति का ही भाग है। जिन्हें Aristocratic Sub Divisions में राज गोंड़ और खटोला कहा जाता है। भूमि धारक हैं, इनकी शादी गोंड़ों में होती है तथा वे जनजाति में श्रेष्ठता का सामाजिक प्रभाव रखते हैं तथा जाति गोंड़ के आगे राज उपसर्ग (Title) का उपयोग करते हैं। कोई जाति आदिम जनजाति है, इसके विनिश्चय के लिए अधिसूचना प्रकाशित होना आवश्यक है। राजपत्र में प्रकाशन की अधिसूचना में गर्भित है। प्रशासनिक अनुदेशों से अधिसूचना पर प्रभाव नहीं पड़ेगा। राज गोंड़ अधिसूचना में घोषित जनजाति, आदिम जनजाति है। देखें– यशवंत राज सिंह बनाम म0प्र0 रेवेन्यु बोर्ड, 1999 म0प्र0 रेवेन्यु निर्णय 140 पृ0क्र07–10 तथा लेखक आर.बी.रसेल लिखित पुस्तक (ट्राइब्स एण्ड कास्टस आफ द सेन्ट्रल प्राविन्सेस ऑफ इन्डिया)।

5. हल्बा जनजाति के लोगों पर हिन्दू कानून लागू नहीं होता है तथा हिन्दू विवाह अधिनियम लागू नहीं होगा। हल्बा जनजाति की दूसरी पत्नी पति की मृत्यु पर रूढ़िगत विधि से नामांतरण करा सकती है देखें – रावती बनाम सहोदरी बाई 1980 म.प्र. रेवेन्यु निर्णय 191.।

6. नगेशिया जाति के लागों को सरगुजा राज्य के भूतपूर्व शासक लक्ष्मण सिंह ने 'किसान' मेहनती समझकर उपाधि दी थी। अतएव नगेसिया किसान सेटिलमेंट में इसीलिएआदिवासी माने गए। अधिसूचना में नगेसिया जनजाति घोषित है। अत: किसान उपाधि संबोधन से घोषित जनजाति नगेसिया में परिवर्तन नहीं होता है। इस उपाधि से मूलत: वे अनुसूचित जनजाति ही रहेंगे। बिना कलेक्टर की अनुमति अथवा कपटपूर्ण किये गये हस्तांतरण पर नगेषिया किसान भूमि वापसी का हकदार है। देखें – रामावतार बनाम ठीसू 1992 म0प्र0 रेवेन्यु निर्णय 117 राजस्व मंडल।

7. आदिवासी स्त्री का गैर आदिवासी से विवाह होने पर आदिवासी स्त्री की जाति नहीं बदलती है। गैर आदिवासी पति के द्वारा दिनांक 2.10.1959 के बाद ऐसे व्यक्ति (आदिवासी स्त्री) को अंतरित की गई भूमि आदिवासी स्त्री के वारिस को प्रतिवत्ति (वापस) हो जाएगी। देखें – नरपति सिंह बनाम गुलाब सिंह 1991 म0प्र0 रेवेन्यु निर्णय 306.।

गोंड़ हिन्दू नहीं हैं।

(भारत के सर्वोच्च न्यायालय का फैसला)

* पं.श.शुक्ल शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, जिला – शहडोल (म.प्र.) भारत

"It is true that Gonds aare not Hindu they are Governed by Customs prevalent in the caste"

Justice.S.P.sen, Supreme Court.

(त्रिलोक सिंह वि. गुलाब एस.ए./100/66 दिनांक 15.1.1971 सुप्रीम कोर्ट नई दिल्ली)

'यह सत्य है कि गोंड़वाना जनता हिन्दू नहीं है' वह अपने प्रथा परम्परा के द्वारा अनुशासित रीति नीति के अनुसार जिंदगी संचालित करता है। गोंडियन संस्कृति या मूल संस्कृति में समाहित उन तमाम लोगों के समक्ष एक प्रश्न वाचक चिन्ह खड़ा है कि आप कहां हैं ?

आदिवासियों के पक्ष में न्यायालयों के निर्णय भाग-2 27

1. हिन्दू उत्तराधिकार अधिनियम 1956-धारा 2 (2)- भील जाति की अनुसूचित जनजाति की विवाहित पुत्रियां- उत्तराधिकार-अधिनियम के उपबंध लागू नहीं-उत्तराधिकार जनजाति की प्रथा द्वारा विनियमित है-ऐसी प्रथा साबित नहीं जिसके अधीन वे अपने पिता के संपत्ति विरासत में प्राप्त करने की हकदार हैं। ए.आई.आर.1925 पी.सी.267 तथा ए.आई.आर.1952 एस.सी.231 अनुसरित। 1983 रा.नि.64 (उच्च न्यायालय) अवलंबित देखें -(तिवारी बाई तथा अन्य वि. सीताबाई तथा अन्य-2011 म0प्र0राजस्व निर्णय-पृष्ठ 59)

2. भू-राजस्व संहिता, 1959 (म0प्र0)-धारा 164-भील जाति की विवाहित पुत्रियां- उनके द्वारा अपने पिता के 1/2 हिस्सा के हक की घोषणा तथा कब्जा के लिए वाद प्रस्तुत किया गया-उत्तराधिकार जनजाति की प्रथा से विनियमित है-ऐसी प्रथा साबित नहीं की गई कि विवाहित पुत्रियां अपने पिता की संपत्ति विरासत में प्राप्त करने की हकदार हैं-भील जाति में प्रचलित प्रथा- विवाहित पुत्रियां अपने पिता की सम्पत्ति में हिंस्सा प्राप्त नहीं करती-वे पिता की सम्पत्ति में हिस्सा प्राप्त करने की हकदार केवल तभी हैं जब उनके पति घर जमाई के रूप में रहते हों-विचारण न्यायालय द्वारा वाद खारिज-विचारण न्यायालय का निर्णय स्थितर किया गया। ए.आई.आर. 1925 पी.सी.267 तथा ए.आई.आर. 1952 एस.सी. 231 अनुसरित। 1983 राजस्व निर्णय 64 (उच्च न्यायालय) अवलंबित देखें -(तिवारी बाई तथा अन्य वि. सीताबाई तथा अन्य-2011 म0प्र0राजस्व निर्णय-पृष्ठ 59)

3. भू-राजस्व संहिता, 1959 (म0प्र0)-धारा 164-भील जाति के दो भाई-एक भाई गनपत तीन विवाहित पुत्रियां छोड़ मृत-भील जाति की प्रथा अनुसार- मृतक का हिस्सा उसके भाई सोमजया को न्यागमित होगा तथा मृतक की विवाहित पुत्रियों को नहीं-सोमजया द्वारा अपना 1/2 हिस्सा तथा 1/2 हिस्सा जो उसने गनपत से विरासत में प्राप्त किया के विक्रय विधिमान्य हैं तथा गनपत की विवाहित पुत्रियों पर आबद्धकर हैं। देखें -(तिवारी बाई तथा अन्य वि. सीताबाई तथा अन्य-2011 म0प्र0राजस्व निर्णय-पृष्ठ 59)

4. भू-राजस्व संहिता, 1959 (म0प्र0)-धारा 165 (6) तथा 110- नामांतरण कार्यवाही- आदिवासी जाति के व्यक्ति की भूमि-प्रतिकूल कब्जा के आधार पर सहमति से जय पत्र-अन्तरण के लिए कलेक्टर की अनुमति नहीं ली-ऐसे जयपत्र के आधार पर नामांतरण नहीं किया जा सकता। 'आदिवासी द्वारा भूमि स्वामी हक की भूमि विक्रय से या अन्य प्रक्रिया से अंतरित नहीं की जा सकती। जब तक की कलेक्टर द्वारा ऐसे अंतरण के लिए लिखित अनुमति न दी गई हो।वर्तमान प्रकरण में कलेक्टर द्वारा धरा 165 (6) भू-राजस्व की धारा 110 के अंतर्गत नामांतरण की कार्यवाही नहीं की जा सकती।' (शंकरलाल वि. म0प्र0 राज्य तथा अन्य)

5. भू-राजस्व संहिता, 1959 (म0प्र0)-धारा 165 (6) एक- 'अंतरण' -संहिता के अंतर्गत परिभाषित-अर्थ-आदि जनजाति की भूमि पर प्रतिकूल कब्जा द्वारा हक के अर्जन का दावा-आदि जनजाति द्वारा स्वीकृति-आदि जनजाति का हक समाप्त कर उसे गैर आदिवासी में निहित करना-अंतरण है-ऐसे दावे को मान्यता नहीं दी जा सकती जब तक कि यह साबित न किया जाए कि वह विधिपूर्ण था।

शब्द 'अंतरण' भू-राजस्व संहिता, 1959 में परिभाषित नहीं है। अधिनियम के उपबंध के पीछे उद्देश्य यह सुनिश्चित करना है कि मूलत: पद्दलित और स्वभाव से अत्यंत यायावर आदि जातियों के पास सदा भूमि अवष्य रहे, जिससे कि उनके जीवन की स्थिति व्यवस्थित रहे और उनका अस्तित्व कृषि द्वारा कायम रह सके।

म0प्र0 भू-राजस्व संहिता, 1959 की धारा 165 (6) में आए शब्द 'अंतरण' क किसी अन्य प्रकार से निर्वचन इस अधिनियमिति के उद्देश्य को विफल करेगा और यह भूमि लालची अनैतिक व्यक्तियों द्वारा जनजातियों के उनके द्वारा धारित भूमि से वंचित करने के लिए छल-कपट और षड़यंत्र अपनाने के द्वार खोलना होगा।

संहिता की धारा 165 (6) में यथा विद्यमान शब्द 'अंतरण' को निर्बंधित अर्थ नहीं किया जाना है और संपत्ति अंतरण अधिनियम की धारा 5 में दी गई परिभाषा के प्रकाश में भी नहीं पढ़ा जाना है। इसका विस्तृत अर्थ समनुदेशित करते हुए उदारता पूर्ण अर्थान्वयन करना होगा जिससे कि प्रत्येक ऐसी आकस्मिकता सम्मिलित हो सके जिसका कि परिणाम जनजाति के धारक को हक से वंचित कर उसे किसी गैर जनजाति में निहित करना हो। केवल यही निर्वचन विधायी उद्देश्य और इसके पीछे प्रशंसनीय लोक प्रयोजन की तृष्टि कर सकेगा। ए.आई.आर. 1919 मद्रास 1113 तथा ए.आई.आर. 1927 सिंध 206 अवलंबित। ए.आई.आर. 1992 एस.सी. 195 अनुसरित।

6. हिन्दू उत्तराधिकार अधिनियम 1956-धारा 2 (2)-प्रोज्यता (लागू होना)- अधिनियम के उपबंध-मध्यप्रदेश में गोंड़ आदिवासियों अनुसूचित जनजातियों पर लागू नहीं होता है। विधवा इस प्रकार विरासत में अपने पति की संपत्ति में सीमित अधिकार प्राप्त करने की अधिकारी हैं न कि पूर्ण स्वामित्व, यद्यपि यह सिद्ध हो कि स्वीय विधि के अनुसार विषिष्ट अनुसूचित जनजाति की विधवा पूर्ण स्वामित्व प्राप्त करती है। तब वह अपने पति के संपत्ति में पूर्ण हक प्राप्त कर सकती है। देखें -(कैलाश सिंह विरूद्ध मेवालाल सिंह गोंड़. ए.आई.आर.2002 म0प्र0 पृ0क्र0 112)

7. अनुसूचित जनजाति के सदस्य पर हिन्दू उत्तराधिकार अधिनियम 1956 - के प्रावधान लागू नहीं होना माना गया। अनुसूचित जनजाति में प्रचलित रूढ़ी के नियम के आधार पर प्रश्न निराकृत होना माना गया। (अलविश बनाम फिलेना. 2004 (1) छ0ग0 राजस्व निर्णय पृ0क्र0 138)

8. हिन्दू उत्तराधिकार अधिनियम 1956 के प्रावधान आदिवासी जाति पर प्रयोज्य (लागू होना) नहीं माने गए। देखें-(कलाबाई बनाम कैलाश 1985 राजस्व निर्णय म0 प्र0 पृ0क्र0 266.)

9. राजगोंड़ अनुसूचित जनजाति के अंतर्गत माना गया। संविधान द्वारा घोषित अनुसूचित जनजाति की अनुसूची के क्र.16 में राजगोंड़ दर्ज है। राजगोंड़ पर हिन्दू विधि नहीं लागू होना माना गया। देखें -(रानी शकुंतला देवी बनाम रानी मंगलमोती. 2007 (2) छ0ग0राजस्व जजमेन्ट्स पृ0क्र0 336)

10. मृतक आदिवासी की पुत्री को नामांतरण करवाने का अधिकार नहीं होना माना गया। देखें -(रूबेन बनाम श्रीमती तेरसा 2003 (2) छ0ग0राजस्व निर्णय पृ0क्र0 67 एवं 2003. छ0ग0राजस्व जजमेन्ट्स पृ0क्र0 367)

11. भू-राजस्व संहिता, 1959 (म0प्र0)-धारा 165 (6)-आदिम जनजाति के सदस्य की भूमि बिना कलेक्टर के पूर्व मंजूरी के गैर आदिम जनजाति के सदस्य को अंतरण योग्य नहीं होना माना गया। आदिम जनजाति के सदस्य की भूमि पर गैर आदिम जाति के सदस्य का विरोधी कब्जा नहीं माना गया। देखें- (रूग्गा बनाम शैतान बाई. 1994 राजस्व निर्णय पृ0क्र0 337. म0प्र0उच्च न्यायालय)

12. भू-राजस्व संहिता, 1959 (म0प्र0)-धारा 165 (6)-अनुसूचित जनजाति के सदस्य की भूमि पर बिना कलेक्टर की पूर्व मंजूरी के अंतरण के आधार पर गैर अनुसूचित जनजाति का व्यक्ति काबिज होकर विरोधी कब्जा के आधार पर स्वत्व अर्जित करने का दावा नहीं किया जा सकता है। धारा 165 (6) भू-राजस्व संहिता के उल्लंघन में निष्पादित विक्रय पत्र किसी भी उद्देश्य के लिए नहीं पढ़ा जाएगा। ऐसा गैर अनुसूचित जनजाति का सदस्य अनुसूचित जनजाति के भूमि स्वामी के विरूद्ध निषेधाज्ञा हेतु वाद नहीं ला सकता। देखें- (अम्बाराम विरूद्ध चंदा 1993 मध्यप्रदेश लॉ जनरल पृ0क्र0 80, मध्यप्रदेश उच्च न्यायालय ,माननीय जस्टिस आर.सी.लाहोटी)

13. विरोधी कब्जा के आधार पर हक की डिक्री के मामले में गैर आदिम जनजाति के वादी ने आदिम जनजाति के भूमि स्वामी से दीवानी न्यायालय में राजीनामा-समझौता के आधार पर डिक्री प्राप्त कर लिया। इस प्रकार के दीवानी डिक्री को अधिकारिता रहित माना गया। देखें -(1980 जबलपुर लॉ जनरल पृ0क्र0 856, सुप्रीम कोर्ट तथा मध्यप्रदेश राज्य विरूद्ध बाबूलाल 1980, राजस्व निर्णय म0प्र0 पृ0क्र0 503.)

14. भू-राजस्व संहिता-धारा 165 (6)-गैर आदिवासी ने स्वयं को आदिम जाति का बताकर आदिवासी की भूमि क्रय किया, जबकि 1929 के मिशल के अनुसार वह गैर आदिवासी था। भूमि क्रय करने हेतु कलेक्टर की मंजूरी नहीं ली गयी थी। आदिवासी को भूमि वापस की गई। देखें -(छेरकू बनाम हृदय राम 2006 (1) छ0ग0राजस्व जजमेन्ट्स पृ0क्र0 16)

15. स्वीय विधि-उरांव जनजाति के संबंध में हिन्दू उत्तराधिकार अधिनियम 1956 के प्रावधान प्रयोज्य होना नहीं माने गए। वह उनकी स्वीय विधि से शासित होना माने गए। उनकी स्वीय विधि के आधार पर पुत्री को मृतक की संपत्ति में अधिकार प्रापत न होना माना जाए। देखें -(पोलीकार बनाम फिरदा 2004 (2) छ0ग0राजस्व जजमेन्ट्स पृ0क्र0 99 एवं 2004 (1) छ0ग0राजस्व निर्णय पृ0क्र0 142)

16. भू-राजस्व संहिता-धारा 170 (ख)-गलत जाति दर्ज कर विक्रय होना पाया गया। कलेक्टर ने स्व प्रेरणा से कार्यवाही की। देखें -(देवमती बनाम छ0ग0 शासन 2007(1) छ0ग0राजस्व जजमेन्ट्स पृ0क्र0 20)

17. आदिम जनजाति के द्वारा गैर आदिम जनजाति के पक्ष में वसीयत किए जाने एवं दत्तक लिए जाने की कहानी रची गयी थी। यह स्थिति अत्यंत अस्वभाविक मानी गयी। यह माना गया कि भू-राजस्व संहिता की धारा 165 (6) के प्रावधानों से बचने का प्रयास था। आदिम जनजाति के सदस्य की भूमि का अंतरण कलेक्टर की अनुमति के बिना नहीं किया जा सकता था। परिणामत: एक्त मामले में वसीयत व दत्तक के आधार पर नामांतरण किये जाने को मान्यता नहीं दी गयी। देखें -(भानुप्रताप सिंह बनाम गुलाब सिंह, 1996 राजस्व निर्णय पृ0क्र0 98, राजस्व मंडल मध्यप्रदेश।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. शोधार्थी के निजी संग्रह से ।
2. आदिवासियों के पक्ष में न्यायालयों के निर्णय, गोंड़वाना कैलेण्डर से प्राप्त ।

****

रैगिंग का स्वरूप एवं कारण

पूजा नागर *

प्रस्तावना – रैगिंग ने अपनी उत्पत्ति से लेकर वर्तमान तक एक परिपक्व स्वरूप को धारण किया है। रैगिंग की प्रकृति व उद्देश्य दोनों ही समय के साथ परिवर्तित हुए है। रैगिंग एक भिन्न परिवेश में उत्पन्न हुई थी। उस परिवेश के अनुसार रैगिंग का उद्देश्य सार्थक था। 19 वीं शताब्दी के आरंभ में रैगिंग शैक्षणिक व्यवस्था में प्रवेश हुई।

शैक्षणिक व्यवस्था में प्रवेश के साथ यह कुछ परम्पराओं को साथ में लेकर आयी एवं कुछ नई परम्पराओं का भी समागम हुआ। जैसा की विद्यार्थी विद्यालय को छोड़कर जब महाविद्यालय में प्रवेश करता है, तब एक भिन्न वातावरण उसे मिलता है। वह सीमाओं में बंधकर व्यवहार करता था, यहाँ पर अब वह स्वतंत्र होता है। ऐसा नहीं है की बुरे विचार विद्यालय स्तर पर विद्यार्थी के मस्तिष्क में नहीं आते है। मगर वहां वह भय व अनुशासन में बंधा होता है। महाविद्यालय में प्रवेश के साथ ही वह स्वतंत्र होता है। यह स्वतंत्रता उसके बुरे कार्य की सीमाओं को तोड़ देती है।

जैसा की कहा जा चुका है। रैगिंग न सिर्फ एक क्रिया है वरन् यह एक ही दूषित विचार भी है, जो की मनुष्य के मस्तिष्क में पनपता है। रैगिंग के परिणाम हमारे सामने होते है किंतु वे कारण जो की रैगिंग को पोषित करते है, वे हमारे सामने नहीं होते है। एक व्यक्ति की सोच पर उसकी सामाजिक, राजनैतिक व आर्थिक व्यवस्था की छाप होती है। जब सैनिक केम्प में रैगिंग की शुरूआत हुई थी। तब वहां का वातावरण भिन्न था। रैगिंग उस वातावरण के अनुकूल थी। इसके अतिरिक्त बढ़ती हुई प्रतिस्पर्धा ग्लोबलाईजेशन भौतिकतावाद ने भी रैगिंग को बढ़ावा दिया है। दूसरे शब्द में एक विद्यार्थी की प्रतिस्पर्धा की भावना जलन, द्वेष, भविष्य के प्रति चिंता आदि मनोभाव रैगिंग के रूप में प्रकट होते है। रैगिंग के स्वरूप को विभिन्न आयामों में निम्न प्रकार से वर्णित किया जा सकता है। जिनमें कुछ प्रमुख स्वरूप इस प्रकार है–

मनोवैज्ञानिक स्वरूप – मनोवैज्ञानिक स्वरूप के अन्तर्गत विद्यार्थी का मानसिक उत्पीड़न, अपशब्द, इमेल, लोक अवमानना, पत्र इत्यादि आते है। इन माध्यमो के द्वारा रैगिंग इस प्रकार से कि जाती है, जिससे उसका स्वास्थ एवं आत्मविश्वास प्रभावित होता है। रैगिंग के ऐसे कृत्य पीड़ित विद्यार्थी के अंदर नकारात्मक ऊर्जा को प्रवाहित करते हैं वहीं वह एक गलत कार्यो में सुदृढ भी होता है।

शैक्षणिक स्वरूप – रैगिंग की ऐसी क्रियाए जो की शैक्षणिक संस्थान एवं विद्यार्थियों की दैनिक क्रियाओं को प्रभावित करती है। वे रैगिंग के शैक्षणिक स्वरूप के अंतर्गत आती है। कनिष्ठ विद्यार्थी के अध्ययन को बाधित करना एवं उनसे अपना अध्ययन कार्य पूरा करवाना इत्यादि।

आर्थिक स्वरूप – रैगिंग के आर्थिक स्वरूप के अंतर्गत रैगिंग करने वाला विद्यार्थी अपनी आर्थिक आवश्यकताओं की पूर्ति कनिष्ठ विद्यार्थी से करवाता है।

आपराधिक स्वरूप – शारीरिक उत्पीड़न की समस्त क्रियाए जो की आपराधिक भाव से की जाती है, जिसका परिणाम शारीरिक एवं मानसिक क्षति है। इसके अंतर्गत लैगिंग अपराध, समलैगिंग हमला नग्नता, अपशब्द अनुचित हावभाव एवं अन्य गंभीर कृत्य आते हैं।

मानवीय स्वरूप – रैगिंग की वे क्रियाऐं जो कि विद्यार्थी के मौलिक अधिकारों का हनन करती है, उसके आत्मसम्मान को ठेस पहुंचाती है, गरिमा पूर्ण जीवन जीने के अधिकार को छिनती है। उसके मनोभावों में उत्पन्न भय उसे आत्महत्या के लिए प्रेरित करता है। जिसका खामियाजा उसके परिवार को भी उठाना पड़ता है।

राजनीतिक स्वरूप – राजनीति भी हमारी शिक्षा का अहम हिस्सा है, राजनीति की शुरूआत छात्र संघ से होती है। प्राय: कई महाविद्यालयों में इसे नजर अंदाज कर दिया जाता है। महाविद्यालयों में होने वाले छात्र संघ चुनाव औपचारिकता मात्र नहीं होने चाहिए। प्रशासन भी उसमें बड़चड़ कर हिस्सा ले। महाविद्यालय प्रशासन की योजना एवं नीति कार्यक्रमों में विद्यार्थियों की लोकतांत्रिक भूमिका होनी चाहिए। ऐसा होने पर विद्यार्थियों के अंदर उत्तरदायित्व की भावना का विकास होगा। अनैतिक एवं अवैधानिक क्रियाओं पर नियंत्रण होगा। फलस्वरूप रैगिंग की घटनाओं में भी कमी आएगी। जिन महाविद्यालयों में ऐसा होता है वहां रैगिंग की घटनाऐं कम पायी जाती हैं।

रैगिंग के प्रकार – रैगिंग शारीरिक एवं मानसिक प्रताड़ना के रूप में परिचय का एक माध्यम है। जिसे हम दो भागों में विभाजित कर सकते हैं।

गंभीर – रैगिंग की गंभीर प्रकृति के अंतर्गत रैगिंग की शारीरिक एवं मानसिक प्रताड़ना की ऐसी घटनाएं आती है, जो की गंभीर क्षति कारित करती है। यह घटनाएं महाविद्यालय परिसर की अपेक्षा छात्रावास में अधिक पाई जाती है। विद्यार्थी की दैनिक दिनचर्या को प्रभावित करने वाली इन घटनाओं को विद्यार्थी लम्बे समय तक भूल नहीं पाता है।

उदा. – कनिष्ठ विद्यार्थी को नग्न करना, अनैतिक एवं अश्लील क्रियाओं में संलग्न करना, 1000 वाट के बल्ब को चुम्बन देने के लिए कहना, विद्युतीय हिटर के ऊपर खड़ा रखना, रेल्वे लाईन पर, ऑखों पर पट्टी बांधकर खड़े रखना, छत की पतली रैलिंग पर चलने के लिए कहना, और बालकनी से बाहर फेंक देना इत्यादि।

सामान्य – रैगिंग की सामान्य घटनाओं में शाब्दिक प्रताड़ना आती है।यह शारीरिक एवं मानसिक रूप से चोट पहुंचाती है। किन्तु इसके अंतर्गत गंभीर शारीरिक एवं लैंगिक उत्पीड़न नहीं आता है। यह महाविद्यालय परिसर में

* शोधार्थी, माधव महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत

अधिक पाई जाती है, बजाय छात्रावास के। यह घटनाए विद्यार्थी के मन में भय, डर, शर्मिंदगी को जन्म देती है. जिसका परिणाम अवसाद होता है।

उदा. – के लिए कनिष्ठ विद्यार्थी को गाना गाने और डांस करने के लिए कहना। विशेष परिधान पहनने के लिए कहना इत्यादि।

अत: सामान्य रूप से रैगिंग की गंभीर घटना महाविद्यालय परिसर की बजाय छात्रावास में अधिक पाई जाती है। किन्तु रैगिंग की कुछ गंभीर घटनाऐं महाविद्यालय परिसर में भी घटित होती है, जैसे कि सार्वजनिक स्थानों पर अभद्र अथवा लैंगिक क्रियाऐं करवाना।

रैगिंग के कारण – विद्यार्थियों का रैगिंग जैसी क्रियाओं में संलग्नता के पीछे कोई एक निश्चित कारण नहीं है। विद्यार्थी अपनी पीढ़ी का अनुसरण क्यों करने लगता है? एक विद्यार्थी के लिए यह मनोरंजन का साधन हो सकता है, तो दूसरे के लिए अपने मन की भडास निकालने का एक माध्यम।

कारण जो कि रैगिंग जैसी भावना को बल प्रदान करते हैं –

1. विद्यार्थी की वरिष्ठ होने की सोच उसे रैगिंग के प्रति आकर्षित करती है। वह स्वयं को नायक समझने लगता है। स्वयं की वरिष्ठता साबित करने के लिए वह कनिष्ठ विद्यार्थियों को आदेश देना प्रारम्भ करता है।
2. रैगिंग करने वाला विद्यार्थी स्वयं भी इस क्रिया से पीड़ित रहता है। कहीं न कहीं बदले की भावना उसके मन में अवश्य रहती है जो कि अन्य विद्यार्थियों की रैगिंग के द्वारा प्रस्फूटित होती है। न सिर्फ यह बदले की भावना से किया जाता है वरन् यह खुशी एवं मनोरंजन का भी साधन होती है।
3. 12वीं पश्चात् विद्यार्थी अन्य शहरों में उच्च शिक्षा प्राप्त करने हेतु या प्रतियोगी परीक्षाओं की तैयारी हेतु जाता है, वहां वह छात्रावास जीवन व्यतीत करता है। इनमें से कुछ विद्यार्थी अपनी शिक्षा को लेकर गम्भीर होते हैं। मगर ज्यादातर इतने गम्भीर नहीं होते हैं। शिक्षा के अतिरिक्त बचे हुए समय में वह अपने जीवन को रोमांच से भरने के लिए नये विद्यार्थी या अपने सहपाठियों के साथ रैगिंग जैसी क्रिया करते हैं।
4. छात्रावास तथा महाविद्यालयों में अतिरिक्त मनोरंजन क्रिया–कलापों का अभाव भी रैगिंग को जन्म देता है। अधिकतर महाविद्यालयों में खेलकूद व सांस्कृतिक मनोरंजक कार्यक्रम जैसे कि विभिन्न, महाविद्यालयों के मध्य या विभिन्न कक्षाओं के मध्य प्रतियोगिता का अभाव पाया जाता है। जिन महाविद्यालयों में यह होती भी है, तो सिर्फ नाम मात्र के लिए होती है। प्रशासन गम्भीर नहीं होता है ना ही उसमें उत्साह पाया जाता है। विद्यार्थी भी इस चीज को गंभीरता से नहीं लेते हैं। एक विद्यार्थी को उत्साहित करने का कार्य शिक्षक का होता है।
5. रैगिंग का एक मुख्य कारण शिक्षा व्यवस्था का व्यवसायिकरण हो जाना भी है। शिक्षकों के द्वारा केवल तकनीकी योग्यता ही पर ध्यान दिया जाता है। नैतिक पहलू को इससे अपेक्षित कर दिया जाता है।
6. छात्रावास एवं महाविद्यालय प्रशासन के नियंत्रण का अभाव रैगिंग को पोषित करता है। प्रशासन की कमियों का फायदा विद्यार्थियों के द्वारा अपनी इच्छाओं की पूर्ति हेतु उठाया जाता है।
7. रैगिंग विरूद्ध बनाए गए नियमों को ठीक प्रकार से लागू नहीं किया जाना, छात्रावास में समय–समय पर निरीक्षण का अभाव, विद्यार्थियों के प्रति सख्ती नहीं बरती जाना एवं वरिष्ठ विद्यार्थी के ऊपर नियंत्रण का अभाव उन्हें रैगिंग करने के लिए प्रेरित करता है। छात्रावास में रात्रि के समय कई बार निरीक्षक की अनुपस्थिति पाई जाती है। जो वरिष्ठ विद्यार्थी को रैगिंग के लिये पर्याप्त समय देती है।
8. रैगिंग ना सिर्फ एक क्रिया वरन् यह विद्यार्थी के मध्य आकर्षण भी उत्पन्न करता है। यह आधुनिकता का परिचायक माना जाता है। वह विद्यार्थी जो कि रैगिंग नहीं करते हैं, उन्हें उबाऊ माना जाता है। रैगिंग करने वाले विद्यार्थी न सिर्फ विद्यार्थियों के मध्य वरन् शिक्षकों से भी सम्मान प्राप्त करते हैं। चाहे यह सम्मान भयवश ही क्यों ना हो।
9. यह आवश्यक नहीं है कि रैगिंग में सम्मिलित होने वाले समस्त विद्यार्थी रैगिंग जैसी क्रिया के प्रति उत्साहित हो। वे रैगिंग इसलिए भी करते हैं, ताकि वे अपने सहपाठियों की उपेक्षा का शिकार ना हो।
10. मूक दर्शक बनकर रैगिंग की क्रियाओं का आनंद उठाना।
11. विद्यार्थी के मन में उपजी असुरक्षा की भावना उसे रैगिंग का प्रतिरोध नहीं करने देती है। रैगिंग की घटना न केवल पीडित को भयभीत करती है, वरन् उसके आसपास के वातावरण में भी भय उत्पन्न कर देती है।
12. एक नया विद्यार्थी जो कि रैगिंग की परम्परा से अपरिचित रहता है, उसका सामना होने पर वह स्तब्ध हो जाता है। मानसिक तौर पर कमजोर विद्यार्थी रैगिंग का पहला शिकार होता है।
13. रैगिंग की समस्त घटनाओं का सामने नहीं आना। प्रशासन के द्वारा अपनी प्रतिष्ठा हेतु मामलों को दबा दिया जाना, अप्रत्यक्ष तौर पर उन्हें संरक्षण प्रदान करता है।

निष्कर्ष–वर्तमान में रैगिंग का अस्तित्व एवं स्वरूप के लिए कोई एक कारण उत्तरदायि नहीं है। वे समस्त परिस्थतियॉ जिनमें रैगिंग को पोषित होने का अवसर मिला एवं प्रशासन के द्वारा गंभीर रूप से नहीं लिया जाना, रैगिंग का मुख्य कारण है। अब समय आ गया है की प्रशासन रैगिंग को शिक्षा के प्रतिकुल इगिंत करे। रैगिंग के निवारण हेतु न सिर्फ विधिक उपाय वरन सामाजिक उपायो को भी अपनाया जाना चाहिए। विद्यार्थी सहित महाविद्यालय प्रशासन एवं माता–पिता भी इस अभियान का हिस्सा बने।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. Law relating to ragging.
2. Naman mohnot.

****

Sports Injury In Adolescent Players - Causes And Prevention

Dr. B. K. Choudhary* Gaurav Sharma**

Abstract - The number of sports injuries has grown because more people participate in sports activities nowadays. At the same time the importance of sports injury prevention has increased. The aim of this systematic review is to summarize the effects of randomized sports injury causes and preventions. Sports injuries are most commonly caused by poor training methods, structural abnormalities, weakness in muscles, tendons, ligaments and unsafe exercising environments. The most common cause of injury is poor training. For example, muscles need 48 hours to recover after a workout. Increasing exercise intensity too quickly and not stopping when pain develops while exercising also causes injury.
Keywords - Abnormalities – an abnormal physical condition, Randomized – distributed in random way, Intensity- strength.

Introduction - Causes of Sport Injuries - Sports injuries are injuries that occur when engaging in sports or exercise. Sports injuries can occur due to overtraining, lack of conditioning, and improper form or technique. Failing to warm up increases the risk of sports injuries. Bruises, strains, sprains, tears, and broken bones can result from sports injuries. Soft tissues like muscles, ligaments, tendons, fascia, and bursae may be affected. Traumatic brain injury (TBI) is another potential type of sports injury. There are some main causes are:

- Over use
- Stops and Twists
- Falls
- Improper Equipment
- Increased Activity
- Fatigue
- Poor Warmup
- Unilateral Movements
- Technique or Posture

1. Overuse - Overuse injuries refer to specific injuries, which are sustained from repetitive action as opposed to acute injuries, which occur in an instant. Another commonly used term for it is 'repetitive strain injury' or RSI. Repeated movements or awkward postures result in small injuries; when the injuries happen again and again, the body cannot always keep up with the healing process. Repeated movements cause wear and tear on the muscles, tendons, bones, and nerves of the body. This damage leads to pain, inflammation and loss of function.

2. Stops and Twists - Sports activities are very quick and with multi direction movement in fraction of seconds. These injuries may be from small muscular cramps to ligaments and meniscus tear or sever disc prolapsed. Sometime it may cause fracture too. There are many bones and ligaments in your foot. A ligament is a strong flexible tissue that holds bones together.When the foot lands awkwardly, some ligaments can stretch and tear. Most foot sprains happen due to sports or activities in which your body twists and pivots but your feet stay in place. Poor training and weak muscle can alco cause injuries while twisting and turning.

3. Falls - Fall while playing sports is very common, many players develop "unusual" injuries too. These injuries really come as no surprise, considering the number of drastic changes that occur during this transition. Some of these changes are predictable, some less so. There are many changes, along with some of the injuries that often come along with them.

4. Improper Equipment - The gear that is supposed to protect players can harm them if it's not properly sized and fitted, said Dr. Derek Ochiai, sports med-icine expert and hip arthroscopic surgeon in Arlington, Va

."Properly fitted equipment defi-nitely protects against injury, but improperly fitted equipment, such as helmets, are not as effective at protection," Ochiai said. Shoes that are worn or are not fit properly can contribute to a host of overuse injury such as shin splints, stress fractures of the ankle or foot, knee pain, arch pain or plantar fasciitis, as well as blisters. It's not that improper equip-ment causes injuries, but it "can contribute to them (or) make them worse than they would have been.

5. Fatigue - During a maximum contraction of many

*Associate Professor, Pacific College of Physical Education, Pacific University, Udaipur (Raj) INDIA
**Research Scholar, Pacific University, Udaipur (Raj) INDIA

mixed muscles, it is common to see a 50% reduction of force over a period of a few seconds. This is known as *fatigue* (Rothwell, 1994). The term *fatigue* though can be physical and mental exhaustion due to prolonged stimulation or exertion. Fatigue has traditionally been attributed to the occurrence of a "metabolic endpoint", where muscle glycogen concentrations are depleted, plasma glucose concentrations are reduced and plasma free fatty acid levels are elevated (cf: Meeusen et al., 2006). However, one of the major complications that arise in studying muscle fatigue is that both peripheral and central mechanisms contribute to the manifestations of muscle fatigue (Enoka & Stuart, 1992). A certain degree of fatigue is normal in an athlete training hard for their sport or event. However, excessive and persistent fatigue and feelings of legarthy with a reduced sporting performance, often indicate a more serious problem.

6. Poor Warmup - The warm-up will increase body temperature and increase circulation of blood to the muscles, this warms the muscles and makes them loose. Warming up also enables quicker muscle contraction as well as improving the efficiency and efficacy of the use of oxygen in the body**.**

7. Unilateral Movements / increased activity - Sports activities are very quick and with multi direction movement in fraction of seconds. Poor training and weak muscle can cause injuries while twisting and turning. This injuries may be from small muscular cramp to ligaments and meniscus tear or sever disc prolapse. Sometime it may cause fracture also.

8. Technique or Posture - Injuries are not the only by-product of poor technique; performance levels will also be decreased by bad technique as this will prevent optimum strength, power and speed in the particular movement or shot. The use of an incorrect technique is an injury risk. As well technique in sports, incorrect methods of setting up and lifting and handling equipment could cause risks to those involved. It is often the repetition of an action with an incorrect technique that results in excessive loads being placed on muscles and tissues which causes a number of overuse injuries.

Prevention of Sports Injuries - The objective of the prevention is to avoid injury before it happens. It consists of a general preventive intervention taking into account the general factors. This level implies a change in beliefs, attitude, habits and behaviour towards prevention, and their training by both coaches and sports people. The main measures are of an indirect type: they will control the type, quality and state of the training grounds and competition surfaces; the type of footwear that respects cushioning, traction and rotation upon the field; the use of protective elements; the organization of travel; sleeping and eating habits; the use of tapping as a possible factor in reducing ligamentous affectations; or hydration, controlling the number and quantity of liquid intake and the combination with other sports drinks.

Some major points that plays important role in prevention are as follow :

- Muscle Strength
- Proper Warm up and cool down
- The right artromuscular balance
- Improved flexibility
- Proprioception
- Correct technique
- Proper use of equipment

1. Muscle Strength - Muscular strength is strongly associated with improved force-time characteristics that contribute to an athlete's overall performance. Greater muscular strength can enhance the ability to perform general sport skills such as jumping, sprinting, and change of direction tasks. Stronger athletes produce superior performances during sport specific tasks. Greater muscular strength allows an individual to potentiate earlier and to a greater extent, but also decreases the risk of injury. Sport scientists and practitioners may monitor an individual's strength characteristics using isometric, dynamic, and reactive strength tests and variables. Relative strength may be classified into strength deficit, strength association, or strength reserve phases. The phase an individual falls into may directly affect their level of performance or training emphasis

2. Proper Warm up and cool down - The efficiency of warm up in the training-competition process is explained by the change of the viscoelastic properties of tissues with increasing temperature or the improvement of metabolic conditions. The 10 minute warm up increases your core body temperature and gets your juices flowing. This is very important to stay safer during the intense exercise segment. It gets synovial fluid moving and oils the joints.Mentally it is a nice transition into clearing your mind and getting ready for the intense work out. Content such as joint mobility, jogging, stretching, and proprioceptive technical training.

The cool down not only brings fresh blood into areas to help with lactic acid removal, it also brings your heart rate down to resting pulse quicker. A proper cool down also helps lower a raised heart rate down to resting heart rate safely.

The cool down is as instrumental to the prevention of injury as the warm up; stopping an activity without cooling down will contribute to a build up of toxic substances and lactic acid which will cause muscular pain and stiffness the day after; this can restrict movement and be very painful. Blood which has been delivered to the muscles to facilitate quick contraction will also build up if a cool down is not completed; this is commonly known as blood pooling. It is also important to take on fluids and top up energy reserves with a carbohydrate-rich meal after exercise. Stretching the muscle groups you used in your workout will return them to their normal length, reduce the delayed onset of muscular soreness, aid recovery and assist body in its repair process.

3. The right artromuscular balance - The practice of sports implies the practice of certain structures in a repeti

tive manner, which generates a muscular imbalance between antagonistic/agonistic groups. Maintaining a correct artromuscular balance, permitting a lessening of the effects of muscle shortening and weakening, and maintaining the integrity of articulations would be the main preventive objective of strength work. With this goal in mind, there are different evaluation measures, such as isokinetic appreciation, that can determinate the grade of functional balance between agonistic and antagonistic muscle.

4. Improved flexibility - Training and better flexibility are programmed to preserve sportspeople from possible muscular injuries through a stretching superior to the usual range required in the sport. It seems appropriate to achieve a good residual level of flexibility, to have a range of articulate and muscular reserve, in case an unexpected or unusual gesture is superior to the flexibility or mobility of work.

5. Proprioception - A normal joint is dependent on the proper functioning of the neuromuscular control to avoid injury, as this allows dynamic control of the loads applied to it. Work towards a better neuromotor control of movement has been shown to be effective, specially, in view of an articular injury. Evidence indicates that proprioceptive training can improve athletes' strength, coordination, muscular balance, and muscle-reaction times, and two new studies link proprioceptive work with a reduced risk of injury during sporting activity.

6. Correct technique - It is important to understand why technical training is so important with the younger age groups. It is claimed that 90% of technical ability is acquired before the adolescent period. Many sports involve a particular technique which can minimize the risk of injury. It is important to learn the correct techniques associated with your chosen sport. By practicing good technique an individual can greatly reduce the risk of sports-related injury to muscles, tendons and bones. It is extremely important, when taking part in physical activities, to listen to your body and know your physical limits. When you begin a new sport, begin slowly and steadily to avoid pulling or straining muscles which your body may not be used to using or stretching. If you have not undertaken strenuous exercise for some time, it is especially important to build up your stamina and strength gradually to avoid injury. Over time, will notice your fitness increase, and you will be able to undertake physical activity for longer periods of time.

Training with a qualified trainer is one of the best ways to learn proper technique…but practice makes perfect. Make sure that you practice holding good form and tecnique when moving outside of the gym. Every day we squat, push, pull and move in various directions: so make every movement count.

7. Proper use of equipment - For some sports, protective equipment is important to prevent damage to participants. This is particularly important when the sport or activity involves physical contact with other players and participants. Protective equipment may include shin pads (used in football and hockey), boxing gloves or protective head gear. All these pieces of equipment are designed to prevent injury to vulnerable parts of the body.

It is also important to wear correct footwear when participating in sports. The correct shoes can offer support to the foot and ankle, helping to prevent twisting and injury. Protective head gear is obviously extremely important, as helmets protect the skull and the brain from damage. This is vital in contact sports where the head may be knocked.

Conclusion - In nutshell we believe that it is time that the role of the person managing risks is given the same importance as that of the coach. These two people must work together in order to ensure the optimal development of our young sports person. Other then playing main game a sports person should know what are the main causes which can affect his best performance and should also know how to get rid of that problem by best preventive method.

References :-

1. http://bodyandhealth.canada.com/condition/getcondition/sports-injuries
2. http://www.livestrong.com/article/485089-sports-massage-stretching-techniques
3. http://www.myerssportsmedicine.com/5-common-sports-injuries
4. http://www.rphealth.com.au/conditions/overuse-injuries.html
5. https://medlineplus.gov/ency/patientinstructions/000652.htm
6. http://www.allstarsportsacademynj.com/fall-sports-injurieswhy-and-how
7. https://www.mytotalwellness.com/improperly-fitting-equipment-can-cause-injury-young-athletes
8. http://link.springer.com/chapter/10.1007%2F978-0-387-72577-2_4
9. https://wanstall96.wordpress.com/extrinsic-risk-factors-3
10. https://www.ncbi.nlm.nih.gov/pubmed/26838985
11. http://www.nsmi.org.uk/articles/avoid-sports-injury.html
12. http://www.formfitness.co.nz/2012/01/the-importance-of-good-technique
13. http://www.sportsinjurybulletin.com/archive/proprioceptive-exercises.html#

****

A Study Of Impact Of Height On Performance Of District Level Basketball Players Of Rajasthan & Madhya Pradesh

Dr. Ashok Saha * Gaurang Nare ** Dr. Jogendra Singh ***

Abstract - Height is considered as the most vital anthropometric variable that affects the game of basketball players. Whether this is also correct to the players of Rajasthan and Madhya Pradesh this study has been taken into hands. The purpose was to make the selection of players more logical and convincing. 240 district level basketball players' height was measured and their performance was also measured on 10 point scale by three experts and correlation between height and performance was calculated.
Key words - Height, performance, correlation between height and performance

Introduction - Basketball is the game in which players require lots of agility, speed, stamina and stamina. This sport is also becoming popular in Rajasthan and Madhya Pradesh among students of schools and colleges. So many players try their luck at district level and university level but only few can perform well and get selected for state or zonal level. Does the height of player make much difference in the performance of players in basketball; this study was done.

Review of literature - Singh (2010) conducted a study to find out anthropometric measurements, body composition and differences in high performer and low performer high jumpers. 20 male university level high jumpers (10 high performers and 10 low performers) of age 18 to 25 years were assessed during the All India Inter University Athletic Meet. All subjects were assessed for height, weight, breadths, girths and skin-fold thickness. The results showed that high performer high jumpers had significantly higher height, weight, body mass index, total leg length, total arm length as compared to low performer high jumpers.

Hoare (2000) measured anthropometric and physiological attributes of 125 male and 123 female junior basketball players competing at the Australian under 16 championships in 1998. In addition, experienced coaches rated the performance of players during the championships. Performance profiles were compared across playing positions and by playing performance ('Best versus Rest'). Differences in anthropometric characteristics were present across some playing positions for both males and females. Speed and agility differences between some playing positions were also present. Best players differed to Rest players on a number of anthropometric and physiological variables for both males and females. Regression analyses indicated that anthropometric and physiological profiling can contribute to selection procedures in junior basketball; however determinants of success are multi-factorial.

Joseph J. Greene (1998) determined possible anthropometric and performance sex differences in a population of high school basketball players. Measurements were collected during the first week of basketball practice before the 1995-1996 season. Varsity basketball players from 4 high schools were tested on a battery of measures chosen to detect possible anthropometric and performance sex differences. Fifty-four female and sixty-one male subjects, from varsity basketball teams at high schools enrolled in the athletic training at the University of Wisconsin volunteered to take part in this study. Anthropometric measurements were taken. These included height, weight, body composition, ankle range of motion, and medial longitudinal arch type in weight bearing. Performance measures included the vertical jump, 22.86-m (25-yd) shuttle run, 18.29-m (20-yd) sprint, and single-limb balance time. We found significant anthropometric and performance sex differences in a cohort of high school basketball players.

Objective - To know whether there is any relationship between height of district level basketball players of Rajasthan & Madhya Pradesh and their performance.

Hypothesis - There is no relationship significant relationship between height of district level basketball players and their performance.

Sample - 120 district level basketball players of Rajasthan and 120 district level basketball players of Madhya Pradesh were studied. Their height and performance was measured by experts.

* Pacific University, Udaipur (Raj) INDIA
** Pacific University, Udaipur (Raj) INDIA
*** Secretary, University Sport Board Pacific University, Udaipur (Raj) INDIA

Measurements of total height and basketball players

Table 1

Total Height & Average Performance Score of Basketball Players

Total height (in cm)	No. of Players Average	Performance Score
166	11	5.6
167	19	5.8
169	22	5.9
170	25	6
172	29	6.1
175	31	6.24
179	22	6.32
179.5	12	6.37
180	11	6.47
181	5	6.51
182	4	6.59
183	7	6.65
184	6	6.81
185	9	6.99
185.5	4	7.16
187	5	7.45
188	5	7.7
189	4	7.85
190.5	5	7.99
191	4	8

Chart 1 (See)

Measurements of height of 240 district level basketball players of Rajasthan and Madhya Pradesh were collected by the experts through the measuring tape.

The performance of these basketball players in the organized tournament was judged and scored on 10 point scale by three referees. The average score of three referees was used for analysis of basketball players' performance. When height and performance was compared it was found that with the increase in height the performance score improved. Table 1 showed it clearly and chart 1 express it very clearly that basketball players with more height are better as compared to the basketball players with lesser height.

To find the relationship between players' height and performance in basketball correlation test was done and it was found that there was highly positive correlation (0.9595) between height and performance of district level basketball players. Hence the hypothesis is fully rejected.

Conclusion - In Rajasthan and Madhya Pradesh also the players with higher height perform better in basketball. Even at the district level tournaments it was substantiated that players of better height should be selected as they perform comparatively better than short heighted players. Height should always be kept in mind while selecting team for basketball at district level.

References :-

1. Singh Sukhdev, Singh Karanjit and Singh Mandeep, Anthropometric measurements, body composition and somatotyping of high jumpers, Brazilian Journal of Biomotricity, vol.4 Pg. 266-271
2. Hoare DG, Predicting success in junior elite basketball players- the contribution of anthropometric and psychological attributes, J Sci. Med. Sport, Dec 2000, Pg 391-405
3. Joseph J. Greene, Timothy, Glen Leverson and Thomas, Anthropometric and performance measures for high school basketball players, Journal of Athletic Training, July- Sept.1998, 229-232

Chart 1

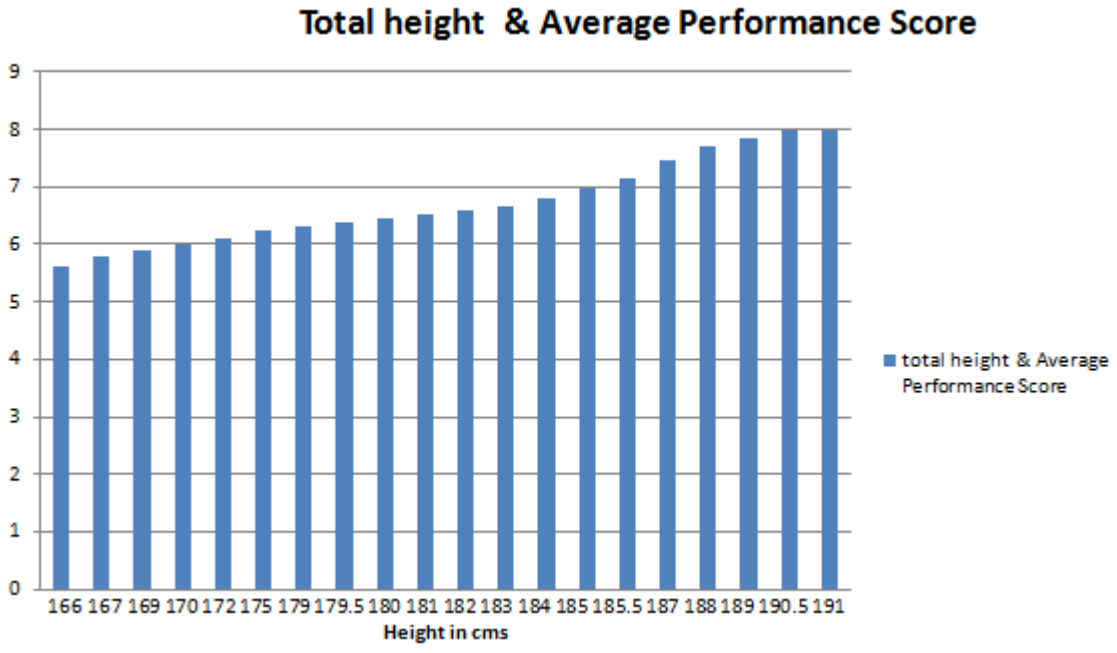

उच्च माध्यमिक स्तर के राजकीय एवं गैर राजकीय विद्यालयों के विद्यालयी वातावरण के "सामूहिक प्रोत्साहन" घटक का विद्यार्थियों पर प्रभाव का अध्ययन

डॉ. रितु बाला * प्रीति ग्रोवर **

शोध सारांश – प्रस्तुत शोध कार्य में उच्च माध्यमिक स्तर के राजकीय एवं गैर राजकीय विद्यालयों के विद्यालयी वातावरण का विद्यार्थियों पर प्रभाव का अध्ययन किया गया है। अध्ययन में प्राप्त आकंडो के आधार पर निष्कर्ष प्राप्त किए गए है। यह अध्ययन राजस्थान के गंगानगर जिलें के उच्च माध्यमिक स्तर के विद्यालयों पर किया गया है। इस हेतु डॉ. के. एस. मिश्रा की विद्यालय वातावरण मापनी का उपयोग किया गया है। निष्कर्ष रूप में पाया गया कि विद्यालय वातावरण के **'सामूहिक प्रोत्साहन'** घटक के प्रभाव में अन्तर है।

प्रस्तावना – शिक्षा या ज्ञान गुणों की खान है, यह जीवन के लिए वरदान है और सृष्टि के लिए अमृत कुम्भ है जिस प्रकार तरंगिणि के शांत जल में ही शंशाक प्रतिबिम्बित होता है उसी प्रकार यदि मानव का चित शांत होगा तभी ज्ञानरूपी प्रकाश की किरणें प्रकाशवान होगी।

भारतीय समाज में प्राचीन काल से ही शिक्षा को अनिवार्य विषय के रूप में स्वीकार किया गया हैं। मॉ जिस प्रकार एक छोटे बच्चें के जीवन की प्राथमिक आवश्यकताओं को प्राप्त करने व समस्याओं का सामना करने का ज्ञान देकर उसके प्रथम गुरू के रूप में भूमिका निभाती है और परिवारों उसमें अच्छे संस्कारों का बीजारोपण कर उस की प्रथम पाठशाला कहलाता है। इसी छोटे से पौधे रूपी बालक को फलने फूलने के लिये और समाज का मजबूत वृक्ष बनने के लिए उसे विद्यालय रूपी पर्यावरण के सम्पर्क में लाया जाता है जहां समय समय पर गुरूजन उसका मार्ग दर्शन कर उसे आगे बढ़ने के लिए प्रोत्साहित करते और विद्यालय का वातवरण उस पौधे को स्वस्थ रोशनी व आहार प्रदान कर उसकी उन्नित में सहायता पहुँचाते है।

विद्यार्थी के जीवन का अधिकांश समय विद्यालय में व्यतीत होता है। वहॉ वे अपने आन्तरिक ज्ञान को विकसित करता है, अनुभवों को ग्रहण करता है और आगे जीवन की शुरूआत करता है। इसलिए विद्यालय का वातावरण का उन पर बहुत अधिक प्रभाव पड़ता है। विद्यार्थी अपने विद्यालीय शिक्षा से लाभान्वित होकर योग्य शिक्षकों की सहायता से अपने समय का सदुपयोग करते है और जीवन को सफल बनाते है। इस संबंध में कोठारी आयोग का कहना है कि बालकों के भविष्य का निर्माण इस समय कक्षा कक्ष में हो रहा है। विद्यालय से किसी राष्ट्र का इतिहास, कला, संस्कृति एवं ज्ञान विज्ञान एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी तक हस्तान्तरित होते है। यह कार्य शिक्षक, शिक्षार्थी एव अभिभावक इन तीनों के सहयोग से होता है। इन तीनो का केन्द्रीय स्थल विद्यालय होता है। अत: विद्यालय का वातावरण शैक्षिक परिवेशमय होना चाहिए।

लेकिन समाचार पत्रो में पढने को मिलता है कि किशोरी से ज्यादती सीकर के गादोडा गॉव में एक किशोरी के अपहरण व बंधक बनाकर तीन दिन तक ज्यादती के मामले में पुलिस ने गॉव के दो युवक सीताराम और पप्पुलाल के खिलाफ मुकदमा दर्ज किया सीताराम गादोडा गॉव के ज्ञानदीप पब्लिक स्कूल के संचालक है। दैनिक भास्कर /जयपुर संस्करण /अप्रैल 25,2007 इसके अलावा पोषाहार, विद्यालयों में न्यूनतम अधिगम सामग्री का अभाव, शिक्षकों का टयूशन पढ़ाने की प्रवृति पर अधिक ज्ञान, जनगणना में शिक्षकों की डयूटी की वजह से प्रभावित विद्यालय, शिक्षकों की कमी आदि पूरी तरह से विद्यालय वातावरण को प्रभावित कर रहे है।

शोध की आवश्यकता एवं महत्व – शिक्षा सृष्टि का सबसे बडा यज्ञ है, जिसमें विद्यार्थी अपने जीवन का सबसे बडा आहुत कर देता है। प्राय: विद्यार्थी का 25 से 30 वर्ष का समय विद्यालय व विद्यालय से सम्बन्धित होकर ही बीतता है। भारत वर्ष में ज्ञान ग्रहण करने की परम्परा प्राचीन काल से ही चली आ रही है। प्रारम्भिक अवस्था में बालक को परिवार में माँ से ज्ञान मिलता है और उसके बाद धीर–धीरे वह समाज में प्रवेश करता है। तो समाज द्धारा सामाजिक संस्था विद्यालय ग्रहण करता है। विद्यालय का उदेश्य बालकों का समय–समय पर ऐसे अवसर प्रदान करना हैं, जिससे उसकी समस्त शक्तियों का सर्वागीण विकास हो सके। इस दृष्टि से विद्यालय संगठन का ध्येय बालको के शारीरिक, मानसिक, चारित्रिक एवं सामाजिक गुणों का विकास करना ओर इस योग्य बनाना कि वे भावी जीवन में अपने उत्दायित्तवो का सफलता पूर्वक निर्वाह कर सकें।

विद्यार्थियों के शैक्षिक विकास को उन्नत बनाने के लिए विद्यालय का वातावरण भी उन्नत होना चाहिए क्योंकि जब तक विद्यालय का वातावरण उन्नत नहीं होगा तब तक शिक्षा का विकास भी उन्नत नही होगा परन्तु आज विद्यालय का शैक्षित वातावरण गिरता जा रहा है। जिसका उल्लेख इंडिया टुडे पत्रिका के लेख में मिलता है जैसे– शिक्षा का ग्राफ कल्पना कीजिए यदि संस्कृत विषय का कोई अध्यापक गणित विषय की कॉपिया जॉच रहा है क्लर्क तथा गैर शिक्षण कर्मचारी कापियाँ जाँचने के लिए रखे जा रहे है। जहाँ पचास हजार से ज्यादा शिक्षकों के पद वर्षो से खाली है। वहाँ विद्यार्थियों को शैक्षिक वातावरण कैसे मिल सकता है।

विद्यालय समाज का दर्पण होता है। यदि विद्यालय के बालक स्वस्थ, अनुशासित, सौम्य और प्रतिभावान होगे तो निश्चित रूप से वहॉ का समाज जिसके बालक पाठशाला में पढ़ने आते है। अनुशाासित होगा जिस प्रकार व्यक्ति अपने व्यवहार के कारण जाने जाते है। उसी प्रकार अच्छे विद्यालय

* शोध निदेशक, श्रीगंगानगर शिक्षक प्रशिक्षण महाविद्यालय, टांटिया विश्वविद्यालय परिसर, श्रीगंगानगर (राज.) भारत
** शोधार्थी, श्रीगंगानगर शिक्षक प्रशिक्षण महाविद्यालय, टांटिया विश्वविद्यालय परिसर, श्रीगंगानगर (राज.) भारत

भी अपने शैक्षिक वातावरण के कारण विद्यालयों को प्रभावित किए बिना नहीं रहते है। यदि विद्यालय के प्रधानाध्यापक और शिक्षक प्रसन्नचित होकर कार्य करते है। तो वहॉ के विद्यार्थी भी प्रसन्नचित होकर शिक्षा ग्रहण करते है। इसके विपरीत जिस विद्यालय का वातावरण शैक्षिक नहीं होता है वहां के विद्यार्थियों का मन भी पढाई में नहीं लगता है। उनकी बुद्धि का विकास उच्छृखलता की ओर होने लगता है। ऐसी स्थिति में विद्यार्थी ज्यादा से ज्यादा तनाव ग्रस्त दिखाई देते है। विद्यालय के वातावरण के सम्बन्ध में हेल्पिन महोदय का कथन है। कि जो अर्थ व्यक्ति के लिए उसके व्यक्तित्व से होता है। वही अर्थ विद्यालय के लिए उसके शैक्षिक वातावरण से होता है।

विद्यालय वातावरण पूरी तरीके से बालक के विकास को प्रभावित करता है और बालक समाज व राष्ट्र के विकास को प्रभावित करता है। विद्यालय के वातावरण के इस महत्व को देखते हुए शोधकर्मी को ऐसा प्रतीत है कि विद्यालय को वातावरण जब पूरे राष्ट्र और विश्व को प्रभावित कर रहा है तो क्यों न विद्यालय के वातावरण को प्रभावित करने वाले उनके घटको पर शोध कर के पता लगाया जाए कि वह प्रत्येक घटक किस प्रकार से विद्यालय के वातावरण व विद्यार्थियो को प्रभावित करता है। विद्यालय वातावरण के महत्व को देखते हुए शोधकर्ती को इस क्षेत्र में शोध करने की आवश्यकता महसूस हुई।

समस्या अभिकथन – उच्च माध्यमिक स्तर के राजकीय एव गैर राजकीय विद्यालयों के विद्यालय वातावरण के का विद्यार्थियों पर प्रभाव का अध्ययन

शब्दावली या समप्रत्यों की व्याख्या –

1. विद्यालय वातावरण – विद्यालय वातावरण के अर्न्तगत विद्यालयों के सभी घटकों को सम्मिलत किया जाता है। जो प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से विद्यार्थी के विकास को प्रभावित करते है–

शोध के उदेश्य –

1. उच्च माध्यमिक स्तर के राजकीय विद्यालयों के छात्र–छात्राओं पर 'सामूहिक प्रोत्साहन' घटक के प्रभाव का अध्ययन।
2. उच्च माध्यमिक स्तर के गैर राजकीय विद्यालयों के छात्र–छात्राओं पर 'सामूहिक प्रोत्साहन' घटक के प्रभाव का अध्ययन
3 उच्च माध्यमिक स्तर के राजकीय एवं गैर राजकीय विद्यालयों के विद्यार्थियों पर 'सामूहिक प्रोत्साहन' घटक के प्रभाव का अध्ययन।

शोध की परिकल्पनाएँ–

1. उच्च माध्यमिक स्तर के राजकीय विद्यालयों के छात्र–छात्राओं पर 'सामूहिक प्रोत्साहन' घटक का प्रभाव नहीं है।
2. उच्च माध्यमिक स्तर के गैर राजकीय विद्यालयों के छात्र–छात्राओं पर 'सामूहिक प्रोत्साहन' घटक का प्रभाव नहीं है।
3. उच्च माध्यमिक स्तर के राजकीय एवं गैर राजकीय विद्यालयों के विद्यार्थियों पर 'सामूहिक प्रोत्साहन' घटक के प्रभाव में सार्थक अन्तर नही है।

शोध कार्य का परिसीमन –

1. प्रस्तुत अध्ययन में केवल गंगानगर जिले के विद्यार्थियों को ही लिया गया है।
2. इस अध्ययन में गंगानगर जिले के चार विद्यालयों को ही शामिल किया गया है।
3. अध्ययन केवल 200 विद्यार्थियों पर किया गया है।

न्यादर्श – में गंगानगर जिले के चार विद्यालयों के उच्च माध्यमिक स्तर के 200 विद्यार्थियों को लिया गया है।

सांखिकीय प्रविधियॉ –

मध्यमान
मानक विचलन
टी परीक्षण

परिकल्पना –1 (देखे आगे पृष्ठ पर)

निष्कर्ष – परिकल्पना संख्या 1. 50 छात्र व 50 छात्राओं के मध्य तुलना सम्बन्धी दत्तो को विश्लेषित किया गया है। राजकीय विद्यालयो के छात्र तथा छात्राओं का मध्य मान क्रमश: 32 तथा 28 तथा एस S.D. 5.02 तथा 6.04 प्राप्त हुए इनके आधार पर दतो का T मूल्य ज्ञात करने पर 3.7 प्राप्त हुआ स्वतंन्त्रता के अन्श 98 का विश्वास के स्तर पर 0.01 तथा0.05 पर T मूल्य का सारणी मान क्रमश: 2.365 व 1.661 दिया हुआ है। जो कि T मूल्य पर ज्ञात मान से कम है। परिकल्पना सख्या 1 को अस्वीकार किया जाता है। राजकीय विद्यालयो में छात्र एव छात्राओं में सामूहिक प्रोत्साहन घटक के प्रभाव में अन्तर है।

परिकल्पना 2 (देखे आगे पृष्ठ पर)

निष्कर्ष – परिकल्पना सख्या 2 उपयुर्वत सारणी में गैर राजकीय विद्यालयों के छात्र तथा छात्राओं में सामूहिक प्रोत्साहन घटक के प्रभाव का अध्ययन किया गया है। जिसमें 50 छात्र व 50 छात्राओं के मध्य तुलना सम्बन्धी दत्तों को विश्लेषित किया गया है। राजकीय विद्यालयों के छात्र तथा छात्राओं का मध्य मान क्रमश: 30 तथा 25 तथा एस S.D. 3.03 तथा 5.01 प्राप्त हुए इनके आधार पर दतो का मूल्य ज्ञात करने पर 6.03 प्राप्त हुआ स्वतंन्त्रता के अंश 98 का विश्वास के स्तर पर 0.01 तथा 0.05 पर T मूल्य का सारणी मान क्रमश: 2.365 व 1.661 दिया हुआ है। जो कि T मूल्य पर ज्ञात मान से कम है को अस्वीकार किया जाता है। गैर राजकीय विद्यालयों में छात्र एव छात्राओ में सामूहिक प्रोत्साहन घटक के प्रभाव में अन्तर है। **परिकल्पना – 3 (देखे आगे पृष्ठ पर)**

निष्कर्ष – परिकल्पना सख्या 3 उपयुक्त सारणी में राजकीय व गैरराजकीय स्तर के विद्यालयों के विद्यार्थियों में सामुहिक प्रोत्साहन घटक के प्रभाव का तुलनात्मक अध्ययन किया गया है। जिसमें 100 छात्र व 100 छात्राओं के मध्य तुलना सम्बंधी दतों को विश्लेषित किया गया है, राजकीय विद्यालयों के विद्यार्थियों का मध्यमान 47 तथा गैरराजकीय विद्यालय के विद्यार्थीयों का मध्यमान 38 प्राप्त हुआ। तथा एस.डी. 13.07 तथा 8.28 प्राप्त हुये इनके आधार पर दतों का टी मूल्य ज्ञात करने पर 5.84 प्राप्त हुआ। स्वतन्त्रता के अंश 198 का विश्वास के स्तर पर 0.01 तथा 0.05 पर क्रान्ति अनुपात सारणीमान क्रमश: 2.60 तथा 1.97 दिया हुआ है जो कि टी मूल्य पर ज्ञात मान से कम है। अत: शोधकर्ती द्वारा निर्मित परिकल्पना अस्वीकृत हो जाती है। जो राजकीय व गैरराजकीय विद्यालयों के विद्यार्थियों में सामुहिक प्रोत्साहन घटक के प्रभाव में सार्थक अन्तर नहीं है को प्रकट करती है।

भावी शोध हेतु सुझाव – कोई भी अध्ययन कभी पूर्ण नही होता है। प्रत्येक अनुसंधान विभिन्न अनुसंधानों के लिये विविध दिशाएं प्रदान करता है जिसके आधार पर आगामी अध्ययन के लिये निम्नाकित सुझाव प्रस्तुत किये जा रहे है–

1. इस अध्ययन का बड़ा रूप लेकर गंगानगर जिले में और विस्तृत किया जा सकता है
2. इस अध्ययन को प्राथमिक स्तर एवं माध्यमिक स्तर पर भी किया जा सकता है।
3. इस शोध कार्य में शहरी तथा ग्रामीण विद्यार्थियों का तुलनात्मक

अध्ययन किया गया सकता है

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. अर्बन वेल्यू एण्ड 'इन दा जर्नल ऑफ फिलोसफी', 1996
2. वशिष्ट के.के. 'विद्यालय संगठन एवं भारतीय शिक्षा' की समस्याऐ लाल बुक डिपो, मेरठ।
3. रिपोट ऑफ नेशनल इन्सटीट्यूट ऑफ एज्यूकेशन रिसर्च।
4. इण्डियण एज्यूकेशन एब्सटेक्ट जुलाई 2000

परिकल्पना – 1 – उच्च माध्यमिक स्तर के राजकीय विद्यालयों के छात्र व छात्राओं पर सामूहिक प्रोत्साहन घटक का प्रभाव नही है।

क्र.स.	चर	संख्या	Mean	S.D	मूल्य	परिकल्पना
1.	छात्र	50	32	5.02	3.71	स्तर(0.012.365अस्वीकृत
2	छात्रा	50	28	6.04		स्तर(0.051.661अस्वीकृत

परिकल्पना – 2 – उच्च माध्यमिक स्तर के गैर राजकीय विद्यालयों के छात्र व छात्राओ पर सामुहिक प्रोत्साहन घटक का प्रभाव नहीं है।

क्र.स.	चर	संख्या	Mean	S.D	मूल्य	परिकल्पना
1.	छात्र	50	30	3.03	6.03	स्तर(0.012.365अस्वीकृत
2	छात्रा	50	25	5.01		स्तर(0.051.661अस्वीकृत

परिकल्पना – 3 – उच्च माध्यमिक राजकीय एवमं गैर राजकीय विद्यालयों के विद्यार्थियों पर सामुहिक प्रोत्साहन घटक के प्रभाव में कोई सार्थक अन्तर नहीं है।

क्र.स.	चर	संख्या	Mean	S.D	मूल्य	परिकल्पना
1.	छात्र(निजी	100	47	13.07	5.84	स्तर(0.012.60अस्वीकृत
2	छात्र(सरकारी	100	38	8.28		स्तर(0.051.97अस्वीकृत

****

सर्वशिक्षा अभियान के अन्तर्गत संचालित उ. प्रा. विद्यालय एवं निजी विद्यालयों के विद्यार्थियों की शैक्षिक निष्पति एवं सृजनशीलता का अध्ययन

रमन सिडाना *

प्रस्तावना – मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है। समाज के विकास के लिए वह शिक्षा प्राप्त करता है। शिक्षा विहीन समाज से विकसित राष्ट्र की कल्पना किसी भी देश के लिए संभव नहीं है। शिक्षा के माध्यम से समाज से अलग एक विशिष्ट स्थान दिलवाने का सामर्थ्य रखती है।

भारत एक विकासशील देश है, जो कि 21वीं सदी में प्रवेश कर चूका है। विश्व की प्रमुख शक्तियों में अपना स्थान बनाने जा रहा है। इंकल प्रस्ताव व गेट समझौते इत्यादि अन्तर्राष्ट्रीय समझौतों को स्वीकार करने के पश्चात भारत विश्व के प्रमुख देशों के बीच खुली प्रतियोगिता में आ गया है। हर स्तर पर भारत को अन्य देशों से प्रतियोगिता करनी होगी, अगर हमारे देश का शैक्षिक व सामाजिक दृष्टि से पिछड़ जाएगें। शिक्षा को उन्नत बनाने हेतु अनेक संस्थाए, औपचारिक शिक्षा, प्रौढ शिक्षा, अनौपचारिक, सरकारी, गैर सरकारी संस्थाओं का गठन किया गया है।

आवश्यकता – शिक्षा को उन्नत बनाने हेतु गठित संस्थाएँ सरकारी, गैर सरकारी, आँगनबाड़ी पाठशालाएँ, लोक जुम्बिश, सर्व शिक्षा अभियान, सतत शिक्षा, जनशालाएँ इत्यादि के माध्यम से प्रयास जारी है, इन पर बहुत सा रूपया खर्च किया जा रहा है। एस.टी.सी., बीएड., लोक जुश्बिश द्वारा शिक्षा कर्मी प्रशिक्षण शिवर पैराटीचर प्रशिक्षण इत्यादि अध्यापको को ट्रेनिंग देने के साधन व माध्यम है। निजी विद्यालयों की बढ़ती हुई संख्या भी शिक्षा को उन्नत बनाने का प्रमुख माध्यम है।

उक्त साधनों एवं संस्थाओं पर लाखों रूपये खर्च किए जा रहे है। अब इनका वास्तविक लाभ बच्चों को कितना मिल रहा है। इसकी गणना करना आवश्यक है, क्योंकि शिक्षा का केन्द्र बालक है, उसका विकास हुआ या नहीं अगर वह सही विकास तथा वास्तविक लाभ से वंचित रहा तो उक्त संस्थाए सरकार व अनुदान संस्थाओं का सारा सहयोग व्यर्थ है।

अत: सर्व शिक्षा अभियान के अर्न्तगत संचालित उ.प्रा. विद्यालयों एवं निजी विद्यालयों के विद्यार्थियों शैक्षिक उन्नति एवं सृजनशीलता का पता लगाना शोधकत्री का अहम कर्तव्य बनता है।

समस्या कथन – 'सर्व शिक्षा अभियान के अन्तर्गत संचालित उ.प्रा. विद्यालयों एवं निजी विद्यालयों के विद्यार्थियों की शैक्षिक निष्पति एवं सृजनशीलता का अध्ययन।'

तकनीकी शब्दों की व्याख्या –

1. **सर्वशिक्षा अभियान –** भारत वर्ष की शिक्षा के सार्वजनीकरण हेतु नई सहसत्राब्दी के प्रारंभ में चलाई गई महत्वकांशी योजना।
2. **शैक्षिक निष्पति –** निष्पति परीक्षण वह अभिकल्प है, जो विद्यार्थियों के द्वारा ग्रहण किए गए ज्ञान, कुशलता एवं क्षमता का मापन करता है।
3. **सृजनशीलता –** सृजनशीलता वह विचार है, जो किसी समूह में विस्तृत ज्ञातव्य का निर्माण करता है, सहाचर्य आदर्श मौलिकता अनुकूलता,सत्यता प्रवाह, तार्किक विकास की योग्यता है।

शोध के उद्देश्य –

1. सर्वशिक्षा अभियान के अन्तर्गत संचालित विद्यालयों एवं निजी विद्यालयों के विद्यार्थियों की शैक्षिक निष्पति का अध्ययन करना।
2. सर्वशिक्षा अभियान के अर्न्तगत संचालित उ.प्रा. विद्यालयों एवं निजी विद्यालयों के विद्यार्थियों की सृजनशीलता का अध्ययन करना।

शोध की परिकल्पनाएँ –

1. सर्वशिक्षा अभियान के अन्तर्गत संचालित उ. प्रा. विद्यालयों एवं निजी विद्यालयों के विद्यार्थियों की शैक्षिक निष्पति में सार्थक अन्तर नहीं है।
2. सर्वशिक्षा अभियान के अन्तर्गत संचालित उ.प्रा. विद्यालयों एवं निजी विद्यालयों के विद्यार्थियो की सृजनशीलता में सार्थक अन्तर नहीं है।

शोध के उपकरण –

1. डॉ. बाकर मेंहदी द्वारा निर्मित सृजनात्मक चिंतन शब्दों द्वारा मापनी का प्रयोग किया गया है।
2. स्वनिर्मित शैक्षिक निष्पति मापनी का प्रयोग किया गया है।

शोध के न्यादर्श – शोधकर्त्री ने कुल 20 विद्यालयों का अध्ययन किया जिसमें 10 सर्वशिक्षा अभियान के अन्तर्गत संचालित सरकारी विद्यालयों एवं 10 निजी विद्यालयों में अध्ययनरत विद्यार्थियों को शोध के लिए चुना।

सीमांकन – प्रस्तुत अध्ययन में श्रीगंगानगर जिले के सर्वशिक्षा अभियान के अन्तर्गत संचालित उ. प्रा. विद्यालयों एवं निजी विद्यालयों का चयन किया गया है।

तथ्यों का विश्लेषण एवं व्याख्या –

परिकल्पना –1 – सर्वशिक्षा अभियान के अन्तर्गत संचालित राजकीय विद्यालयों एवं निजी विद्यालय के विद्यार्थियों की शैक्षिक निष्पति का मध्यमान प्रमाणिक विचलन एवं टी मूल्य–

समूह	N	मध्यमान	मानक विद्यालय	मूल्य	सार्थकता
राजकीय विद्यालय	96	68.84	12.15	5.92	सार्थक अन्तर है।
निजी विद्यालय	96	78.55	10.51		

तालिका में प्रदशित शैक्षिक निष्पति से प्राप्त अंकों के दतों का मध्यमान क्रमश: 68.84<78.55 तथा मानक विचलन क्रमश: 12.15>10.51 प्राप्त हुआ। उच्च मान यह प्रदशित करता है कि राजकीय विद्यालयों की तुलना में निजी विद्यालयों कें विद्यार्थियों की शैक्षिक निष्पति अधिक है राजकीय विद्यालयों एवं निजी विद्यालयों के विद्यार्थियों के मध्यमान के बीच टी–मूल्य

* व्याख्याता, श्रीगंगानगर शिक्षक प्रशिक्षण महाविद्यालय, टांटिया विश्वविद्यालय, श्रीगंगानगर (राज.) भारत

5.92 प्राप्त हुआ जो अपेक्षित सारगी मूल्य 0.01/0.05 स्तर पर 1.99/ 2.63 से अधिक है।

'सर्वशिक्षा अभियान के अन्तर्गत संचालित उच्च प्राथमिक विद्यालय व निजी विद्यालय के विद्यार्थियों की शैक्षिक निष्पति में सार्थक अन्तर नहीं है।' अत: यह शून्य परिकल्पना अस्वीकृत की जाती है।

इससे निष्कर्ष निकलता है कि निजी विद्यालयों के विद्यार्थियों की शैक्षिक निष्पति सर्वशिक्षा अभियान के अन्तर्गत संचालित राजकीय विद्यालयों के विद्यार्थियों से अधिक है।

परिकल्पना – 2 – सर्वशिक्षा अभियान के अन्तर्गत संचालित राजकीय विद्यालय एवं निजी विद्यालय के विद्यार्थियों की सृजनशीलता मापनी के कुल अंको से प्राप्त मध्यमान, प्रमाणित विचलन व टी–मूल्य

समूह	N	मध्यमान	मानक विद्यालय	मूल्य	सार्थकता
राजकीय विद्यालय	96	66.66	8.45	0.40	सार्थक अन्तर नही है।
निजी विद्यालय	96	66.2	7.62		

यह तालिका प्रदर्शित करती है कि सृजशीलता मापनी के सभी आयामों से प्राप्त अंको के दतों का मध्यमान क्रमश:–66.66>66.2 तथा मानक विचलन 8.45>7.62 प्राप्त हुआ।

उच्च मध्यमान यह प्रदर्शित करता है कि निजी विद्यालयों की तुलना में राजकीय विद्यालयों के विद्यार्थियों की सृजनशीलता अधिक है। लेकिन राजकीय विद्यालय एवं निजी विद्यालय के विद्यार्थियों के मध्यमान के बीच टी मूल्य 0.40 प्राप्त हुआ जो अपेक्षित सारणी मूल्य 0.010.05 स्तर पर 1.992.63 से कम है।

'सर्वशिक्षा अभियान के अन्तर्गत संचालित उच्च प्राथमिक विद्यालय व निजी विद्यालय के विद्यार्थियों की सृजनशीलता में सार्थक अन्तर नहीं है।' अत: शून्य परिकल्पना स्वीकृत की जाती है।

इससे निष्कर्ष निकलता है कि सर्वशिक्षा अभियान के अर्न्तगत संचालित उच्च प्राथमिक विद्यालयों व निजी विद्यालयों की सृजनशीलता में सार्थक अन्तर नहीं है।

निष्कर्ष – उपरोक्त शोध के आधार पर निष्कर्ष निकलता है कि–

1. निजी विद्यालयों के विद्यार्थियों की शैक्षिक निष्पति सर्वशिक्षा अभियान के अन्तर्गत संचालित राजकीय विद्यालयों के विद्यार्थियों से अधिक है।
2. सर्वशिक्षा अभियान के अन्तर्गत संचालित उच्च प्राथमिक विद्यालय व निजी विद्यालयों के विद्यालयों की सृजनशीलता में सार्थक अन्तर नहीं है।

शैक्षिक निहीतार्थ –

1. निजी विद्यालयों के विद्यार्थियों की शैक्षिक निष्पति का स्तर अच्छा है। अत: सर्वशिक्षा अभियान के अन्तर्गत संचालित विद्यालयों द्वारा निजी विद्यालयों की तरह शैक्षिक निष्पति को अपनाना चाहिए।
2. सर्वशिक्षा अभियान के अन्तर्गत संचालित विद्यालय एवं निजी विद्यालयों के विद्यार्थियों की सृजनशीलता विचारगति तात्कालिक लोचकता का स्तर लगभग समान है। इन्हें अपने विद्यार्थियों की सृजनशीलता के उन्नयन के लिए प्रयासरत रहना चाहिए।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. शर्मा डी.एल. शिक्षा तथा भारतीय समाज, लायल तथा बुक डिपो मेरठ।
2. भार्गव महेश (1981–1988) आधुनिक मनोविज्ञान परीक्षण एवं मापन भार्गव बुक हाउस, राजा मण्डी, आगरा।
3. कपिल डा. एल–अनुसंधान विधियाँ, भार्गव बुक हाउस, राजा मण्डी, आगरा।
4. वार्षिक प्रतिवेदन (2001–2002) राजस्थान प्राथमिक शिक्षा परिषद जयपुर।

****